प्रस्तावना ।

प्रिय महाशय ! यह संसार चक्र बड़े वेग से चल रहा है उस में प्रतिक्षण और प्रतिपल में अनेक परिवर्तन होते हैं तथा वर्तमान भूत से परिवर्तित होता है इसलिये विचारशील पुरुष अपने भविष्य जीवन को सदुपयोग वा परोपकार तथा आत्मचिंतन आदि में ही लगाते हैं अतः इस संसार चक्र में परिभ्रमण करते हुए प्राणियों को मनुष्य जन्म प्राप्त होना अति दुर्लभ है यदि किसी आत्मा को पूर्वोदय से मनुष्य जन्म प्राप्त भी होगया तो फिर उसको पंचेन्द्रिय पूर्ण आयु, नीरोगी शरीर आदि सामग्रियें प्राप्त होनी बहुत कठिन हैं। यदि उक्त सामग्रियें भी मिल गई तो फिर विद्या अध्ययन, करना तो परम कठिन है संसार में अनेक विद्वान् हुए वा हैं अथवा होंगे परन्तु इस विषय में वक्तव्य इतना ही है कि जिस शास्त्र से आत्मबोध की प्राप्ति हो ऐसे शास्त्रों के पठन वा पाठन कराने वाले विद्वान् बहुतही अल्प होते हैं सांसारिक कलाओं के उपदेष्टा अनेक विद्वान् वा उन कलाओं के उत्पादक अनेक तत्ववेत्ता विद्यमान हैं और भूतकाल में विद्यमान थे किन्तु अंत समय यह कलायें आत्मा की सहायक नहीं होतीं इसलिये सब से बढकर सब से उत्तम एक धर्म है सो धर्म की जिज्ञासा करने वालों के लिये धर्म शास्त्र ही अति उपयोगी हैं जिन में श्री अर्हन् देव के कथन किये हुए वाक्य परम पवित्र हैं और उन वाक्यों के संग्रह का नाम ही सूत्र वा सिद्धान्त शास्त्र है सो जिन वाणी के पठन करने का अभ्यास प्रत्येक व्यक्ति को करना चाहिये जिस से आत्मबोध की प्राप्ति हो। श्री जिनेन्द्र भगवान् की वाणी ने पदार्थों का सत्य २ स्वरूप प्रतिपादन किया है जिसके श्रवण वा मनन करने से आत्मा को अतीव शांति की प्राप्ति होती है। अंत में आत्मा कर्मों से मुक्त होकर मोक्ष में विराजमान होजाता है इस-लिये माना गया कि स्वाध्याय के समान कोई भी दूसरा तप नहीं है। क्योंकि (स्वाध्यायस्तपः) किन्तु श्रुतज्ञान के प्रति पादक अनेक महान् २ ग्रंथ हैं। उन में जिज्ञासुओं को पहले उन शास्त्रों का स्वाध्याय करना योग्य है कि जिन में अनेक विषयों का समावेश हो और वे शास्त्र नियमबद्ध हों।

किन्तु जैन सूत्र, मूल प्राकृत वा वृत्ति संस्कृत में ही प्रायः प्रतिपादित हैं जिन में प्रवेश करना प्रत्येक व्यक्ति को सुगम नहीं है तथा जो गुजराती भाषा में "टब्बादि" लिखे हुए हैं यद्यपि वे परम उपयोगी हैं किन्तु वे एक प्रान्त के लिये ही उपयुक्त हैं सर्व प्रान्तों के लिये नहीं।

इसलिये सर्व हितैषी आज दिन हिन्दी भाषा को ही प्रायः सर्व विद्वानों ने स्वीकार किया है इसलिये मेरा विचार भी यही हुआ कि जैन शास्त्रों का हिन्दी अनुवाद करना चाहिये जिस से प्रत्येक व्यक्ति आत्मिक लाभ ले सके, किन्तु इस काम में अपनी असमर्थता को देख कर इस शुभ कार्य में आज तक विलम्ब होता रहा अपितु १९७१वें वर्षका चातुर्मास श्रीश्रीश्री गणावच्छेदक वा स्थविरपद विभूषित श्री स्वामी गणपतिरायजी महाराज ने कसूर नगर में किया तथा मैं भी आपके चरणों में ही निवास करता था तब मुझे बाबू परमानन्दजी ने व पं० मुनि ज्ञानचन्द्रजी ने प्रेरित किया कि आप श्री अनुयोगद्वारजी सूत्र का हिन्दी अनुवाद करो जिससे बहुत से प्राणियों को जैन शासन के अमूल्य ज्ञान की प्राप्ति हो क्योंकि इस सूत्र में प्रायः सर्व विषयों का समावेश है और प्रत्येक विषय को बड़ी योग्यता के साथ वर्णन किया गया है और जैन सिद्धान्त की बहुत ही सुंदर शैली से व्याख्या की गई है प्रत्येक विषय की व्याख्या उपक्रम १ निक्षेप २ अनुगम ३ नय ४ द्वारा की गई है। इसी वास्ते इस का नाम अनुयोगद्वार है।

यथा—स्वाभिप्रायक सूत्रेण सहार्थस्य अनुगीयते अनुकूलोवा योगोस्येयदम् अभिधेय मित्येवं संयोऽयशिष्येभ्यः प्रतिपादनमनुयोगः सूत्रार्थकथनमित्यर्थः अथवा एकस्यापि सूत्रस्यानन्तोर्थ इत्यर्थो महान् सूत्रं त्वणु ततश्चाणु ना सूत्रेण सहार्थस्ययोगो अनुयोगः तथा अनुयोगस्य विधिर्वक्तव्यो यथा प्रथमं सूत्रार्थ एव शिष्यस्य कथनीयं द्वितीयवारे सोपिनिर्युक्त्यर्थ कथन मिश्रस्तृतीयवारायां तु प्रसङ्गानु प्रसङ्गानुगतः सर्वोप्यर्थोवाच्यस्तदुक्तं सुत्तत्थोखलुपढमोबीओनिज्जुतिमीसतो भणियो तइयो निरविसेसो एसविही अणुओगो॥

इत्यादि प्रकार से अनुयोग की विधि वर्णन की गई है तथा अन्य प्रकार से

और भी विधि जाननी चाहिये जैसे कि— ज्ञात, अज्ञात, परिषद् तो अनुयोग के योग्य हैं किन्तु दुर्विदग्ध परिषद् अनुयोग के अयोग्य है।

फिर **संहिता, पदच्छेद, पदार्थ, पदविग्रह, शंका, (तर्क)** और **प्रत्ययवस्थान** द्वारादी अनुयोग करना चाहिये इत्यादि अनेक प्रकार से अनुयोग की व्याख्या की गई है।

और इस सूत्र में प्रत्येक पद सूक्ष्म बुद्धि से विचारने योग्य है तथा नाम पद में दश प्रकार के नामों का बड़ी सुन्दर शैली से निरूपण किया गया है फिर प्रमाण विषय तो बहुत ही गहन है इस लिये इस सूत्र के हिन्दी अनुवाद की अत्यन्त आवश्यकता थी तब मैंने बाबू परमानन्दजी की प्रेरणा से व **पं० मुनि ज्ञानचन्द्रजी** की प्रेरणा से इस काम करने में साहस किया यद्यपि यह बात स्वतः सिद्ध है कि यावन्मात्र अनुवाद होते हैं वे पाठकों की रुचि मूल से हटाकर भाषाकी ओर ही खींचते हैं क्योंकि मनुष्य स्वभावतः सुगम मार्ग की ओर ही चलते हैं इसलिये मूल पठन करने का प्रायः अभ्यास स्वल्प होरहा है किन्तु मेरी इच्छा सर्व साधारण की रुचि को मूल की ओर ले जाने की है इसी भाव से प्रेरित होकर मैंने मूळ पदार्थ की ही व्याख्या लिखी है।

तथा सूत्र व्याख्यान की समाप्ति में पूर्ण सूत्र का भावार्थ भी दिया है जिससे साधारण पुरुष भी सूत्रके आशय को यथार्थ रीति से जान सके।

तथा जिन मुनियों को संयोग के न मिलने पर इस अपूर्व ज्ञान से अब तक अपरिचित रहना पड़ा है उनको भी अवश्य लाभ होगा।

फिर विहार (भ्रमण) के कारण व मुनि ज्ञानचन्द्रजी के रुग्णावस्था के कारण इस काम में विलम्ब होने लगा किन्तु अनुवाद फिर भी कुछ होता ही रहा फिर बरनालामंडी में मुनि ज्ञानचन्द्रजी का स्वर्गवास होगया।

यद्यपि यह ग्रंथ पूर्ण तो हो चुका था किन्तु इसकी द्वितीयावृत्ति करने में बहुत ही विलम्ब हुआ मुनि ज्ञानचन्द्रजी की प्रेरणा से इस भाषा टीका के लिखने का प्रारम्भ हुआ था इसी वास्ते इस भाषा टीका का नाम **"ज्ञान प्रबोधिनी"** भाषा टीका * रक्खा गया है इसमें जहां तक होसका है इसको सुगम करने का उद्योग किया गया है जिससे कि प्रत्येक व्यक्ति इससे लाभ ले सके और भाषा के स्पष्ट करने में भी यथाशक्ति उद्योग किया गया है प्रत्येक पद का अर्थ भिन्न २ लिखा है।

तथा जो प्रश्न रूप पद है उनको एकत्र लिख कर ही उनके अर्थ में (प्रश्न) ऐसे लिख दिया है जैसे कि "सेकिंतं" शब्द है इसके अर्थ में (प्रश्न) ऐसेही

लिख दिया है क्योंकि से किं तं शब्द का संस्कृत "अथकितत्" प्रयोग बनता है उसको बार बार न लिखकर केवल "प्रश्न" शब्द को ही लिखा है और "बहुलं" "आर्षम्" "व्यत्ययश्च" इन तीन सूत्रों की प्राकृत भाषा में विशेष प्राप्ति है किन्तु जहां जिस सूत्र की प्राप्ति है वहां पर हेमचन्द्राचार्य कृत प्राकृत व्याकरण के सूत्र वा संस्कृत शाकटायन व्याकरण के सूत्र दिये गये हैं और संस्कृत के प्रकरणों में केवल संस्कृत व्याकरण के ही सूत्र लगाए गए हैं। और इस सूत्र के संशोधन में मैं तीन पुस्तकों का ऋणी हूं जिन में एक तो बहुत ही प्राचीन प्रति है, द्वितीय नूतन है, तृतीय रायबहादुर सेठ धनपतिसिंहजी की मुद्रित की हुई हैं। किन्तु तृतीय प्रति में दृष्टि दोष के कारण से कुछ अशुद्धियें रह गई है यद्यपि बड़ी सावधानी से प्रेस में काम किया जाता है फिर भी दृष्टि दोष के कारण से मनुष्य का भूलना स्वाभाविक है।

किन्तु मुझ से जहां तक होसका है इस के शुद्ध करने में मैंने बहुत ही उद्योग किया है और हर्ष का विषय है कि मैं बहुत से अंश में इस कार्य में उत्तीर्ण हुआ हूं। इस शास्त्र को योग्यता पूर्वक पठन करने का प्राणी मात्र को अधिकार है। और प्रत्येक व्यक्ति जो इस शास्त्र को पठन करना चाहे उसको उचित है कि अनध्याय काल को छोड़ कर इस शास्त्र का अध्ययन करे।

क्योंकि विधिपूर्वक शास्त्र अध्ययन किया हुआ ही फलीभूत होता है इसलिये आशा है भव्यजन इस सूत्र से लाभ उठाकर और **नय निक्षेप** के वेत्ता होकर पूर्ण दर्शन शुद्धि के विषय में स्वआत्मा को प्रविष्ट करते हुए मेरे परिश्रम को साफल्य करेंगे और जो कुछ मैंने लिखा है वह श्रीश्रीश्री १००८ आचार्य वर्य षटत्रिंशत् गुणालंकृत श्रीश्रीश्री पूज्य **मोतीरामजी महाराजजी की** कृपा से लिखा है किन्तु **मेरी मंद मति** इस कार्य में सर्वथा असमर्थ थी।

सुज्ञजनो! अन्य विकथा युक्त उपन्यासादि ग्रंथों के पठन से आत्मिक लाभ नहीं हो सकता है इसलिये इस शास्त्र के पठन से अपने आत्मा को ज्ञान से विभूषित कर और अन्य आत्माओं को परोपकार द्वारा सन्मार्ग में प्रवृत्त करायें फिर जब **"आत्मा"** और **"ज्ञान"** एक रूप हो जायेंगे उस काल में ही आत्मा सिद्धगति को प्राप्त होगा जो सादि अनंत पदयुक्त है इसलिये उक्त पद के वास्ते प्रत्येक प्राणी को परिश्रम करना चाहिये॥

गुरु चरणकमल सेवी, विनीत—

उपाध्याय जैनमुनि आत्माराम. (पंजाबी)

श्री वर्द्धमानाय नमः

'श्री अनुयोगद्वार सूत्रम्'

मूल—नाणं पंचविहं पएणत्तं, तंजहा—आभिणिबोहिय नाणं सुयनाणं ओहिनाणं मणपज्जवनाणं केवलनाणं। तत्थ चत्तारि नाणाइं ठप्पाइं ठवणिज्जाइं णो उद्दिसंति णो समुद्दिसंति णो अणुएणविज्जंति ॥ १ ॥

हिंदी पदार्थ—(नाणं) ज्ञान, (पंच विहं) पांच प्रकार से (पएणत्तं) प्रतिपादन किया गया है, (तंजहा) जैसे कि, (आभिणिबोहिनाणं) आभिनिबोधिक—मति—ज्ञान, (सुयनाणं) श्रुतज्ञान, (ओहिनाणं) अवधिज्ञान, (मणपज्जवनाणं) मनःपर्ययज्ञान, (केवलनाणं) केवलज्ञान, (तत्थ) इन पांच ज्ञानों में (चत्तारि) चार (नाणाइं) ज्ञान, (ठप्पाइं) संव्यवहार्य नहीं, (ठवणिज्जाइं) स्थापनीय हैं, क्योंकि मतिज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान और केवलज्ञान ये चारों ही (णोउद्दिसंति) उद्देश—उपदेश—नहीं करते हैं (णो समुद्दिसंति) समुद्देश नहीं करते (णो अणुएणविज्जंति) आज्ञा नहीं करते हैं "मुखाभावात्" मुख का अभाव होने से, क्योंकि ये चार ज्ञान अपने अनुभव को प्रकाश नहीं कर सकते. इस लिये परोपकारी न होने के कारण यह चार ही ज्ञान स्थापनीय हैं।

भावार्थः—सर्व पदार्थों का ज्ञाता और शास्त्र की आदि में मङ्गल रूप, विघ्नों को उपशम करने वाला, निज आनन्द का प्रदाता, आत्मा का निज गुण प्रदर्शक, ज्ञान है, इसलिये सब से प्रथम ज्ञान का वर्णन किया जाता है। अर्हन् देवने ज्ञान पांच प्रकार से प्रतिपादन किया है क्योंकि ज्ञान शब्द का अर्थ यही है, कि जिस के द्वारा वस्तुओं का स्वरूप जाना जाय, अथवा जो निज स्वरूप का प्रकाशक है, वही ज्ञान है अथवा जो ज्ञानावरणीयादि कर्मों के क्षय वा क्ष-

योपशम के कारण से उत्पन्न होता है वही यथार्थ ज्ञान है सो यह ज्ञान अर्हन् भगवन्तों ने तो अर्थ करके और गणधरों ने सूत्र करके पांच प्रकार से वर्णन किया है जैसे कि—जो सन्मुख आए हुए पदार्थों को मर्यादा पूर्वक जानता है वह आभिनिबोधिक ज्ञान है तथा इस ज्ञान को मतिज्ञान भी कहते हैं। द्वितीय जो सुनकर पदार्थों के स्वरूप को जानता है उसे श्रुतज्ञान कहते हैं। तृतीय जो प्रमाणपूर्वक रूपवान् द्रव्यों को जानता है उसें अवधिज्ञान कहते हैं। चतुर्थ जो मन के पर्यायों को भी जानलेता है वही मनःपर्ययज्ञान है। और सम्पूर्ण लोकालोक के स्वरूप को जानने वाला केवलज्ञान कहलाता है; किन्तु इन पांचों में से श्रुत ज्ञान को छोड़ कर शेष चारज्ञान स्थापनीय (पृथक् करने योग्य) हैं। चार ज्ञान लोक में व्यवहार का उपयोगी नहीं है, अर्थात् परोपकारी नहीं है, अपितु जिस आत्मा को जो ज्ञान होता है, वही उस का अनुभव करता है अन्य नहीं; किन्तु श्रुतज्ञान परोपकारी है। इसलिये शास्त्र में अब श्रुतज्ञान का ही वर्णन किया जायगा, क्योंकि उद्देशादि श्रुतज्ञान से ही उत्पन्न होते हैं, इस से भिन्न शेष ज्ञानों के उद्देश तथा समुद्देशादि नहीं हैं। जो गुरु कहते हैं वही श्रुतज्ञान है। अपितु जो चारों ज्ञानों का स्वरूप वर्णन किया जाता है वह सर्व श्रुतज्ञान के द्वारा ही वर्णन किया जाता है।

अथ श्रुतज्ञान के विषय में सविस्तर स्वरूप।

मूल—सुयनाणस्स उद्देसो समुद्देसो अणुण्णा अणुओगोय पवत्तइ। जइ सुयनाणस्स उद्देसो समुद्देसो अणुण्णा अणुओगोय पवत्तइ, किं अंगपविट्ठस्स उद्देसो समुद्देसो अणुण्णा अणुओगोय पवत्तइ? किं अंगबाहिरस्स उद्देसो समुद्देसो अणुण्णा अणुओगोय पवत्तइ? ॥ २ ॥

हिन्दी पदार्थ-(सुयनाणस्स) श्रुत ज्ञान का, (उद्देसो) उद्देश, (समुद्देसो) समुद्देश, (अणुण्णा) अनुज्ञा, और (अणुओगोय) अनुयोग (पवत्तइ) होता है। (जइ) यदि (सुयनाणस्स) श्रुतज्ञान का, (उद्देसो) उद्देश, (समुद्देसो) समुद्देश, (अणुण्णा) अनुज्ञा और (अणुओगोय) अनुयोग (पवत्तइ) प्रवृत्त होते हैं तो (किं अंगपविट्ठस्स) क्या अंगप्रविष्ट सूत्रों में श्रुतज्ञान का (उद्देसो) उद्देश, (समुद्देसो) समुद्देश, (अणुण्णा) अनुज्ञा, (अणुओगोय पवत्तइ) अनु-

योग प्रवर्तता है। (किं अंगबाहिरस्स) अथवा अंगसूत्रों से बाहिर के उत्तराध्ययनादि सूत्रों में श्रुतज्ञान के (उद्देसो) उद्देश (समुद्देसो) समुद्देश, (अणुण्ण) अनुज्ञा, (अणुओगोय पवत्तई) और अनुयोग प्रवर्तता है ?

भावार्थः-इन पांच ज्ञानों में से श्रुतज्ञान के ही उद्देश, समुद्देश, अनुज्ञा और अनुयोग होते हैं, किंतु शेष चारों के नहीं। ऐसा कहने पर शिष्य ने प्रश्न किया कि हे भगवन्! यदि श्रुतज्ञान के उद्देश, समुद्देश, आज्ञा और अनुयोग हैं तो क्या अंग सूत्रों में जो श्रुतज्ञान है उसके उद्देश, समुद्देश, आज्ञा और अनुयोग हैं या जो अंग सूत्रों से बाहिर के उत्तराध्ययनादि सूत्र हैं उन में श्रुतज्ञान के उद्देश, समुद्देश आज्ञा और अनुयोग हैं ? शिष्य के ऐसा पूछने पर गुरु कहते हैं।

मूल-अंगपविट्ठस्सवि उद्देसो जाव पवत्तइ, अंग बाहिरस्सवि उद्देसो जाव पवत्तइ ? इमं पुण पट्ठवणं पडुच्च अंग बाहिरस्सवि उद्देसो ४ ॥ ३ ॥

हिन्दी पदार्थ-(अंग पविट्ठस्सवि) अपि शब्द समुच्चयार्थ में है, अंगप्रविष्ट सूत्रों में भी, (उद्देसो जाव पवत्तइ) उद्देश, समुद्देश, अनुज्ञा और अनुयोग प्रवृत्त हैं। तथा (अंग बाहिरस्सवि) अंग बाहिर के सूत्रों में भी, (उद्देसो जाव पवत्तइ) उद्देश, समुद्देश, अनुज्ञा, अनुयोग प्रवर्त्तते हैं। (इमं पुण पट्ठवणं) पुनः इस प्रकार वर्त्तमान आरम्भ की (पडुच्च) अपेक्षा से (अंग बाहिरस्सवि उद्देसो ४) अंग बाहिर के सूत्रों का उद्देश, समुद्देश, अनुज्ञा और अनुयोग विद्यमान हैं।

भावार्थ-अंगप्रविष्ट सूत्रों में भी उद्देशादि प्रवर्तमान हैं, और अंगबाहिर के सूत्रों में भी श्रुतज्ञान के उद्देशादि विद्यमान हैं, तथा जो वर्तमान में अनुयोग का प्रारम्भ किया हुआ है, उसकी अपेक्षा से तो अंगबाहिर के सूत्रों में श्रुतज्ञान के उद्देशादि विद्यमान हैं। शिष्यने फिर प्रश्न किया कि हे भगवन्!:-

मूल-किं कालियस्स उद्देसो ४ ? उक्कालियस्स उद्देसो ४ ? कालियस्सवि उद्देसो ४ उक्कालियस्सवि उद्देसो ४ इमं पुण पट्ठवणं पडुच्च उक्कालियस्स उद्देसो ४ जइ उक्कालियस्स उद्देसो

किं आवस्सयस्स उद्देसो ४ ? आवस्सयवइरित्तस्स उद्देसो ४ ? आवस्सयस्सवि उद्देसो आवस्सयवइरित्तस्सवि उद्देसो ४ इमं पुण पट्ठवणं पडुच्च आवस्सयस्स अणुओगो ॥ ४ ॥

हिन्दी पदार्थ-(जइ) यदि (अंगबाहिरस्स) अंग बाहिर के सूत्रों में (उद्देसो ४) श्रुतज्ञान के उद्देश, समुद्देश, आज्ञा और अनुयोग विद्यमान हैं तो (किं कालियस्स) क्या कालिक सूत्रों के (उद्देसो ४) उद्देश, समुद्देश, आज्ञा, और अनुयोग हैं वा (उक्कालियस्स) उत्कालिक सूत्रों के (उद्देसो ४) उद्देशादि हैं ? गुरु कहते हैं (कालियस्सवि) कालिक सूत्रों के भी, (उद्देसो ४) उद्देश, समुद्देश, आज्ञा, अनुयोग हैं और (उक्कालियस्सवि) उत्कालिक सूत्रों के भी (उद्देसो ४) उद्देश, समुद्देश, आज्ञा, अनुयोग हैं पुनः (इमं) इस (पुण पट्ठवणं पडुच्च) वर्तमान आरम्भ की अपेक्षा से, (कालियस्सवि उद्देसो ४) कालिक सूत्रों के भी उद्देश, समुद्देश, अनुज्ञा और अनुयोग हैं तथा (उक्का-लियस्स) उत्कालिक सूत्रों के भी (उद्देसो ४) उद्देश, समुद्देश, आज्ञा और अनुयोग हैं, गुरु के ऐसे कहने पर शिष्य ने फिर तर्क की, हे भगवन् ! (जइ) यदि (उक्कालियस्स) उत्कालिक सूत्रों के (उद्देसो ४) उद्देशादि हैं तो (किं आवस्सयस्स) क्या आवश्यक सूत्र के (उद्देसो ४) उद्देशादि हैं वा (आवस्सयवइरित्तस्स) आवश्यकव्यतिरिक्त सूत्रों के (उद्देसो ४) उद्देशादि हैं ? गुरु कहते हैं (आवस्सयस्सवि) आवश्यक सूत्र के भी (उद्-देसो ४) उद्देशादि और (आवस्सयवइरित्तस्सवि) आवश्यक से व्यतिरिक्त सूत्रों के भी (उद्देसो ४) उद्देशादि हैं । (इमं पुण पट्ठवणं पडुच्च) इस वर्त-मान प्रारम्भ की अपेक्षा से (आवस्सयस्स) आवश्यक सूत्र का (अणुओगो) अनुयोग, या व्याख्यान किया जाता है ।

भावार्थ-शिष्यने प्रश्न किया कि हे भगवन् ! यदि अंग बाहिर के सूत्रों के उद्देशादि हैं तो क्या कालिक सूत्रों के भी उद्देशादि हैं-जो प्रथम प्रहर और पिछले प्रहर में पठन किये जाते हैं-वा उत्कालिक सूत्रों के उद्देशादि हैं जो अनध्याय काल छोड़कर शेष सर्व काल में पठन किये जाते हैं ? गुरु कहते हैं कि कालिक सूत्रों के भी उद्देशादि हैं और उत्कालिक सूत्रों के भी उद्देशादि हैं, शिष्य ने फिर पूछा कि हे भगवन् ! यदि उत्कालिक सूत्रों के उद्देशादि हैं तो क्या

आवश्यक सूत्र के उद्देशादि हैं या आवश्यक से व्यतिरिक्त सूत्रों के उद्देशादि हैं? गुरु ने फिर उत्तर दिया कि:—आवश्यक वा आवश्यक से व्यतिरिक्त दोनों सूत्रों के उद्देशादि हैं, इस प्रकार से अनुयोग का वर्णन करते हुए अब आवश्यक सूत्र के अनुयोग का वर्णन करते हैं।

मूल—जइ आवस्सयस्स अणुओगो आवस्सयं किं अंगं अंगाइं सुयक्खंधो सुयक्खंधा अज्झयणं अज्झयणाइं उद्देसो उद्देसा? आवस्सयस्सणं णो अंगं णो अंगाइं सुयक्खंधो नो सुयक्खंधा णो अज्झयणं अज्झयणाई णो उद्देसो णो उद्देसा तम्हा आवस्सयं निक्खिविस्सामि सुयं निक्खिविस्सामि क्खंधं निक्खिविस्सामि अज्झयणं निक्खिविस्सामि जत्थय जं जाणिज्जा निक्खेवं निक्खिवे निरवसेसं जत्थविय न जाणिज्जा चउक्कयं निक्खिवे तत्थ ॥ १ ॥

हिन्दी पदार्थ-(जइ) यदि (आवस्सयस्स) आवश्यक सूत्र का (अणुओगो) अनुयोग—व्याख्यान—किया जाता है तो (आवस्सयं किं अंगं) क्या आवश्यक एक अंग है वा (अंगाइं) बहुत से अंग हैं? तथा (सुयक्खंधो) एक श्रुतस्कंध है वा (सुयक्खंधा) बहुत से श्रुतस्कंध हैं? तथा (अज्झयणं) आवश्यक सूत्र का एक ही अध्ययन है। (अज्झयणाइं) वा बहुत से अध्ययन हैं? तथा (उद्देसो) एक उद्देश है वा (उद्देसा) बहुत से उद्देश हैं? गुरु कहने लगे (आवस्सयस्सणं) आवश्यक सूत्र (णो अंगं) एक अंग नहीं है (णो अंगाइं) न बहुत से अंग हैं (सुयक्खंधो) आवश्यक का एक श्रुतस्कंध है किन्तु (णो सुयक्खंधा) बहुत श्रुतस्कंध नहीं है। (णो-अज्झयणं) और आवश्यक का एक अध्ययन नहीं है किन्तु (अज्झयणाइं) बहुत से अध्ययन हैं, अर्थात् आवश्यक सूत्र के षट् अध्याय हैं (णो उद्देसो णो उद्देसा) आवश्यक सूत्र का न तो एक उद्देश है, और न बहुत से उद्देश है इस लिये आवश्यक को (तम्हा आवस्सयं)

१ सेकिंतं आवस्सयमित्यादि अत्र से शब्दो मागध देशी प्रसिद्धो अथ शब्दार्थे वर्तते। अथ शब्दस्तु वाक्यो पन्यासार्थस्तथा चोक्तम् अथ प्रक्रिया प्रश्नानन्तर्यमं मङ्गलोपन्यास निर्वचन समुच्चये ष्वित, किमिति परम प्रश्ने तदिति सर्वनाम पूर्व प्रक्रान्त-परामर्शार्थे, इत्यादि टीकायाम् ॥ ६ ॥

(निक्खिविस्सामि) निक्षेपों करके वर्णन करूंगा (सुयं निक्खिविस्सामि) श्रुत को भी निक्षेपण करूंगा, (खंधं निक्खिविस्सामि) स्कंध को भी निक्षेपण करूंगा और (अज्झयणं निक्खिविस्सामि) अध्ययन को भी निक्षेपों करके निक्षेपण करूंगा, (जत्थ जंजाणिज्जा) जिस जीवादि वस्तुओं में जितना निक्षेपा जाने, (निक्खेवं निक्खिवे) उस में उतना निक्षेपों का निक्षेपण करे (निरवसेसं) सर्व प्रकार से, अपितु, (जत्थवि य न जाणिज्जा) जिस वस्तु में निक्षेप का अधिक प्रकार न जाने उसमें भी (चउक्कयं निक्खिवे तत्थ) चारों निक्षेप निर्विशेषता से निक्षेपण करे, अर्थात् उस वस्तु में भी चार निक्षेप करके दिखलावे ।

भावार्थ—यदि आवश्यक सूत्र का अनुयोग किया जाता है तो क्या आवश्यक सूत्र एक अंग है, या बहुत से अंग हैं, अथवा एक श्रुतस्कन्ध है या बहुत से श्रुतस्कन्ध हैं? तथा एक अध्ययन है या बहुत से अध्ययन हैं, अथवा एक उद्देश है या बहुत से उद्देश हैं ?। गुरु कहते हैं आवश्यक सूत्र एक अंग नहीं है न बहुत से अंग हैं, एक श्रुतस्कन्ध है, बहुत से श्रुतस्कन्ध नहीं हैं, और एक अध्ययन नहीं है किन्तु बहुत से अध्ययन हैं, न एक उद्देश है न बहुत से उद्देश हैं इसलिये आवश्यक सूत्र के निक्षेप करेंगे और श्रुत के भी चार निक्षेप करेंगे, स्कंध के भी चार निक्षेप करेंगे, अध्ययन शब्द के भी चारों निक्षेप करेंगे क्योंकि जिन पदार्थों के जितने निक्षेप जाने उनके उतने निक्षेप निर्विशेषता से करे, अपितु जिन पदार्थों के पूर्ण स्वरूप को न जाने, उनमें भी चार निक्षेप करे अर्थात् उन पदार्थों को भी चार निक्षेपों द्वारा वर्णन करें, इसलिये अब आवश्यक का वर्णन किया जाता है ।

"अथ आवश्यक विशेष"

मूल—१ सेकिंतं आवस्सयं ? आवस्सयं चउविहं पण्णत्तं तंजहा नामावस्सयं १ ठवणावस्सयं २ दव्वावस्सयं ३ भावावस्सयं ४ सेकिंतं नामावस्सयं २ ? जस्सणं जीवस्सवा अजीवस्सवा जीवाणंवा अजीवाणंवा तदुभयस्सवा, तदुभयाणंवा आवस्सएत्ति नामं कज्जइ सेतं नामावस्सयं ॥ ६ ॥

हिन्दी पदार्थ-(सेकिंतं) अब वह आवश्यक कौनसा है ? गुरु कहते हैं (आवस्सयं) आवश्यक (चउविहं पण्णत्तं) चतुर्विध से प्रतिपादन किया गया है (तंजहा) जैसे कि (नामावस्सयं) नामावश्यक (ठवणावस्सयं) स्थापनावश्यक (दव्वावस्सयं) द्रव्यावश्यक (भावावस्सयं) भावावश्यक, (सेकिंतं नामावस्सयं) शिष्य ने प्रश्न किया कि हे भगवन् ! वह नामावश्यक किस प्रकार से वर्णन किया गया है ? गुरु कहते हैं कि (नामावस्सयं) नामावश्यक इस प्रकार से है जैसे कि (जस्स जीवस्स) जिस जीव का (वा) अथवा (अजीवस्स) अजीव का (वा) अथवा (जीवाणं) बहुत से जीवों का (वा) अथवा (अजीवाणं) बहुत से अजीवों का (वा) अथवा (तदुभयस्स) जीव अजीव दोनों का (वा) अथवा (तदुभयाणंवा) बहुत से जीवों और अजीवों का (आवस्सएत्ति नामं कज्जइ) आवश्यक इस प्रकार से नाम किया जाता है (सेतं नामावस्सयं) वही नामावश्यक है ।

भावार्थ-शिष्य ने प्रश्न किया कि हे भगवन् ! वह आवश्यक किस प्रकार से वर्णन किया गया है ? गुरु ने उत्तर दिया कि आवश्यक चार प्रकार से वर्णन किया गया है, जैसे कि नामावश्यक १, स्थापनावश्यक २, द्रव्यावश्यक ३, और भाव आवश्यक ४, शिष्य ने फिर पूछा कि हे भगवन् ! नामावश्यक किस को कहते हैं ? गुरु ने उत्तर दिया कि हे शिष्य ! नामावश्यक उसे कहते हैं जैसे कि-किसी ने एक जीव का अथवा एक अजीव का तथा दोनों का या बहुत जीवों और अजीवों का या दोनों का "आवश्यक" ऐसे नाम रख दिया सो वही नामावश्यक है, क्योंकि-फिर लोग उसे भी आवश्यक, इस नाम से आमन्त्रण देते हैं, इसलिये ही उसे नामावश्यक कहा जाता है ।

◎ अथ स्थापनावश्यक विषय ◎

मूल-सेकिंतं ठवणावस्सयं ? २ जण्णं कट्ठकम्मे वा चित्तकम्मेवा पोत्थकम्मेवा लेप्पकम्मेवा गंथिमेवा वेढिमेवा पूरिमेवा संघाइमेवा अक्खेवा वराडएवा एगोवा अणेगोवा सब्भावट्ठवणाएवा असब्भावट्ठवणाएवा आवस्सएत्तिठवणा ठविज्जइ सेतं ठवणावस्सयं २ नामट्ठवणाणं को पइविसेसो ?

णामं आवकहियं ठवणा इत्तरियावा होज्जा आवकहिया वा (सेतं ठवणावस्सयं) ॥ ७ ॥

हिन्दी पदार्थ-(सेकिंतं ठवणावस्सयं) शिष्य ने प्रश्न किया कि हे भगवन् ! स्थापना आवश्यक कौनसा है ? गुरु ने उत्तर दिया कि भो शिष्य ! (ठवणा-वस्सयं) स्थापना आवश्यक इस प्रकार से है जैसे कि-(जण्णंकट्ठकम्मे) जो काष्ठ कर्म अर्थात् काष्ठ में कोतड़ी हुई मूर्ति (वा) अथवा (चित्तकम्मे) चित्र कर्म-पित्रचर (वा) अथवा (पोत्यकम्मे) वस्त्र की पुतली (लेप्पकम्मे) लेपकर्म्य (वा) अथवा (गंठिमे) गुंथकर बनाया हुवा कोई रूप (वा) अथवा (वेढिमे) वेष्टन से बनाया रूप (वा) अथवा (पूरिमे) पीत्तल कांस्य आदि धातुएं पिघला कर प्रतिमा आदि बनवाना वा माला आदि, (वा) अथवा (संघाइमेवा) वस्त्रादि खंडों के संघात से बना हुवा रूप संघातन (अक्खेवा) अक्षरूप पासा आदि (वराडए) अथवा वराट (कौडी प्रमुख) कर्म (एगोवा) एक रूप अथवा (अणेगोवा) अनेक रूप । (सब्भावठवणा एवा) सद्‌स्थापना जैसे कि-आवश्यक की आकृति पूर्ण प्रकार से स्थापन करना और (असब्भावठवणाएवा) असद् रूप स्थापना जैसे कि वराट को आवश्यक मानना (आवस्सएत्तिठवणा ठविज्जइ) इस प्रकार से उक्त वस्तु को आवश्यक के अभिप्राय से स्थापना करना, (सेतंठवणावस्सयं) वही स्थाप-नावश्यक है, अर्थात् इस प्रकार से स्थापनावश्यक माना जाता है, शिष्य ने फिर प्रश्न किया कि हे भगवन् ! (नामठवणाणं) नाम स्थापना का (कोपइ-विसेसो) परस्पर क्या विशेष है ? क्योंकि दोनों का स्वरूप परस्पर प्रायः एक सामान्य है, गुरु कहते हैं कि भो शिष्य ! (णामं आवकहियं) नाम आयु पर्य्यन्त रहता है अथवा यावत् उस द्रव्य की स्थिति है तावत् काल पर्य्यन्त उसका नाम रहता है किन्तुं स्थापना (ठवणा इत्तरियावा होज्जा) स्तोक काल तथा (आ-वकहियावा हविज्जा) आयु पर्य्यन्त भी रह सकती है क्योंकि स्थापना मानने वाले की इच्छा पर निर्भर है इसलिये इतना ही परस्पर दोनों का भेद है (सेतं-ठवणावस्सयं) सो वही स्थापनावश्यक है ॥

१ जैसे मुनि आवश्यक क्रियायें करता है, तद्वत् ध्यानयुक्त उसकी स्थापना करना उसे सद् स्थापना कहते हैं ।

भावार्थः-स्थापना आवश्यक उसका नाम है जो चित्रादि कर्म हैं उनमें आवश्यक की पूर्णाकृति की जाय. यदि वे उसी प्रकार स्थापना की हुई है, तब वे सद्रूप स्थापना कही जाती है, यदि वराटादि को स्थापना माना हुआ है, तब वो असद् रूप स्थापना मानी जाती है और नामस्थापना का परस्पर भेद इतना ही है कि नाम आयु पर्यन्त रह सक्ता है स्थापना अल्प काल की भी हो सक्ती है, यावत् स्थिति पर्यन्त भी रह सक्ती है, सो इतना ही भेद होने पर इन को नाम और स्थापनावश्यक कहते हैं; किन्तु यहां पर स्थापना निक्षेप ही दिखाया गया है नतु पूजनीय; क्योंकि यदि वह पूजनीय ही होता तो सूत्रकार यहां उसका अवश्य ही विधान कर देते । अब द्रव्यावश्यक का वर्णन किया जाता है ।

मूल-सेकिंतं दव्वावस्सयं? २ दुविहं पएणत्तं तंजहा आगमओ य नोआगमओ य। सेकिंतं आगमओ दव्वावस्सयं? २ जस्सणं आवस्सएत्ति पयं सिक्खियं ठियं जियं मियं परिजियं नामसमं घोससमं अहीणक्खरं अणच्चक्खरं अव्वाइद्धक्खरं अक्खलियं अमिलियं अवच्चामेलियं पडिपुन्नं पडिपुन्नघोसं कंठोट्ठविप्पमुक्कं गुरुवायणोवगयं सेणं तत्थ वायणाए पुच्छणाए परियट्टणाए धम्मकहाए णो अणुप्पेहाए कम्हा ? अणुवओगो दव्वमितिकट्टु ॥ ८ ॥

हिन्दी पदार्थ-(सेकिंतं दव्वावस्सयं) वह कौनसा द्रव्यावश्यक है ? गुरु कहते हैं (दव्वावस्सयं) द्रव्यावश्यक (दुविहं पन्नत्तं) द्वि प्रकार से प्रतिपादन किया गया है । (तंजहा) जैसे कि (आगमओय) आगम से और (नो आगमओय) नो आगम से, शिष्य ने फिर प्रश्न किया कि हे भगवन् ! (सेकिंतं आगमओ दव्वावस्सयं) आगम से द्रव्यावश्यक कौनसा है ? गुरु ने उत्तर दिया कि हे शिष्य ! (आगमओ दव्वावस्सयं) आगम से द्रव्यावश्यक उसका नाम है कि, (जस्सणं) जिसने (आवस्सएत्ति) आवश्यक ऐसे (पयं) पद (सिक्खियं) सीख लिया है (ठियं) हृदय में स्थित कर लिया है (जियं) अनुक्रमता पूर्वक पठन किया (मियं) अक्षरादि की मर्यादा भी भली भान्ति से जानता है (प-

रिजियं) अननुक्रमता से भी पठन कर लिया है (नामसमं) अपने नाम की माफक याद किया गया है (घोससमं) उदात्तादि घोष भी सम हैं (अहीणक्खरं) फिर हीन अक्षर भी नहीं है (अणच्चक्खरं) अधिक अक्षर भी नहीं है (अ-व्वाइद्धक्खरं) विपरीत अक्षर भी नहीं है और (अक्खलियं) पाठ स्खलित भी नहीं है (अमिलियं) परस्पर मिले हुए अक्षर नहीं है तथा अन्य सूत्रों के पाठों के साथ भी वर्ण एकत्व नहीं हुए हैं (अवच्चामेलियं) अन्य सूत्रों के पाठ एकार्थ रूप ज्ञात करके अन्य सूत्र से एकत्व कर देने उसका नाम वच्चामेलियं है, तथा स्वमति से कल्पित करके अधिक पाठ कर देना उसका नाम भी वच्चा मेलियं है सो वह आवश्यक रूप पद अवच्चामेलियं रूप है फिर वह (पडिपुन्नं) प्रतिपूर्ण और (पडिपुन्नघोसं) प्रतिपूर्ण घोष है फिर (कंठोट्ठविप्पमुक्कं) कंठ और ओष्ट–होठ–दोनों के दोषों से रहित है, क्योंकि शुद्ध उच्चारण कंठादि के दोषों से रहित ही होता है; अपितु (गुरुवायणोवगयं) गुरु से पठन किया हुआ है; किन्तु स्वबुद्धि से अध्ययन नहीं किया और नाही अविनय भाव से पठन किया है (सेणं तत्थ वायणाए) सो वह आवश्यक पद वाचना करके (पुच्छणाए) पृच्छणा करके (परियट्टणाए) परिवर्तना करके (धम्मकहाए) धर्मकथा करके तो पुनः पुनः अस्खलित किया हुआ है वह द्रव्यावश्यक है क्योंकि (णोअणुप्पेहाए) अर्थ ज्ञान पूर्वक अनुप्रेक्षा करके जिसकी पठनादि क्रिया एं नहीं की अथवा अनुप्रेक्षा नहीं की । शिष्य ने फिर प्रश्न किया कि (कम्हा) क्यों ! उसे द्रव्यावश्यक कहा जाता है ? गुरु ने उत्तर दिया कि (अणुवओगो-दव्वमितिकट्टु) अनुपयोग की अपेक्षा वह द्रव्यावश्यक है, क्योंकि यदि वाचनादि क्रिया उपयोगपूर्वक की जाय तब वे भावावश्यक ही हो जाता, द्रव्यावश्यक इसी लिये ही कहा गया कि वह उपयोगशून्य है ।

भावार्थ--द्रव्यावश्यक द्वि प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि–आगम से १ और नो आगम से २ सो आगम रूप द्रव्यावश्यक उसका नाम है कि जिसने "आवश्यक" ऐसे एक पद सीखलिया है और उसको चतुर्दश ज्ञान के दोषों से रहित ही उच्चारण करता है और घोष भी जिसका शुद्ध है, कं-ठादि स्थान भी पवित्र है, साथ ही वाचना १ पृच्छना २ परिवर्तना ३ धर्मोपदेश ४ में भी उक्त पद को व्यवहृत करता है; किन्तु एक अनुप्रेक्षा ही नहीं करता इस-लिये वह द्रव्यावश्यक है, क्योंकि यदि उपयोग पूर्वक अनुप्रेक्षा हो तब वह भा-

वावश्यक हो जाए सो अनुपयोग के ही कारण से उसे द्रव्यावश्यक ऐसा पद दिया गया है।

अथ नयों की अपेक्षा से सूत्रकार द्रव्यावश्यक का विवेचन करते हैं।

मूल—णेगमस्सणं एगो अणुवउत्तो आगमओ एगं दव्वावस्सयं दोन्नि अणुवउत्ता आगमओ दोन्नि दव्वावस्सयाइं तिन्निअणुवउत्ता आगमओ तिन्निदव्वावस्सयाइं एवं जावइया अणुवउत्ता आगमओ तावइयाइं दव्वावस्सयाइं एवमेव ववहारस्सवि ॥ ९ ॥

हिन्दी पदार्थ—(णेगमस्सणं एगो अणुवउत्तो) नैगमनय के मतमें यदि एक व्यक्ति अनुपयोग पूर्वक आवश्यक करता है तो (आगमओ) आगम से (एगं दव्वावस्सयं) एक द्रव्यावश्यक है अर्थात् नैगमनय के मत में एक द्रव्यावश्यक है यदि (दोन्निअणुवउत्ता) दो अनुपयोग पूर्वक आवश्यक करते हैं तो (आगमओ) आगम से (दोन्निदव्वावस्सयाइं) दो द्रव्यावश्यक हैं यदि (तिन्निअणुवउत्ता) तीन पुरुष अनुपयोग पूर्वक आवश्यक करते हैं तो (आगमओ) आगम से (तिन्निदव्वावस्सयाइं) तीन द्रव्यावश्यक हैं (एवं जावइया) इसी प्रकार से यावत् परिमाण (अणुवउत्तो) अनुपयोग पूर्वक आवश्यक करते हैं (आगमओ) आगम से (तावइयाइं) उतने ही परिमाण में (दव्वावस्सयाइं) द्रव्यावश्यक होते हैं (एवमेव ववहारस्सवि) इसी प्रकार मन्तव्य व्यवहार नयका भी है और अपि शब्द समुच्चार्थ में है॥

भावार्थ—नैगमनय के मतमें यावत् प्रमाण अनुपयुक्त आगम से द्रव्यावश्यक करते हैं उतने ही नैगम नय के मत से द्रव्यावश्यक होते हैं, अपितु इसी प्रकार व्यवहार नयका भी मन्तव्य है।

मूल—संगहस्स णं एगो वा अणेगो वा अणुवउत्तोवा अणुवउत्तावा आगमओ दव्वावस्सयं वा दव्वावस्सयाणि वा से एगे दव्वावस्सए ॥ १० ॥

हिन्दी पदार्थ—(संगहस्सणं) संग्रह नयके मत से (एगो) एक (वा)अ-

थवा (अणेगो) अनेक (अणुवउत्तो) एक अनुपयुक्त पूर्वक (वा)अथवा (अ-णुवउत्तावा) वहुत अनुपयुक्त पूर्वक (दव्वावस्सयंवा) एक द्रव्यावश्यक करता है अथवा (दव्वावस्सयाणिवा) वहुत जन द्रव्यावश्यक करता है (से एगे द-व्वावस्सए) वह संग्रह के मत से एक ही द्रव्यावश्यक है ॥

भावार्थ–संग्रह नय के मत से यदि एक वा अनेक पुरुष अनुपयोग पूर्वक द्रव्यावश्यक करते हैं वह सर्व एक ही द्रव्यावश्यक है क्योंकि समान और वि-शेष भाव को संग्रहनय एक रूप से ही मानता है ॥

अथ ऋजुसूत्र नय विषय ।

मूल–उज्जुसुयस्स एगो अणुवउत्तो आगमओ एगं दव्वावस्सयं पुहुत्तं नेच्छइ ॥ ११ ॥

हिन्दी पदार्थ–(उज्जुसुयस्स एगो अणुवउत्तो आगमओ एगं दव्वावस्सयं पुहुत्तं नेच्छइ ॥ ११ ॥) ऋजुसूत्रनय के मत से एक अनुपयुक्त आगम से जो द्रव्यावश्यक करता है वह एकही द्रव्यावश्यक है; किन्तु यह नय पृथक् २ आ-वश्यक की इच्छा नहीं करता क्योंकि यह नय वर्तमान काल के पदार्थों को ही स्वीकार करता है ॥ ११ ॥

भावार्थः–ऋजुसूत्रनय के मत में यावन्मात्र प्रमाण आगम से द्रव्यावश्यक करते हैं वे सर्व अनुपयुक्त होने से एकही आगम से द्रव्यावश्यक है क्योंकि अनुपयुक्त भाव सर्व में एक समान ही है, इसलिये यह नय पृथक् २ आवश्यक को स्वीकार नहीं करता ॥

अथ शब्द, समभिरूढ एवंभूत नय विषय ।

मूल–तिण्हं सद्दनयाणं जाणए अणुवउत्ते अवत्थु क-म्हा ? जइ जाणए अणुवउत्ते ण भवइ जइ अणुवउत्ते जाणए ण भवइ तम्हा नत्थि आगमओ दव्वावस्सयं सेतं आगमओ दव्वावस्सयं ॥ १२ ॥

हिन्दी पदार्थः–(तिण्हं सद्दनयाणं) तीनों शब्द नयों के मत से जैसे कि शब्दनय १ समभिरूढनय २ एवंभूतनय ३ इन तीनों नयों का नाम ही शब्दनय है क्योंकि यह नय विशेष करके शुद्ध शब्दों पर ही स्थित हैं और

शुद्ध वस्तुओं को मानते हैं जैसे कि–तीनों नयोंके मत से (जाणए अणुव-उत्ते अवत्थु) जो जानता तो है किन्तु उपयोग पूर्वक नहीं है वह अवस्तु है (कम्हा) क्योंकि–(जइ जाणए) यदि जानता है तब (अणुवउत्तेण भवइ) अनुपयोग युक्त नहीं है (जइ अणुवउत्ते जाणए न भवइ) यदि अनुपयोग युक्त हैं तब जानकार नहीं है–(तम्हा) इसी वास्ते (नत्थि आगमओ दव्वावस्सयं) तीनों नयों के मत में आगम से द्रव्यावश्यक होता ही नहीं क्योंकि यह तीन नय शुद्ध वस्तु पर ही आरूढ हैं और उस आगमरूप द्रव्यावश्यक को अवस्तु रूप से ज्ञात करते हैं इसलिये वे आगम रूप द्रव्यावश्यक को अवस्तु करके मानते हैं (सेतं आगमओ दव्वावस्सयं) वही आगम से द्रव्यावश्यक का स्वरूप है सो यह द्रव्यावश्यक का स्वरूप पूर्ण हुआ।

भावार्थः–तीनों शब्द नय अनुपयुक्त आगम रूप द्रव्यावश्यक को अवस्तु रूप से मानते हैं, क्योंकि इन नयों का मन्तव्य है कि–यदि जानता हैं तब अ-नुपयुक्त नहीं हैं यदि अनुपयुक्त है तब जानता नहीं है सूत्रों में आत्मा का गुण ज्ञान माना है इसलिये ज्ञाता और अनुपयुक्त यह दोनों परस्पर विरोधी भाव हैं इसलिये इन नयों के मत से आगम रूप से द्रव्यावश्यक नहीं होता है सो यह आगम रूप द्रव्यावश्यक का विवेचन पूर्ण हुआ।

अथ नो आगम द्रव्यावश्यक का स्वरूप वर्णन किया जाता है।

मूल–सेकिंतं नो आगमओ दव्वावस्सयं ? २ तिविहं प-ण्णत्तं तंजहा–जाणगसरीर दव्वावस्सयं १ भवियसरीर दव्वावस्सयं २ जाणगसरीर भवियसरीरवइरित्तं दव्वा-वस्सयं ३ सेकिंतं जाणगसरीरदव्वावस्सयं ? २ आवस्सएत्ति पयत्थाहिगार जाणगस्स जं सरीरयं ववगयचुयचाविय चत्त देहं जीवविप्पजढं सिज्जागयं वा संथारगयंवा निसीहि-यागयं वा सिद्धासिलातलगयंवा पासित्ताणं कोईवएज्जा अहो ! णं इमेणं सरीर समुस्सएणं जिणोव इट्ठेणं भावेणं आवस्सए-त्तिपयं आघवियं पण्णवियं परूवियं दंसियं निदंसियं उवदंसियं,

जहा कोदिठ्ठंतो ? अयं महुकुंभे आसी अयं घयकुंभे आसी सेतं जाणगसरीरदव्वावस्सयं ॥ १३ ॥

हिन्दी पदार्थ-(सेकिंतं नो आगमओ दव्वावस्सयं) नो आगम से वह द्रव्यावश्यक कौनसा है जो केवल क्रियारूप तो है किन्तु पठन रूप नहीं है अपितु नो शब्द सर्वथा पठन का निषेध करता है अर्थात् क्रियारूप नो आगम द्रव्यावश्यक कौनसा है ऐसी पृच्छा करने पर गुरु कहने लगे कि (नो आगमओ दव्वावस्सयं तिविहं पन्नत्तं तंजहा) नो आगम द्रव्यावश्यक तीन प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि-(जाणग सरीर दव्वावस्सयं) प्रथमज्ञ शरीर द्रव्यावश्यक जैसे कि आवश्यक के पूर्ण ज्ञाता का शरीर (भविय सरीर दव्वावस्सयं) द्वितीय भव्य शरीर द्रव्यावश्यक जैसे कि आवश्यक के सीखने वाले का शरीर और (जाणग सरीर भविय सरीर वइरित्तं दव्वावस्सयं) तृतीयज्ञ शरीर और भव शरीर व्यतिरिक्त द्रव्यावश्यक-यह तीनों प्रकार का नो आगम द्रव्यावश्यक है (सेकिंतं जाणग सरीर दव्वावस्सयं) ज्ञ शरीर द्रव्यावश्यक कौनसा है--गुरु कहने लगे कि (जाणग सरीर दव्वावस्सयं) ज्ञ शरीर द्रव्यावश्यक इस प्रकार से है जैसे कि--(आवस्सएत्ति) आवश्यक के (पयत्थाहिगार) पद और अर्थ के अधिकार (जाणगस्स) के जानकार का (जं सरीरयं) जो शरीर है किन्तु (ववगयचुयचाविय चत्तदेहं) चेतना से रहित प्राणों से मुक्त होकर केवल शरीर ही उपचय रूप है अर्थात् जो जीव से रहित शरीर है (जीव विप्पजढं) और जीव का त्यागन किया हुआ जो शरीर हैं (सिज्जागयंवा) शय्या गत हो अथवा (संथारगयंवा) संस्तारकगत हो अर्थात् प्राण छूटने पर भी समाधिस्थ हो अथवा बैठा हुआ हो (सिद्धसिलातलगयंवा) जिस शिला पर मुनि अनशन करते हैं उस शिला पर (पासित्ताणं) देख करके (कोई वएज्जा) कोई भाषण करता कि (अहोणं इमेणं सरीर समुस्सएणं) अहो यह शरीर का समूह (जिणोव इट्ठेणं भावेणं) जिनेन्द्र देव के उपदिष्ट भावों करके (आवस्सएत्तिपयं) आवश्यक इस प्रकार का पद (आघवियं) प्रतिपादन किया (पएणवियं) प्रज्ञप्त किया (परूवियं) विशेष करके प्रतिपादन किया (दंसियं निदंसियं उवदंसियं) आवश्यक पद को दिखाया और विशेष करके दिखलाया फिर उसका उपदेश करके इसने परिपक्व किया था (जहा को दिट्ठंतो) किस दृष्टान्त से यह कथन सिद्ध हो जैसे कि (अयं महुकुंभे आसी)

यह मधु का घट था अथवा (अयं घयकुंभे आसी) यह घृत का घट था क्योंकि घट वर्तमान काल में विद्यमान रूप तो है; किन्तु घृत और मधु से रहित है. इसी प्रकार घट तुल्य शरीर तो है अपितु घृत और मधु के समान जीव आवश्यक करने वाला वर्तमान काल में नहीं है इसी लिये ही उसका नाम (सेतं-जाणगसरीर दव्वावस्सयं) ज्ञ शरीर द्रव्यावश्यक है अर्थात् आवश्यक के जानकार का शरीर है।

भावार्थः--नो आगम द्रव्यावश्यक तीन प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि ज्ञ शरीर द्रव्यावश्यक १ भव्य शरीर द्रव्यावश्यक २ ज्ञ शरीर भव्यशरीर व्यतिरिक्त, द्रव्यावश्यक ३ सो ज्ञ शरीर द्रव्यावश्यक उसका नाम है जो आवश्यक को पूर्ण विधि से करता हुआ किसी स्थान पर मृत्यु को प्राप्त होगया, किन्तु आवश्यक की आकृति पूरी उसी प्रकार से है जैसे कि आवश्यक के करने वालों की होती है, इस में केवल जानने वाले की अपेक्षा से नैगमनय के मतसे ज्ञ शरीर द्रव्यावश्यक कहा जाता है; जैसे मधु वा घृत का घट था।

अथ भव्य शरीर द्रव्यावश्यक विषय।

मूल-सेकिंतं भवियसरीर दव्वावस्सयं ? २ जे जीवे जोणिजम्मणनिक्खंते इमेणं चेव आत्तएणं सरीरसमुस्सएणं जिणोवइट्ठेणं भावेणं आवस्सएत्तिपयं सेयकाले सिक्खिस्सइ न ताव सिक्खइ जहा को दिट्ठंतो ? अयं महुकुंभे भविस्सइ अयं घयकुंभे भविस्सइ सेतं भवियसरीर दव्वावस्सयं सेकिंतं जाणगसरीरभवियसरीरवतिरित्तं दव्वावस्सयं ? २ तिविहं पन्नत्तं तंजहा लोइयं कुप्पावयणियं लोउत्तरियं। सेकिंतं लोइयं दव्वावस्सयं ? २ जे इमे राईसर तलवर माडंविय कोडुंविय इब्भ सेट्ठि सेणावइ सत्थवाह प्पभिइओ कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए सुविमलाए फुल्लुप्पल कमल कोमलुम्मिलियम्मि अह पंडुरे पहाए रत्तासोगप्पगासकिंसुयसुय मुह गुंजद्धरागसरिसे कमलायर नलिणि संडवोहए उट्ठिय-

म्मि सूरे सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे तेयसा जलंते मुहधोयण-दंतपक्खालणतेल्लफणिहसिद्धत्थयहारियालिय अद्दागधूव पुप्फ मल्ल गंध तंबोल वत्थाइयाइं दव्वावस्सयाइं काउं तओ पच्छा रायकुलं वा देवकुलं वा आरामं वा उज्जाणं वा सभं वा पवं वा णिगच्छंति सेतं लोइयं दव्वावस्सयं । सेकिंतं कुप्पावयणियं दव्वावस्सयं ? २ जे इमे चरग चीरिय चम्मखंडिय भिक्खोंड पंडुरंग गोयम गोव्वइय गिहिधम्म धम्मचिंतग अविरुद्ध विरुद्ध वुड्ढसावयपभिइओ पासंडत्था कल्लं पाउप्पभाए रयणीए जाव तेयसा जलंते इंदस्स वा खंदस्स वा रुद्दस्सवा सिवस्स वा वेसमणस्स वा देवस्स वा नागस्स वा जक्खस्स वा भूयस्स वा मुगुंदस्सवा अज्जाएवा दुग्गाएवा कोट्टकिरियाएवा उवलेवण सम्मज्जणआवरिस्सणधूव पुप्फ गंध मल्लाइयाइं दव्वावस्सयाइं करेंति सेतं कुप्पावयणियं दव्वावस्सयं ॥ १४ ॥

हिन्दी पदार्थ--(सेकिंतं भावियसरीर दव्वावस्सयं) शिष्यने प्रश्न किया कि हे भगवन् ! कि भव्य शरीर द्रव्यावश्यक कोनसा है ? गुरु कहते हैं (भविय सरीर दव्वावस्सयं) भव्यशरीरद्रव्यावश्यक उसका नाम है जैसे कि (जेजीवे जोणिजम्मणणिक्खंते इमेणं चेव आत्तएणं सरीर समुस्सएणं जिणोव इट्ठेणं भावेणं आवस्सएत्ति पयं सेयकाले सिक्खिस्सइ नतावसिक्खइ) जो जीव योनि के द्वारा जन्म को प्राप्त हो गया है और वह आगामी काल में अपने शरीर समुदाय करके जिनेन्द्र उपदिष्ट भाव से " आवश्यक " ऐसे पद भविष्यत् काल में सीखेगा; किन्तु वर्तमान काल में उसने आवश्यक के पद को धारण नहीं किया है--इस में दृष्टान्त देते हैं कि (जहा को दिट्ठंतो अयं घयकुंभेभविस्सइ) जैसे कि यह घट घृत के लिये होगा ।

---

१ स्याद् भव्य चैत्य चौर्य समेषुयात् ॥ स्यादादिषु चौर्य शब्देन समेषुच संयुक्तस्य यात् पूर्व इत् भवति ॥ प्राकृत व्याकरण--अ० ८ पा० २ सूत्र ॥ १०७ ॥

(अयं महुकुंभे भविस्सइ) यह कुंभ मधु के वास्ते होगा, अर्थात् इस में घृत इसमें मधु रखा जावेगा (सेतं भवियसरीरदव्वावस्सयं) वही भव्य शरीर द्रव्यावश्यक है अर्थात् होने वाले शरीर को भव्य शरीर कहते हैं (से-किंतं जाणगसरीरभवियसरीरवइरित्तं दव्वावस्सयं) इसके पश्चात् शिष्य ने प्रश्न किया कि हे भगवन्! ज्ञ शरीर और भव्य शरीर व्यतिरिक्त द्रव्यावश्यक कौनसा है ? (जाणगसरीरभवियसरीरवइरित्तंदव्वावस्सयं) गुरु कहते हैं कि ज्ञ शरीर और भव्य शरीर व्यतिरिक्त द्रव्यावश्यक (तिविहं पएणत्तं तंजहा) तीन प्रकार से प्रतिपादन किया गया है-जैसे कि (लोइयं १ कुप्पावयणियं २ लोगुत्तरियं ३) लौकिक १ कुप्रावचनिक* २-परमत वालों का-और लौकोत्त-रिक ३ (सेकिंतं लोइयं दव्वावस्सयं? लोइयं दव्वावस्सयं) शिष्य ने फिर प्रश्न किया कि लौकिक द्रव्यावश्यक कौनसा है ? गुरु कहते हैं कि लौकिक द्रव्या-वश्यक इस प्रकार से है जैसे कि-(जइमे राईसरतलवर माडंबिय कोडुंबिय इब्भ सेट्ठिसेणावइसत्थवाह पभिइओ) जो राजा, ईश्वर, कोतवाल-थानेदार-माडंबि, बड़े परिवार वाला, प्रधान श्रेष्टि-शेठ-सेनापति, ÷ सार्थवाह प्रमुख लोग (कल्लंपाउप्पभायाए) प्रभातकाल में किंचित् मात्र प्रकाश होते हुए और (रयणीए) रात्रि के व्यतिक्रम होने पर (सुविमलाए) अतिनिर्मल आकाश होने पर (फुल्लुप्पल कमलकोमलुम्मिल्लियम्मि) विकसित होगये हैं कमल और नेत्र और (अह पंडुरेपभाए) प्रातःकाल में प्रकाश भी होगया है और जिसमें निम्नलिखित प्रकार से सूर्योदय हुआ है (रत्तासोगप्पगास किंसुयसुयं मुहगुंजद्धरागसरिसे) लाल अशोक वृक्ष के समान और केसुओं के पुष्प वा शुक मुख-तोते के तुल्य-तथा गुंजार्द्ध-अर्द्ध गुंजा, रती- के रंग स-मान (कमलागर) कमलों के जलाशय को जिसमें (नलीण संडबोहए) नलि नादि कमल हैं उनको अथवा कमलों के वन को प्रतिबोधित करता हुआ (उट्ठियंमिसूरे) उदय हुआ सूर्य जिसकी (सहस्सरस्सिंमि) सहस्र किरणें हैं ऐसा (दिणयरे) दिनकर (तेयसा) तेजसे (जलंते) जो प्रकाश मान है उसके उदय होने पर (मुहधोयणं) मुख धोते हैं ॥ (दंतपक्खालण) दांत प्रक्षालण करते हैं (तेल्लफणिहसिद्धत्थय) तेल

* अर्थात् निन्दनीय भूत आदिकों की उपासना करने वाला ॥

÷ सह इनेन वर्तत इति सेना, इनः प्रभो सूर्ये नृपे इत्यादि ॥

अथवा केश समाचरण फणि अर्थात्–कंघी–(सिद्धत्थय) सरसों के पुष्प (हरियालिए) हरिताल अर्थात् दूब (अदाग) दर्पण, (धूव पुप्फ) धूप पुष्प (मल्लगंध) माला अथवा सुगंध (तंबोल) ताम्बूल–पान–(वत्थमाइयाइं) वस्त्रादि को भी पहिरते हैं (दव्वावस्सयाइं करेंति) सो द्रव्यावश्यक इस प्रकार से वह नित्य ही करते हैं। फिर वह इस प्रकार से द्रव्यावश्यक करके (तओपच्छा रायकुलं वा देवकुलं वा सभं वा पवं वा) तत्पश्चात् राजकुल में अथवा देवकुल में अथवा सभा में पानी के स्थान में (आरामं वा उज्जाणंवाणिगच्छंति) आराम अर्थात् बाग में अथवा उद्यान में–क्रीड–जाते हैं (सेतंलोइयं दव्वा-वस्सयं) वही लौकिक द्रव्यावश्यक है (सेकिंतं कुप्पावयणियं दव्वावस्सयं कुप्पावयणियं दव्वावस्सयं) अथ कुप्रावचन का वर्णन किया जाता है, शिष्य ने प्रश्न किया कि हे भगवन्! कुप्रावचनिक द्रव्यावश्यक कौनसा है? गुरु कहने लगे कि भो शिष्य! कुप्रावचनिक द्रव्यावश्यक इस प्रकार से है जैसे कि (जे इमे चरग) जो चरक (चीरिय) वस्त्र के पहिरने वाले (चम्मखंडिय) चर्म खंड रखने वाले तथा मृग शाला धारण करने वाले (भिक्खोंड) भिक्षा करने वाले (पंडुरंग) भस्म शरीर के लगाने वाले (गोयम गोयव्वइयं) वृषभादि के निमित्त से आजीविका करने वाले जैसे वृषभ को शृंगार के आजीविका के करने वाले और गौवृत्ति के समान भोजन करने वाले अर्थात् जैसे गो क्रिया करती है उसी प्रकार काम करने वाले और (गिहधम्म) गृहस्थधर्म के उपदेशक (धम्म चिंतगा) धर्म के चिन्तन करने वाले अर्थात् लौकिक शास्त्र अध्ययन करने वाले (अविरुद्ध) विनयवादी–विरुद्ध–नास्तिकवादी (वुड्ढसावय) वृद्ध श्रावक ब्राह्मणों का नाम है क्योंकि इन्होंने जैन धर्म को श्री ऋषभदेव भगवान् के समय धारण करके फिर पीछे त्याग कर दिया इसी करके इन्होंका नाम आजपर्यन्तभी वृद्ध श्रावक करके चला आता है (पभिओ) सो वृद्ध श्रावक प्रमुख (पासंडथा) यावत्प्रमाण पाखंडी है वे सर्व (कल्लंपा उप्पभायाए) प्रातःकाल होते ही जिस समय किञ्चिन्मात्र ही प्रकाश होता है (रमणीय) रात्रि व्यतिक्रम होजाती है (जावजलंते) यावत् जाज्वल्यमान सूर्य प्रकाश करता है उसी समय वे उक्त सर्व (इंदस्सवा) इन्द्र को अथवा (खंदस्सवा) स्कंद को (रुदस्सवा) रुद्र को (सिवस्सवा) शिवको (वेसमणस्सवा) वैश्रवण को (देवस्सवा) देव को (नागस्सवा) नागकुमार को (जक्खस्सवा) यक्ष को (भूयस्सवा) भूत को (मुगुंदस्सवा) बलदेव को (अ-

ज्जाएवा) आर्य देवी अथवा (दुग्गाएवा) दुर्गा को (कोट्टकिरियाएवा) —कोट्ट क्रिया उसका नाम है जो देवियां हिंसा करवाती हैं—प्रतिमा और यह सर्व उपचार नय के मत से इन के आयतनही समझने चाहिये क्योंकि यह द्रव्यावश्यक कुप्रावचनिक तीनों काल की अपेक्षा से है इसलिये इनके मंदिर ही ज्ञात करने चाहिये सो वे लोग इनके स्थानों को अथवा इनकी प्रतिमाओं को (उवलेवण) लेपन करते हैं (सम्मज्जण) संमार्जन करते हैं (वरिसण) पानी के छींटे देते हैं। (धूव पुप्फ) धूप और पुष्प चढाते हैं (गंध मल्लाइयाइं) सुगंध और पुष्पमालादि भी चढाते हैं इस प्रकार से वे (दव्वावस्सयाइं करेंति) द्रव्यावश्यक करते हैं (सेतं कुप्पावयणियं दव्वावस्सयं) यही कुप्रावचनिक द्रव्यावश्यक है क्योंकि कु अव्यय निन्दा अर्थ में व्यवहृत है इसलिये जिन का कु प्रावचन है वे उक्त प्रकार से द्रव्यावश्यक करते हैं।

भावार्थः—भव्य शरीर द्रव्यावश्यक उसका नाम है जिस जीव ने भविष्यत् काल में अर्हन् देव के उपदेशानुकूल आवश्यक सीखना है, किन्तु वर्तमान काल में वह आवश्यक का अज्ञाता है जैसे यह घट, मधु वा घृत के लिये होगा. इसी प्रकार अमुक व्यक्ति भविष्यत् काल में आवश्यक सीखेगा उसी का नाम भव्य शरीर द्रव्यावश्यक है अपितु जो ज्ञ शरीर भव्य शरीर व्यतिरिक्त आवश्यक है वह तीन प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि १ लौकिक१, कुप्रावचनिक २, लोकोत्तरिक ३ सो लौकिक द्रव्यावश्यक उसको कहते हैं जैसे कि—राजा, ईश्वर, (तलवर) कोतवाल, धनाढ्य कौटुंबिक, प्रधान सेठ, सेनापति, सार्थवाह, प्रभृति लोक प्रातःकाल होते ही मुखधावन, दंतप्रक्षालन, तैल कंघी सरसों का पुष्प, दुर्वादि का स्पर्श करके दर्पण को देखकर फिर धूप पुष्पमाला सुगंध ताम्बूल वस्त्रादि को पहिन कर फिर इसी प्रकार से नित्यमेवही द्रव्यावश्यक करके तत्पश्चात् राजद्वार वा यथेष्ट स्थानों में चले जाते हैं सो इसी का ही नाम लौकिक द्रव्यावश्यक है, किन्तु जो कुप्रावचनिक है जैसे कि—चरक चीर को धरने वाले, चर्म खंडको पहिरने वाले भिक्षा से आजीविका करने वाले अंगपर भस्म लगाने वाले, गौतमवृत्ति, वा गोव्रति से निर्वाह करने वाले गृहस्थ धर्म के उपदेशक अथवा धर्म के चिन्तक विनयवादी वा नास्तिक आदि लोग प्रातः काल होते हुए इन्द्रादि के मन्दिरों में जाकर यथोचित क्रियायें करते हैं सो उसीका ही नाम कुप्रावचनिक द्रव्यावश्यक है और अब लौकोत्तर द्रव्यावश्यक

का वर्णन किया जाता है।

मूल-सेकिंतं लोगुत्तरियं दव्वावस्सयं ? २ जेइमे समण गुणमुक्कजोगी छक्कायणिरणुकंपा हया इव उद्दामा गया इव निरंकुसा घट्ठा मट्ठा तुप्पोट्ठा पंडुरपडपाउरणा जिणाणमणाणाए सच्छंदं विहरिउणं उभओकालमावस्सगस्सउवट्ठंति सेतं लोगुत्तरियं दव्वावस्सयं सेतं जाणगसरीरभविय सरीरवइरित्तं दव्वावस्सयं सेतं नो आगमओ दव्वावस्सयं सेतं दव्वावस्सयं।

पदार्थ-(सेकिंतं लोगुत्तरियं दव्वावस्सयं २) शिष्य ने प्रश्न किया कि हे भगवन्! लोकोत्तर द्रव्यावश्यक कौनसा है? गुरु ने उत्तर दिया कि (जे इमे समण गुणमुक्कजोगी) जो यह प्रत्यक्ष साधु गुणों से रहित और जिसने अपने योगों को संयम से बाहिर कर लिया है और (छकाय निरणुकंपा) षट्काय के जीवों की अनुकंपा से भी रहित होगया है अपितु निर्दय होकर (हया इव उद्दामा) अश्व की नांई शीघ्र गामी है क्योंकि जैसे घोड़ा चलता हुआ अविवेक से जीवों का उपमर्दन करता है उसी प्रकार वह मुनि होगया, किन्तु (गया इवणिरंकुसा) हस्ती की नांई निरंकुश है किसी की भी आज्ञा नहीं मानता (घट्ठा मट्ठा तुप्पोट्ठा) नवनीत करके जांघों को मर्दन किया हुआ है, तैलादि करके शरीर और मस्तिष्क भी अलंकृत है फिर जिसके ओष्ठ भी शृंगारित हैं अपितु (पंडुरपडपाउरणा) श्वेत वस्त्र को जिसने पहिरा हुआ है, और (जिणाणमणाणाए) अर्हतों की विना आज्ञा (सच्छंदं विहरिउणं) स्वच्छन्दता से विचर करके जो (उभओकाल आवस्सयस्स उवट्ठंति) दोनों काल में आवश्यक को करता है अर्थात् आवश्यक के लिये दोनों काल में सावधान होता है, अपितु सूत्र में चतुर्थी के स्थान में षष्ठी विभक्ति दी हुई है सो वह (सेतं लोगुत्तरियं दव्वावस्सयं) लोकोत्तर द्रव्यावश्यक है क्योंकि यह द्रव्यावश्यक इसलिये है कि कथन मात्र ही यह आवश्यक है और यहां पर नो शब्द देश निषेधक है (सेतं जाणगसरीरभविय सरीर वइरित्तं दव्वावस्सयं) अब इस की पूर्ति इस प्रकार से की जाती है कि

यही ज्ञ शरीर भव्य शरीर से व्यतिरिक्त द्रव्यावश्यक है (सेतं नो आगमओ दव्वावस्सयं सेतं दव्वावस्सयं) अथानन्तरम् नोआगम द्रव्यावश्यक पूर्ण हो गया है और इसी का ही नाम द्रव्यावश्यक है।

भावार्थ–लौकोत्तरिक द्रव्यावश्यक इसका नाम है जो साधु गुणों से रहित षट्काय में दया न करने वाला अश्व की नाईं शीघ्रगामी गजवत् निरंकुश श्वेत वस्त्रों को धारण करने वाला, अपितु जिसने शरीर को शृंगारित किया हुआ अतः अरिहंतों की आज्ञा से रहित स्वच्छन्दता से विचरकर जो दोनों समय आवश्यक के लिये सावधान होजाता है उसी का नाम ज्ञ शरीर भव्य शरीरव्यतिरिक्त लौकोत्तरिक नो आगम द्रव्यावश्यक है क्योंकि पठन रूप ही उसका कर्तव्य है। इसीलिये उसका नाम नो आगम द्रव्यावश्यक है।

इस के अनन्तर भावावश्यक का व्याख्यान किया जाता है।

* अथ भावावश्यक विषय *

मूल–सेकिंतं भावावस्सयं ? २ दुविहं पएणत्तं तंजहा आगमओय नो आगमओय सेकिंतं आगमओ भावावस्सयं ? २ जाणए उवउत्ते सेतं आगमओ भावावस्सयं ॥

पदार्थ–(सेकिंतं भावावस्सयं) शिष्य ने प्रश्न किया कि हे भगवन् ! भावावश्यक कौनसा है ? तब गुरु कहने लगे (भावावस्सयं) भावावश्यक (दुविहं पएणत्तं तंजहा) दो प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि (आगमओय नो आगमओय) आगम से और नोआगम से अर्थात् क्रिया रूप। शिष्य ने फिर प्रश्न किया कि हे भगवन् ! (सेकिंतं आगमओभावावस्सयं २) आगम से भावावश्यक कौनसा है ? तब गुरुने उत्तर दिया कि (जाणए उवउत्ते) जो आवश्यक के स्वरूप का उपयोग पूर्वक जानता है, उसी का नाम आगम से भावावश्यक है (सेतं आगमओभावावस्सयं) अथानन्तर इसी का नाम आगम से भावावश्यक है सो आगम से भावावश्यक का स्वरूप पूर्ण हुआ।

भावार्थः–भावावश्यक दो प्रकार से वर्णन किया गया है–एक तो आगम से और द्वितीय नो आगम से जो आवश्यक के स्वरूप को उपयोग पूर्वक जानता है और आत्मा के भाव उसमें स्थित हैं वह आगम से भावावश्यक है।

---

१ –श्वेतवस्त्रादि इसके विशेषण पद हैं ॥

अथ द्वितीय भेद विषय ।

मूल–सेकिंतं नो आगमओ भावावस्सयं ? २ तिविहं पन्नतं तंजहा लोइयं कुप्पावयणियं लोगुत्तरियं, सेकिंतं लोइयं, भावावस्सयं ? २ पुव्वण्हे भारहं अवरण्हे रामायणं सेतं लोइयं भावावस्सयं।

पदार्थः–(सेकिंतं नो आगमओ भावावस्सयं२) शिष्यने पूछा कि हे भगवन् ! नो आगम भावावश्यक कौनसा है ? गुरुने उत्तर दिया कि भो शिष्य ! नो आगम भावावश्यक (तिविहं पन्नतं तंजहा) तीनों प्रकार से कथन किया गया है जैसे कि–(लोइयं कुप्पावयणियं लोगुत्तरियं) लौकिक १ कुप्रावचानिक २ लौकोत्तरिक ३ (सेकिंतं लोइयं भावावस्सयं २ पुव्वण्हे भारहं अवरण्हे रामायणं सेतं लोइयं भावावस्सयं) शिष्यने फिर प्रश्न किया कि हे भगवन् ! लौकिक भावावश्यक कौनसा है ? गुरुने फिर कहा कि हे पृच्छक ! जो लोग प्रथम प्रहर में भारत और अपरान्ह (पश्चिम) काल में रामायण सुनते हैं वा पठन करते हैं उसी का नाम लौकिक भावावश्यक है ।

भावार्थः–नो आगम भावावश्यक तीन प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि लौकिक १ कुप्रावचनिक २ लौकोत्तरिक ३ अपितु जो प्रातःकाल में भारत वा वेदाध्ययन करते हैं और अपरान्ह काल में रामायणादि ग्रन्थों को भावपूर्वक अध्ययनादि करते हैं उसी का नाम लौकिक भावावश्यक है ।

अथ कुप्रावचनिक भावावश्यक विषय ।

मूल–सेकिंतं कुप्पावयणियं भावावस्सयं ? २ जेइमे चरग चीरिय जाव पासंडत्था इज्जं जलि होम जप उंदुरुक्कण मोकारमाइयाइं भावावस्सयाइं करेंति सेतं कुप्पावयणियं भावावस्सयं ।

पदार्थ–(प्रश्न) कुप्रावचानिक भावावश्यक कौनसा है ? (उत्तर) कुप्रावचनिक भावावश्यक उसका नाम है जैसे कि (जेइमे चरग चीरियं जीव पासंडत्था) जो चरक वस्त्रधारी यावत् पाषंडी जो पूर्व कथन किये गये हैं वे सर्व (इज्जं-

ञ्जलि) यज्ञंत्थ अपने इष्टदेव के सन्मुख हाथ जोड़ते हैं तथा निज माता को नमस्कार करते हैं अथवा (इंद्रंजलि) अपने इष्टदेव को अंजलि द्वारा नमस्कार करके तथा पानी देकर (होम) हवनादि क्रियायें करते हैं फिर (जप) गायत्री प्रमुख मन्त्रों का जाप करते हैं (वंदुरुकणमोक्कारमाइयाइं भावावस्सयं करेंति) मुख से वृषभवत् शब्द करके फिर नमस्कार आदि पूर्ण क्रियायें करते हुए इस प्रकार से भावावश्यक पूर्ण करते हैं, (सेतं कुप्पावयणिय भावावस्सयं) यही कुप्रावचनिक भावावश्यक है ।

भावार्थ-कुप्रावचनिक भावावश्यक उसे कहते हैं जो परमतवाले लोग अपने इष्टदेव को अंजलि द्वारा नमस्कार करते हैं पुनः हवन और जाप करके वृषभवत् शब्द करते हैं, फिर नमस्कार प्रमुख भावावश्यक उक्त प्रकार से करके अपने भावावश्यक की पूर्ति करते हैं, यही कुप्रावचनिक भावावश्यक है ।

अथ लोकोत्तरिक भावावश्यक विषय ।

मूल-सेकिंतं लोगुत्तरियं भावावस्सयं ? २ जणं इमे समणे वा समणी वा सावओ वा साविया वा तच्चित्ते तम्मणे तल्लेसे तदज्झवसिए तत्तिव्वज्झवसाणे तदट्ठोवउत्ते तदप्पियकरणे तब्भावणाभाविए रागमणे अविमणे जिण वयण धम्मरागरत्ते तब्भावणा भाविए अण्णत्थ कत्थइ मणमकरेमाणे उभओकालं आवस्सयं करेइ सेतं लोगुत्तरियं भावावस्सयं सेतं नोआगमओ भावावस्सयं तस्सणं इमे एगट्ठिया नाणाघोसा णाणावंजणा नामधेज्जा भवंति तंजहा आवस्सयं अवस्सकरणिज्जं धूवणिग्गहो विसोहीय । अज्झयणच्छक्कवग्गो । नाओ आराहणामग्गो ॥ १ ॥ समणेण सावएणय । अवस्सकायव्वयं हवइ जम्हा । अंतो अहो निसस्सय तम्हा आवस्सयं नाम ॥ २ ॥ सेतं आवस्सयं ॥

पदार्थ-(सेकिंतं लोगुत्तरियं भावावस्सयं २) लोकोत्तरिक भावावश्यक कौनसा है ? ऐसे शिष्य के प्रश्न करने पर गुरु कहने लगे कि भो शिष्य !

लौकोत्तरिक भावावश्यक इस प्रकार से है कि जैसे (जणं समणोवा); जो साधु अथवा (समणीवा) साध्वी अथवा (सावओवा) श्रावक वा (सावियावा) श्राविका (तच्चित्ते) जिनका आवश्यक में चित्त है (तम्मणे) आवश्यक में मन है (तल्लेसे) आवश्यक में भाव है (तदज्झवसिए) आवश्यक के ही अध्यवसाय है (तत्तिव्वज्झवसाणं) अन्तःकरण में आवश्यक का तीव्र अध्यवसाय है (तदट्ठोवउत्ते) और आवश्यक के अर्थों में उपयोग लगा हुआ है (तदप्पियकरणे) आवश्यक के योग्य उपकरण जैसे कि रजोहरण, मुखपति आदि भी शुद्ध है अर्थात् आवश्यक के अनुकूल है (तब्भावणाभाविए) और आवश्यक के विषय ही एकांत भाव है और उसी की भावना है फिर (रागमणे) आवश्यक के विषय एकाग्रमन है (अविमणे) अपितु विमन नहीं है जैसे कि चित्त की विकलता (जिणवयण) जिन वचनों में अथवा (धम्माणुरागरत्तमणे) धर्मानुराग में रक्त है मन जिनका फिर (अएणत्थ कत्थइ मणं अकरेमाणे) अन्यत्र कहीं पर मन न करते हुए जो (उभओकालं आवस्सयं करेई) दोनों काल में शुद्ध आवश्यक को करते हैं (सेतं लोगुत्तरियं भावावस्सयं) वही लोकोत्तर भावावश्यक है (सेतं नो आगमओभावावस्सयं) अथ इसी का नाम नो आगम से भावावश्यक है (सेतं भावावस्सयं) अथानन्तर इसी प्रकार से भावावश्यक होता है और यही भावावश्यक है किन्तु (तस्सणं इमे एगट्ठिया) उस आवश्यक के परमार्थ करके एकार्थ रूप (नाणाघोसा) नाना प्रकार के घोष हैं (नाणा वंजणा नामधेज्जा भवंति) और नाना प्रकार के व्यञ्जनों से युक्त इस आवश्यक के नाम भी हैं (तंजहा) जैसे कि (आवस्सयं अवस्सं करणिज्जं) आवश्यक उसी का नाम है जो अवश्य करणीय है अपितु यह शब्दार्थ है किन्तु पर्यायार्थ इस प्रकार से है जैसे कि ज्ञानादि गुण वा मोक्ष जिसके वश में है उसी का नाम आवश्यक है अथवा सर्व प्रकार से इन्द्रिय जिसके वश में हो उसी का नाम आवश्यक है अथवा जो सर्व गुणों का आवास भूत है वही आवश्यक है सो यह आवश्यक (धुवनिग्गहो) ध्रुव और इन्द्रियों के निग्रह करने वाला है (विसोहीयं) कर्मों की शुद्धि करने वाला है (अज्झयणच्छक्क-वग्गो) सामायिक आदि षट् अध्यायों का एक वर्ग है (नाओ आराहणामग्गो) न्यायकारी है जीव को आराधना कराने वाला और मोक्ष का मार्ग है सो

(समणेणं) साधु को अथवा (सावएण) श्रावक को उपलक्षण से साध्वी और श्राविकाओं को (अवस्सकायव्वयं हवइ जम्हा अंतो अहोनिसस्स तम्हा आवस्सयं नामं २) जो रात्रि दिवस के अन्तर में अवश्य ही करणीय हैं, इसी करके आवश्यक इसका नाम स्थापित है अथवा जो दोनों समय अवश्य-करणीय हैं इसी करके आवश्यक इसका नाम स्थापित हुआ है (सेतं आव-स्सयं) इस प्रकार से आवश्यक का स्वरूप है।

इतिश्री अनुयोग द्वार सूत्र में आवश्यक नामक प्रथमाधिकार समाप्त हुआ ॥८॥

भावार्थः—लोकोत्तरिक भावावश्यक उसका नाम है जो साधु साध्वी श्रावक श्राविकायें एकाग्रता के साथ जिनवचनों में चित्त रखते हुए दोनों समय आवश्यक करते हैं वही नो आगम से लोकोत्तरिक भावावश्यक है अथवा इस आवश्यक के एकार्थरूप शब्दों के नाना प्रकार के घोष व नाना प्रकार के व्यंजन हैं और चतुर्विध के संघ को अवश्य ही करणीय है क्योंकि ध्रुव और इन्द्रियों के निग्रह करने वाला विशुद्धि का मार्ग है सामायिकादि षट् अध्याय रूप एक वर्ग है न्यायकारी और मोक्षकामी मार्ग है साधु साध्वी और श्रावक श्राविकाओं को रात्रि और दिवस के अन्तर में अवश्य ही करणीय है, इसी लिये आवश्यक इसका नाम है और गुणों का आश्रयभूत है। इतिश्री अनुयो-गद्वार सूत्र में (शास्त्रमेवा) आवश्यक नाम प्रथमाधिकार समाप्त हुआ॥

अथ श्रुतशब्द के निक्षेप चतुष्टय के विषय में कहते हैं -

मूलं—सेकिंतं सुयं २ चउव्विहं पण्णत्तं तंजहा नामसुयं ठवणासुयं दव्वसुयं भावसुयं नाम ठवणाओ भणिओ सेकिंतं दव्वसुयं ? २ दुविहं पण्णत्तं तंजहा आगमओय नो आगमओय सेकिंतं आगमओ दव्वसुयं ? २ जस्सणं सुएत्ति पयं सिक्खियं ठियं मियं जियं परिजियं जीव णो अणुप्पेहाए कम्हा ? अ-णुवओगो दव्वमितिकट्टु णेगमस्सणं एगो अणुवउत्तो आग-मओ एगे दव्वसुयं जाव जाणए अणुवउत्ते ण भवइ सेतं आ-

गमओ दव्वसुयं। सेकिंतं नो आगमओ दव्वसुयं ? २ तिविहं पराणत्तं तंजहा जाणगसरीरदव्वसुयं भवियसरीरदव्वसुयं जाणगसरीरभवियसरीरवइरित्तंदव्वसुयं सेकिंतं जाणग सरीरदव्वसुयं ? २ सुयपदत्थाहिगारजाणयस्स जं सरीरयं ववगयचुयच। विय चत्तदेहं तंचेव पुव्वभणियं भाणियव्वं जाव सेत्तं जाणगसरीर दव्वसुयं। सेकिंतं भवियसरीरदव्वसुयं ? २ जे जीवे जोणीजम्मणनिक्खंते जहा दव्वावस्सए तहेव भाणियव्वं जाव सेत्तं भवियसरीरदव्वसुयं सेकिंतं जाणग सरीरभवियसरीरवइरित्तं दव्वसुयं २ तं० पत्तयपोत्थयलिहियं।

पदार्थ—(सेकिंतं सुयं २ चउविहं पन्नत्तं तंजहा) शिष्य ने प्रश्न किया कि हे भगवन्! श्रुत कितने प्रकार से वर्णन किया है ? गुरु ने उत्तर दिया कि हे शिष्य ! श्रुत चार प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि (नामसुयं ठवणासुयं दव्वसुयं भावसुयं) नामश्रुत १ स्थापनाश्रुत २ द्रव्यश्रुत ३ और भावश्रुत ४ सो (नाम ठवणाओ भणिओ) नामश्रुत और स्थापना श्रुत का वर्णन पूर्ववत् है जैसे आवश्यक के स्वरूप में किया गया है उसी प्रकार जानना (सेकिंतं दव्वसुयं २ (प्रश्न) द्रव्य श्रुत के कितने भेद हैं (उत्तर) द्रव्य श्रुत (दुविहं पन्नत्तं तंजहा) दो प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि (आगमओय नोआगमओय) आगम से द्रव्यश्रुत (सूत्र) और नोआगम से द्रव्यश्रुत (सेकिंतं आगमउ दव्वसुयं २) (प्रश्न) आगम से द्रव्य सूत्र (श्रुत) कैसे होता है (उत्तर) आगम से द्रव्यश्रुत इस प्रकार से है जैसे कि (जस्सणं सुएत्ति पयं सिक्खियं ठियं मियं जियं परिजियं जाव णो अणुप्पेहाए) जिसने श्रुत ऐसे पद सीख लिया है और हृदय में स्थापना कर लिया है और जिसको अक्षरों की मात्रा का भी बोध होगया है और पूछने पर अस्खलित है किन्तु पश्चात् अनुपूर्वी से भी स्पष्ट हो रहा है यावत् अनुप्रेक्षा से रहित होकर पठन किया जाता है अर्थात् पठन करते समय उपयोग पूर्वक पठन नहीं किया जाता (कम्हा) किस लिये (अणुवउग्गो दव्वमितिकट्टु) अनुपयोग पूर्वक होने पर ही उसको द्रव्यश्रुत कहा जाता है सो (णेगमस्सणं एगो अणुव

इत्तो आगमउ एगं दव्वसुयं) नैगमनय के मत से एक अनुपयुक्त आगम से एक द्रव्य श्रुत है (जाव जाणए अणुवउत्तेण भवइ) यावत् यदि जानता है तब अनुपयुक्त नहीं है । यदि अनुपयुक्त है तब जानता नहीं है जहां पर्यन्त यह पाठ है वहां पर्यन्त (सेतं आगमउ दव्वसुयं) वही आगम से द्रव्य श्रुत है–(सें- किं तं नो आगमउ दव्वसुयं २) (प्रश्न) वह कौनसा है जो नो आगम से द्रव्य श्रुत माना जाता है (उत्तर) द्रव्य से नो आगम श्रुत (तिविहं पन्नत्तं तंजहा) तीनों प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि:–(जाणयसरीरदव्वसुयं) ज्ञ शरीर द्रव्य श्रुत १ (भविय शरीर दव्वसुयं) भव्यशरीर द्रव्यश्रुत २ (जाणग सरीरभावियसरीरवइरित्तं दव्वसुयं) ज्ञ शरीर भव्य शरीर व्यतिरिक्त द्रव्य श्रुत (सेकिंतं जाणगसरीरदव्वसुयं २) शिष्यने फिर प्रश्न किया कि हे भग- वन् ! ज्ञ शरीर द्रव्यश्रुत किसको कहते हैं ? गुरु ने उत्तर दिया कि हे शिष्य ! ज्ञ शरीर द्रव्यश्रुत उसका नाम है जैसे कि–(सुयपदत्थाहिगार जाणयस्स जं सरीरयं ववगयचुयचावियचत्तदेहं तं चेव पुव्वभणियं भाणियव्वं जावसेत्तं जाणय सरीरदव्वसुयं) श्रुतपद के अर्थाधिकार के ज्ञाता का जो शरीर है जिससे जीव च्युत होगया है और शरीर जीव से रहित है जैसे कि पूर्व वर्णन किया गया है उसी का नाम ज्ञ शरीर द्रव्यश्रुत है (से किंतं भवियसरीरदव्वसुयं २ जे जीवे जोणी जम्मण निक्खंत्ते जहा दव्वावस्सयं तहा भाणियव्वं जावसेत्तं भवियसरीरं दव्वसुयं) (प्रश्न) भव्यशरीर द्रव्यश्रुत किस का नाम है (उत्तर) जो जीव योनि के द्वारा जन्म लेकर श्रुतपद सीखेगा जैसे कि–पूर्व द्रव्यावश्यक का वर्णन किया गया है उसी प्रकार द्रव्यश्रुत का वर्णन जान लेना सो वही द्रव्यश्रुत है (सेकिंतं जाणयसरीर भवियशरीरवइरित्तं दव्वसुयं तं० पत्तयपोत्थय लिहियं) शिष्य ने फिर प्रश्न किया कि हे भगवन् ! ज्ञशरीरभव्यशरीरव्यति- रिक्त द्रव्यश्रुत किस का नाम है ? गुरु ने उत्तर दिया कि हे शिष्य ! ज्ञ शरीर भव्य सरीर व्यतिरिक्त द्रव्यश्रुत उसका नाम है जैसे कि–पत्र अथवा पुस्तक पर जो लिखा हुआ श्रुत है उसी का नाम ज्ञ शरीर भव्य शरीर व्यतिरिक्त द्रव्यश्रुत है । पुस्तक को द्रव्यश्रुत का पद इसलिये दिया गया है कि भावश्रुत का अधि- करण है ।

भावार्थः–श्रुत शब्द के भी चार निक्षेप हैं जैसे कि–नाम १ स्थापना २ द्रव्य ३ और भाव ४ । सो नाम और स्थापना का स्वरूप जैसे आवश्यक शब्द के

स्थान पर वर्णन किया गया है वैसे ही जानलेना किन्तु द्रव्यश्रुत के दो भेद हैं आगम से और नोआगम से आगम से पूर्ववत् कथन है जैसे कि–श्रुतशब्द को सर्व प्रकार से धारण किया हुआ है किन्तु अनुपयुक्त पूर्वक है। इसलिये नैगम और व्यवहार नय के मत से यावन्मात्र अनुपयोग पूर्वक पठन करते हों तावन्मात्र द्रव्यश्रुत हैं किन्तु संग्रह और ऋजुसूत्र नय के मत से यावन्मात्र पठन करते हों अनुपयोग पूर्वक होने से एक ही द्रव्यश्रुत है। अपितु तीनों शब्दादिक नयों के मत से अश्रुत है क्योंकि यदि जानता है तो अनुपयुक्त नहीं है। यदि अनुपयुक्त है तब जानता नहीं है। यही द्रव्य से आगम श्रुत है और नोआगम से द्रव्यश्रुत तीनों प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि ज्ञ शरीर द्रव्यश्रुत १ भव्य शरीर द्रव्यश्रुत २ ज्ञ शरीर भव्य शरीर व्यतिरिक्त द्रव्यश्रुत ३ सो प्रथम दोनों का स्वरूप तो पूर्ववत् ही है किन्तु ज्ञशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तश्रुत जो पत्र और पुस्तक पर लिखा हुआ हो तो उसका नाम भी श्रुत है। क्योंकि जो पुस्तकों पर सूत्र लिखे हुए हैं वे आगम से द्रव्य सूत्र हैं, क्रियादिरहित होने से उनकी द्रव्य संज्ञा होगई है ॥ अर्थात् प्राकृत में श्रुत शब्द तथा सूत्र शब्द इन दोनों के लिये केवल "सुय" पद का प्रयोग किया जाता है। इसीलिये अब सूत्र "डोरा" शब्द के विषय में वर्णन किया जाता है।

मूल–अहवा जाणगभवियसरीरवइरित्तंदव्वसुयं पंचविहं पण्णत्तं तंजहा अंडयं बोडयं कीडयं वालयं वक्कयं सेकिंतं अंडयं? २ हंसगब्भाइ बोडयं कप्पासमाइ कीडयं पंचविहं पन्नत्तं तंजहा पट्टे मलए अंसुए चीणंसुए किमिरागे वालयं पंचविहं पण्णत्तं तंजहा उण्णिय उट्टिय मियलोमेय कोतवे किट्टिसे सेत्तं वालयं सेकिंतं वक्कयं सणमाइ सेत्तं वक्कयं सेत्तं जाणगसरीर भवियसरीरवइरित्तं दव्वसुयं सेत्तं नो आगमओ दव्वसुयं सेत्तं दव्वसुयं।

पदार्थः–(अहवा) अथवा (जाणगसरीरभवियसरीरवइरित्तं दव्वसुयं पंचविहं पन्नत्तं तंजहा) ज्ञ शरीर भव्य शरीर व्यतिरिक्त द्रव्यसूत्र पांच प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि–अंडयं बोडयं कीडयं वालयं वक्कयं) अंड से

उत्पन्न होने वाला मूत्रफल से उत्पन्न होने वाला कृमि से अथवा वाल और वल्कल से उत्पन्न होने वाला सूत्र जो हैं सो वे भी ज्ञशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्त सूत्र है। जहां पर कार्य और कारण के सम्बन्ध होने से ही इनको सूत्र शब्द दिया गया है सो (अंडयं हंसगब्भाए) अंडक से हंसगर्भ प्रमुख जान लेना (वोडयं कप्पासमाइं) फल से अथवा वनस्पति प्रमुख से कर्पास का सूत्र २ (कीडयं पंचविहं पन्नत्तं तंजहा पट्टे १ मलए २ अंसुए ३ चीणं सुय ४ किमिरागे ५) कीटक से जो सूत्र की उत्पत्ति है वे पांच प्रकार से कथन कीगई है जैसे कि—पट्ट १ मलयदेश का सूत्र २ अंशुक सूत्र ३ चीनांशुक सूत्र ४ कृमिराग सूत्र ५—यह पांच ही प्रकार के सूत्र की कृमियों से उत्पत्ति होती है इसीलिये इनको सूत्रपद दिया गया है। अपितु (वालयं पंचविहं पन्नत्तं तंजहा) वालों से जो सूत्र की उत्पत्ति होती है वे भी ५ प्रकार से वर्णन कीगयी है जैसे कि—(उण्णिए, उट्टिए, मियलोमए कुतवे किट्टिसे सेत्तं वालयं) उर्णिय के रोमों का सूत्र ऊन, उसी प्रकार ऊंट के रोमों की ऊन और मृग के रोमों का सूत्र अथवा मृगवत् अन्य जीव विशेष के रोमों का सूत्र और ऊंट के रोमों का सूत्र जो ऊनादि के वा नाना प्रकार के संयोग से सूत्र उत्पन्न होता है उसको किट्टस सूत्र कहते हैं ॥ अथवा अश्वादि के रोमों से जो सूत्र उत्पन्न होता है उसको भी किट्टस सूत्र कहते हैं यही वालों का सूत्र है (सेकिंतं वकयं २) (प्रश्न) वल्कल (छालि से कौनसा सूत्र उत्पन्न होता है) (उत्तर) (सणमाइ) सनि आदि यह वल्कल सूत्र हैं (सेत्तं वकयं) यही स्वरूप वल्कल सूत्र का है (सेत्तं जाणग सरीरभवियसरीर वइरित्तं दव्वसुयं) अथानन्तर से यही ज्ञ शरीर भव्य शरीर व्यतिरिक्त द्रव्यसूत्र है (सेत्तं आगम उदव्वसुयं सेत्तं दव्वसुयं) यही आगम से द्रव्य सूत्र है और इसी स्थान पर द्रव्यसूत्रका समास पूर्ण होगया है।

भावार्थः—द्रव्यसूत्र और भी प्रकार से कथन किया गया है जैसे कि—अंडज१ वोंडज २ कीटज ३ वालज ४ वल्कलज ५ अंडज हंसगर्भादि वोडज कर्पासादि कीडज से पट्टज १ और मलय देशोद्भव २ अंशुय ३ चीणांशुक ४ कृमिराग ५, और वालज सूत्र यह हैं कि—ऊर्णादि का सूत्र १ उष्ट्रिकसूत्र २ मृगरोमसूत्र ३ उंदरिक सूत्र ४ किट्टिस सूत्र और वल्कलज सूत्र सनि आदि है यह सर्व ज्ञ शरीर भव्य शरीर व्यतिरिक्त द्रव्यसूत्र है और इसी स्थान पर नो आगम से द्रव्य सूत्र का समास पूर्ण होगया है॥

(अपितु सूत्र शब्द का वर्णन करते हुए जो सूत्र (दोरा) का वर्णन किया गया है वे प्राकृत की शैली के अनुसार किया गया है क्योंकि प्राकृत में सूत्र शब्द दोनों अर्थों में व्यवहृत है ॥

॥ अथ भावश्रुत विषय ॥

मूल—सेकिंतं भावसुयं २ दुविहं पएणत्तं तंजहा आगमओ नोआगमओ सेकिंतं आगमओभावसुयं २ जाणए उवउत्ते सेत्तं आगमओ भावसुयं सेकिंतं नोआगमओभावसुयं? नोआगमओभावसुयं दुविहं पन्नत्तं तंजहा लोइयं लोगुत्तरियं सेकिंतं लोइयंनोआगमओभावसुयं२ जं इमे अन्नाणीहिं मिच्छदिट्ठिहिं सच्छंद बुद्धिमइ विकप्पियं तंजहा भारहं रामायणं भीमासुरुक्ख कोडिल्लयं घोडयसुह सगडभद्दियाओ कप्पासियं नागसुहमं कणगसत्तरीवेसियं वइसेसियं बुद्धसासणं काविलं लोगायतं सट्ठितंत्तं माढरपुराणं वागरणं नाडगाई अहवा बावत्तरिकलाओ चत्तारिय वेया संगोवंगाणं सेत्तंनोआगमओ भावसुयं ।

पदार्थः—(सेकिंतं भावसुयं २ दुविहं पण्णत्तं तंजहा) (प्रश्न) भावश्रुत कितने प्रकार से प्रतिपादन किया गया है (उत्तर) भावश्रुत दो प्रकार से कहा गया है जैसे कि—(आगमउय) आगम से और नो आगम से (सेकिंतं आगमओ भावसुयं २) (पूर्वपत्त) आगम से भावश्रुत कौनसा है (उत्तरपक्ष) आगम से भावश्रुत उसका नाम है (जाणय उवउत्ते सेत्तं आगमओ भावसुयं) जो श्रुत शब्द के अर्थ को उपयोग पूर्वक जानता है वही आगम से भावश्रुत है (सेकिंतं नोआगमओभावसुयं २) (प्रश्न) नो आगम से भावश्रुत कितने प्रकार से है (उत्तर) नो आगम से भावश्रुत (दुविहं पएणत्तं तंजहा) दो प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि—(लोइयं लोगुत्तरियं) लौकिक और लोकोत्तरिक (सेकिंतं लोइयंनोआगमओभावंसुयं २) (पूर्वपत्त) लौकिक नो आगम से भावश्रुत कौनसा है (उत्तरपत्त) लौकिक नो आगम से भावश्रुत उस

का नाम है जैसे कि-(जइमं अन्नाणीहिं मिच्छदिठी हिंसच्छंद बुद्धिमइ विगप्पियं तंजहा) जो अज्ञानी तथा मिथ्यादृष्टियों ने स्वच्छंदता की बुद्धि से कल्पना किये जो ग्रन्थ हैं जैसे कि-(भारहं) भारत (रामायणं) रामायण २ (भीमासुरुक्खं) भीमासुरुक्ख ३ (कोडिल्लयं) कौटिल्य (अर्थ) शास्त्र (घोडयमुहं) घोड़ामुख शास्त्र (सगडभद्दियाउ) शकटभद्रशास्त्र (कप्पासियं) कार्पासिक शास्त्र (नागसुहुमं) नागसूक्ष्म (कणग सत्तरी) कनकसप्तति शास्त्र (वइसेसियं) वैशेषिक शास्त्र (बुद्धसासणं) बुद्धशासन (काविलं) कापिल (सांख्य) शास्त्र (लोगायतं) लोकायित (चार्वाक) शास्त्र (सट्ठी तंत्तं) षष्टितंत्र शास्त्र (माढर पुराणं) माढर पुराण (वागरणं) व्याकरण शास्त्र (नाडगाई) नाटिकादि शास्त्र (अहवा) अथवा (बावत्तरिकलाओ) ७२ कलाओं से लेकर (चत्तारि वेया संगोवंगाणं सेत्तं लोइयंनोआगमओ भावसुयं) चारवेद सांगोपांगयुक्त जैसे कि-शिक्षा १ कल्प २ व्याकरण ३ छन्द ४ निरुक्त शास्त्र ५ ज्योतिः ६ यह षट् शास्त्र वेदों के उपांग कहाते हैं यह सर्व लौकिक नोआगम से भावसूत्र हैं ॥

भावार्थः-भावश्रुत दो प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि-आगम से और नो आगम से सो आगम से भावश्रुत उसका नाम है जो श्रुतशब्द के अर्थ को उपयोग पूर्वक जानता है वही आगम से भावश्रुत है अतः नो आगम से भावश्रुत के दो भेद हैं लौकिक और लोकोत्तरिक, सो लौकिक उसका नाम है जो मिथ्यादृष्टि लोगों ने अज्ञानता के वश होकर नाना प्रकार के शास्त्र कल्पित कर लिये हैं और उन में पदार्थों का असत्य स्वरूप लिखा है वही नो आगम से लौकिक भावश्रुत है ॥

॥ अथ लोकोत्तरिक नो आगम से भावश्रुत विषय ॥

मूल-सेकिंतं लोगुत्तरियंनोआगमओभावसुयं ? २ जंइयमं अरिहंतेहिं भगवंतेहिं उप्पन्ननाणदंसणधरेहिं तीय पडुप्पण्ण मणागयजाणएहिं तिलुक्कनिरक्खियवहियमहियपुइएहिं सव्वण्णूहिं सव्वदरिसीहिं अप्पडिहयवरनाणदंसणधरेहिं पणीयं दुवालसंगं गणिपिडगं तं. आयारो १ सूयगडो २ ठाणं ३ समवाओ ४ विवाहपण्णत्ती ५ नायाधम्मकहाओ ६ उ-

वासगदसाओ ७ अंतगडदसाओ ८ अणुत्तरोववाइयदसाओ ९ पराहावागरणाइं १० विवागसुयं ११ दिट्ठिवाओ य १२ सेत्तं लोगुत्तरियं नोआगमओ भावसुयं सेत्तं नो आगमओ भावसुयं सेत्तं भावसुयं तस्सणं इमे एगट्ठिया नाणाघोसा नाणावंजणा नामधेज्जा प० तं० सुयं १ सुत्तं २ गंथं ३ सिद्धंतं ४ सासणं ५ आणती ६ वयण ७ उवएसो ८ पराणवन्ने ९ आगमेय १० एगट्ठापज्जवा सुत्ते ११ सेत्तंसुयं ॥

पदार्थः-(सेकिंतं लोगुत्तरियं नो आगमओ भावसुयं २) (प्रश्न) वह कौनसा है जो लोकोत्तरिक नो आगम से भावश्रुत है (उत्तर) लोकोत्तरिक नो आगम से भावश्रुत उसका नाम है (जंइमे अरिहंतेहिं भगवंतेहिं उप्पन्ननाण दंसणधरेहिं तीय पडुप्पन्न मणागय जाणएहिं) जो यह अरिहंतो करके भगवन्तो करके पुनः जिन्हों को ज्ञान और दर्शन उत्पन्न होगया है सो ज्ञान दर्शन के धरने वालों ने तथा जो भूतकाल और वर्त्तमान और अनागत काल के ज्ञाताओं ने (तिलोकनिरक्खिय वहिय महिय पुइएहिं) और जिन्होंको देव मनुष्य भवनपत्यादि देवों ने आनन्दाश्रु पूर्णदृष्टि से अवलोकन किया है और जो गुण कीर्त्तनरूप भाव पूजा करके पूजित हैं तथा जो सर्वत्र पूज्य हैं उन्होंने अथवा जो (सव्वरणूहिं सव्वदरिसीहिं) सर्वज्ञ वा सर्वदर्शी हैं उन्होंने फिर (अप्पडिहयवरनाणदंसणधरेहिं) अप्रतिहत (न हनन होने वाला) ज्ञान दर्शन के धरने वालों ने (पणीयं) प्रतिपादन किया है.(दुवालसंगं गणिपिंडगं तंजहा) द्वादशांग की वाणी जो आचार्यों की मञ्जूषा समान है जैसे कि-(आयारो सूयगडो ठाणं समवाओ विवाहपरणत्ती नायाधम्मकहाओ वासगदसाओ अंतगडदसाओ अणुत्तरोववाइयदसाओ पराहावागरणाइं विवागसुयं दिट्ठिवाओय सेत्तं लोगुत्तरियं नो आगमओ भावसुयं सेतं नोआगमओ सुयं सेत्तं भावसुयं) आचारांग सूत्र १ सूत्रकृताङ्ग सूत्र २ स्थानाङ्ग सूत्र ३ समवायांग सूत्र ४ विवाहप्रज्ञप्तिसूत्र ५ ज्ञाताधर्मकथांग सूत्र ६ उपासकदशांग सूत्र ७ अंतकृतदशांग सूत्र ८ अनुत्तरोपपातिक सूत्र ९ प्रश्न व्याकरण सूत्र १० विपाक सूत्र ११ दृष्टिवाद सूत्र १२ यही लोकोत्तरिक नोआगम से भावश्रुत है और इसी स्थान पर नो आगम से भावश्रुत का संक्षेप से वर्णन पूर्ण किया गया है ॥

भावार्थः—लौकोत्तरिक नोआगम से भावश्रुत उसका नाम है जो अर्हन्त भगवन्तों ने जिन्होंको त्रिकाल ज्ञान उत्पन्न होरहा है और सर्वज्ञ सर्वदर्शी हैं त्रैलोक्य पूजनीय हैं सो उन्होंने द्वादशांग की वाणी प्रतिपादन की है अतः वही द्वादशांग लोकोत्तरिक नोआगम से भावश्रुत है। यहां पर नो शब्द देशनिषेधवाची नहीं है (तस्सणं इमे एगट्ठिया नाणा घोसा नाणा वंजणा नामधेज्जा पन्नता तंजहा) उस भावश्रुत के यह एकार्थि नाम जिनके नाना प्रकार के घोष वा व्यञ्जन हैं निम्न प्रकार से कहे जाते हैं ॥

अथ भावश्रुत के पर्य्यायवाची नाम विषय ॥

मूल—सुयं १ सुत्तं २ गंथं ३ सिद्धन्त ४ सासण ५ आणत्ति ६ वयणं ७ उवएसो ८ पराणवणे ९ आगमेय १० एगट्ठा पज्जवासुत्ते सेत्तं सुयं

पदार्थः—भावश्रुत के निम्नलिखित दश नाम हैं जैसे कि-(सुयं) गुरुमुख से श्रवण करने से इस भावसूत्र को श्रुत कहा जाता है १ (सुत्तं) और अर्थ की सूचना होने से ही सूत्र भी इसी का नाम है २ (गंथं) अतः नाना प्रकार की ग्रन्थना होने से ही इसे ग्रन्थ कहते हैं ३ (सिद्धन्त) जो स्वयं प्रमाण में प्रतिष्ठित होकर ज्ञानस्वरूप को दिखलाता है उसी का नाम सिद्धान्त है ४ (सासणं) और शिक्षाप्रद होने से ही शासन कहा जाता है ५ (आणत्ति) और मुक्ति के लिये आज्ञा करना इसी करके भावसूत्र का नाम भी आज्ञा है ६ (वयणं) सत्यवक्ता होने से वचन भी इसी का नाम है ७ (उवएसो) प्राणीमात्र को सत्य में आरूढ़ करने से ही उपदेश भी इसी का नाम है ८ (पराणवणं) सत्य कथन के प्रभाव से प्रज्ञापन नाम है ९ (आगमेय) और परम्परा से आरहा है इसी करके आगम कहा जाता है १० (एगट्ठे पज्जवासुत्ते सेत्तं सुयं) सो यह एकार्थी शब्द पर्य्याय करके भावश्रुत के ही नाम हैं और इन्हीं को भावसूत्र कहा जाता है ॥

इति श्री अनुयोगद्वार सूत्र में द्वितीयाधिकार श्रुतरूप समाप्त हुआ ॥

भावार्थः—भावश्रुत के एकार्थी नाना प्रकार के घोष और व्यञ्जनों से युक्त दश नाम हैं जैसे कि-श्रुत १ सूत्र २ ग्रन्थ ३ सिद्धान्त ४ शासन ५ आज्ञा ६

वचन ७ उपदेश ८ प्रज्ञापन ६ आगम १० सो यह पर्य्यायवाची दश नाम भावश्रुत के हैं और इसी स्थान पर अनुयोगद्वार सूत्र का द्वितीय अधिकार पूर्ण हो गया है। अब स्कन्ध का विवर्ण किया जाता है॥

॥ अथ स्कन्ध शब्द विषय ॥

मूल–सेकिंतं क्खंधे ? २ चउव्विहे पराणत्ते तंजहा नामक्खंधे ठवणाक्खंधे दव्वक्खंधे भावक्खंधे नाम ठवणाओ गयाओ सेकिंतं दव्वक्खंधे ? २ दुविहे पन्नते तंजहा आगमओय नोआगमओ सेकिंतं आगमओ दव्वक्खंधे २ जस्सणं क्खंधेत्ति पयं सिक्खियं सेसं जहा दव्वावस्सए तहा भाणियव्वा नवरं क्खंधाभिलावो जाव सेकितं जाणगसरीर भवियसरीरवइरित्ते दव्वक्खंधे? २ तिविहे पराणत्ते तंजहा सचित्ते अचित्ते मिस्सए।

पदार्थः—(सेकिंतं खंधे ? २ चउव्विहे पन्नत्ते तंजहा नामक्खंधे, ठवणा क्खंधे, दव्वक्खंधे, भावक्खंधे नामं ठवणाओ गयाओ) (प्रश्न) स्कंध शब्द कितने प्रकार से वर्णन किया गया है? (उत्तर) स्कंध शब्द भी चार प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि–नामस्कंध १ स्थापनास्कंध २ द्रव्यस्कंध ३ और भावस्कंध ४ सो नाम और स्थापना का विवर्ण पूर्व आवश्यक के अधिकार में किया गया है (प्रश्न) द्रव्यस्कंध के कितने भेद हैं ? (उत्तर) (सेकिंतं दव्वक्खंधे २ दुविहे पराणत्ते तंजहा आगमओ नोआगमओय) द्रव्यस्कंध भी दो प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि–आगम से और नोआगम से (सेकिंतं आगमओ दव्वक्खंधे २ जस्सणं क्खन्धेति पयं सिक्खियं सेसं जहा दव्वावस्सए तहा भाणियव्वा नवरं क्खंधाभिलावो) (प्रश्न) आगम से द्रव्यस्कंध किस को कहते हैं ? (उत्तर) आगम से द्रव्यस्कंध उस का नाम है जिसने स्कंध ऐसा पद सीख लिया है शेष विवर्ण जैसे द्रव्यावश्यक का है उसी प्रकार जानना चाहिये किन्तु यहां पर स्कंध शब्द का आलापक ग्रहण करो। (जाव-सेकिंतं जाणगसरीरभवियसरीरवइरित्ते दव्वक्खंधे तिविहे पराणत्ते तंजहा स-

चित्ते अचित्ते मिस्सए) यावत् ज्ञशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्त द्रव्यस्कंध तीनों प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि सचित्त १ अचित्त २ और मिश्र ३ ।

भावार्थः—स्कंध शब्द भी चारों प्रकार से वर्णित है जैसे कि—नामस्कंध १ स्थापनास्कंध २ द्रव्यस्कन्ध ३ भावस्कन्ध ४ सो नाम और स्थापना का विवर्ण पूर्व आवश्यक के अधिकार में किया गया है किन्तु द्रव्यस्कन्ध दो प्रकार से हैं आगम से और नोआगम से सो इन का भी विवर्ण पूर्व हो चुका है यावत् ज्ञशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्त द्रव्यस्कन्ध के भी तीन भेद हैं जैसे कि—सचित्त द्रव्यस्कन्ध अचित्त द्रव्यस्कन्ध २ मिश्र द्रव्यस्कन्ध ३ । अब तीनों का विवरण सूत्रकार निम्न प्रकार से करते हैं ।

मूल—सेकिंतं सचित्ते दव्वक्खंधे ? २ अणेगविहे पराणत्ते तंजहा हयक्खंधे गयक्खंधे नरक्खंधे किंनरक्खंधे किंपुरिसक्खंधे महोरगक्खंधे गंधवक्खंधे उसभक्खंधे सेत्तं सचित्ते दव्वक्खंधे ।

पदार्थः—सेकिंतं सचित्त दव्वक्खंधे २ (प्रश्न) सचित्त द्रव्यस्कन्ध कौनसा है ? (उत्तर) सचित्त द्रव्यस्कन्ध (अणेगविहे पराणत्ते तंजहा) अनेक प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि (हयक्खन्धे १ गयक्खन्धे २ नरक्खन्धे ३ किंनरक्खन्धे ४ किंपुरिसक्खन्धे ५ महोरगक्खन्धे ६ गंधवक्खन्धे ७ उसभक्खंधे ८ सेत्तं सचित्ते) अश्वस्कन्ध १ गजस्कन्ध २ मनुष्यस्कन्ध किंनर (व्यंतर विशेष) स्कन्ध किंपुरुपस्कन्ध महोरगस्कन्ध गन्धर्वस्कन्ध यह व्यन्तर विशेष हैं वृषभस्कन्ध यह सब सचित्त द्रव्यस्कन्ध हैं ।

भावार्थ—सचित्त द्रव्यस्कन्ध अनेक प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि वृषभ स्कन्ध अश्वस्कन्ध गजस्कन्ध नरस्कन्ध अथवा किंपुरुपादि देवों के स्कन्ध सचित्तस्कन्ध उसी का नाम है—जिस जीव के साथ स्कन्ध की उत्पत्ति हुई हो जैसे ऊपर लिखे हुए नरस्कंधादि हैं ।

अथ अचित्त द्रव्यस्कन्ध विषय ।

मूल—सेकिंतं अचित्ते दव्वक्खंधे ? २ अणेगविहे पराणत्ते तंजहा दुप्पयसिएक्खंधे तिप्पएसिएक्खंधे जावदसप्पएसिएक्खंधे

संखेज्जपएसिएक्खंधे असंखिज्जपयसिएक्खंधे अणंतपए-सिएक्खंधे सेत्तं अचित्ते दव्वक्खंधे ।

पदार्थ–(सेकिंतं अचित्ते दव्वक्खंधे?२ अणेगविहे पएणत्ते तंजहा (प्रश्न) अचित्त द्रव्यस्कंध कितने प्रकार से वर्णन किया गया है ? (उत्तर) अचित्त द्रव्यस्कंध अनेक प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि (दुप्पएसिएक्खंधे तिप्पएसिएक्खंधे जावदसपएसिएक्खंधे) द्विप्रदेशिक स्कंध, त्रिप्रदेशिक स्कंध यावत् दश प्रदेशिक स्कंध (संखेज्जपएसिएक्खंधे) संख्यात प्रदेशिक स्कंध (असंखेज्जपएसिएक्खंधे) असंख्यातप्रदेशिकस्कंध (अणंतपएसिएक्खंधे) अनंत प्रदेशिक स्कंध (सेत्तं अचित्ते दव्वक्खंधे) यही अचित्त द्रव्यस्कन्ध है, अर्थात् अचित्त द्रव्यस्कंध का समास पूर्ण हुआ ।

भावार्थ–द्विप्रदेशिकादि से लेकर अनन्त प्रदेशिक पर्यंत अचित्त द्रव्यस्कंध होता है उसी का नाम अचित्त द्रव्यस्कंध है क्योंकि परमाणुद्वय के एकत्व होने से द्विप्रदेशिक स्कंध बन जाता है इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिये ।

अथ मिश्र द्रव्यस्कंध विषय ।

मूल–सेकिंतं मीसए दव्वक्खंधे ? २ अणेगविहे पन्नत्ते तंजहा सेणाए अग्गिमक्खंधे सेणाए * मज्झिमक्खंधे सेणाए पच्छिमक्खंधे सेत्तं मीसए दव्वक्खंधे ॥

पदार्थ–(सेकिंतं मीसए दव्वक्खंधे ? २ अणेगविहे पएणत्ते तंजहा) (प्रश्न) मिश्र द्रव्य स्कंध किसका नाम है ? (उत्तर) मिश्र द्रव्यस्कंध के अनेक भेद हैं जैसे कि (सेणाए अग्गिमक्खंधे) सेना का अग्रिम स्कंध है वा (सेणाएमज्झिमस्कंधे) सेना का मध्यम स्कंध है (सेणाए पच्छिमक्खंधे) अथवा सेना का पश्चिम स्कंध है (सेत्तं मीसए दव्वक्खंधे) इस प्रकार मिश्र द्रव्य स्कंध का विवर्ण समाप्त हुआ ।

भावार्थ–मिश्र द्रव्यस्कंध उसका नाम है जिसमें सचित्त और अचित्त

* मध्यमकतमे द्वितायस्य ॥ प्रा० व्या० अ० ८ पा० १ सूत्र ४८ ॥ मध्यम शब्देक तम शब्दे च द्वितीयस्यात ह्रस्वं भवति ॥

दोनों ही सम्मिलित हो सो सेना का अग्रिम स्कंध कहने से सचित्त हस्त्यादि गर्भित हुए अचित्त खड्गादि शस्त्र लिये गये इसी प्रकार मध्यम वा पश्चिम भाग की भी संयोजना कर लेनी चाहिये इसी का नाम मिश्र द्रव्य स्कंध है ।

अथ प्रकारान्तर विषय ।

मूल—अहवा जाणगसरीरभवियसरीरवइरित्ते दव्वक्खंधे तिविहे पण्णत्ते तंजहा कसिणक्खंधे अकसिणक्खंधे अणेगदवियक्खंधे सेकिंतं कसिणक्खंधे ? २ सोचेव हयक्खंधे गयक्खंधे जाव उसभक्खंधे सेत्तं कसिणक्खंधे सेकिंतं अकसिणक्खंधे? २ सोचेव दुप्पएसियाइक्खंधे जाव अणंतपएसिएक्खंधे सेत्तं अकसिणक्खंधे सेकिंतं अणेगदवियक्खंधे? २ तस्स चेव देसे अवचिए तस्स चेव देसे उवचिए सेत्तं अणेगदवियक्खंधे सेत्तं जाणगसरीरभवियसरीरवइरित्ते दव्वक्खंधे सेत्तं नोआगमओ दव्वक्खंधे सेत्तं दव्वक्खंधे ॥

पदार्थः—(अहवा) अथवा (जाणगसरीरभवियसरीरवइरित्त दव्वक्खंध तिविहे पण्णत्ते तंजहा) ज्ञशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तद्रव्यस्कंध तीन प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि (कसिणक्खंधे) सम्पूर्ण स्कंध (अकसिणक्खंधे) असम्पूर्ण स्कंध (अणेगदवियक्खंधे) अनेक द्रव्यस्कंध (सेकिंतं कसिणक्खंधे? २ सोचेव हयक्खंधे गयक्खंधे जाव उसभक्खंधे सेत्तं कसिणक्खंधे) (प्रश्न) सम्पूर्ण स्कंध किसे कहते हैं ? (उत्तर) सम्पूर्ण स्कंध उसी का नाम है जो पूर्व लिखा गया है जैसे कि अश्वस्कंध १ गजस्कंध २ यावत् वृषभस्कंध इत्यादि जान लेने क्योंकि वही सम्पूर्ण स्कंध है । उनमें किसी प्रकार की भी न्यूनता नहीं है (सेकिंतं अकसिणक्खधे) (प्रश्न) असम्पूर्ण स्कंध किसे कहते हैं ? (उत्तर) असम्पूर्ण स्कंध द्विप्रदेशिक से लेकर अनन्तप्रदेशी पर्यन्त जो स्कंध हैं उन्ही का नाम असम्पूर्ण स्कंध है क्योंकि द्विप्रदेशिक से लेकर अनन्तप्रदेशिक पर्यन्त असम्पूर्ण स्कंध ही कहे जाते हैं (सेकिंतं अणेगदवियक्खधे? २) (प्रश्न) अनेक द्रव्यस्कध किसे कहते

हैं (उत्तर) अनेक द्रव्यस्कंध उसका नाम है (तस्स चेव देसे अवचिए तस्सचेव देसे उवचिए सेत्तं अणेगदवियक्खंधे) जो पूर्व अश्वादिस्कंधों का विवरण किया गया है उन्हीं स्कंधों का देशमात्र नखादिस्थान अचित्त जीव प्रदेशों से रहित होता है और हस्त उदरादि स्थान जीव प्रदशों से सहित होते हैं इसी वास्ते उसे अनेक द्रव्यस्कंध कहते हैं क्योंकि एक शरीर में ही देशअपचित्त देशउपचित्त यह दोनों स्वरूप पाए जाते हैं और यही अनेक द्रव्य स्कंध का स्वरू है (सेत्तं जाणगसरीरभवियसरीरवइरित्ते दव्वक्खंधे सेत्तं नोआगमओ दव्वक्खंधे सेत्तं दव्वक्खंधे) अब वह ज्ञ शरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्त द्रव्य स्कंध का स्वरूप नोआगम से सम्पूर्ण हुआ क्योंकि इसी का नाम द्रव्यस्कंध है ।

भावार्थः--अथवा ज्ञ शरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्त द्रव्यस्कंध तीनों प्रकार से अन्य भी कथन किया गया है जैसे कि सम्पूर्ण स्कंध १ असम्पूर्ण स्कंध २ अनेक द्रव्यस्कंध ३ सो सम्पूर्ण स्कंध पूर्ववत् अश्वादि के ही स्कंध हैं और असम्पूर्ण स्कंध द्विप्रदेशी आदिस्कंध से लेकर अनन्तप्रदेशिक स्कन्ध पर्यन्त हैं किन्तु अनेक द्रव्यस्कन्ध उन्हीं का नाम है जो सचित्त स्कंध के विवर्ण में नखादि छोड़ दिये गये थे वही देश अपचित स्कंध हैं और करचरणादि देश उपचित स्कंध हैं सूत्र का आशय यह है कि जो जीव प्रदेशों से सहित स्कन्ध है वह उपचित के नाम से अनेक द्रव्य-स्कन्ध कहा जाता है जो हित हैं वह अपचित संज्ञा के नाम से उच्चारण किये जाते हैं सो इसी स्थान पर ज्ञशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्त नोआगम से द्रव्य-स्कन्ध का स्वरूप पूर्ण होगया है और उक्त लक्षणोंयुक्त को ही द्रव्यस्कंध कथन किया गया है ॥

॥ अब भावस्कन्ध का व्याख्यान किया जाता है ॥

अथ भावस्कंध विषय ।

मूल--सेकिंतं भावक्खंधे? २ दुविहे पण्णत्ते तंजहा आगमओय नोआगमओय सेकिंतं आगमओभावक्खंधे २ जाणए उवउत्ते सेत्तं आगमओभावक्खंधे ।

पदार्थः—(सेकिंतं भावक्खंधे २ दुविहे पण्णत्ते तंजहा) (प्रश्न) भाव-स्कन्ध किसे कहते हैं? (उत्तर) भावस्कंन्ध दो प्रकार से वर्णन किया गया है

जैसे कि--(आगमओ नोआगमओ) आगम से और नोआगम से (सेकिंतं आगमओ भावक्खन्धे? २ जाणए उवउत्ते सेत्तं आगमओ भावक्खन्धे) (प्रश्न) आगम से भावस्कन्ध किसे कहते हैं? (उत्तर) आगम से भावस्कन्ध उसका नाम है जो स्कन्ध शब्द के अर्थ को उपयोगपूर्वक जानता है वही आगम से भावस्कन्ध हैं।

भावार्थः--भावस्कंध द्विप्रकार से प्रतिपादन किया गया है आगम से और नोआगम से, सो जो स्कंध शब्द के अर्थ को उपयोगपूर्वक जानता है वही आगम से भावस्कंध है।

अब नोआगम के विषय में कहते हैं।

मूल--सेकिंतं नो आगमओ भावक्खंधे ? २ एएसिं चेव सामाइयमाइयाणं छण्हं अज्झयणाणं समुदयसमिइसमागमेणं निप्पएणे आवस्सयसुयक्खंधे भावक्खंधेत्ति लब्भइ सेत्तं नो आगमओय भावक्खंधे सेत्तं भावक्खंधे सेत्तं क्खंधे तस्सणं इमे एगट्ठिया नानाघोसा नामधेज्जा भवन्ति तंजहा गण १ काए २ निकाए चिए ३ क्खंधे ४ वग्गे ५ तहेव रासीय ६ पुंजय ७ पिंडे ८ णिगरे ९ संघाए १० आउल ११ समूहे १२ सेत्तंक्खन्धे। आवस्सयस्सणं इमे अत्थाहिगारा भवन्ति तंजहा सावज्जजोग विरइ उकित्तण गुणवओय पडिवत्ती खलियस्स णिंदणावणतिगिच्छ गुणधारणा चेव १ आवस्सयस्सणं एसो पिंडत्थो वरिणओ समासेणं एत्तो एक्केक्कं पुण अज्झयणं कित्तइस्सामि तंसामाइयं चउवीसत्थओ वंदणयं पडिक्कमणं काउस्सग्गो पच्चक्खाणं तत्थ पढमं अज्झयणं सामाइयं तस्सणं इमे चत्तारि अणुओगदाराणि भवंति तंजहा उवक्कमे निक्खेवे अणुगमे नए।

पदार्थः--(सेकिंतं नो आगमओ भावक्खन्धे? २) (प्रश्न) नो आगम से

भावस्कन्ध किसे कहते हैं ? (उत्तर) नो आगम से भावस्कन्ध निम्न प्रकार से है (एएसिं चेवं सामाइयमाइयाणं) यह निश्चय ही सामायिकादि से लेकर (छएहं अज्झयणाणं समुदय (षट् अध्ययनों का जो समुदाय रूप है वह (समिइसमागमेण निप्पएणे आवस्सयसुयक्खन्धे भावक्खन्धेत्ति लब्भइ) सर्व परस्पर एकत्व करने पर आवश्यक सूत्र का भाव स्कन्ध निष्पन्न होता है और जो आवश्यक सूत्र क्रियायुक्त किया जाता है (भावक्खन्धेत्तिलब्भइ) वहीं आवश्यक सूत्र का भावस्कन्ध कहा जाता है अर्थात् जो भाव स्कन्धरूप आवश्यक सूत्र है वह अवश्यही करणीय है क्योंकि--भावस्कन्ध वहीं प्राप्त होता है (सेत्तंनोआगमओय भावक्खन्धे) अब नोआगम से भावस्कन्ध का स्वरूप सम्पूर्ण हुआ क्योंकि (सेत्तं भावक्खन्धे सेत्तंक्खन्धे) यही भावस्कन्ध है और यही स्कन्ध का स्वरूप है (तस्सणं) उस स्कन्ध के (इमे एगट्ठिया नाणा घोसा नामधेज्जा भवंति तंजहा) यह एकार्थिक और नाना प्रकार के घोषयुक्त नाम है जैसे कि अपेक्षा गण भी इस का नाम है १ (काय) षट्काय के समान काय भी है और (निकाय चिय) शरीर के तुल्य निकाय भी कहते हैं (क्खंध) द्विप्रदेशिक आदिस्कंध के समान स्कन्ध है । (वग्गे) गो वर्ग के समान वर्ग (तहेव रासीय) उसी प्रकार शाल्यादि के तुल्य राशि (पुंजय) धानों के समान पुंज और गुड़ादि के समान (पिंड) पिंड भी कहते हैं द्रव्य के तुल्य (णिगरे) निकर भी इस का नाम है (संघाय) संघ मिलने के समान संघात भी इसी का नाम है और महानगर के समान (आउल) आकुल भी कहते हैं और (समूहे) समूह भी इसे कहा जाता है (सेत्तंक्खंधे) यही स्कंध का स्वरूप है और (आवस्सयस्सणं इमे अत्थाहिगारा भवंति तंजहा) आवश्यक के यह आर्थाधिकार होते हैं जैसे कि (सावज्जजोग विरइ) सावद्य योग की विरति रूप प्रथमाध्याय है (उक्कित्तण) गुण कीर्तन रूप द्वितीयाध्याय है (गुणव-ओयपडिवत्ती) गुणयुक्त को वंदना रूप तृतीयाध्याय है (खलियस्स निंदणा-वण तिगिच्छ गुणधारणा चेव) अतिचारों की निवृत्ति रूप चतुर्थ अध्याय है और व्रण की औषधि रूप पंचमाध्याय है मूल गुण और उत्तर गुण के धारण करने रूप छट्ठा-अध्याय है (आवस्सयस्स एसो) यह आवश्यक रूप (पिंड-त्थो वण्णिओ समासेणं) स्कंध का संक्षेप से अर्थ वर्णन किया है किन्तु (एत्तो एक्केक्कं पुण) स्कंध के एक (अज्झयणं कित्तइस्सामि तंजहा) अध्ययन

की व्याख्या करूंगा जैसे कि-(सामाइयं) सामायिक (चउवीसत्थयं चतुर्विंशति स्तवं (वंदयणं) वंदना (पडिकमणं) प्रतिक्रमण (काउसग्गो) कायोत्सर्ग (पचक्खाणं) प्रत्याख्यान (तत्थ पढमं अज्झयणं सामाइयंतस्सणं इमे चत्तारि अणुओगदाराणि भवन्ति तंजहा) उन षट् अध्यायों में से प्रथम अध्ययन सामायिक है उसके यह चार अनुयोगद्वार होते हैं जैसे कि-(उवक्कमे) जो वस्तु अत्यन्त दूर हो उसको निकट करना उसी का नाम उपक्रम है और फिर उसको (निक्खेवे) नामादि निक्षेपों में स्थापन करना उसका नाम निक्षेप है फिर सूत्रानुकूल कार्य करने का नाम (अणुगमे) अनुगम है अपितु (नय) अनन्त धर्मयुक्त वस्तुओं में से एक अंश को लेकर वस्तु के स्वरूप को वर्णन करना उसका नाम नय है उसी नय के द्वारा सदसद् का ज्ञान भली प्रकार से हो जाता है।

भावार्थ-नो आगम से भावस्कंध आवश्यक सूत्र के षट् अध्यायों का ही नाम है और यही भावस्कंध है इन्हीं के नानाप्रकार के घोपयुक्त द्वादश नाम हैं जैसे कि- गण १ काय २ निकाय ३ स्कंध ४ वर्ग ५ राशि ६ पुंज ७ पिंड ८ निकर ९ संघ १० आकुल ११ और समूह १२ फिर आवश्यक सूत्र के षट् अर्थाधिकार रूप अध्याय हैं जैसे कि-सामायिक १ चतुर्विंशति स्तव २ वंदना ३ प्रतिक्रमण ४ कायोत्सर्ग ५ और प्रत्याख्यान ६ अपितु अतिचार रूप व्रण की औषधि रूप पंचम अध्याय है औषधि भक्षण रूप छठा अध्याय है फिर जैसे महा नगर के चार मुख्य द्वार होते हैं उसी प्रकार इस सामायिक रूप प्रथम अध्याय के चार अनुयोगद्वार हैं जैसे कि उपक्रम जो वस्तु दूर हो उसको निकट करना १ फिर उसके निक्षेप करके अनुगम करना फिर नय द्वारा व्याख्या करनी यह चार अनुयोग द्वारा पदार्थों की व्याख्या अवश्य ही करणीय है। इसी कारण से प्रथम उपक्रम का वर्णन किया जाता है।

मूल-सेकिंत्तं उवक्कमे ? २ छव्विहे पन्नत्ते तंजहा नामोवक्कमे ? ठवणोवक्कमे २ दव्वोवक्कमे ३ खेत्तोवक्कमे ४ कालोवक्कमे ५ भावोवक्कमे ६ नामठवणाओ गयाओ सेकिंतं दव्वोवक्कमे ? २ दुविहे पण्णत्ते तंजहा आगमओय नोआगमओय जाव जाणगसरीरभवियसरीरवइ रित्तेदव्वोवक्कमे तिविहे पण्णत्ते

तंजहा सचित्ते अचित्ते मीसए। सेकिंतं सचित्ते दव्वोवक्कमे ? २ तिविहे पएणत्ते तंजहा दुपए चउप्पए अप्पए एक्केक्के पुण दुविहे पएणत्ते तंजहा परिक्कमेय वत्थुविणासेय।

पदार्थः-(सेकिंतं उवक्कमे ? २ छव्विहे पएणत्ते तंजहा) (प्रश्न) उपक्रम कितने प्रकार से वर्णन किया गया है (उत्तर) उपक्रम षट् प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि-(नामोवक्कमे १ ठवणोवक्कमे २ दव्वोवक्कमे ३ खेत्तोवक्कमे ४ कालोवक्कमे ५ भावोवक्कमे ६ नामठवणाओ गयाओ) नामोपक्रम १ स्थानोपक्रम २ द्रव्योपक्रम ३ क्षेत्रोपक्रम ४ कालोपक्रम ५ भावोपक्रम ६ सो नाम और स्थापना का विवर्ण पूर्व किया गया है (सेकिंतं दव्वोवक्कमे २) (प्रश्न) द्रव्योपक्रम किसे कहते हैं (उत्तर) द्रव्योपक्रम (दुविहे पएणत्ते तंजहा) दो प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि-(आगमओय नोआगमओय) आगम से और नोआगम से (जाव जाणगसरीरभवियसरीरवइरित्तेदव्वोवक्कमे तिविहे पएणत्ते तंजहा) यावत् ज्ञशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तद्रव्योपक्रम तीनों प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि-(सचित्ते अचित्ते मीसए) सचित्त अचित्त और मिश्र (सेकिंतं सचित्तोवक्कमे २ तिविहे पएणत्ते तंजहा दुप्पए चउप्पए अपए। (प्रश्न) सचित्तद्रव्योपक्रम कितने प्रकार से कथन किया गया है ? (उत्तर) सचित्तद्रव्योपक्रम तीनों प्रकार से कथन किया गया है, जैसे कि-द्विपदोपक्रम १ चतुष्पदोपक्रम २ अपदोपक्रम ३ फिर (एक्केक्कं पुण दुविहे पएणत्ते तंजहा परिक्कमे वत्थुविणासेय) एक एक के दो दो भेद कहे गये हैं जैसे कि-परिक्रम जो वस्तु का मूल गुण है, उसको प्रकाश करना तिसको परिक्रम कहते हैं किन्तु जो किसी वस्तु द्वारा किसी पदार्थ के गुण का नाश किया जाय उसे वस्तुविनाश कहते हैं सो उक्त तीनों भेदों के साथ इन दोनों गुणों की भी प्राप्ति है।

भावार्थः-उपक्रम का षट् प्रकार से विवेचन किया गया है जैसे कि-नामोपक्रम, १ स्थापनोपक्रम, २ द्रव्योपक्रम, ३ क्षेत्रोपक्रम ४ कालोपक्रम, ५ भावोपक्रम, ६ नाम और स्थापना का विवर्ण तो पहिले किया जा चुका है किन्तु ज्ञशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तद्रव्योपक्रम के तीन भेद हैं जैसे कि सचित्त अचित्त और मिश्र फिर सचित्त द्रव्योपक्रम तीनों प्रकार से वर्णित है,

द्विपदोपक्रम चतुष्पदोपक्रम अपदोपक्रम, अपितु इनके भी दो दो भेद हैं परिक्रम और वस्तुविनाश वस्तु के मूल गुण का प्रकाश करना उपक्रम कहाता है यदि मूल गुण का नाश किया जाय उसे वस्तुविनाशद्रव्यउपक्रम कहते हैं।

अथ द्विपदोपक्रम विषय।

सेकिंतं दुप्पए उवक्कमे? २ दुप्पयाणं नडाणं नट्टाणं जल्लाणं मल्लाणं मुट्ठियाणं वेलंबगाणं कहगाणं पवगाणं लासगाणं आइक्खगाणं लंखाणं मंखाणं तूणइल्लाणं तुंववीणियाणं कावोयाणं मागहाणं सेत्तं दुप्पए उवक्कमे।

पदार्थ—(प्रश्न) द्विपदोपक्रम किसे कहते हैं ? (उत्तर) द्विपदोपक्रम निम्न प्रकार से हैं जैसे कि (नडाणं) नचाने वाले (नट्टाणं) नृत्य करने वाले (जल्लाणं) राजस्तुति करने वाले (मल्लाणं) मुष्टि आदि युद्ध करने वाले (मुट्ठियाणं) केवल मुष्टि ही युद्ध करने वाले (वेलंबगाणं) नाना प्रकार के वेष करने (विदूषक) वाले (कहगाणं) कथा करने वाले (पवगाणं) गर्तादि वा नद्यादि के तैरने वाले (लासगाणं) रास खेलने वाले अथवा जयध्वनि करने वाले (आइक्खगाणं) दैवज्ञ आकाश विद्या के कथक (लंखाणं) वंशाग्र में नृत्य करने वाले (मंखाणं) चित्र पट्ट के द्वारा आजीविका करने वाले (तूणइल्लाणं) वादित्र के बजाने वाले (तुंववीणियाणं) अलाबु की वीणा बजाने वाले (कावोयाणं) कावड (कवड) के वहने वाले (मागहाणं) मांगलिक वचन के बोलने वाले इनको यदि घृतादि द्वारा उपचित किया जावे उसे परिक्रम द्रव्योपक्रम कहते हैं यदि खड्गादि द्वारा विनाश किया जाय उसका नाम वस्तुविनाशद्रव्योपक्रम है क्योंकि बलवर्ण वृद्धि के लिये प्रथम उपक्रम है इससे विपरीत द्वितीय उपक्रम है (सेत्तं दुप्पद उवक्कमे) अथ द्विपद उपक्रम का स्वरूप इसी स्थान पर पूर्ण हुआ-इसी का नाम द्विपद सचित्तोपक्रम है।

भावार्थ—द्विपद उपक्रम उसे कहते हैं कि जो नृत्यादि क्रिया करने वाले हैं उनको बलादि की वृद्धि के वास्ते प्रथम उपक्रम होता है और नाश के लिये द्वितीय उपक्रम होता है सो इसका नाम द्विपद सचित्तोपक्रम है।

अथ चतुष्पदोपक्रम विषय ।

सेकिंतं चउप्पए उवकमे २ चउप्पयाणं आसाणं हत्थीणं इच्चादि सेत्तं चउप्पए उवकमे ।

पदार्थ-(सेकिंतं चउप्पय उवकमे ? २) (प्रश्न) चतुष्पदोपक्रम कौनसा है ? (उत्तर) चतुष्पदोपक्रम इस प्रकार से है जैसे कि-अश्वों को हस्तियों को इत्यादि चार पाद वाले जीवों का परिक्रम वा वस्तु विनाश के द्वारा शिक्षित वा नाश करना उसी का नाम चतुष्पदोपक्रम है ।

भावार्थ-चार पैर वाले जीवों को परिक्रम अथवा वस्तु विनाश द्रव्योपक्रम इनके द्वारा शिक्षितादि कर्म करने उसी को चतुष्पदोपक्रम अथवा द्रव्योपक्रम कहते हैं ।

अथ अपद विषय ।

सेकिंतं अपए उवकमे ? २ अपयाणं अंबाणं अंबाडगाणं इच्चाइ सेत्तं अपए उवकमे सेत्तं सचित्तदव्वोवकमे ।

पदार्थ-(सेकिंतं अपए उवकमे ? २) (प्रश्न) अपद उपक्रम किसे कहते हैं ? (उत्तर) अपद उपक्रम उसे कहते हैं जैसे कि (अपयाणं अंबाणं अंबाडगाणं इच्चाइ सेत्तं अपए उवकमे) आम्रफल अंबाडग फल इत्यादि फलों को परिक्रमद्रव्योपक्रम के द्वारा परिपक्क किया जाता है तथा वस्तु विनाश द्रव्योपक्रम के द्वारा इन फलों को अन्य प्रकार से किया जाय जैसे आम्रफल पाक वा कुष्माण्ड फल पाक बदाम पाक अथवा अन्य प्रकार से औषधियों का बनाना उस का नाम परिक्रम वस्तु विनाश है और इसी का नाम (सेत्तं सचित्तदव्वोवकमे) सचित्त द्रव्योपक्रम है ।

भावार्थ-अपदसचित्तद्रव्योपक्रम उसका नाम है जो फलादि को परिक्रम और वस्तु विनाश के द्वारा बनाया जाए जैसे कि-फलादि के गुण दीप्त करने तथा उनके पाकादि बनाने उसी का नाम अपदसचित्तद्रव्योपक्रम है । यह सचित्तद्रव्योपक्रम का स्वरूप पूर्ण हुआ ।

अथ अचित्त द्रव्योपक्रम विषय ।

सेकिंतं अचित्तदव्वोवकमे ? २ खंडाईणं गुडाईणं मच्छं-डीणं सेत्तं अचितदव्वोवकमे ।

पदार्थ-(प्रश्न) अचित्तद्रव्योपक्रम किसे कहते हैं? (उत्तर) अचित द्रव्यो-पक्रम उसका नाम है (खंडाइणं गुडाईणं मच्छंडीणं) जो खांड, गुड, मत्संडी (मिसरी) आदि पदार्थों का परिक्रम और वस्तुविनाश के द्वारा, पवित्र व नाश किया जाय उसी का नाम (सेत्तं अचितदव्वोवकमे) अचित्त द्रव्योपक्रम है ।

भावार्थ-अचित्तद्रव्योपक्रम उसका नाम है जो खांड, गुड़, मत्संडी आदि पदार्थों का परिक्रम द्रव्योपक्रम द्वारा सिद्ध किया जाता है और वस्तुविनाश के द्वारा उसके रसादि का नाश किया जाता है उसी का नाम अचित्त द्रव्योपक्रम है ।

अथ मिश्र द्रव्योपक्रम विषय ।

सेकिंतं मीसए दव्वोवकमे ? २ सेचेव थासग मंडीए असमाई सेत्तं मीसए दव्वोवकमे ।

पदार्थ-(सेकिंतं मीसएदव्वोवकमे) (प्रश्न) मिश्र द्रव्योपक्रम किसे कहते हैं (उत्तर) (सोचेवथासग मंडीए अस्साइ सेत्तं मीसए दव्वोवकमे) वही अश्वादि जो भूषणों से अलंकृत होरहे हैं उनका उपक्रम द्वारा वा वस्तु विनाश द्वारा शिक्षित करना या नाना प्रकार से दीप्त वा नाशकारी कार्य्य करने उन्हीं का नाम मिश्र द्रव्योपक्रम है सो इसी स्थान पर उक्त समास की पूर्ति है (सेत्तं जाणगसरीरभवियसरीरवइरित्ते दव्वोवकमे सेत्तं नो आगमओ दव्वोवकमे सेत्तं दव्वोवकमे) यही ज्ञसरीरभव्यसरीरव्यतिरिक्त द्रव्योपक्रम है अब नो आगम से द्रव्योपक्रम का स्वरूप सम्पूर्ण हुआ ।

भावार्थ-मिश्र द्रव्योपक्रम उसे कहते हैं जो वही पूर्वोक्त अश्वादि आभूषणों से अलंकृत हैं उनका परिक्रम द्रव्योपक्रम द्वारा वा वस्तु विनाश द्वारा शिक्षित करना अथवा विनाश करना सो उसी का नाम ज्ञसरीरभव्यसरीर व्यतिरिक्त नो आगम से द्रव्योपक्रम होता है और यही द्रव्योपक्रम है ।

॥ अथ क्षेत्रोपक्रम विषय ॥

सेकिंतं खेत्तोवक्कमे? २ जएणं हलकुलियाइहिं खेत्ताइं उवक्कमिज्जंति इच्चाइ सेत्तं खेत्तोवक्कमे सेकिंतं कालोवक्कमे? २ जंणं नालियाईहिं कालस्सोवक्कमणं कीरइ सेत्तं कालोवक्कमे सेकिंतं भावोवक्कमे? दुविहे पएणत्ते तंजहा आगमओय नोआगमओय आगमओ जाणए उवउत्ते नोआगमओ दुविहे पन्नत्ते तंजहा पसत्थेय अपसत्थेय तत्थ अपसत्थे डोडिणिगणिया अमच्चाइणं तत्थपसत्थे गुरुमाइणं सेत्तंनोआगमओ भावोवक्कमे सेत्तं भावोवक्कमे सेत्तं उवक्कमे ।

पदार्थः—सेकिंतं खेत्तोवक्कमे २) (प्रश्न) क्षेत्रोपक्रम किसे कहते हैं (उत्तर) (जण्णं हलकुलियाईहिं खेत्ताइं ओवक्कमिज्जंति इच्चाई) जो (णं इति व्याक्यालंकारे) हल और कुलिकर के क्षेत्रादि का उपक्रम वा वस्तुविनाश उपक्रम किया जाता है उसको क्षेत्रोपक्रम कहते हैं क्योंकि यह सामान्य बचन है अपितु क्षेत्राधार वस्तु के ही उपक्रम होते हैं, क्षेत्र तो अमूर्ति पदार्थ है क्षेत्राधार भूमि और भूमि आधार तृणादि की उत्पत्ति वा विनाश करने को ही क्षेत्रोपक्रम कहा जाता है (सेत्तं खेत्तोवक्कमे) अब क्षेत्रोपक्रम के पीछे कालोपक्रम का विवर्ण किया जाता है (सेकिंतं कालोवक्कमे २) (प्रश्न) कालोपक्रम किसे कहते हैं (उत्तर) जण्णं नालियाइहिं कालस्सोवक्कमणं कीरइ सेत्तं कालोवक्कमे) जो घटी (घंटा) आदि द्वारा कालका उपक्रम किया जाता है उसे कालोपक्रम कहते हैं अथवा तृणादि द्वारा पौरुषि आदि का प्रमाण करना और नक्षत्रादि द्वारा काल के फलाफल का उपक्रम करना जैसे कि—इन ग्रहों के बल से सुभिक्ष वा दुर्भिक्ष होगा इत्यादि परिकम और वस्तुविनाश उपक्रम यह दोनों ही कालोपक्रम में उक्त प्रकार मे सिद्ध हैं। अथ कालोपक्रम के पीछे भावोपक्रम का विवेचन करते हैं (सेकिंतं भावोवक्कमे २ दुविहे पएणत्ते तंजहा) (प्रश्न) भावोपक्रम किसे कहते हैं (उत्तर) भावोपक्रम दो प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि—(आगमओय नोआगमओय) आगम से जो जानता है और उपयोग युक्त भी

है उसे आगम से भावोपक्रम कहते हैं द्वितीय नोआगम से किन्तु (नोआगमओ दुविहे पएणत्ते तंजहा) नो आगम से भाव उपक्रम द्वि प्रकार से है जैसे कि–(पसत्थेय अपसत्थेय) सुन्दर भाव उपक्रम और अप्रशस्त भाव उपक्रम अर्थात् असुन्दर भाव उपक्रम अपितु (तत्थ अप्पसत्थे डोडिणिगणिया अमच्चाइणं) इन दोनों में जो अप्रशस्त भाव उपक्रम है उसकी सिद्धि के लिये सूत्रकार ने तीन उदाहरण दिये हैं जो अनुक्रमता से निम्नलिखितानुसार प्रथम उदाहरण ब्राह्मणी का है द्वितीय वेश्या का तृतीय मन्त्री का। सो प्रथम ब्राह्मणी के उदाहरण का स्वरूप लिखा जाता है।

अमुक नगर में एक ब्राह्मणी की ३ पुत्रियां थी जो कि उसके हृदय को रंजित व हर्षित रखती थी ब्राह्मणी का भी उन पर असीम अनुराग था, वह सदैव चाहती थी कि क्षण मात्र भी इनका मेरे से वियोग न हो तथा इन को क्षण मात्र भी दुःख न हो, समय बीतने पर वह तीनों कन्या यौवनावस्था को प्राप्त हुई तथा लावण्यवती भी होगई, अतः माताने उन तीनों का विवाह कर दिया परन्तु मनमें सोचने लगी की कोई ऐसा उपाय करना चाहिये जिस से इन के पति इन पर सदैव प्रसन्न रहें और इनके सुख में कोई विघ्न नहो, ऐसा विचार कर पुत्रियों को विदा करने के समय बडी लडकी को कहीं एकान्त ले जा कर उसे कहने लगी की हे पुत्रीके! जब तेरा पति वासभवन में मिलने के लिये आवे तब तूने उसका कोई अपराध जानकर उस के मस्तक पर पाद प्रहार करना, ऐसा करने पर जो वर्ताव वह तेरे साथ करे वह मेरे से आकर कहना. मेरी इस शिक्षा को अवश्यमेव याद रखना, अनन्तर कन्या के वैसे ही करने पर उस का पति स्नेह से आर्द्र हृदय होकर तथा उस के अपराध को गुण समझ कर उस से बोला कि प्रियतमे! तेरे चरण रूपी कमल अतीव सुकोमल हैं और मेरा शिर पत्थर की नाई अति कठिन है इसलिये तेरे पाद में पीड़ा तो नहीं हुई इस प्रकार अनेक विनय युक्त वचनों से अपनी पत्नी को शीतल करके प्रसन्न किया और उस के पांव को मर्दन किया। अनन्तर कन्याने आकर समस्त वर्तान्त आद्योपान्त माता से कह सुनाया वह भी ऐसे जामातृ पर अति प्रसन्न हुई और अपनी पुत्री से बोली कि हे पुत्रिके! तेरे घर में तेरी अखंड आज्ञा चलेगी क्योंकि तेरे पति आज्ञानुकूल कार्य करने वाला है इसलिये तू निर्भय होकर अपने घर में यथेष्ट सुखों को भोग तुझे कोई डर नहीं। इसी

प्रकार ब्राह्मणी ने दूसरी कन्या को भी करने की शिक्षा दी इसलिये उसने भी अपने पति के मस्तक में पादप्रहार किया–तब उस का पति कुछ समय क्रोध करके तथा श्रेष्ठ पुरुषों को स्त्रियों से ऐसा अपमानित करवाना योग्य नहीं है, विचार कर फिर प्रसन्न हो गया और कन्या को कुछ भी न कहा।

दूसरी कन्याने भी अपनी माता के पास आकर वैसे ही सारा वृतान्त कहा, माता आनन्दित होकर दूसरी पुत्री से बोली कि हे कन्ये! तूं भी मन माना सुख भोग जैसे तेरी इच्छा हो वैसे अपने घर में वर्ताव कर तुझे कोई भय नहीं है क्योंकि तेरा पति क्षणमात्र क्रोधित होकर प्रसन्न हो जायगा, इसी प्रकार ब्राह्मणी ने तीसरी कन्या को कहा उसने भी वैसे ही अपनी माता की आज्ञा पालन की अर्थात् जब उसका पति मिलने के लिये उसके आवास भवन में आया तो तीसरी कन्याने (अर्थात् उस की पत्नी ने) उसके मस्तक में पाद प्रहार किया, तब उसका पति विचार ने लगा कि–पुरुषों को स्त्रियों से ऐसी अधोगति नहीं करवानी चाहिये अथवा कुलीन स्त्रियों का यह कर्तव्य नहीं है। पति की सेवा करनी ही नारियों का धर्म है नकि ऐसा अपमान करना इस प्रकार सोच कर उसने उसको (तीसरी कन्या को) बहुत मारा अंत में स्वगृह से बाहर कर दिया, सो वह भी अपने पति से निकाली हुई अपने घर आई तथा अपनी माता को सर्व वृतान्त कह सुनाया माता सुनकर बड़ी दुखित हुई और बोली कि हे पुत्रीके! तेरा पति दुराराध्य होगा तूं जितनी भी उसकी विनय भक्ति तथा उसकी आज्ञानुसार वर्ताव करेगी उतना ही तुझे सुख होगा यदि उस से पराङ्मुख होगी तो कदापि तुझे आनन्द और सुख प्राप्त न होगा इसलिये तुझे योग्य है कि सदैव काल अपने पति की आज्ञानुकूल वर्ताव करें ऐसी शिक्षा दे चुकने के पश्चात् ब्राह्मणी ने अपने जामाता को बुला कर बहुत नम्रता से तथा अनेक शीतलोपचारोंसे उसे संतुष्ट व शान्त कर दिया और पुनः वह स्व पत्नी पर प्रसन्न होगया ब्राह्मणी ने एवं (इस प्रकार) तीनों जामाताओं की परीक्षा कर ली सो इसी का नाम अप्रशस्त भावोपक्रम है।

अथ द्वितीय उदाहरण।

किसी नगर में ६४ चौसठ कला प्रवीण एक वेश्या व सती थी उसने दूसरों का अभिप्राय जानने के लिये एक रतिभवन बनवाया जिस की समस्त

भीतों पर, राजपुत्र, सेठ, सेनापति, आदि नगर में प्रधान पुरुषों के अत्युत्तम और मनोहर चित्रों से चित्र कर्म बनवाया अनन्तर राज पुत्रादि जो कोई भी वहां आता है वह वहां अपने सुन्दर चित्र को देख कर अतीव आल्हादित होकर उसकी (गणिका की) प्रशंसा करता था इस प्रकार उसने (वेश्याने) नगर के प्रायः सर्व बड़े बड़े पुरुषों को अपने पर मोहित कर लिया और यथेष्ट धन उनसे लूटकर सुखों को भोगने लगी इस प्रकार से अप्रशस्त भावोपक्रम का द्वितीय उदाहरण है ।

॥ अथ तृतीय उदाहरण ॥

किसी नगरी में कोई राजा राज्य करता था. जो कि राजा के समस्त गुणों से युक्त प्रजा को पुत्रवत् समझने वाला और न्यायविक्रम अनुकम्पादि गुणों से भूषित था पुण्य योग से जिसका मन्त्री भी महाबुद्धि शील और अत्यन्त विचक्षण था किम्बहुना, राज्य में धुरा के समान होने से राज्य का सारा भार उसपर ही निर्भर था, राजा भी अन्तःकरण से उसपर मुग्ध तथा मोहित था अतएवः सर्व कार्यों में राजा उसकी सम्मति लेता था । एक समय राजा और मन्त्री दोनों ही घोड़े पर आरूढ़ होकर वन क्रीड़ा के लिये गये, तब मार्ग में चलते हुए राजा के घोड़े ने कहीं सखिलप्रदेश में प्रस्रवण (मूत्र) करने लगा अपितु वहां पर पृथिवी सुन्दर होने से वह मूत्र चिर के पश्चात् शुष्क होता था, इसलिये राजा ने ऐसी दशा देखकर विचार किया कि—यदि यहां पर तड़ाग बनवाया जावे तो वह बहुत सुन्दर चिरस्थायी होवे इस प्रकार चिरकाल तक उस अचंभे को देखता रहा किन्तु मन्त्री को कुछ भी न बोलकर चल दिया और भ्रमण करके अन्त में वे अपने २ स्थान पर आगये परंच इंगिताकार ज्ञान की कुशलता से मन्त्री झट ताड़गया कि राजा के मन में यह परिणाम उत्पन्न हुए थे उसके अनुसार राजा के न कहने पर भी विचारशील मन्त्री ने स्वअनुमति से वहां पर एक परम और मनोज्ञ सरोवर बनवाया और उसके चारों ओर नाना प्रकार के वृक्ष तथा अनेक प्रकार के पुष्प देने वाली लताएं लगवाईं जो कि षट् ऋतुओं के पुष्पों को देती थी इस प्रकार वह थोड़े काल में ही एक परम सुन्दर आराम (बाग) बन गया तथा उनकी शोभा ने उस सरोवर को महापद्म शतपत्र सहस्रपत्र आदि कमलों से उसका पानी सुगन्धि वाला तथा अतीव शीतल होगया । अन्यथा फिर कभी राजा मन्त्री के साथ वनक्रीड़ा के

लिये गया और जाते हुए राजा ने उसी सरोवर को देखा और आश्चर्य से मन्त्री को बोला कि हे मंत्रिन् यह सुन्दर और रमणीय सरोवर किसने बनवाया है ! प्रधान ने उत्तर दिया कि हे देव ! यह आपका ही ताल है और आपने ही इसे स्वयं बनवाया था ऐसा उत्तर सुनकर राजा अत्यन्त आश्चर्य युक्त होकर बोला कि हे प्रधान ! इसके बनाने के लिये मैंने कब आज्ञा दी ? तब मन्त्री ने सविस्तर आद्योपांत वह वृत्तान्त राजा को सुनाया सुनने के अनन्तर राजा बहुत प्रसन्न हुआ और प्रधान की अति स्तुति करके कहने लगा कि हे मंत्रिन् तूं महा कुशाग्र बुद्धि तथा अत्यन्त मन के भावों का (इंगिताकार का परिचित हैं) इस प्रकार राजा ने मंत्री की बहुतसी स्तुति करी और उसका वेतन अधिक कर दिया इसको सांसारिक फल होने से अप्रशस्त भावोपक्रम कहते हैं, अब प्रशस्त भावोपक्रम दो प्रकार से कथन करते हैं, एक तो गुरु सम्बन्धी, द्वितीय शास्त्र सम्बन्धी। प्रथम गुरु सम्बन्धी का विवर्ण किया जाता है (तत्थपसत्थो गुरु माइणं) (तत्र) प्रथम प्रशस्त भावोपक्रम गुर्वादि का इंगितानुसार वर्ताव करना जैसे कि श्रुताध्ययन के समय गुर्वादि के भावोंकी परीक्षा करना तथा उनके इंगिताकार द्वारा जानकर, अन्न पानी वस्त्रादि द्वारा उनकी सेवा करनी सो इसे प्रशस्त भावोपक्रम कहते हैं (सेत्त नो आगम उभावोवक्कमे सेत्तं भावोवक्कमे सेत्तं उवक्कमे) अथ इसकी पूर्त्ति करते हैं कि यही नो आगम से भावोपक्रम है और इसे भावोपक्रम कहते हैं इतना ही स्वरूप भावोपक्रम का है अथ द्वितीय शास्त्रीय उपक्रम का स्वरूप वर्णन किया जाता है।

भावार्थ—क्षेत्र सम्बन्धी उपक्रम उसे कहते हैं जो हल और कुलिकादि द्वारा क्षेत्र का माप किया जाए, कालोपक्रम उसका नाम है जो घटिकादि द्वारा काल मान किया जाता है किन्तु भावोपक्रम दो प्रकार से प्रतिपादन किया गया है एक तो आगम रूप से दूसरे नोआगम से, आगम से जो सामायिकादि भावों को उपयोग पूर्वक जानता है उसे आगम से भावोपक्रम कहते हैं अतः नोआगम से जो भावोपक्रम है वह भी दो प्रकार से है एक तो प्रशस्त, द्वितीय अप्रशस्त, अपितु अप्रशस्त भावोपक्रम में पूर्वोक्त तीनों उदाहरण हैं प्रशस्त में केवल गुर्वादि के अंग चेष्टानुकूल कार्य करने उसी का नाम प्रशस्त भावोपक्रम है और इसे ही भावोपक्रम कहते हैं किन्तु एक भावोपक्रम शास्त्रीय भी होता है जो निम्न लिखितानुसार है।

॥ अथ पुनः भावोपक्रम विषय ॥

अहवा ओवक्कमे छविहे पएणत्ते तंजहा आणुपुव्वी १ नाम २ पमाण ३ वत्तवया ४ अत्थाहिगारे ५ समवयारे ६ सेकिंतं आणुपुव्वी २ दसविहा पन्नत्ता तंजहा नामाणु पुव्वी १ ठवणाणुपुव्वी २ दव्वणुपुव्वी ३ खेत्ताणुपुव्वी ४ कालाणुपुव्वी ५ ओक्कितणाणुपुव्वी ६ गणणाणुपुव्वी ७ संठाणाणुपुव्वी ८ सामायारीयाणुपुव्वी ९ भावाणुपुव्वी १० सेकिंतं नामाणुपुव्वी नामठ्ठवणाओ गयाओ तहेव दव्वाणुपुव्वी जाव सेकिंतं जाणग सरीर भविय सरीर वइरित्ता दव्वाणुपुव्वी २ दुविहा पएणत्ता तंजहा ओवणिहिया अणो वणिहियाय तत्थणं जासाओ वणिहिया साइप्पातत्थणं जासा अणो वणिहिया सा-दुविहा पन्नत्ता तंजहा नेगम ववहाराणं संगाहस्सय सेकिंतं नेगम ववहाराणं अणो वणिहिया दव्वाणुपुव्वी २ पंचविहा पं० तं० अट्ठपयपरूवणया १ भंगसमुक्कितणया २ भंगोव दंसणया ३ समोयारे ४ अणुगमे ५ ॥

पदार्थः—(अहवा) अथवा (ओवक्कमे छविहे पन्नत्ते तंजहा) शास्त्रीय उपक्रम षट् प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि (आणुपुव्वी) आनुपूर्वी अनुक्रम १ (नाम) नाम उपक्रम २ (पमाण) प्रमाण उपक्रम ३ (वत्तवया) वक्तव्यता उपक्रम ४ (अत्थाहिगार) अर्थाधिकार उपक्रम ५ (समवयारे) समवतार उपक्रम ६ (सेकिंतं आणुपुव्वी २ दसविहा पन्नत्ता तंजहा) (प्रश्न) आनुपूर्वी कितने प्रकार से वर्णन कीगई है (उत्तर) दश प्रकार से जैसे कि— (नामाणुपुव्वीठवणाणु पुव्वी दव्वाणुपुव्वी खेत्ताणुपुव्वी कालाणुपुव्वी) नामानुपूर्वी १ स्थापनानुपूर्वी २ द्रव्यानुपूर्वी ३ क्षेत्रानुपूर्वी ४ कालानुपूर्वी ५ (उक्कित्तणाणुपुव्वी गणणाणुपुव्वी संठाणाणुपुव्वी सामायारीयाणुपुव्वी भावाणु पुव्वी) उत्कीर्त्तानुपूर्वी ६ गणनानुपूर्वी ७ संस्थानानुपूर्वी ८ सामा-

चारी आनुपूर्वी ६ भावानुपूर्वी १० (सेकिंतं नामाणु पुव्वी नामट्ठवणा ठगयाउ तहेव दव्वाणुपुव्वी जाव सेकिंतं जाणग सरीर भविय सरीर वइरित्ता दव्वाणु पुव्वी २दुविहा पं० तं० उवणिहिया अणो वणिहिया य)(प्रश्न) नामानु पूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) नाम स्थापना का पूर्व विवर्ण किया गया है उसी प्रकार जानना यावत् द्रव्यानुपूर्वी पर्यन्त (प्रश्न) ज्ञशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्त द्रव्यानुपूर्वी कितने प्रकार से कहीगई है।

(उत्तर) ज्ञशरीर भव्यशरीर व्यतिरिक्त द्रव्यानुपूर्वी दो प्रकार से प्रतिपादन की गई है जैसे कि उपनिधि की और अनुपनिधि की क्योंकि उप नाम समीप का है निधि नाम निधान तुल्य जो होवे उसे कहिये निधिसो जो समीप की हुई वस्तुओं का स्वरूप पूर्ण प्रकार से करा जाए उसे उपनिधि कहते हैं तथा प्रयोजनार्थे इकण् प्रत्यायान्त करने से उपनिधि की ऐसे शब्द बन जाता है सो अनुक्रमता पूर्वक पदार्थों को स्थापन करना उसे " उपनिधिकी " कहते हैं अथवा वस्तुओं के स्वरूप को जो निक्षेप करे उसी का नाम " उपनिधिकी " है अपितु इससे विपरीत अर्थ देने वालों को अनुपनिधि की कहते हैं सो यहां पर वर्तमान प्रयोजन सामायिकाधिकार है इस लिये इन्हों की आवश्यक्ता है। अथ इन्हीं का विस्तार फिर करते हैं (तत्थणं जासा उवणि हिया साठप्पा) उनमें प्रथम जो उपनिधिकी है वह इस समय स्थापनीय है क्योंकि इसका स्वरूप अल्प है और अनुक्रमता पूर्वक है इसलिये सुगम भी है किन्तु (तत्थणं जासा अणे वाणि हिया सादुविहा पं० तं० नेगम ववहाराणं संग्गहस्सय) जो अनुपनिधिकी है वह भी दो प्रकार से प्रतिपादन की गयी है जैसे कि—नैगम व्यवहारनय के मत से और संग्रहनय के मत से (सेकिंतं नेगम ववहाराणं अणो वणिया दव्वाणु पुव्वी २ पंच विहा पं० तं० (प्रश्न) नैगम और व्यवहार नय के मत से अनुपनिधि की कितने प्रकार से वर्णन की गयी है (उत्तर) पांच प्रकार से जैसे कि (अठ्ठपयपरूवणया) प्रथम भेद अर्थ पद का कथन रूप है जैसे कि—अर्थ परमाणु आदि की प्ररूपणा (भंगसमुक्कित्तणया) द्वितीय भेद अर्थ पद के भंगो को उत्कीर्तन रूप है अर्थात् जो भंगवनए हुए है उन को प्रकाश करना (समो यारे) चतुर्थ भेद आनुपूर्वी आदि द्रव्यों को यथा स्थान समवतार करना जैसे कि—जो द्रव्य जिस जाति का हो उसी जाति में स्थापन करना (अणुगमे) पंचम भेद अनुयोग द्वार करके विचार करना उसे अनुगम कहते हैं अब सत्रकार पृथक २ स्वरूप वर्णन करते हैं।

भावार्थ-शास्त्रीय उपक्रम पट् प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि—आनुपूर्वी १ नाम २ प्रमाण ३ वक्तव्यता ४ अर्थाधिकार ५ समवतार ६ आनुपूर्वी दश प्रकार से वर्णन कीगई है जैसे कि नामानुपूर्वी, स्थापनानुपूर्वी, द्रव्यानुपूर्वी, क्षेत्रानुपूर्वी, कालानुपूर्वी, उत्कीर्तनानुपूर्वी, गणनानुपूर्वी, संस्थानुपूर्वी, समाचारानुपूर्वी, भावानुपूर्वी, सो नाम और स्थापना का विवर्ण आवश्यक के अधिकार में किया जा चुका है, द्रव्यानुपूर्वी भी पूर्ववत् ही जान लेनी किंतु ज्ञशरीर भव्यशरीर व्यतिरिक्त द्रव्यानुपूर्वी दो प्रकार से कथन कीगई है जैसे कि उपनिधिकी और अनुपानिधिकी, उपनिधिकी उसे कहते हैं जो अनुक्रमता पूर्वक वस्तुओं को स्थापनकरे. इस से विपरीत कानाम अनुपनिधि की है इस का विस्तार महान् है इसीलिये प्रथम अनुपनिथिकी का विस्तार किया जाता है वह दो प्रकार से वर्णित है नैगम व्यवहार और संग्रहनय के मत से अतः नैगम और व्यवहार नयके मत से उस के पांच भेद हैं जैसे कि अर्थपद प्ररूपणा भंग समुत्कीर्तनता भंगोपदर्शनता, समवतार, और अनुगम अब सूत्रकार इन्हों का पृथक् २ ता से विवेचन करते हैं ।

मूल—सेकिंतं नेगम ववहाराणां अट्ठपयपरूव णयाति-पयसिए आणुपुव्वी चउपयसिए आणुपुव्वी जावदस पएसिए आणुपुव्वी संखेज्ज पएसिए आणुपुव्वी असंखेज्ज पएसिए आणुपुव्वी अणंत पएसिए आणुपुव्वी परमाणु पोग्गले अणाणु पुव्वी दुप्पएसिए अवत्तव्वए तिपएसिएया आणुपुव्वीओ जाव अणंत पएसियाओ आणुपुव्वीओ परमाणु पोग्गला अणाणु पुव्वीओ दुपए सियई अवत्तव्वयाइं सेत्तं णेगम ववहाराणं अट्ठपय परूवणया एयाणं णेगम ववहाराणं अट्ठपयपरूवणयाए किं पयोयणं एयाणं णेगम ववहाराणं अट्ठपय परूवण याए भंग समुक्कित्तणया कीरइ ।

पदार्थ-(सेकिंतं नेगम ववहाराणं अट्ठपय परूवणंया) (प्रश्न) वह कौन है नैगम और व्यवहार नय के मतसे जो अर्थ पद की प्ररूपणा की जाती है (उत्तर)

नैगम और व्यवहार नय के मत से जो अर्थपद प्ररूपणा है वे निम्न लिखितानुसार है (तिपए सिए आणुपुव्विए चउपएसिए आणुपुव्वी जावदस पएसिए आणु पुव्वी संखेज्ज पएसिए आणुपुव्वी असंखेज्ज पएसिए आणुपुव्वी अणंत पएसिए आणु-पुव्वी) जो तीन प्रादेशिक स्कंध चतुर प्रादेशिक स्कंध यावत् दश प्रादेशिक स्कंध इसी प्रकार संख्यात प्रादेशिक स्कन्ध असंख्यात प्रादेशिक स्कन्ध अनंत प्रदेशिक स्कन्ध हैं वे सर्व आनुपूर्वी में ही गर्भित हैं इन्हें ही आनुपूर्वी कहते हैं (किन्तु परमाणु पोग्गले अनाणुपुव्वी) केवल परमाणु पुद्गल अनानुपूर्वी द्रव्य है क्योंकि अनानुपूर्वी नञ् समासान्त पद है न आनुपूर्वी यस्यासा अनानुपूर्वी और (दु-पएसिए अव्वत्तव्वए) द्विप्रदेशिक स्कन्ध अवक्तव्य होता है ये सर्व एक वच-नान्त शब्द हैं इसीलिये एक वचनान्त ३ भंग हुए अब बहुवचनान्त तीन भंग दिखलाते हैं (तिपयासिएया आणुपुव्वीओ जाव अणंतपय सियाओ आ-णुपुव्वीओ) बहुत से ३ प्रदेशिक स्कन्ध से लेकर अनन्त प्रदेशी पर्यन्त पुद्गल द्रव्य आनुपूर्वी द्रव्य में कहे जाते हैं और (परमाणु पोग्गला अणाणु पुव्वीओ) बहुत से परमाणु पुद्गल द्रव्य अनानुपूर्वी में होते हैं अर्थात् अनन्त परमाणु पुद्गल जो प्रत्येक २ फिरते हैं वे सर्व अनानुपूर्वी द्रव्य में हैं किन्तु (दुपएसियाइं अवत्तव्वयाइं) अनेक द्विप्रदेशिक स्कन्ध अवक्तव्य हैं (क्योंकि त्रिप्रदेशी से लेकर अनन्त प्रदेशी पर्यन्त द्रव्य आनुपूर्वी हैं एक परमाणु पुद्ग-लता प्रत्येक २ अनन्त परमाणु पुद्गल अनानुपूर्वी में हैं अपितु द्विप्रदेशी स्कन्ध अवक्तव्य संज्ञक होता है (सेतंणेगमववहाराणं) यही नैगम और व्यवहार नय के मत से (अट्ठपयपरूवणया) अर्थ पद की पदप्ररूपणा है उक्त पद भंग दोनों नयों के मत से सिद्ध हैं शिष्य ने फिर प्रश्न किया कि हे भगवन् ! (एयाणंणेगमववहाराणं अट्ठपयपरूवणया एकिंपयोयणं) इन नैगम और व्य-वहार नय के मत से जो अर्थपद की पदप्ररूपणा कीगई है उसका क्या प्रयो-जन है क्योंकि—सूत्रों में निरर्थक वचन कोई भी नहीं होता फिर इन के कथन करने का प्रयोजन क्या है इस प्रकार से शिष्य के पूछने पर गुरु कहने लगे कि (एयाएणंणेगमववहाराणं अट्ठपयपरूवणाए भंगसमुक्कित्तणयाकीरइ) इन नैगम और व्यवहार नय के मत से जो अर्थपद की प्ररूपणा कीगई है वे सर्व भंगों की समुत्कीर्तन वास्ते ही है अर्थात् इनके द्वारा भंगों की समुत्कीर्तनता कीजाती है अतः इन दोनों नयों के द्वारा भंग बनाए जाते हैं ।

भावार्थ--नैगम और व्यवहार नय के मत में अर्थपद की प्ररूपणा इस प्रकार से की गई है त्रि प्रदेशी से लेकर अनंत प्रदेशी पर्यन्त द्रव्यानुपूर्वी में गिना जाता है और परमाणु पुद्गल अणाणु पूर्वी में होता है द्विप्रदेशी स्कंध अयक्तव्य संज्ञक कहलाता है एक वचनान्त से और वहुवचनान्त से इनके षट् भंग वन जाते हैं जैसे कि--नीचे पढिये.

आनु पूर्वी	अनानु पूर्वी	अवक्तव्य
१	१	१
२	२	२

और इन्हीं नैगम और व्यवहार नयके मत से भंगो की समुत्कीर्तनता की जाती हैं अर्थात् उक्त नयों द्वारा ही भंग वनाए जाते हैं। अव भंगो का स्वरूप निम्न प्रकार से सूत्रकार प्रति पादन करते हैं.

॥ अथ भंग समुत्कीर्तन विषय ॥

सेकिंतं णेगम ववहाराणं भंगसमुक्कित्तणया २ अत्थिआणुपुव्वी १ अत्थि अणाणुपुव्वी २ अत्थि अवत्तव्वए ३ अत्थि आणुपुव्वी ३ ४ अत्थि अणाणुपुव्वी ३ ५ अत्थि अवत्तव्वयाइं ६ अहवा अत्थि आणु पुव्वीय ॥ अणाणु पुव्वी ७ अहवा अत्थि आणु पुव्वीय अणाणु पुव्वीय ८ अहवा अत्थि आणु पुव्वीओय अणाणुपुव्वीय९अहवा अत्थि आणु पुव्वीओय अणाणु पुव्वीओय १० अहवा अत्थि आणु पुव्वीय अवत्तव्वएय ११ अहवा अत्थि आणु पुव्वीय अवत्त याइंच १२ अहवा अत्थि आणु पुव्वीओय अवत्तव्वएय १३ अहवा अत्थि आणुपुव्वी-

ओयं अवत्तव्वयाइंच १४ अहवा अत्थि अणाणु पुव्वीय अ-वत्तव्वएय १५ अहवा अत्थि अणाणु पुव्वीय अवत्तव्वयाइंच १६ अहवा अत्थि अणाणु पुव्वीओय अव्वतव्वएय १७ अहवा अत्थि अणाणु पुव्वीओय अवत्तव्वयाइंच १८ अहवा अत्थि आणु पुव्वीय अणाणु पुव्वीय अवत्तव्वएय १६ अहवा अत्थि आणुपुव्वीय अणाणुपुव्वीय अवत्तव्वयाइंच २० अहवा अत्थि आणुपुव्वीय अणाणु पुव्वीओय अवत्तव्वएय २१ अहवा अत्थि आणु पुव्वीय अणाणु पुव्वीओय अवत्तव्वयाइंच २२ अहवा आणु पुव्वीओय अणाणु पुव्वीय अवत्तव्वएय २३ अहवा अत्थिआणु पुव्वीओय अणाणु पुव्वीय अवत्तव्वयाइंच २४ अहवा अत्थिआणु पुव्वीउय अणाणु पुव्वीओय अवत्तव्व एय २५ अहवा अत्थिआणु पुव्वीओय अणाणु पुव्वीओय अवत्त व्वयाइंच २६ एए अट्ठभंगाएवं सव्वे विछव्वी संभंगा सेत्तंणे-गम ववहाराणं भंग समुक्कित्तणया एयाणणंणे गमववहाराणं भंग समुक्कित्तणयाएकिं पओयणं एयाणणे गमववहाराणं भंग समुक्कित्तणयाए भंगो वदंसणया कीरइ ।

पदार्थ-(सेकिंतंणे गमववहाराणं भंगसमुक्कित्तणया २) शिष्य ने फिर प्रश्न किया कि हे भगवन् ! नैगम और व्यवहार नय के मत से भंग समुत्कीतर्न कैसे होता है गुरु कहते हैं कि भो शिष्य ! नैगम और व्यवहार नय के मत से षट् विंशति भंगों की समुत्कीर्तना होती है जो निम्नलिखितानुसार है (अत्थि-आणुपुव्वी) जो अर्थपदका पूर्व विवर्ण किया गया है उस द्रव्य से २६ भंग होते हैं जैसे कि—एक पुद्गल आनुपूर्वी का है १ (अत्थि अणाणु पुव्वी) एक अनानुपूर्वी का है २ (अत्थि अवत्तव्वए) ऐक अवक्तव्य का है ३ फिर (अत्थि आणुपुव्वीओ) वहुत से पुद्गल आनुपूर्वी के है ४ अत्थि अणाणुपुव्वीओ वहुत से पुद्गल अनानुपूर्वी के हैं ५ (अत्थि अवत्तव्वयाइं) वहुत से पुद्गल

अवक्तव्य के हैं ६ अब द्विकसंयोगी १२ भंग कहते हैं जैसे कि–(अहवा अत्थि आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वी य) अथवा एक आनुपूर्वी एक अनानुपूर्वी है ७ (अहवा अत्थि आणुपुव्वी अणाणुपुव्वीओ य) अथवा एक आनुपूर्वी बहुत से अनानुपूर्वी है ८ (अहवा अत्थि आणुपुव्वीओ य अणाणुपुव्वीय) अथवा बहुत से आनुपूर्वी एक अनानुपूर्वी है ९ (अहवा अत्थि आणुपुव्वीओ य अणाणुपुव्वीओ य) अथवा बहुत से आनुपूर्वी और बहुत से अनानुपूर्वी द्रव्य हैं १० किन्तु जो ऊपर आनुपूर्वी अनानुपूर्वी लिखी है वे इन के अन्तर्गत द्रव्य ही समझने चाहिए–अथ आनुपूर्वी और अवक्तव्य के साथ चार भंग बनते हैं जो निम्न लिखितानुसार हैं (अहवा अत्थि आणुपुव्वी य अव्वत्तए य) अथवा एक आनुपूर्वी द्रव्य और एक ही अवक्तव्य द्रव्य है ११ (अहवा अत्थि आणुपुव्वी य अवत्तव्वयाइं च) अथवा एक आनुपुर्वी और बहुत से अवक्तव्य द्रव्य हैं १२ (अहवा अत्थि आणुपुव्वीओ य अवत्तव्वए य) अथवा बहुत से आनुपूर्वी द्रव्य और एक अवक्तव्य द्रव्य है (अहवा अत्थि आणुपुव्वीओ य अवत्तव्वयाइं च) अथवा बहुत से आनुपूर्वी बहुत से ही अवक्तव्य द्रव्य १४ यह चतुर्भंग और आनुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य के साथ हुए अब अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य के साथ चार भंग दिखलाए जाते हैं (अहवा अत्थि अणाणुपुव्वीय अवत्तव्वए य) अथवा एक अनानुपूर्वी गतद्रव्य और एक अवक्तव्य द्रव्य है १५ (अहवा अत्थि अणाणुपुव्वीय अवत्तव्वयाइं च) अथवा एक अनानुपूर्वी बहुत से अवक्तव्य द्रव्य हैं १६ (अहवा अत्थि अणाणुपुव्वीओ य अवत्तव्वए य) अथवा बहुत से अनानुपूर्वी एक अवक्तव्य १७ (अहवा अत्थि अणाणुपुव्वीओ य अवत्तव्वयाइं च) अथवा बहुत से अनानुपूर्वी द्रव्य और बहुत से अवक्तव्य १८ यह सर्व एकत्र करने से द्विकसंयोगी द्वादश भंग हुए अब त्रिकसंयोगी ८ भंग का विवर्ण करते हैं (अहवा अत्थि आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वए य) अथवा एक द्रव्य आनुपूर्वी एक अनानुपूर्वी एक अवक्तव्य १९ (अहवा अत्थि आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वयाइं च) अथवा एक आनुपूर्वी द्रव्य एक अनानुपूर्वी द्रव्य बहुत से अवक्तव्य द्रव्य २० (अहवा अत्थि आणुपुव्वीय अणाणुपुव्वीओय अवत्तव्वए य) अथवा एक आनुपूर्वी बहुत से अनानुपूर्वी एक अवक्तव्य २१ (अहवा अत्थि आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वीओ य अवत्तव्वयाइं च) अथवा एक आनुपूर्वी द्रव्य और बहुत से अनानुपूर्वी और बहुत से अवक्तव्य २२ (अहवा अत्थि आणु

पुव्वीओ य आणुपुव्वी य अवत्तव्वए य) अथवा बहुत से आनुपूर्वी एक अनानुपूर्वी और एक अवक्तव्य २३ अहवा (अत्थि आणुपुव्विओ य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वयाइं च) अथवा बहुत से आनुपूर्वी द्रव्य एक अनानुपूर्वी और बहुत से अवक्तव्य द्रव्य २४ (अहवा अत्थि आणुपुव्वीओ य अणाणुपुव्वीओ य अवत्तव्वए य) अथवा बहुत से आनुपूर्वी द्रव्य बहुतसे अनानुपूर्वी एक अवक्तव्य २५ (अहवा आणुपुव्वीओ य अणाणुपुव्वीओ य अवत्तव्वयाइं च) अथवा बहुत से आनुपूर्वी बहुत से अनानुपूर्वी और बहुत से अवक्तव्य द्रव्य २६ (एए अट्ठ भंगा) यह त्रिकसंयोगी अष्टभंग हैं (एवं सव्वे विछव्वीसं भंगा) अपि शब्द समुच्चयार्थ में है सो यह सर्व एकत्रित करने से षट् विंशति भंग होते हैं जैसे कि—एक वचनान्त और बहुवचनान्त षट् भंग हैं द्विकसंयोगी द्वादश भंग हैं तीन संयोगी ८ भंग हैं सो (सेत्तं णेगम ववहाराणं भंग समुक्कित्तणया) यह नैगम और व्यवहार नय के मत से भंग समुत्कीर्तना पूर्ण हुई—ऐसे कहने पर शिष्य ने फिर प्रश्न किया कि हे भगवन् ! (एयाएणंणेगमववहाराणं भंग समुक्कितणंयाए किं पओयणं) इन नैगम और व्यवहार नय के मत से जो भंग समुत्कीर्तनता है सो इस के करने से क्या प्रयोजन है—ऐसे शिष्य के प्रश्न को सुन कर गुरु कहने लगे कि (एयाए णेगमववहाराणं भंग समुक्कित्तणयाए भंगोवदंसणया कीरइ) भो शिष्य ! इस नैगम और व्यवहार नय के मत से और भंगों को समुत्कीर्तनता से भंगोपदर्शनता की जाती है अर्थात् प्रथम भंग बनाकर फिर दिखलाए जाते हैं।

भावार्थः—नैगम और व्यवहार नय के मत से भंगों की समुत्कीर्तनता की जाती है (गणना) सो सर्व भंग षट् विंशति होते हैं जैसे कि—आनुपूर्वी द्रव्य १ अनानुपूर्वी द्रव्य २ अवक्तव्य द्रव्य यह तीन प्रकार के द्रव्य हैं इनके एक वचनान्त और बहुवचनान्त करने से षट् भंग होजाते हैं और द्विसंयोगी द्वादश भंग हैं तीन संयोगी अष्ट भंग हैं सर्व एकत्रित करने से षट् विंशति भंग बन जाते हैं इनकी पूर्ण गणना पदार्थ में लिखी गई है इसी का नाम समुत्कीर्तनता है अब सूत्रकार भंगोपदर्शनता के विषय में कहते हैं।

मूल—सेकिंतं णेगमववहाराणं भंगोवदंसणया ? २ तिपएसिए आणुपुव्वी १ परमाणुपोग्गले अणाणुपुव्वी दुपएसिए

अवत्तव्वए २ अहवा तिपएसिया आनुपुव्वीओ परमाणुपोग्गला अणाणुपुव्वीओ दुपएसिया अवत्तव्वयाइं ३ अहवा तिपए-सिया परमाणुपुग्गले अ आणुपुव्वी अ अणाणुपुव्वी अ १ चउ-भंगो अहवा दुपएसिए तिपएसिए अ अणाणुपुव्वीअ अ अव-त्तव्वए य चउभंगो अहवा दुपएसिया य परमाणुपोग्गले अ अव्वत्तव्वए य आणुपुव्वी अ २ अहवा तिपयेसिया य परमाणु पोग्गला य आणुपुव्वीओ अणाणुपुव्वीओ य ४ अहवा तिपए सिए अ दुपएसिए अ आणुपुव्वी य अवत्तव्वए य ५ अहवा तिपएसिए यदुप्पएसिआए आणुपुव्वी अवत्तव्वयाइं च ६ अहवा तिपएसिआ य आणुपुव्वी अ अवत्तव्वगाइंच ७ अहवा तिपए सिया दुपएसिए अ आणुपुव्वीओ अ अवत्तव्वएअ अहवा तिपए सिआय दुपेयासिए अ आणु० अवतव्वए अ अहवा तिपएसि-आ य दुपएसिआ य आणु० अवत्तव्वयाइं च ८ अहवा परमाणु पोग्गले अ दुपएसिए अणाणु० अवत्तव्व ए अ ६ अहवा परमाणु पोग्गले अ-दुपएसिआ ए अणाणु अवत्तव्वयाइं च १० अहवा परमाणु पोग्गला य दुपएसिए अ अणाणु० अवत्तव्वए अ ११ अहवा परमाणुपोग्गला य दुपएसिआ य अणाणु० अवत्तव्व-याइं च १२ अहवा तिपएसिए अ परमाणु पोग्गल अदुपए सिए अ आणुपुव्वी अ अणाणु० अवत्तव्वए अ १ अहवा तिपए सिए अ परमाणुपोग्गले य दुपएसिआ य आणुपुव्वी अ अव-त्तव्वयाइं च २ अहवा तिपएसिए अ परमाणुपुग्गले य दुपए सिआ य आणुपुव्वी अ अणाणुपुव्वीओ अ अवत्तए अ ३ अहवा तिपएसिए अ परमाणुपोग्गला य दुपएसिए अ आणुपुव्वीय

अणाणुपुव्वीओ अवत्तव्वए अ ४ अहवा तिपएसिए अ परमाणु पोग्गला य दुपएसिआ य आणुपुव्वी अ आणुपुव्वीओ अ अवत्तव्वए अ ५ अहवा तिपएसिआ य परमाणु पोग्गले अ दुपएसिए अ आणुपुव्वीओ अ अणाणुपुव्वीओ अ अवत्तव्वयाइं च ६ अहवा तिपएसिआ य परमाणुपोग्गले अ दुपएसिआ य आणुपुव्वीओ अ अणाणुपुव्वी अवत्तव्वयाइं च ७ अहवा तिपएसिआ य परमाणुपोग्गले अ ए दुपएसिआ य आणुपुव्वीओ अ अणाणुपुव्वीओ अवत्तव्वयाइं च ८ से त्तं नेगम ववहाराणं भंगोवदंसणया ॥

पदार्थ–(सेकिंत नेगमववहाराणं भंगोवदंसणया २) (प्रश्न) नैगम और व्यवहार नय के मत से भंगोपदर्शनता किस प्रकार से होती है (उत्तर) नैगम और व्यवहारनय के मत से भंगोपदर्शनता और भंगो का अर्थ निम्न प्रकार से है जैसे कि (तिपएसिए आणुपुव्वी) तीन प्रदेशिक स्कंध को आनुपूर्वी द्रव्य कहते हैं १ (परमाणुपोग्गले अणाणुपुव्वी) परमाणु पुद्गल को अनानुपूर्वी द्रव्य कहते हैं २ (दुप्पएसिए अवत्तव्वएय) द्विप्रदेशिक स्कंध को अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं यह तीन भंग एक वचनान्त हैं, अब तीनों भंग बहु वचनान्त कहते हैं यथा (तिपएसियाइं आणुपुव्वीउ) बहुत से तीन प्रदेसिक स्कंध अनुपूर्वी द्रव्य हैं ४ (परमाणु पोग्गला अणाणुपुव्वीउ) बहुत से परमाणु पुद्गल अनानुपूर्वी द्रव्य हैं ५ (दुप्पएसियाइंअवत्तव्वयाइं) बहुत से द्वि प्रदेशिक स्कंध अवक्तव्य हैं ६ यह तीन भंग बहुवचनान्त हैं एवं सर्व षट् भंगहुए अथ द्विकसंयोगी द्वादश भंगो का विवर्ण किया जाता है (अहवातिपएसिए य परमाणुपोग्गले आणुपुव्वीय अणाणुपुव्वीए य) अथवा एक तीन प्रदेशिकस्कंध और एक परमाणु पुद्गल यदि एकत्व होजांय तो तब उनको आनुपूर्वी और अनानुपूर्वी कहते हैं ७ इसी प्रकार अग्रे भी संभावना करलेनी चाहिये (अहवा तिपएसिय परमाणुपोग्गलाय आणुपुव्वीय अणाणुपुव्वीउ य) अथवा एक तीन प्रदेशिक स्कंध और बहुत से परमाणु पुद्गल उनको आनुपूर्वी और बहुत से अनानुपूर्वी द्रव्य कहते हैं ८ (अहवा तिपएसियाय परमाणुपोग्गले आणुपुव्वीउ य

अणाणुपुव्वी य) अथवा बहुत से तीन प्रदेशिक स्कंध और एक परमाणु पुद्गल उनको बहुत से आनुपूर्वी एक अनानुपूर्वी द्रव्य कहते हैं ९ (अहवा तिपए सियाय परमाणु पोग्गलाणं आणुपुव्वीउ अणाणुपुव्वीउ य) अथवा बहुत से तीन प्रदेशिक स्कंध और बहुत से परमाणु पुद्गल उनको बहुत से आनुपूर्वी और बहुत से अनानुपूर्वी द्रव्य कहते हैं १० (अहवा तिपएसियाय दुपएसिय आणुपुव्वीउ अवत्तव्वय) अथवा बहुत से ३ प्रदेशिक स्कंध एक द्वि प्रदेशिक स्कंध उसे बहुत से आनुपूर्वी एक अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं ११ (अहवा तिपए सिय दुप्पएसिया य आणुपुव्वीय अवत्तव्वयाइं च) अथवा एक ३ प्रदेशिक स्कंध बहुत से द्वि प्रदेशिक स्कंध उन्हें आनुपूर्वी और बहुत से अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं १२ (अहवा तिपएसिया य दुपएसिय आणुपुव्वीउ य अवत्तव्वयए) अथवा बहुत से ३ प्रदेशिक स्कंध और एक द्वि प्रदेशिक स्कंध उसे बहुत से आनुपूर्वी और एक अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं १३ (अहवा तिपएसियाय दुप्पए सियाय आणुपुव्वीउय अवत्तव्वयाइंच) अथवा बहुत से तीन प्रदेशिक स्कन्ध और बहुत से द्वि प्रदेशिक स्कंध उन्हें बहुत से आनुपूर्वी द्रव्य और बहुत से अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं १४ (अहवा परमाणु पोग्गलेय दुपए सिए य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वया य) अथवा एक परमाणु पुद्गल और एक द्वि प्रदेशिक स्कंध उसको एक अनानुपूर्वी और एक अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं १५ (अहवा परमाणु पोग्गले य दुपएसिया य अणाणु पुव्वी य अवत्तव्वयाइं च) अथवा एक परमाणु पुद्गल और बहुत से द्विप्रदेशिक स्कंध वे एक अनानुपूर्वी बहुत से अवक्तव्य द्रव्य कहाते हैं १६ (अहवा परमाणु पोग्गलाय दुपएसिएय अणाणुपुव्वीउ अवत्तव्वएय) अथवा बहुत से परमाणु पुद्गल एक द्विप्रदेशिक स्कंध उन्हें बहुत से अनानुपूर्वी एक अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं १७ (अहवा परमाणु पोग्गलाय दुप्पएसियाय आणुपुव्वीउ य अवत्तव्वयाइं च) अथवा बहुत से परमाणु पुद्गल और बहुत से द्विप्रदेशिक स्कंध उन्हें बहुत से अनानुपूर्वी और बहुत से अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं १८ (अहवा तिपएसियय "परमाणु पोग्गले" दुपएसिए य आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वय) अथवा एक तीन प्रदेशिक स्कंध एक परमाणु पुद्गल एक द्विप्रदेशिक स्कंध उन्हें एक आनुपूर्वी एक अनानुपूर्वी एक अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं १९ (अहवा तिपएसिय परमाणुपोग्गलेय दुपएसिया य आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वी

य अवत्तव्वयाइंच) अथवा एक तीन प्रदेशिक स्कंध और एक परमाणु पुद्गल बहुत मे द्विप्रदेशिक स्कंध उन्हें एक आनुपूर्वी एक अनानुपूर्वी बहुत से अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं २० (अहवा तिपएसिए य परमाणुपोग्गला य दुपएसिए य आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वीउ अवत्तव्वए य) अथवा एक तीन प्रदेशिक स्कंध बहुत से परमाणु पुद्गल एक द्विप्रदेशिक स्कंध उन्हें एक आनुपूर्वी बहुत से अनानुपूर्वी एक अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं २१ (अहवा तिपएसिए य परमाणुपोग्गला य दुपएसिया य आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वीउ य अवतव्वयाइं च) अथवा एक ३ प्रदेशिक स्कंध बहुत से परमाणु पुद्गल बहुत से द्विप्रदेशिक स्कंध उन्हें एक आनुपूर्वी बहुत से अनानुपूर्वी बहुत से अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं २२ (अहवा तिपएसियाय परमाणु पोग्गले य दुप्पएसिए य आणुपुव्वीउ य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्व य) अथवा बहुत से तीन प्रदेशिक स्कन्ध एक परमाणु पुद्गल एक द्विप्रदेशिक स्कन्ध उसे बहुत से आनुपूर्वी एक अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं २३ (अहवा तिपएसिया य परमाणुपोग्गले य दुप्पएसिया य आणुपुव्वीउ य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वयाइं च) अथवा बहुत से तीन प्रदेशिक स्कन्ध एक परमाणु पुद्गल बहुत से द्विप्रदेशिक स्कन्ध उन्हें बहुत से आनुपूर्वी एक अनानुपूर्वी और बहुत से अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं २४ (अहवा तिपएसिया य परमाणुपोग्गला य दुप्पएसिए य आणुपुव्वीओ य अनानुपुव्वीओ य अवत्तव्वए य) अथवा बहुत से तीन प्रदेशिक स्कन्ध बहुत से परमाणु पुद्गल एक द्विप्रदेशिक स्कन्ध उन्हें बहुत से आनुपूर्वी बहुत से अनानुपूर्वी एक अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं २५ (अहवा तिपएसियाय परमाणु पोग्गलाय दुप्पएसियाय आणुपुव्वीउ य अणाणुपुव्वीउ य अवत्तव्वयाइं च) अथवा बहुत से ३ प्रदेशिक स्कन्ध बहुत से परमाणु पुद्गल बहुत से द्विप्रदेशिक स्कन्ध उन्हें बहुत से आनुपूर्वी बहुत से अनानुपूर्वी बहुत से अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं २६ (सेत्तं नेगम ववहाराणं भंगोवदंसणया) अब इसकी पूर्ति कहते हैं, यही नैगम और व्यवहार नय के मत से भंगोपदर्शनता है ॥

भावार्थ—भंगोपदर्शनता उसका नाम है जो पूर्व भंग बनाए गये थे उन को अर्थों में संयोजन करना वही भंगोपदर्शनता है जैसे कि कल्पना करो कि—एक तीन प्रदेशिक स्कंध है, एक परमाणु पुद्गल है तब उनको बहुत से आनुपूर्वी द्रव्य एक अनानुपूर्वी द्रव्य ऐसे कहा जाता है इसी प्रकार सर्व भंग जान लेने

जो उपर हिन्दी पदार्थ में लिखे गये हैं यह सर्व समास नैगम और व्यवहारनय के मत से होता है सो अब नैगम और व्यवहारनय के मत से समवतार का वर्णन किया जाता है।

॥ अथ समवतार द्वार विषय ॥

मूल–सेकिंतं समोयारे णेगमववहाराणं आणुपुव्वी दव्वाई कहिं समोयरंति किं आणुपुव्वीदव्वे समोयरंति अणाणुपुव्वीदव्वेहिं समोयरंति अवत्तव्वयदव्वेहिं समोयरंति णेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाइं आणुपुव्वीदव्वेहिं समोयरंति णो अणाणुपुव्वी दव्वेहिं समोयरंति णो अव्वत्तव्वयदव्वेहिं समोयरंति एवं अणाणुपुव्वीदव्वाइं अवत्तव्वय दव्वाणि विसठाणे समोयारेयव्वाणि सेत्तं समोयारे ॥

पदार्थ–(सेकिंतं समोयारे २ णेगमववहाराणं) शिष्य ने प्रश्न किया कि, हे भगवन्! नैगम और व्यवहार नय के मत से समवतार कैसे होता है–अथवा (आणुपुव्वी दव्वाइं कहिं समोयरंति) आनुपूर्वी द्रव्य कहां पर समवतार होते हैं (किं आणुपुव्वी दव्वेहिं समोयरंति) क्या आनुपूर्वी द्रव्य आनुपूर्वी द्रव्यों में समवतार होते हैं अर्थात् वे स्वजाति में गर्भित होते हैं वा अणाणुपुव्वी दव्वेहिं समोयरंति) अनानुपूर्वी द्रव्यों में समवतार होते हैं अथवा (अवत्तव्वय दव्वेहिं समोयरंति) अवक्तव्य द्रव्यों में समवतार होते हैं ऐसे शिष्य के पूछने पर गुरु कहते हैं कि (णेगमववहाराणं आणुपुव्वी दव्वाइं आणुपुव्वी दव्वेहिं समोयरंति) नैगम और व्यवहारनय के मत से आनुपूर्वी द्रव्य आनुपूर्वी द्रव्यों में समवतार होते हैं किन्तु (णो अणाणुपुव्वी दव्वेहिं समोयरंति) अनानुपूर्वी द्रव्यों में समवतार नहीं होते हैं (णो अवक्तव्वय दव्वेहिं समोयरंति) अवक्तव्यद्रव्यों में समवतार नहीं होते (एवं अणाणु पुव्वी दव्वाइं) इसी प्रकार अनानुपुर्वी द्रव्य और (अवत्तव्वय दव्वाणिवि) अवक्तव्य द्रव्य भी (सठाणे समोयारे यव्वाणि सेतं समोयारे) स्वस्थानों में समवतार होते हैं यही समवतार द्वार का वर्णन है

भावार्थ–नैगम और व्यवहारनय के मत से जो आनुपूर्वी द्रव्य है वे स्वस्था-

नों में ही गर्भित होते हैं अर्थात् जिस जाति का जो द्रव्य है वे अपनी जाति में ही रहता है अथवा उसकी गणना उसकी जाति में की जाती है उसी का नाम समवतार द्वार हैं।

॥ अथ अनुगम विषय ॥

सेकिंत अणुगमे २ नवविहे पएणत्ते तंजहा संतपयप रूवणया १ दव्वपमाणं च २ खेत्तं ३ फुसणाय ४ कालो य ५ अंतरं ६ भाग ७ भाव ८ अप्पाबहुंचेव ९ सेकिंतं णेगम ववहाराणं संतपयपरूवणया आणुपुव्वीदव्वाइंकिं अत्थि नत्थिति नियमा अत्थि एवं दोन्निवि १ नेगमववहाराणं आणुपुव्वी दव्वाइं किं संखेज्जाइं असंखेज्जाइं अणंताइं नो संखेज्जाइं नो असंखेज्जाइं अणंताइं एवं दोन्निवि ॥ २॥

पदार्थः—(सेकिंतं अनुगमे २) (प्रश्न) अनुगम किसे कहते हैं (उत्तर) अनुगम (नवविहे पं० तं०) नव प्रकार से प्रतिपादन किया गया है अनुगम उसका नाम है जो सूत्रानुसार व्याख्या कीजाए अथवा जिसके द्वारा अर्थों का पृथक् २ बोध हो, उसे अनुगम कहते हैं वे नव प्रकार से निम्न लिखितानुसार हैं, (संतपयपरूवणया) विद्यमान पदों की प्ररूपणा करनी अर्थात् सत्रूप पदार्थों का विवर्ण किन्तु असत् रूप खरशृंगवत् नहीं हैं १ (दव्वपमाणं च) द्रव्यों का प्रमाण २ (खेत्तं) क्षेत्रद्वार ३ (फुसणाय) स्पर्शनाद्वार ४ (कालोय) कालद्वार ५ (अन्तर) अन्तरद्वार ६ (भाग) भागद्वार ७ (भाव) भावद्वार (अप्पाबहुचेव) अल्प बहुत्वद्वार यह निश्चय ही नवद्वार है (सेकिंतं णेगम ववहाराणं संतपयपरूवणया) (प्रश्न) नैगम और व्यवहार नय के मत से (आणुपुव्वी दव्वाइं किं अत्थि नत्थिति) आनुपूर्वी द्रव्यों की अस्ति है किम्वा-नास्ति है गुरु कहते हैं (नियमा अत्थि एवं दोन्निवि) निश्चय ही अस्ति है है इसी प्रकार अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्यों की भी निश्चय ही अस्ति है ॥१॥ णेगम ववहाराणं आणुपुव्वी दव्वाइं) नैगम और व्यवहार नय के मत से आनुपूर्वी द्रव्य (किं संखेज्जाइं असंखेज्जाइं अणंताइं) क्या संख्यात पद वाले हैं

वा असंख्यात अथवा अनन्तपद वाले हैं। गुरु कहते हैं (णो संखेज्जाइं णो अ-संखेज्जाइं अणंताइं एवं दोन्निवि) आनुपूर्वी द्रव्य उक्त नयों के मत से संख्यात असंख्यात नहीं हैं केवल अनन्त हैं इसी प्रकार अनानुपूर्वी द्रव्य और अवक्तव्य द्रव्य भी अनन्त हैं ॥ २ ॥

भावार्थ—अनुगम नव प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि विद्यमान पदों की प्ररूपणा १ द्रव्यों का परिमाण २ क्षेत्र ३ स्फर्शना ४ काल ५ अन्तर ६ भाग ७ भाव ८ अल्प बहुत्व ९ सो प्रथम द्वार में नैगम और व्यवहार नय के मतसे तीनों द्रव्यों की सदैव काल अस्ति हैं फिर नैगम और व्यवहार नय के मत से तीनों द्रव्य अनंत हैं अपितु संख्यात वा असंख्यात नहीं हैं ॥

अथ क्षेत्र द्वार विषय।

मूल—णेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाइं लोगस्सकइ भागे होज्जा किं संखिज्जाइंभागे होज्जा असंखेज्जाइंभागे होज्जा, संखेज्जेसु भागे होज्जा असंखेज्जेसु भागे होज्जा सव्वलोएसु होज्जा? एगं दव्वं पडुच्च संखेज्जइंभागे वा होज्जा असंखेज्जइंभागे वा होज्जा संखेज्जेसु भागेसु वा होज्जा असंखेज्जेसु भागेसु वा होज्जा सव्वलोए वा होज्जा नाना दव्वाइं पडुच्च नियमा सव्वलोए वा होज्जा णेगमववहाराणं अणाणुपुव्वीदव्वाइं किं लोगस्स संखेज्जइंभागे होज्जा असंखेज्जइंभागे होज्जा संखेज्जेसु भागेसु होज्जा असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा सव्वलोए होज्जा?, एगं दव्वं पडुच्च नो, सं-ज्जइंभागे होज्जा असंखेज्जइभागे होज्जा नो संखेज्जेसु भागेसु होज्जा नो असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा नो सव्वलोए होज्जा नाणा दव्वाइं पडुच्च नियमा सव्वलोए होज्जा, एवं अवत्तव्वगदव्वाणिवि।

पदार्थ-(नेगमववहाराणं) नैगम और व्यवहारनय के मत से (आणुपुव्वी दव्वाइं लोगस्सकइ भागे होज्जा) शिष्य ने फिर प्रश्न किया कि हे भगवन्! जो आनुपूर्वी द्रव्य हैं वे लोक कितने भाग में होते हैं (किं संखिज्जाइंभागे होज्जा असंखेज्जाइंभागे होज्जा) क्या लोक के संख्यात भाग में होते हैं अथवा (संखेज्जेसु भागे होज्जा असखेज्जे भागे होज्जा) बहुत से संख्यात भागों में होते हैं वा बहुत से असंख्यात भागों में होते हैं अथवा (सव्वलो एसु होज्जा) सर्व लोग में होते हैं इस प्रकार के शिष्य के पूछने पर गुरु कहने लगे कि भो-शिष्य (एगं दव्वं पडुच्च) एक आनुपूर्वी द्रव्य की अपेक्षा (संखेज्जेइभागे वा होज्जा) लोक के संख्यात भागमें भी होते हैं अथवा (असंखेज्जइ भावे होज्जा) असंख्यात भाग में भी होते हैं वा (संखेज्जेसु भागेसु वा होज्जा) बहुत से संख्यात भागों में भी होते हैं अथवा (असंखेज्जेसु भागेसु वा होज्जा) बहुत से असंख्यात भागों में भी होते हैं अथवा (सव्वलोए वा होज्जा) सर्व लोक में भी होते हैं जैसेकि श्रीकेवली भगवान् के समुद्घात के समय आनुपूर्वी द्रव्य सर्व लोक में होजाते हैं किन्तु समुद्घात की स्थिति केवल अष्ट समय प्रमाण मात्र है और यह उक्त तीनों अंक केवली समुद्घात की अपेक्षा से कहे गये हैं अपितु (नाणा दव्वाइं पडुच्चानियमा सव्वलोए होज्जा) नाना द्रव्यों की अपेक्षा नियम से सर्व लोक में होते हैं यह सर्व गुरु का उत्तर आनुपूर्वी द्रव्य की अपेक्षा से है, अब शिष्य आनानुपूर्वी द्रव्य की पृच्छा करता है जैसे कि (नेगमववहाराणं) नैगम और व्यवहार नय के मत से (अनानुपुव्वी दव्वाइं किं लोगस्स संखेज्जइ भागे होज्जा) शिष्य पूछता है कि हे भगवन् अनानुपूर्वी द्रव्य क्या लोक के संख्यात भाग में होते हैं अथवा (असंखेज्जइभागे होज्जा) असंख्यात भाग में होते हैं अथवा (संखेज्जेसु भागेसु होज्जा) बहुत से संख्यात भागों में होते हैं वा (असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा) बहुत से असंख्यात भागों में होते हैं (सव्वलोए होज्जा) अथवा सर्व लोक में होते हैं गुरु कहने लगे कि (एगं दव्वं पडुच्च) एक द्रव्य की अपेक्षा (नो संखेज्जइभागे होज्जा) लोक के संख्यात भाग में नहीं होते क्योंकि अनानुपूर्वी द्रव्य एक परमाणु पुद्गल का नाम है (असंखेज्जइभागे होज्जा) अपितु लोक के असंख्यात भाग में होता है किन्तु (नोसंखेज्जेसु भागेसु होज्जा) बहुत से संख्यात भागों में नहीं होता (नोअसंखेज्जेसु भागेसु होज्जा) बहुत से

१ ङसेसत्तोदो दुहिहिंतो लुक्। ८ इस सूत्र से पंचमी लोप होगई है।

असंख्यात भागों में नहीं होते क्योंकि--केवल एक परमाणु है(नो सव्वलोएहोज्जा) और नाहीं सर्व लोक में होते हैं किन्तु (णाणादव्वाइं पडुच्च) नाना द्रव्यों की अपेक्षा (नियमा सव्वलोए होज्जा) निश्चय ही सर्व लोक में होते हैं (एवं अवत्तव्वगदव्वाणिवि) इसी प्रकार अवक्तव्य द्रव्य भी जानलेने चाहिये जैसे कि अनानुपूर्वी द्रव्य का विवर्ण किया गया है ॥

भावार्थः--नैगम और व्यवहार नय के मत से आनुपूर्वी द्रव्य लोक के संख्यात भाग में वा असंख्यात भाग में अथवा बहुत से संख्यात भाग में वा असंख्यात भाग में अथवा बहुत से संख्यात भागों में और बहुत से असंख्यात भागों में होता है अथवा सर्व लोक में भी हो जाता है (केवली भगवान की समुद्घात की अपेक्षा यह विवर्ण केवल एक द्रव्य की अपेक्षा से है, किन्तु नाना द्रव्यों की अपेक्षा से यह द्रव्य निश्चय ही सर्व लोक में होते हैं। नैगम और व्यवहार नय के मत से अनानुपूर्वी एक द्रव्य लोक के केवल असंख्यात भाग में होता है किन्तु नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा यह द्रव्य निश्चय ही सर्व लोक में होते हैं सो इसी प्रकार अवक्तव्य द्रव्य के स्वरूप को भी जान लेना चाहिये ॥

॥ अथ स्पर्शना द्वार विषय ॥

मूल--णेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाइं लोगस्स किं संखेज्जइभागं फुसंति असंखेज्जइभागं फुसंति संखेज्जइसुभागे फुसंति असंखेज्जइसुभागे फुसंति सव्वलोगं फुसंति एगं दव्वं पडुच्च लोगस्स संखेज्जइभागं वा फुसइ असंखेज्जइ भागं वा फुसन्ति संखेज्जेवाभागं फुसन्ति असंखेज्जेवाभागे फुसन्ति सव्वलोगं वा फुसन्ति णाणादव्वाइं पडुच्च नियमा सव्वलोगं फुसन्ति ।

पदार्थः--(णेगम ववहाराणं) नैगम और व्यवहार नय के मत से (आणुपुव्वी दव्वाइं) आनुपूर्वी द्रव्य (लोगस्स किं संखेज्जइ भागं फुसंति) क्या लोक के संख्यात भाग को स्पर्श करते हैं अथवा (असंखेज्जइ भागे फुसंति) असंख्यात भाग को स्पर्श करते हैं (संखेज्जइ सुभागे फुसंति) अथवा बहुत

से संख्यात भागों को स्पर्श करते हैं वा (असंखेज्जेसु भागे फुसंति) बहुत से असंख्यात भागों को स्पर्श करते हैं अथवा (सव्व लोगं फुसंति) सर्व लोक को स्पर्श करते हैं। शिष्य के ऐसा पूछने पर गुरु कहने लगे कि (एगं दव्वं पडुच्च लोगस्स संखेज्जइ भागं वा फुसंति) एक आनुपूर्वी द्रव्य की अपेक्षा से लोक के संख्यात भाग को स्पर्श करता है (अथवा असंखेज्जइ भागं वा फुसंति) असंख्यात भाग को स्पर्श करता है अथवा(संखेज्ज वा भागे फुसंति) अथवा आनुपूर्वी द्रव्य बहुत से संख्यात भागों को स्पर्श होते हैं अथवा (असंखेज्जे वा भागे सु फुसंति) बहुत से असंख्यात भागों को स्पर्श होते हैं अथवा (सव्व लोगं वा फुसंति) सर्व लोक को भी स्पर्श होते हैं यह केवल एक द्रव्य की अपेक्षा से है किन्तु (णाणा दव्वाइं पडुच्च नियमा सव्व लोगं फुसंति) नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा से निश्चय ही, सर्व लोक को स्पर्श होते हैं।

भावार्थ—एक आनुपूर्वी द्रव्य लोक के संख्यात वा असंख्यात अथवा बहुत से संख्यात भाग वा बहुत से असंख्यात भागों को अथवा सर्व लोक को स्पर्श होता है किन्तु नाना प्रकार के आनुपूर्वी द्रव्य सर्व लोक को स्पर्श करते हैं।

अथ अनानुपूर्वी विषय।

णेगमववहाराणं अणाणुपुव्वी दव्वाणं पुच्छा एगं दव्वं पडुच्च नो संखेज्जइभागं फुसइ असंखेज्जइभागं फुसंति नो संखेज्जे भागे फुसंति नो असंखेज्जे भागे फुसंति नो सव्व लोगं फुसंति णाणादव्वाइं पडुच्च नियमा सव्वलोगं फुसंति एवं अवत्तव्वगदव्वाणिवि भाणियव्वाणि।

पदार्थ—(णेगमववहाराणं) नैगम और व्यवहार नय के मत (से अणाणुपुव्वी दव्वाणं पुच्छा) शिष्य ने प्रश्न किया कि हे भगवन्! अनानुपूर्वी द्रव्य लोक के कितने भाग को स्पर्श होता है, गुरु ने उत्तर दिया कि भो शिष्य! (एगं दव्वं पडुच्च) एक द्रव्य की अपेक्षा से (नो संखेज्जइभागं फुसइ) लोक के संख्यात भाग को स्पर्श नहीं करता अपितु (असंखेज्जइ भागं फुसंति)

असंख्यात भाग को स्पर्श करता है किन्तु (नो संखेज्जेभागं फुसंति) बहुत संख्यात भागों को स्पर्श नहीं होते नाहीं (नो असंखेज्जेभागं फुसंति) लोक के बहुत से असंख्यात भागों को स्पर्श होते हैं (नो सव्वलोगं फुसंति) किन्तु सर्व लोक को भी स्पर्श नहीं होते यह केवल तो एक द्रव्य की अपेक्षा है किन्तु (णाणा दव्वाइं पडुच्च) नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा से सर्व लोक को स्पर्श होते हैं (एवं अवत्तव्वगदव्वाणि विभाणि यव्वाणि) इसी प्रकार अवक्तव्य द्रव्य भी कथन करने चाहिये।

भावार्थ–अनानुपूर्वी द्रव्य और अवक्तव्य द्रव्य केवल लोक के असंख्यातवें भाग को ही स्पर्श करते हैं शेष भागों को स्पर्श नहीं होते।

अथ स्थिति द्वार विषय।

मूल–णेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाइं कालओ केव चिरं होइ ?, एगं दव्वं पडुच्च जहण्णेणं एगं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं नाणादव्वाइं पडुच्च सव्वद्धा एवं दोन्निवि।

पदार्थ–(णेगमववहाराणं) शिष्य ने प्रश्न किया कि हे भगवन् नैगम और व्यवहार नय के मत से (आणुपुव्वी दव्वाइं कालओ केवचिरं होइ) आनुपूर्वी द्रव्य काल से कबतक रह सकता है अर्थात् एक आनुपूर्वी द्रव्य काल की अपेक्षा से कितने चिर की स्थिति युक्त होता है, इस प्रकार पूछने पर गुरु कहने लगे कि भो शिष्य! (एगं दव्वं पडुच्च जहन्नेणंएगं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं) एक द्रव्य की अपेक्षा से जघन्य (न्यून से न्यून) एक समय प्रमाण स्थिति होती है उत्कृष्ट काल की अपेक्षा असंख्यात काल पर्यन्त स्थिति करता है अर्थात् यदि एक आनुपूर्वी द्रव्य एक ही स्थान पर स्थिति करे तो उत्कृष्ट काल असंख्यात काल पर्यन्त स्थिति कर लेता है किन्तु (नानादव्वाइं पडुच्च नियमा सव्वद्धा) नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा नियम से सर्व काल में रहते हैं क्योंकि नाना प्रकार के जो आनुपूर्वी द्रव्य हैं वे सदा काल ही रहते हैं इसलिये उनकी अपेक्षा आनुपूर्वी द्रव्य सदा विद्यमान है (एवं दोन्निवि) इसी प्रकार अनानुपूर्वी द्रव्य और अवक्तव्य द्रव्य भी जान लेने चाहिये।

भावार्थ–तीनों द्रव्यों की स्थिति जघन्य एक समय प्रमाण उत्कृष्ट असं-

ख्यात काल पर्यन्त है नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा सदा ही विद्यमान रहते हैं।

अथ अन्तर द्वार विषय।

मूल–णेगमववहाराणं आणुपुव्वी दव्वाणं कालओ केवंचिरं अंतरं होइ?, एगं दव्वं पडुच्च जहरणेणं एगं समयं उक्कोसेणं अणंतं कालं नाणादव्वाइं पडुच्च नत्थि अंतरं। णेगमववहाराणं अणाणुपुव्वीदव्वाणं कालओ केवइयं अंतरं होइ? एगं दव्वं पडुच्च जहरणेणं एगं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं नाणादव्वाइं पडुच्च नत्थि अंतरं। णेगमववहाराणं अवत्तव्वय दव्वाणं कालओ केवंचिरं अंतरं होइ? एगं दव्वं पडुच्च जहरणेणं एगं समयं उक्कोसेणं अणंतं कालं नाणादव्वाइं पडुच्च नत्थि अंतरं होइ ॥ ६ ॥

पदार्थ–(णेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाणं कालओ केवंचिरं अंतरं होइ) (प्रश्न) नैगम और व्यवहार नय के मत से आनुपूर्वी द्रव्यों का काल की अपेक्षा से कितने काल पर्यन्त अंतर होता है अर्थात् आनुपूर्वी द्रव्यों का अन्तर काल कितना है (उत्तर) (एगं दव्वं पडुच्च जहरणेणं एगं समयं उक्कोसेणं अणंतं कालं) एक आनुपूर्वी द्रव्य की अपेक्षा से न्यून से न्यून एक समय मात्र अंतर काल होता है उत्कृष्ट अनंत काल पर्यन्त अंतर काल होता है जैसे कि–एक द्रव्य अब आनुपूर्वी द्रव्य की व्यवस्था में है किन्तु वह आनुपूर्वी भाव को छोड कर अन्य भाव को प्राप्त होगया यदि वह फिर आनुपूर्वी द्रव्य के भाव को प्राप्त हो जाय तो जघन्य एक समय के पीछे हो जाय उत्कृष्टता से अनन्त काल पीछे आनुपूर्वी द्रव्य को प्राप्त होवे–इसी प्रकार सर्व द्रव्यों की सम्भावना कर लेनी चाहिये किन्तु (नाणादव्वाइं पडुच्च नत्थि अंतरं) नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा से अन्तर काल नहीं होता है क्योंकि वे सदैव काल विद्यमान रहते हैं (णेगमववहाराणं अणाणुपुव्वी दव्वाणं कालओ केवइयं अंतरं होइ) (प्रश्न) नैगम और व्यवहार नय के मत से अनानु-

पूर्वी द्रव्यों का अंतर काल कितना होता है (उत्तर) एगं दव्वं पडुच्च जह न्नेणं एगं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं) एक अनानुपूर्वी द्रव्य की अपेक्षा से न्यून से न्यून एक समय मात्र अंतर काल होता है उत्कृष्ट असंख्यात काल प्रमाण अंतर काल कथन किया है अंतर काल का अर्थ मागवत् जान लेना किन्तु (नानादव्वाइं पडुच्च नत्थि अंतरं) नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा से अंतर काल नहीं होता है (णेगमववहाराणं अवत्तव्वयदव्वाणं कालओ केवइ चिरं होइ) (प्रश्न) नैगम और व्यवहार नय के मत से अवक्तव्य द्रव्यों का काल की अपेक्षा से कितना चिर अंतर काल है (उत्तर) एगं दव्वं पडुच्च जहण्णेणं एगं समय उक्कोसेणं अणंतं कालं) एक अवक्तव्य द्रव्य की अपेक्षा से न्यून से न्यून एक समय मात्र अंतर काल उत्कृष्ट अनंत काल पर्यन्त अन्तर काल होता है किन्तु (णाणादव्वाइं पडुच्च नत्थि अंतर) जो अवक्तव्य द्रव्य नाना प्रकार के हैं उन्हों की अपेक्षा से अंतर काल नहीं होता है क्योंकि वे सदैव काल विद्यमान रहते हैं।

भावार्थ—नैगम और व्यवहार नय मतसे आनुपूर्वी द्रव्यों का जघन्य एक समय उत्कृष्ट अनंतकाल पर्यन्त अंतर काल होता है किन्तु नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा अंतर काल नहीं है और अनानुपूर्वी द्रव्यों का अंतर काल न्यून से न्यून एक समय प्रमाण उत्कृष्ट असंख्यात काल पर्यन्त अंतर काल होता है क्योंकि असंख्यात काल प्रमाण परमाणु पुद्गल की स्थिति है और नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा से अंतर काल नहीं होता है अपितु अवक्तव्य द्रव्यों का अंतर काल जघन्य एक समय उत्कृष्ट अनंत काल प्रमाण रहता है नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा अंतर काल नहीं होता क्योंकि अवक्तव्य द्रव्य सदा विद्यमान रहते हैं।

अथ भाग द्वार विषय।

मूल—णेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाइं सेसदव्वाणं कइभागे होज्जा किं संखेज्जइभागे होज्जा असंखेज्जइभागे होज्जा संखेज्जेसु भागेसु होज्जा असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा नो संखेज्जइभागं होज्जा नो असंखेज्जइभागे होज्जा नो संखेज्जेसु भागेसु होज्जा नियमाअसंखेज्जेसु भागेसु होज्जा

नेगमववहाराणं अणाणुपुव्वी दव्वाणं पुच्छा असंखेज्जइ भागे होज्जा सेसेसु पडिसेहा एवं अवत्तव्वगदव्वाणिवि ॥७॥

पदार्थ-(णेगमववहाराणं आणुपुव्वी दव्वाइं सेसदव्वाणं कइभागे होज्जा) शिष्य ने फिर प्रश्न किया कि हे भगवन्! नैगम और व्यवहार नय के मत से आनुपूर्वी द्रव्य शेष द्रव्यों (अनानुपूर्वी द्रव्य और अवक्तव्य द्रव्य) के कितने भाग में होता है (किं संखेज्जइभागे होज्जा असंखेज्जइभागे होज्जा) क्या उन के संख्यात भाग में वा असंख्यात भाग में अथवा (संखेज्जेसु भागेसु होज्जा) बहुत से संख्यात भागों में होता है वा (असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा) बहुत से असंख्यात भागों में होता है गुरु ने उत्तर दिया कि भो शिष्य! (नो संखेज्जइभागं होज्जा) संख्यात भाग में नहीं होता (नो असंखेज्जइभागं होज्जा) और असंख्यात भाग में भी नहीं होता (नो संखेज्जइसु भागेसुं होज्जा) नाहीं बहुत से संख्यात भागों में होता है किन्तु (नियमा असंखेज्जइसु भागेसु होज्जा) नियम से अर्थात् निश्चय ही बहुत से असंख्यात भागों में होता है क्योंकि आनुपूर्वी द्रव्य तीन प्रदेशी से लेकर अनंत प्रदेशी पर्यन्त हैं। वे अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य से असंख्यात गुण अधिक हैं इस लिये सूत्र में कथन किया गया है कि उक्त दोनों द्रव्यों से असंख्यात गुणाधिक आनुपूर्वी द्रव्य हैं (णेगमववहाराणं अणाणुपुव्वी दव्वाणं पुच्छा) नैगम और व्यवहार नय के मत से अनानुपूर्वी द्रव्यों का भी शिष्य ने पृच्छा की गुरु ने उत्तर में कहा कि (असंखेज्जइभागे होज्जा सेसेसु पडिसेहा) आनुपूर्वी द्रव्य से अनानुपूर्वी द्रव्य असंख्यात भाग में होता है, शेष प्रश्नों का निषेध किया गया है जैसे कि संख्यात भाग असंख्यात बहुत से संख्यात भाग वा बहुत से असंख्यात भाग इत्यादि (एवं अवत्तव्व गदव्वाणिवि) इसी प्रकार अवक्तव्य द्रव्य के भी स्वरूप को अनानुपूर्वीवत् जानना चाहिये।

भावार्थ--नैगम और व्यवहार नय के मत से आनुपूर्वी द्रव्य अनानुपूर्वी द्रव्य और अवक्तव्य द्रव्य से असंख्यात गुणाधिक हैं क्योंकि तीन प्रदेशी से लेकर अनंत प्रदेशी स्कंध पर्यन्त सर्व आनुपूर्वी द्रव्य हैं किन्तु अनानुपूर्वी द्रव्य और अवक्तव्य द्रव्य यह दोनों ही द्रव्य आनुपूर्वी द्रव्य के असंख्यात भाग में होते हैं अर्थात् असंख्यात भाग न्यून है।

अथ भाग द्वार विषय ।

नेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाइं कतरंमि भावे होज्जा? किं उदइए होज्जा उवसमिय भावे होज्जा खइए भावे होज्जा खओवसमिए भावे होज्जा पारिणामिए भावे होज्जा सन्निवाइय भावे होज्जा? नियमा साइयपारिणामिए भावे होज्जा एवं दोन्निवि ॥ ८ ॥

पदार्थ-(णेगमववहाराणं आणुपुव्वी दव्वाइं कयरंमि भावे होज्जा) (प्रश्न) नैगम और व्यवहारनय के मत से आनुपूर्वी द्रव्य कौन से भाव में होता है जैसे कि (किं उदइए भावे होज्जा) क्या उदय भाव में होता है (उवसमिए भावे होज्जा) उपशम भाव में होता है (खइए भावे होज्जा) अथवा क्षायिक भाव में होता है या (खओवसमिए भावे होज्जा) क्षयोपशम भाव में होता है वा (परिणामिए भावे होज्जा) पारिणामिक भाव में होता है अथवा (सन्निवाइय भावे होज्जा) सन्निपात भाव में होता है. गुरु ने उत्तर दिया कि (नियमा साइयपारिणामिए भावे होज्जा) नियम से (निश्चय ही) सादि पारिणामिक भाव में होता है अर्थात् जिसकी आदि है और परिणमन शील है इसी का नामा सादि पारिणामिक भाव होता है (एवं दोन्निवि) इसी प्रकार अनानुपूर्वी अवक्तव्य द्रव्य भी जान लेने चाहिये ।

भावार्थ-षट् भावों में सादि पारिणामिक भाव में आनुपूर्वी द्रव्य होता है क्योंकि आनुपूर्वी द्रव्य परिणमन शील होता है इसीलिये उसका नाम सादि पारिणामिक भाव है ।

॥ अथ अल्प बहुत्व विषय ॥

एएसिं णंभंते ! णेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाणं अणाणुपुव्वीदव्वाणं अवत्तव्वगदव्वाणं य दव्वट्ठयाए पए सट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा? गोयमा! सव्वत्थोवाइं णेगमववहा

राणं अवत्तव्वगदव्वाइं दव्वट्ठयाए अणाणुपुव्वीदव्वाइं दव्वट्ठयाए विसेसाहियाइं आणुपुव्वीदव्वाइं दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणाइं पएसट्ठयाए सव्वत्थोवाइं णेगमववहाराणं अणाणुपुव्वीदव्वाइं अपएसट्ठयाए अवतव्वगदव्वाइं पए सट्ठयाए विसेसाहियाइं आणुपुव्वीदव्वाइं पएसट्ठयाए अणंतगुणाइं दव्वट्ठपएससट्ठयाए सव्वत्थोवाइं णेगमववहाराणं अवत्तव्वगदव्वाइं दव्वट्ठयाए १ अणाणुपुव्वीदव्वाइं दव्वट्ठयाए अपएसट्ठयाए विसेसा हियाइं २ अव्वत्तवगदव्वाइं पए सट्ठयाए विसेसाहियाइं ३ आणुपुव्वीदव्वाइं दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणाइं ४ ताइं चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणाइं ५ सेत्तं अणुगमे सेत्तं णेगमववहाराणं अणोवणिहिया दव्वाणु पुव्वी ॥

पदार्थः-(एएसिणं भंते णेगम ववहाराणं आणुपुव्वी दव्वाणं) हे ! भगवन् यह नैगम और व्यवहार नय के मत से आनुपूर्वी द्रव्यों की (अणाणुपुव्वी दव्वाणं) अनानुपूर्वी द्रव्यों की (अवत्तव्वगदव्वाणं) और अवक्तव्य द्रव्यों की (दव्वट्ठयाए) द्रव्यार्थिक से (पएसट्ठयाए) प्रदेशार्थिक से और (दव्वट्ठपएसट्ठयाए) द्रव्य और प्रदेशार्थिक से (कयरे २ हिंतो) सो किन २ से (अप्पा वा) अल्प अथवा (बहुया वा) बहुत्व (तुल्ला वा) तुल्य अथवा (विसेसाहिया वा) विशेषाधिक द्वार है अर्थात् यह द्रव्य परस्पर तुल्य हैं वा विशेषाधिक हैं वा अल्प हैं वा बहुत्व हैं। इस प्रकार प्रश्न करने पर भगवान् कहने लगे कि (गोयमा) हे गौतम ! (सव्वत्थोवाइं) (णेगमववहाराणं) नैगम और व्यवहार नय के मत से सर्व द्रव्यों की अपेक्षा से अवक्तव्यद्रव्यस्तोक है (अवत्तव्वगदव्वाइं दव्वट्ठयाए) ॥ (अणाणुपुव्वीदव्वाइं दव्वट्ठयाए विसेसा हियाइं) किन्तु अनानुपूर्वी द्रव्य द्रव्यार्थिक से विशेषाधिक हैं (आणुपुव्वी

१ स्तोकस्य थोकथो वथेवाः । प्राकृत व्याकरण पाद २ सू० १२५ स्तोक शब्दस्य एतेत्रय आदेशा भवंति वा ।

दव्वाइं दव्वट्ठयाए) असंखेज्जगुणाइं) आनुपूर्वी द्रव्य द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं (पएसट्ठयाए) अपितु प्रदेशार्थिक से (सव्वत्थोवाइं) सर्व से स्तोक (णेगमववहाराणं) नैगम और व्यवहार नय के मत से (अणाणुपुव्वी दव्वाइं अपएसट्ठयाए) अनानुपूर्वी द्रव्य अप्रदेशार्थ की अपेक्षा से हैं और (अवत्तव्वगदव्वाइं पएसट्ठयाए विसेसाहियाइं) अवक्तव्य द्रव्य प्रदेशार्थिक से विशेषाधिक हैं किन्तु आणुपुव्वीदव्वाइं पएसट्ठयाए अणंतगुणाइं) आनुपूर्वी द्रव्य प्रदेशों की अपेक्षा से अनंत गुण हैं अपितु (दव्वट्ठपएसट्ठयाए सव्वत्थोवाइं) द्रव्य और प्रदेशों की अपेक्षा से सर्व से स्तोक (णेगमववहाराणं अवत्तव्वग दव्वाइं दव्वट्ठयाए १) अवक्तव्य द्रव्य हैं अर्थात् नैगम और व्यवहार नय के मत से द्रव्य और प्रदेशों की अपेक्षा से अवक्तव्य द्रव्य सर्व से स्तोक है किन्तु (अणाणुपुव्वीदव्वाइं दव्वट्ठयाए अपएसट्ठयाए विसेसाहियाइं) अनानुपूर्वी द्रव्य द्रव्यार्थक से अप्रदेशों की अपेक्षा से विशेषाधिक हैं २ (अवत्तव्वग दव्वाइं पएसट्ठयाए विसेसाहियाइं) अवक्तव्य द्रव्य प्रदेशार्थक से विशेषाधिक हैं ३ (आणुपुव्वीदव्वाइं दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणाइं) आनुपूर्वी द्रव्य द्रव्यार्थक से असंख्यात गुण हैं ४ (ताइंचेव पएसट्ठयाए अणंतगुणाइं) आनुपूर्वी द्रव्य से प्रदेशों की अपेक्षा वे द्रव्य अनंत गुण हैं (सेत्तं अनुगमे) यही समास अनुगम का है इसीलिये इसे अनुगम कहते हैं (सेत्तं णेगमववहाराणं अणोवणिहिया दव्वाणुपुव्वी) अब नैगम और व्यवहार नय से अनुपनिधि द्रव्यानुपूर्वी का समास सम्पूर्ण हुआ सो इसे ही अनुपनिधि द्रव्यानुपूर्वी कहते हैं ॥

भावार्थ–नैगम और व्यवहार नय से आनुपूर्वी द्रव्य अनानुपूर्वी द्रव्य अवक्तव्य द्रव्य द्रव्यार्थक और प्रदेशार्थक नयों के मत से निम्न प्रकार से उक्त द्रव्य न्यूनाधिक हैं ॥ नैगम और व्यवहार नय के मत से द्रव्यार्थक से सर्व से स्तोक अवक्तव्य द्रव्य हैं और अनानुपूर्वी द्रव्य द्रव्यार्थक से विशेषाधिक हैं और आनुपूर्वी द्रव्य द्रव्यार्थक से असंख्यात गुणाधिक हैं फिर नैगम और व्यवहार नय के मत से अप्रदेशार्थक भाव से सर्व से स्तोक अनानुपूर्वी द्रव्य है क्योंकि एक परमाणु का नाम अनानुपूर्वी है और प्रदेशों की अपेक्षा से अवक्तव्य द्रव्य विशेषाधिक हैं किंतु आनुपूर्वी द्रव्य अनंत गुणाधिक हैं अतः दोनों की अपेक्षा से नैगम और व्यवहार नय के मत से द्रव्य और प्रदेशों की अपेक्षा

सर्व से स्तोक द्रव्यार्थक से अवक्तव्य द्रव्य है १ अनानुपूर्वी द्रव्य और प्रदेशों की अपेक्षा से विशेषाधिक २ बहुत से अवक्तव्य द्रव्य प्रदेशार्थक से विशेषाधिक हैं ३ बहुत से आनुपूर्वी द्रव्य द्रव्यार्थक से असंख्यात गुणाधिक हैं ४ और प्रदेशों की अपेक्षा से वे द्रव्य अनंत गुणाधिक हैं ५ इसी का नाम अनुगम द्वार है सो नैगम और व्यवहार नय के मत से अनुपनिधि द्रव्यानुपूर्वी का समास सम्पूर्ण हुआ ॥

अथ संग्रह नय के विषय ।

सेकिंतं संग्गहस्स अणेवणिहिया दव्वाणुपुव्वी २ पंच विहा पं० तं० अट्ठपयपरूवणया १ भंगसमुक्कित्तणया २ भंगोवदंसण या ३ समोयारे ४ अनुगमे ५ ॥

पदार्थः—(सेकिंतं संग्गहस्स अणोवणिहिया दव्वाणु पुव्वी २ पंचविहा पं० तं०) (प्रश्न) संग्रह नय के मत से अनुपनिधि द्रव्यानुपूर्वी कितने प्रकार से वर्णन की गई है (उत्तर) पांच प्रकार से जैसे कि—(अट्ठपयपरूवणया) अर्थपद की प्ररूपणा १ (भंगसमुक्कित्तणया) भंगसमुत्कीर्तनता २ (भंगोवदंसणया) भंगोपदर्शनता ३ (समोयारे) समवतार ४ और (अणुगमे) पंचम अनुगम ॥५॥

भावार्थ—संग्रह नय के मत से अनुपनिधि द्रव्यानुपूर्वी पांच प्रकार से वर्णन की गई है जैसे कि—अर्थपद प्ररूपणा १ भंग समुत्कीर्तनता २ भंगोपदर्शनता ३ समवतार ४ और अनुगम ५ ।

अथ प्रथम भेद विषय ।

सेकिंतं संग्गहस्स अट्ठपयपरूवणया?, २ तिपएसिया आणुपुव्वी जाव अणंतपएसिया आणुपुव्वी परमाणुपुग्गले अणाणुपुव्वी दुप्पएसिया अवत्तवग सेत्तं संग्गहस्स अट्ठपयपरूवणया एयाए णं संग्गहस्स अट्ठपयपरूवणयाए किं पयोयणं एयाए णं संग्गहस्स अट्ठपयपरूवणयाए संग्गहस्स समुक्कित्तणया कीरइ ॥ ५३ ॥

पदार्थ—(सेकिंतं संग्गहस्स अट्ठपयपरूवणया २ तिपए सिया आणुपुव्वी

जाव अणंत पएसिया आणुपुव्वी) (प्रश्न) संग्रह नय से अर्थपद प्ररूपणा किसे कहते हैं (उत्तर) जो तीन प्रदेशिक स्कंध से लेकर अनन्त प्रदेशिक स्कंध पर्यन्त द्रव्य हैं वे सर्व आनुपूर्वी संज्ञक द्रव्य हैं और (परमाणु पोग्गले अणाणुपुव्वी) परमाणु पुद्गल अनानुपूर्वी द्रव्य है (दुपएसिया अवत्तव्वए) द्विप्रदेशिक स्कंध अवक्तव्य द्रव्य है (सेत्तं संगहस्स अट्ठपएपरूवणयाए) अथानन्तर से इसी का नाम अर्थपद प्ररूपणा है किन्तु (एयाए संगहस्स अट्ठपय परूवणयाए किं पयोयणं) इस संग्रह नय से जो अर्थपद प्ररूपणा कथन की गई है इस का प्रयोजन ही क्या है इस प्रकार के प्रश्न पूछने पर गुरु कहने लगे कि (एयाए णं संगहस्स अट्ठपयपरूवणयाए भंगसमुकित्तणया कीरइ) इस संग्रह नय से अर्थपद की प्ररूपणा करने से भंग समुत्कीर्तनता की जाती है यही इसका मुख्य प्रयोजन है।

भावार्थ–संग्रहनय के मत से अर्थ पद प्ररूपणा उसका नाम है जो तीन प्रदेशी द्रव्यों से लेकर अनन्त प्रदेशी द्रव्य पर्यन्त पुद्गल हैं वह सर्व आनुपूर्वी द्रव्य कहा जाता है जो परमाणु पुद्गल है उसका नाम अनानुपूर्वी द्रव्य है अतः जो द्विप्रदेशिक स्कंध है वह अवक्तव्य द्रव्य संज्ञक द्रव्य है और जो अर्थ पद प्ररूपणा संग्रहनय के मत से कीगई है उसका मुख्य प्रयोजन भंग समुत्कीर्तन करना ही है।

अथ भंगसमुत्कीर्तनता विषय।

सेकिंतं संगहस्स भंगसमुकित्तणया ? २ अत्थि आणुपुव्वी १ अत्थि अणाणुपुव्वी २ अत्थि अवत्तव्वए ३ अहवा अत्थि आणुपुव्वी अणाणुपुव्वी य ४ अहवा अत्थि आणुपुव्वी अवत्तव्वए य ५ अहवा अत्थि अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वए य ६ अहवा अत्थि आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वए य ७ एवं पएसत्त भंगा सेत्तं संगहस्स भंगसमुकित्तणया एयाए णं संगहस्स भंगसमुकित्तणयाए किं पयोयणं ? एयाए णं संगहस्स भंग समुकित्तणयाए भंगोवदंसणया कीरइ॥

पदार्थ–(सेकिंतं संगहस्स भंगसमुकित्तणया २) (प्रश्न) संग्रहनय के

मत से भंग समुत्कीर्तनता किसे कहते हैं (उत्तर) संग्रहनय से भंग समुत्कीर्तनता निम्न प्रकार से है जैसे कि (अत्थि आणुपुव्वी १) एक आनुपूर्वी द्रव्य १ (अत्थि अणाणुपुव्वी २) एक अनानुपूर्वी द्रव्य है २ (अत्थि अवत्तव्वए३) एक अवक्तव्य द्रव्य है ३ और द्विक संयोगी के ३ भंग है जैसे कि (अहवा अत्थि आणुपुव्वी अणाणुपुव्वी य) अथवा एक आनुपूर्वी द्रव्य एक अनानुपूर्वी द्रव्य है ४ (अहवा अत्थि आणुपुव्वी अवत्तव्वए य) अथवा एक आनुपूर्वी द्रव्य एक अवक्तव्य द्रव्य है ५ (अहवा अत्थि अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वए य ६) अथवा एक अनानुपूर्वी द्रव्य और एक अवक्तव्य द्रव्य यह दो संयोगी ३ भंग है किन्तु तीन संयोगी केवल एकही भंग होता है जैसे कि (अहवा अत्थि आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वए य) अथवा एक आनुपूर्वी द्रव्य और एक अनानुपूर्वी द्रव्य और एक अवक्तव्य यह तीनों भंग एक वचनान्त हैं संग्रहनय के मत से बहुवचन नहीं होता है (एवं पयसत्त भंगा) इस प्रकार से इन पदों के सात भंग होते हैं (सेत्तं संग्गहस्स भंग समुक्कित्तणया) यह संग्रह नय से भंग समुत्कीर्तनता पूर्ण हुई (एयाए णं संग्गहस्स भंग समुक्कित्तणयाए इस संग्रह नय के मत से भंग समुत्कीर्तना करने से (किं पयोयणं) क्या प्रयोजन है ? गुरु कहने लगे कि (एयाए णं संग्गहस्स भंग समुक्कित्तणयाए भंगोवदंसणया कीरइ) इस संग्रह नय के मत से भंग समुत्कीर्तनता करने से भंगोपदर्शनता की जाती है ।

भावार्थ—संग्रहनय के मत से भंग समुत्कीर्तनता के ७ भंग होते हैं जैसे कि तीन भंग एक वचनान्त हैं और तीन भंग द्विक संयोगी हैं एक भंग तीनसंयोगी है इनका पूर्ण विवर्ण पदार्थ में दिया गया है और इन का मुख्य प्रयोजन भंगोपदर्शनता करना ही है ।

अथ भंगोपदर्शनता विषय ।

मूल—सेकिंतं संग्गहस्स भंगोवदंसणया ? २ तिपएसिया आणुपुव्वी १ परमाणुपोग्गला अणाणुपुव्वी २ दुपएसिया अवत्तव्वए ३ अहवा तिपएसिया परमाणुपोग्गला य आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वी य ४ अहवा तिपएसियाए दुपएसियाए आणुपुव्वीए अवत्तव्वए य ५ अहवा परमाणुपोग्गला य दुपए

सियाए अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वए य ६ अहवा तिपएसियाए परमाणु पोग्गलेय दुपएसियाए आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वए य ७ सेत्तं संग्गहस्स भंगोवदंसणया ।

पदार्थ-(सेकिंतं संग्गहस्स भंगोवदंसणया) (प्रश्न) संग्रह नय के मतसे भंगोपदर्शनता किसे कहते हैं (उत्तर) संग्रह नय से भंगोपदर्शनता निम्न प्रकार से है जैसे कि (तिपएसिया आणुपुव्वी) तीन प्रदेशिक स्कंध आनुपूर्वी द्रव्य कहाता है १ (परमाणु पोग्गले अणाणुपुव्वी) परमाणु पुद्गल का नाम अनानुपूर्वी द्रव्य है २ (दुपएसिया अवत्तव्वए) द्विप्रदेशिक स्कंध अवक्तव्य द्रव्य है ३ अथ द्विक संयोगी ३ भंग दिखलाते हैं-(अहवा तिपएसिया परमाणु पोग्गला य आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वी य ४) अथवा यदि । तीन प्रदेशिक स्कंध और एक परमाणु पुद्गल इन दोनों का सम्बन्ध होवे तो उन को आनुपूर्वी और अनानुपूर्वी द्रव्य कहते हैं ४ (अहवा तिपएसियाए दुपएसियाए आणुपुव्वीए अवत्तव्वए ५) अथवा तीनप्रदेशिक स्कंध और द्विप्रदेशिक स्कंध एकत्व होवे तव उनको आनुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं ५ (अहवा परमाणु पोग्गलेय दुपएसियाए आणुपुव्वी य अवत्तव्वए य) अथवा परमाणु पुद्गल और द्विप्रदेशिक स्कंध मिल जावें तो आनुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य उन्हें कहते हैं ६ (अहवा तिपएसियाए परमाणुपोग्गले य दुपएसियाए आणुपुव्वीय अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वए य ७) अथवा तीन संयोगी एक भंग होता है उसका विवर्ण किया जाता है जैसे कि-एक ३ प्रदेशिक स्कंध है और एक परमाणु पुद्गल है और एक २ प्रदेशिक स्कंध है यदि वे सर्व एकत्व हो जावें तो उन को आनुपूर्वी द्रव्य अनानुपूर्वी द्रव्य और अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं ७ (सेत्तं संग्गहस्स भंगोवदंसणया) यही संग्रह नय के मत से भंगोपदर्शनता है और इसे ही भंगोपदर्शनता कहते हैं ।

भावार्थ-भंगोपदर्शनता के विषय पूर्ववत् ही कथन है ३ भंग एक वचनान्त है और तीन भंग द्विक संयोगी हैं और एक भंग तीन संयोगी है-इन्हीं का नाम भंगोपदर्शनता है इन का पूर्ण स्वरूप हिन्दी पदार्थ में लिखागया है ।

अथ समवतार विषय ।

सेकिंतं संग्गहस्स समोयारे ? २ संग्गहस्स आणुपुव्वी

दव्वाइं कहिं समोयरंति किं आणुपुव्वीदव्वेहिं समोयरंति ? अणाणुपुव्वीदव्वेहिं समोयरंति ? अवत्तव्वगदव्वेहिं समोयरंति ? संग्गहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं आणुपुव्वीदव्वेहिं समोयरंति नो अणाणुपुव्वीदव्वेहिं समोयरंति नो अवत्त- अवत्तव्वगदव्वेहिं समोयरंति एवं दोन्निवि सट्ठाणे समोयरंति सेत्तं समोयारे ॥

पदार्थ–(सेकिंतं संग्गहस्स समोयारे २ संग्गहस्स आणुपुव्वी दव्वाइं कहिं समोयरंति) (प्रश्न) संग्रह नय के मत से समवतार किसे कहते हैं और आनुपूर्वी द्रव्य किस द्रव्य में समवतार होते हैं (किं आणुपुव्वी दव्वेहिं समोयरंति) क्या आनुपूर्वी द्रव्यों में समवतार होते हैं (अणाणुपुव्वी दव्वेहिं समोयरंति) वा अनानुपूर्वी द्रव्यों में समवतार होते हैं (अवत्तव्वग दव्वेहिं समोयरंति) अथवा अवक्तव्य द्रव्यों में समवतार होते हैं (उत्तर) (संग्गहस्स आणुपुव्वी दव्वाइं आणुपुव्वी दव्वेहिं समोयरंति) संग्रह नय के मत से आनुपूर्वी द्रव्य अनानुपूर्वी द्रव्यों में ही समवतार होते हैं किन्तु (नो अणाणुपुव्वी दव्वेहिं समोयरंति) आनुपूर्वी द्रव्य अनानुपूर्वी द्रव्यों में समवतार नहीं होते (नो अवत्तव्वगदव्वेहिं समोयरंति) न अवक्तव्य द्रव्यों में समवतार होते हैं अतः सिद्ध हुआ कि आनुपूर्वी द्रव्य आनुपूर्वी द्रव्यों में ही समवतार होते हैं (एवं दोन्निविसठाणे समोयरंति सेत्तं समोयारे) इसी प्रकार अनानुपूर्वी द्रव्य और अवक्तव्य द्रव्य भी स्वस्थानों में ही समवतार होते हैं अन्य द्रव्यों में नहीं इसी का नाम समवतार द्वार है ।

भावार्थ–समवतार द्वार उसी का नाम है जो द्रव्य हैं वे अपने २ स्थानों में ही समवतार (गर्भित) होते हैं अन्य द्रव्यों में नहीं जैसे कि आनुपूर्वी द्रव्य आनुपूर्वी द्रव्यों में समवतार होता है इसी प्रकार अनानुपूर्वी द्रव्य और अवक्तव्य द्रव्य भी जान लेने चाहिये ।

अथ अनुगम विषय ।

सेकिंतं अणुगमे २ अट्ठविहे पण्णत्ते तंजहा संत पयपरूवणया १ दव्वयमाणं च २ खित्त ३ फुसणया ४ कालोय ५

अंतरं ६ भाग ७ भावे ८ अप्पा बहुं नत्थि १ संगहस्स आणु पुव्वी दव्वाइं किं अत्थि नत्थि नियमा अत्थि एवं दोन्निवि संगहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं किं संखिज्जाइं असंखेज्जाइं अणंताइं ? नो संखिज्जाइं नो असंखेज्जाइं नो अणंताइं नियमा एगो रासी एवं दोन्निवि ॥

पदार्थ-(सेकिंतं अणुगमे २ अट्ठविहे पण्णत्ते तंजहा) (प्रश्न) अनुगम कितने प्रकार से वर्णन किया गया है (उत्तर) आठ प्रकार से जो निम्न-लिखितानुसार है (संतपयपरूवणया) विद्यमान पदार्थों की प्रति पादनता १ (दव्वपमाणं च) द्रव्य प्रमाण और २ (खित्त ३) क्षेत्रद्वार (फुसणया ४) स्पर्शना द्वार ४ (कालोया) कालद्वार ५ (अन्तरं) अन्तर द्वार ६ (भागे) भागद्वार ७ (भावे) भावद्वार (अप्पा बहु नत्थि) संग्रहनय के मत में अल्प बहुत्व द्वार नहीं होता क्योंकि संग्रह नय के मत में सर्व द्रव्य एक रूप में ही रहते हैं (संगहस्स आणुपुव्वी दव्वाइं किं अत्थि नत्थि) (प्रश्न) संग्रहनय के मत में आनुपूर्वी द्रव्य हैं किम्वा नहीं हैं (उत्तर) (नियमा अत्थि) नियम से हैं अर्थात् निश्चय ही हैं (एवं दोन्निवि) इसी प्रकार अनानुपूर्वी और अव-क्तव्य द्रव्य भी जान लेने चाहिये इसी का नाम विद्यमान पदार्थों की प्रतिपाद-नता है। अब द्रव्यों के प्रमाण विषय में कहते हैं (संगहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं किं संखिज्जाइं असंखिज्जाइं अणंताइं) (प्रश्न) संग्रहनय के मत से आनुपूर्वी द्रव्य क्या संख्यात हैं अथवा असंख्यात हैं वा अनंत हैं (उत्तर) (नो संखि-ज्जाइं नो असंखेज्जाइं नो अणंताइं नियमा एगो रासी) संग्रहनय के मत से आनुपूर्वी द्रव्य संख्यात असंख्यात वा अनन्त नहीं हैं किन्तु नियम से ही एक राशि (समूह) है क्योंकि संग्रहनय द्रव्यों को अभेद रूप से मानता है सो (एवं दोन्निवि) इसी प्रकार अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य भी जानने चाहियें।

भावार्थ--अनुगम ८ प्रकार से कहा गया है जैसे कि विद्यमान पदार्थों की प्रतिपादनता १ द्रव्य प्रमाण २ क्षेत्र ३ स्पर्शना ४ काल ५ अंतर ६ भाग ७ और भाव ८ और संग्रह नय के मत से तीनों द्रव्यों की सदैव काल अस्ति भी है और द्रव्यों का प्रमाण संग्रहनय के मत से संख्यात असंख्यात वा अनन्त ऐसे भेद रूप नहीं है केवल एक राशि रूप है।

अथ क्षेत्र द्वार विषय ।

संग्गहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं लोगस्स कइभागे होज्जा ? किं संखेज्जइ भागे होज्जा असंखेज्जइ भागे होज्जा संखेज्जेसु भागेसु होज्जा असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा सव्वलोए होज्जा ? संग्गहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं नो संखेज्जइभागे होज्जा नोअसंखेज्जइ भागे होज्जा नो· संखेज्जेसु भागेसु होज्जा नो असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा नियमा सव्वलोए होज्जा, एवं दोन्निवि ।

पदार्थ-(संग्गहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं लोगस्स कइ भागे होज्जा) (प्रश्न) संग्रहनय के मत से आनुपूर्वी द्रव्य लोक के कितने भाग में होता है (किं संखेज्जइ भागे होज्जा असंखेज्जइ भागे होज्जा) क्या लोक के संख्यात भाग में होता है वा असंख्यात भाग में होता है तथा (संखेज्जेसु भागेसु होज्जा असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा)लोक के बहुत संख्यात भागों में होता है वा बहुत से असंख्यात भागों में होता है (सव्वलोए होज्जा) अथवा सर्व लोक में ही आनुपूर्वी द्रव्य होता है (उत्तर) नो संखेज्जइ भागे होज्जा नो असंखेज्जइ भागे होज्जा) आनूपुर्वी द्रव्य लोक के संख्यात भाग में नहीं होता और असंख्यात भाग में नहीं होता (नो संखेज्जेसु भागेसु होज्जा नो असंज्जेसु भागेसु होज्जा) बहुत से संख्यत भागों में नहीं होता वा बहुत से असंख्यात भागों में नहीं होता किन्तु (नियमा सव्वलोए होज्जा) नियम से (निश्चय ही) सर्व लोक में होता है क्योंकि संग्रह नय अभेद रूप द्रव्यों को मानता है । (एवं दोन्निवि) इसी प्रकार अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्यों के स्वरूप को भी जानना चाहिये ।

भावार्थ--आनुपूर्वी द्रव्य अनानुपूर्वी द्रव्य और अवक्तव्य संग्रह नय के मत से सर्व लोक में ही होते हैं ।

अथ स्पर्शना विषय ।

संग्गहस्स आणुपुव्वी दव्वाइं लोगस्स किं संखेज्जइ भागं फुसंति असंखेज्जइ भागं फुसंति संखेज्जेसु भागे फुसंति

असंखेज्जे भागे फुसंति सव्व लोगं फुसंति ? नो संखेज्जइ भागं फुसंति जाव नियमा सव्वलोगं फुसंति एवं दोन्निवि॥३॥

पदार्थ—(संग्गहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं लोगस्स किं संखेज्जइ भागे फुसंति असंखेज्जइ भागं फुसंति) (प्रश्न) संग्रह नय से आनुपूर्वी द्रव्य लोक के क्या संख्यातभाग भाग को स्पर्श होते हैं (संखेज्जेसु भागेसु होज्जा असंखेज्जेसु भोगसु होज्जा) बहुत से संख्यात भागों को स्पर्श करते हैं अथवा बहुत से असंख्यात भागों को स्पर्श होते हैं तथा (सव्वलोए फुसंति) तथा सर्व लोक में स्पर्श होते हैं (उत्तर) (नो संखेज्जइ भागं फुसंति जाव नियमा सव्वलोगं फुसंति एवं दोन्निवि) संख्यात असंख्यात वा बहुत से संख्यात बहुत से असंख्यात भागों को स्पर्श नहीं करते केवल नियम से ही सर्व लोक को स्पर्श करते हैं क्योंकि जब संग्रह नय के मत से आनुपूर्वी द्रव्य सर्व लोक में हैं तब स्पर्श भी सर्व लोक को कर रहे हैं इसी प्रकार अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य भी जानलेने चाहिये ॥

भावार्थ–संग्रह नय के मत से तीनों द्रव्य सर्व लोक को स्पर्श कर रहे हैं क्योंकि यह तीनों द्रव्य सर्व लोक में हैं इसीलिये सर्व लोक को स्पर्श कररहे हैं ॥

॥ अथ शेष द्वार विषय ॥

संग्गहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं कालओ केवच्चिरं होइ नियमा सव्वद्धा एवं दोन्निवि ५ संग्गहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं अन्तर कालओ केवच्चिरं होइ? नत्थि अंतरं एवं दोन्निवि ६ संग्गहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं सेसदव्वाणं कइभागे होज्जा ? किं संखेज्जइभागे होज्जा असंखेज्जइभागे होज्जा–संखेज्जेसुभागेसु होज्जा असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा ? नो संखेज्जइ भागे होज्जा नो असंखेज्जइ भागे होज्जा नो संखेज्जेसु भागेसुहोज्जा नो असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा नियमा तिभागे होज्जा एवं दोन्निवि ॥ ७ ॥

पदार्थ–(संगहस्स णाणुपुव्वी दव्वाइं कालओकेवच्चिरं होइ) (प्रश्न) संग्रह नय के मत से आनुपूर्वी द्रव्यों का काल से अन्तर काल कब तक होता है अर्थात् परस्पर द्रव्यों का अंतरकाल कब तक रहता है (उत्तर) (नत्थि अंतरं एवं दोन्निवि) अंतरकाल नहीं होता है क्योंकि यह द्रव्य सदैव काल विद्यमान रहता है और इसी प्रकार दोनों द्रव्यों के स्वरूप को भी जानना चाहिये ६ (संगहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं सेसदव्वाणं कइभागे होज्जा (प्रश्न) संग्रह नय के मत से आनुपूर्वी द्रव्य, अनानुपूर्वी द्रव्यों के और अवक्तव्य द्रव्यों के कितने भाग में होता है (किं संखेज्जइ भागे होज्जा असंखेज्जइ भागे होज्जा) क्या संख्यात भाग में होता है वा असंख्यात भाग में होता है अथवा (संखेज्जेसुभागेसु होज्जा असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा) बहुत से संख्यात भागों में होता है या बहुत से असंख्यात भागों में होता है (उत्तर) नो संखेज्जइ भागे होज्जा) संख्यात भाग में नहीं होता (नो असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा) असंख्यात भागों में भी नहीं होता (नो संखेज्जे सुभागे सुहोज्जा) बहुत से संख्यात भागों में नहीं होता (नो असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा) बहुत से असंख्यात भागों में भी नहीं होता किन्तु (नियमा तिभागे होज्जा) नियम से तीन भागों में से एक भाग में होता हैं क्योंकि–संग्रह नय के मत से तीनों द्रव्य हैं सो आनुपूर्वी द्रव्य तीसरे भाग में होता है (एवं दोन्निवि) इसी प्रकार दोनों द्रव्यों के स्वरूप को भी जानना चाहिये ॥

भावार्थ–संग्रहनय से आनुपूर्वी द्रव्यों का अंतर काल नहीं होता है और यह आनुपूर्वी द्रव्य दोनों द्रव्यों के तीसरे भाग में होता है क्योंकि संग्रहनय में तीन ही द्रव्य हैं सो यह तीसरे भाग में ही होता है ।

अथ भाव विषय ।

मूल–संगहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं कयरंमि भावे होज्जा ?, नियमा साइपारिणामिए भावे होज्जा एवं दोन्निवि ८ अप्पाबहुं नत्थि सेत्तं अणुगमे सेत्तं संगहस्स अणोवणिहिया दव्वाणुपुव्वी सेत्तं अणोवणिहिया दव्वाणुपुव्वी ।

पदार्थ–(संगहस्स) आणुपुव्वीदव्वाइं कयरंमि भावे होज्जा) (प्रश्न) संग्रनय से आनुपूर्वी द्रव्य कौनसे भाव में होते हैं (उत्तर) (नियमासाइ पा-

रिणामए भावे होज्जा नियम से सादि पारिणामिक भाव में होते हैं अर्थात् जो आदि सहित परिणमन शील है (एवं दोन्निवि) इसी प्रकार दोनों द्रव्यों के स्वरूप को भी जानना चाहिये (अप्पा बहुनत्थि) संग्रहनय से अल्प बहुत्व नहीं होता है (सेत्तं अणुगमे) यही अनुगम द्वार है (सेत्तं सगहस्स अणो-वणिहिया दव्वाणुपुव्वी सेत्तं अणो वणिहिया दव्वाणुपुव्वी) यही संग्रहनय से अनुपनिधि द्रव्यानुपूर्वी है अपितु अनुपनिधि द्रव्यानुपूर्वी का स्वरूप इस-स्थल पर ही सम्पूर्ण होगया है ।

भावार्थ—संग्रह नयसे आनुपूर्व्यादि द्रव्य सादि पारिणामिक भाव में रहते हैं और अल्प बहुत्व द्वार इस नय से नहीं होता है सो इस का नाम अनुगम है और संग्रहनय से अनुपनिधि द्रव्यानुपूर्वी का यहां पर ही समास सम्पूर्ण होगया है ।

अथ उपनिधि का विषय ।

मूल—सेकिंतं उवणिहिया दव्वाणुपुव्वी ? २ तिविहा पं० तं० पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी सेकिंतं पुव्वाणु-पुव्वी २ धम्मत्थिकाए १ अधम्मत्थिकाए २ आगासत्थिकाए ३ जीवत्थिकाए ४ पोग्गलत्थिकाए ५ अद्धासमय ६ सेत्तं पुव्वाणु पुव्वी सेकिंतं पच्छाणु पुव्वी ? २ अद्धासमय जावधम्मत्थिकाए सेत्तं पच्छाणुपुव्वी सेकिंतं अणाणु पुव्वी २ एयाए चेव एग-इयाएच्छ गच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नभासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी ।

पदार्थ—(सेकिंतं उवणिहिया दव्वाणुपुव्वी तिविहा पं०) (प्रश्न) (उप-निधि का द्रव्यानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) उपनिधि का द्रव्यानुपूर्वी तीन प्रकार से कथन की गई हैं जैसे कि (दव्वाणुपुव्वी) द्रव्यानुपूर्वी (पच्छाणु पुव्वी पश्चात् आनुपूर्वी और (अणाणुपुव्वी) अनानुपूर्वी (सेकिंतं पुव्वाणु पुव्वी) (प्रश्न) पूर्वानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) पूर्वानुपूर्वी निम्न प्रकार से है जैसे कि—(धम्मत्थिकाय) धर्मास्तिकाय (अहम्मत्थिकाय) अधर्मास्तिकाय (आगासत्थिकाए ३) आकाशास्तिकाय (जीवत्थिकाए) जीवास्तिकाय ४ (पोग-

लत्थिकाय) पुद्गल अस्तिकाय ५ (अद्धासमय ६) काल द्रव्य (सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी) यही द्रव्यों की पूर्वानुपूर्वी है (सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी २) (प्रश्न) पश्चात् आनुपूर्वी किसे कहते हैं जैसे कि-(अद्धासमय जावधम्मत्थिकाय सेत्तं पच्छाणुपुव्वी) काल द्रव्य १ पुद्गलास्ति काय २ जीवास्तिकाय ३ आकाशास्तिकाय ४ अधर्मास्तिकाय ५ धर्मास्तिकाय ६ इस प्रकार से गणन करने की संख्या को पश्चात् आनुपूर्वी कहते हैं (सेकिंतं अणाणुपुव्वी २ एयाए चेव एकादियाए एगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरूवुणो सेत्तं अणाणुपुव्वी) (प्रश्न) अनानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) इन्हीं षट् द्रव्यों की एक आदि से आरंभ कर षट् गच्छ रूप श्रेणी करली जावे फिर षट् श्रेणी में रहने वाले अंकों को परस्पर अभ्यास करके जो ७२० भंग होते हैं उन में से आदि और अन्त के दो रूप न्यून कर दिये जावें तब ७१८ भंग शेष रहते हैं इन्हीं का नाम अनानुपूर्वी है और यही अनानुपूर्वी का स्वरूप है ।

भावार्थः-उपनिधि का द्रव्यानुपूर्वी तीनों प्रकार से वर्णन की गई है जैसे कि-पूर्वानुपूर्वी १ पश्चात् आनुपूर्वी २ अनानुपूर्वी ३ द्रव्यों के स्वरूप को समीप करने के नाम को उपनिधि का द्रव्यानुपूर्वी कहते हैं सो पूर्वानुपूर्वी षट् द्रव्यों को अनुक्रमता पूर्वक गणन करने का नाम है पश्चात् आनुपूर्वी उन्हीं द्रव्यों को उलथा गणन करने का नाम है जैसे काल द्रव्य से लेकर धर्म द्रव्य पर्यन्त गिने जांए परन्तु अनानुपूर्वी के लिये एक से लेकर षट् पर्यन्त छै गच्छ स्थापन करके (१, २, ३, ४, ५, ६) फिर इन्हों को परस्पर अभ्यास करके उनमें से दो अंक न्यून करने से अनानुपूर्वी बनती है जैसे-(१, २, ३, ४, ५, ६) ये छै अंक स्थित हैं इनको अन्यो अन्य परस्पर गुणाकार करो अर्थात् जरब दो तब (१×२×३×४+५+६) ऐसा रूप हुआ पुनः एक को दो गुणा किया तो दो एकमदो, तब दो सिद्ध हुआ फिर दो को ३ से गुणा करने पर २ तीया ६ अर्थात् (छै) ऐसे सिद्ध हुआ फिर ६ को ४ से गुणा किया जैसे ६ चौका चौबीस (२४) पश्चात् २४ को ५ गुणा करने से अर्थात् २४ पांचे १२० अनन्तर १२० को ६ से गुणा किया तब १२० छिके ७२०, इस प्रकार समस्त भंग सिद्ध हुए. इन में से (१) एक वाला अंक तो पूर्वानुपूर्वी है और ७२० वाला अंक पश्चात् आनुपूर्वी है अतः ७२० में से २ कम करने पर (७२०-२) ७१८ सात सौ अठारह शेष अंक रहे हुए हैं इनको अनानुपूर्वी कहते हैं ॥

॥ फिर उसी विषय ॥

अहवा उवणिहिया दव्वाणुपुव्वी तिविहा पं० तं० पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी, सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी ? २ परमाणुपोग्गले दुपएसिए तिपएसिए जाव दस पएसिए संखेज्जपएसिए असंखेज्जपएसिए अणंतपएसिए सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी ? अणंतपएसिए असंखेज्जपएसिए संखेज्जपएसिए जाव दसपएसिए जाव परमाणुपोग्गले सेत्तं पच्छाणुपुव्वी ॥

पदार्थ-(अहवा उवणिहिया दव्वाणुपुव्वी तिविहा पं० तं) अथवा उपनिधि का द्रव्यानुपूर्वी तीनों प्रकार से प्रतिपादन की गई है जैसे कि-(पुव्वाणुपुव्वी) पूर्वानुपूर्वी (पच्छाणु पुव्वी) पश्चात् आनुपूर्वी (अणाणुपुव्वी) अनानुपूर्वी (सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी) (प्रश्न) पूर्वानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) पूर्वानुपूर्वी उसका नाम है जैसे कि-(परमाणुपोग्गले दुपएसिए तिपएसिए जावदसपएसिए) परमाणु पुद्गल द्विप्रदेशिक स्कंध तीन प्रदेशिक स्कंध यावत् दश प्रदेशिक स्कंध (संखेज्ज पएसिए असंखेज्ज पएसिए अणंत पएसिए सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी) संख्यात प्रदेशिक स्कंध असंख्यात प्रदेशिकस्कंध और अनंतप्रदेशिक स्कंध यह सर्व पूर्वानुपूर्वी द्रव्य हैं क्योंकि अनुक्रमता पूर्वक गणन करने का नाम ही पूर्वानुपूर्वी है (सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी अणंतपएसिए असंखेज्ज पएसिए संखेज्ज पएसिए जाव दसपएसिए जाव परमाणु पोग्गले सेत्तं पच्छाणुपुव्वी) (प्रश्न) पश्चात् आनुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) पश्चात् आनुपूर्वी उसका नाम है जैसे कि-अनंत प्रदेशिक स्कंध असंख्यात प्रदेशिक स्कंध संख्यात प्रदेशिक स्कंध यावत् दश प्रदेशिक स्कंध से लेकर एक परमाणु पुद्गल पर्यन्त जो द्रव्य हैं इस प्रकार से गणना करने पर उसे पश्चात् आनुपूर्वी कहते हैं ।

भावार्थ-उपनिधि का द्रव्यानुपूर्वी तीनों प्रकार से और भी कही गई है जैसे-कि पूर्वानुपूर्वी, पश्चात् आनुपूर्वी और अनानुपूर्वी सो एक परमाणु से लेकर अनंत प्रदेशी पर्यन्त पूर्वानुपूर्वी कहते हैं इस से उलथा करने को पश्चात् आनुपूर्वी कहते हैं ।

अनानुपूर्वी विषय निम्न लिखितानुसार है ।

सेकिंतं अणाणुपुव्वी एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए जाव अणंतगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी सेत्तं उवणिहिया दव्वाणुपुव्वी सेत्तं जाणगसरीर भवियसरीर वइरित्ते दव्वाणुपुव्वी सेत्तं नो आगमओ दव्वाणुपुव्वी सेत्तं दव्वाणुपुव्वी ।

पदार्थ—(सेकिंतं अणाणुपुव्वी २) (प्रश्न) अनानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) (एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए जाव अणंतगच्छ गयाए जाव अणंतगच्छगयाए सेढीए) इन को एक से लेकर वृद्धि करते हुए यावत् अनंतगच्छ किए जाए फिर अनंतगच्छ की श्रेणी को (अन्न मन्नब्भासो दुरुवुणो सेत्तं अणाणुपुव्वी) परस्पर गुणा करने से यावत् भंग बनजाते हैं उनमें से आदि अंत के भंग को न्यून करने से शेष रहेहुए भंगो का नाम अनानुपूर्वी है सेत्तं अणाणुपुव्वी) यही अनानुपूर्वी का स्वरूप है (सेत्तं उवणिहिया दव्वाणुपुव्वी) यही उपनिधि का द्रव्यानुपूर्वी है सेत्तं जाणग सरीर भविय-शरीर वइरित्त दव्वाणुपुव्वी सेत्तं नो आगमओ दव्वाणुपुव्वी सेत्तं नो आगमओ सेत्तं दव्वाणुपुव्वी) यही ज्ञ शरीर और भव्य शरीर व्यतिरिक्त द्रव्यानुपूर्वी नो आगम से वर्णन की गई है और इसे ही द्रव्यानुपूर्वी कहते हैं ।

भावार्थ—अनानुपूर्वी उसे कहते हैं कि–जो अनंत प्रदेशि श्रेणी है–उसको परस्पर गुणा करने से यावत् परिमाण भंग बनते हैं उनमें से दो भंग न्यून करने से अनानुपूर्वी बन जाती है और इसी का नाम उपनिधि का द्रव्यानुपूर्वी है और इसी का नाम ज्ञ शरीर भव्य शरीर व्यतिरिक्त द्रव्यानुपूर्वी नो आगम से वर्णन की गई है ।

अथ क्षेत्रानु पूर्वानुपूर्वी विषय ।

मूल—सेकिंतं खेत्ताणुपुव्वी २ दुविहा पं० तं० उवणिहिया अणोवणिहिया तत्थणं जासा उवणिहिया साट्ठप्पा तत्थणं जासा अणोवणिहियासा दुविहा पं० तं० णेगम ववहाराणं १

संगाहस्स २ सेकिंतं णेगमववहाराणं अणोवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी २ पंचविहा पं० तं० अट्ठपयपरूवणया १ भंगसमुक्कित्तणया भंगोवदंसणया समोयारे ४ अणुगमे ५ सेकिंतं अट्ठपयपरूवणया २ तिपएसोगाढे आणुपुव्वी जाव असंखेज्जपएसोगाढे आणुपुव्वी एगपएसोगाढे अणाणुपुव्वी दुपएसोगाढे अवत्तव्वएति सोगाढा आणुपुव्वीओ जावं असंखेज्जपएसोगाढा आणुपुव्वीओ एगपएसोगाढा अणाणुपुव्वीओ दुपएसोगाढा अवत्तवए एयाणं णेगमववहाराणं अट्ठपयपरूवणया एणं किं पयोयणं एयाणं णेगमववहाराणं अट्ठपयपरूवणयाए भंगसमुक्कित्तणया कीरइ ।

पदार्थ-(सेकिंतं खेत्ताणुपुव्वी २ दुविहा पं० तं० उवणिहिया अणोवणिहिया) (प्रश्न) क्षेत्रानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) क्षेत्रानुपूर्वी द्विप्रकार से प्रतिपादन की गई है जैसे कि-उपनिधि का और अनुपनिधि का (तत्थणं जासा उवणिहिया साट्ठप्पा) उन दोनों में से जो प्रथम उपनिधि है वह केवल स्थापनीय है क्योंकि उसका विवर्ण फिर किया जायगा अपितु जो (तत्थणं जासा अणो वणिहिया सादुविहा पं० तं० णेगमववहाराणं संगाहस्स २) अनुपनिधि का है वह दो प्रकार से वर्णन की गई हैं जैसे कि नैगम व्यवहारनय और संग्रहनय से-इस प्रकार के कथन करने पर शिष्य ने फिर शंका की (सेकिंतं णेगमववहाराणं अणोवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी २ पंचविहा पं० तं०) वह कौनसी है जो नैगम और व्यवहार नय से अनुपनिधि का क्षेत्रानुपूर्वी है । गुरु ने उत्तर में कहा कि नैगम और व्यवहार नय से अनुपनिधि का क्षेत्रानुपूर्वी पांच प्रकार से प्रतिपादन कीगई है जैसे कि-(अट्ठपयपरूवणया) अर्थपद की प्रतिपादनता १ (भंगसमुक्कित्तणया) भंगसमुत्कीर्तनता २ (भंगोवदंसणया) फिर भंगोपदर्शनता ३ और (समोयारे) समवतार ४ (अणुगमे) अनुगमता ५ (सेकिंतं अट्ठपयपरूवणया २ (प्रश्न) अर्थ प्रतिपादनता किसे कहते हैं (उत्तर) (तिपएसोगाढे आणुपुव्वी जाव असंखेज्ज-

पए सोगाढे आणुपुव्वी) अर्थपद प्रतिपादनता उसका नाम है जो तीन प्रदेशि से लेकर आकाश के असंख्यात प्रदेशों पर पुद्गल अवगाहन हुआ है उसे क्षेत्रआनुपूर्वी कहते हैं और (एगपएसोगाढे अणाणुपुव्वी) आकाश के जो एक प्रदेशोपरि अवगाहन हुआ है उसका नाम अनानुपूर्वी है (दुपए सोगाढे अवत्तव्वए) द्विप्रदेशोपरि जो अवगाहन हुआ है उसका नाम अवक्तव्य द्रव्य है इसी प्रकार (तिपए सोगाढा आणुपुव्वीओ) बहुत से आनुपूर्वी द्रव्य बहुत से तीनों प्रदेशोपरि अवगाहन हुए हैं उनका नाम बहुत सी क्षेत्रानुपूर्विंयां हैं (जाव असंखेज्ज पएसोगाढा आणुपुव्वी ३) इसी प्रकार यावत बहुत से असंख्यात प्रदेशोपरि अवगाहन कीहुई बहुतसी आनुपूर्वीयांयें है किन्तु (एगपएसो गाढा अणाणुपुव्वीओ) जो एक आकाश के प्रदेशों पर बहुत से पुद्गल अवगाहन हैं उनका नाम बहुतसी अनानुपूर्विंयां हैं (दुपएसोगाढा अवत्तव्वए) पूर्ववत् ही बहुत से द्विप्रदेशों पर अवगाहन हुआ पुद्गल उसका नाम बहुत से अवक्तव्य द्रव्य हैं (एयाणं णेगमववहाराणं) इन नैगम और व्यवहारनय से (अट्ठपयपरूवणयाए किं पयोयणं) जो अर्थ पद की प्रतिपादनता कीगई है उसका क्या प्रयोजन है ? गुरु कहते हैं कि (एयाणं णेगमववहाराणं अट्ठपयपरूवणयाए भंग समुक्कित्तणया कीरइ) इन नैगम और व्यवहारनय से अर्थ पद दिखलाया गया है इसका मुख्य प्रयोजन भंगो का कीर्तन करना ही है ।

भावार्थ—क्षेत्रानुपूर्वी द्रव्यों की अपेक्षा से ही सिद्ध है क्योंकि जैसा द्रव्य जिस प्रकार से क्षेत्र में स्थित है उसी प्रकार उसकी गिणती की जाती है सो क्षेत्रानुपूर्वी द्वि प्रकार से प्रतिपादन की गई है जैसे कि—उपनिधि का और अनुपनिधि का सो उपनिधि का अभी स्थापनीय हैं अनुपनिधि का द्वि प्रकार से प्रतिपादन की जाती है एक नैगम व्यवहार नय से द्वितीय संग्रह नय से—सो नैगम और व्यवहार नय के मत से अनुपानधि क्षेत्रानुपूर्वी पांच प्रकार से कही गई है जैसे कि—विद्यमान अर्थों की प्रतिपादनता १ भंग समुत्कीर्तनता २ भंगोपदर्शनता ३ समवतार ४ और अनुगम ५ विद्यमान पदार्थों की प्रतिपादनता उसका नाम है जो तीन प्रदेशि से लेकर असंख्यात प्रदेशों पर्यन्त आकाश में पुद्गल स्थित हैं वे क्षेत्रानुपूर्वी हैं एक प्रदेश पर जो स्थित है—उसका नाम अनानुपूर्वी है द्वि प्रदेशों पर जो हैं वे अवक्तव्य द्रव्य हैं यह कथन एक वचनान्त है किन्तु इसी प्रकार यही कथन बहुवचनान्त भी जान लेना तब बहुत आनुपूर्वि-

यायें अनानुपूर्वियाँ अवक्तव्य द्रव्य सिद्ध हो जाते हैं अतः इस विद्यमान अर्थ प्रतिपादनता का मुख्य प्रयोजन भंग समुत्कीर्तन करना ही है, अपितु यह सर्व कथन नैगम और व्यवहार नय से कहा गया है जो अर्थ पद है वह सर्व तीनों प्रकार से द्रव्यों की सिद्धि करता है सो लोक में तीनों प्रकार के द्रव्यों की अस्ति है इसीलिये इसका नाम अर्थ प्रतिपादनता है ॥

अथ भंग समुत्कीर्तनता विषय ।

मूल-सेकिंतं णेगमववहाराणं भंग समुक्कित्तणया ? २ अत्थिआणुपुव्वी १ अणाणुपुव्वी २ अत्थि अवत्तव्वएय ३ एवं जहे वहेट्ठा तहेक्ने यव्वं नवरउगाढा भाणियव्वा तहेव भंगो व दंसणया तहेव समोयारे ।

पदार्थ-(सेकिंतं णेगमववहाराणं भंग समुक्कित्तणा २ (प्रश्न) नैगम और व्यवहारनय के मत से भंग समुत्कीर्तनता किस प्रकार से है (उत्तर) नैगम और व्यवहारनय से भंग समुत्कीर्तनता निम्नप्रकार से है जैसे कि-(अत्थिआणु पुव्वी १ अणाणुपुव्वी २ अत्थिअवत्तव्वएय ३) एक आनुपूर्वी द्रव्य १ एक अनानुपूर्वी २ एक अवक्तव्य ३ (एवं जहेवहेट्ठा तहेव नेयव्वं नवरंउगाढा भाणियव्वा तहेव भंगोवदंसणया तहेव समोयारे) इसी प्रकार भंग जो पूर्व लिखे गये हैं वैसे ही यहां पर जान लेने चाहिये और उसी प्रकार षट् विंशति भंग क्षेत्रानुपूर्वी के जान लेने किन्तु अवगाहन शब्द का प्रयोग कर लेना चाहिये और पूर्ववत् ही समवतार द्वार जान लेना तद्वत् ही भंगोपदर्शनता है ॥

भावार्थ-नैगम और व्यवहार नय के मत से प्राग्वत् भंग समुत्कीर्तना और भंगोपदर्शनता समवतार द्वार अथवा क्षेत्रानुपूर्वी आदि सर्व जान लेने क्योंकि-इनका विवर्ण पूर्व कई स्थलों में किया गया है ॥

अथ अनुगम विषय ।

सेकिंतं अणुगमे २ नवविहे पण्णत्ते तंजहा संतपयपरूवणया गाहा सेकिंतं संतपयपरूवणया २ णेगमववहाराणं खेत्ताणुपुव्वीदव्वाइं किं अत्थि नत्थि नियमा अत्थि एवं दो-

न्निवि १ णेगमववहाराणं खेत्ताणुपुव्वीदव्वाइं किं संखेज्जाइं असंखेज्जाइं अणंताइंनो संखेज्जाइं असंखेज्जाइंनो अणंताइं एवं दोन्निवि २ णेगमववहाराणं खेत्ताणुपुव्वीदव्वाइं लोगस्सकइभागे होज्जा किं संखेज्जइभागे होज्जा असंखेज्जइ भागेहोज्जा संखेज्जेसु भागेसु होज्जा असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा सव्वलोएहोज्जा एगं दव्वं पडुच्च लोगस्स संखेज्जइ भागे वा होज्जा असंखेज्जइभागे वा होज्जा संखेज्जेसु भागेसु होज्जा असंखेज्जे सु वा भागे सु होज्जा देसूणे लोए वा होज्जा नानादव्वाइं पडुच्च नियमा सव्वलोए होज्जा अणाणुपुव्वी दव्वाइं अवत्तव्वग दव्वाणिय जहेव हेट्ठा तहेव नेयव्वाणि फुसणावि तहेव काल तहेवा ॥

पदार्थ-(सेकिंतं अणुगमे २ नवविहे पं० तं० संतपयपरूवणया गाहा) (प्रश्न) अनुगम किसे कहते हैं (उत्तर) अनुगम नव प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि-विद्यमान पदार्थों की प्रतिपादनता की गाथा पूर्व लिखी जा चुकी है वही जाननी चाहिये (सेकिंतं संतपयपरूवणया २) पूर्वपक्ष विद्यमान पदार्थों की प्रतिपादनता किस प्रकार से है (उत्तर) जो निम्न लिखितानुसार है (णेगमववहाराणं खेत्ताणुपुव्वीदव्वाइं किं अत्थि नत्थि) नैगम और व्यवहार नय से क्षेत्रानुपूर्वी द्रव्य है किम्वा नहीं है । इस प्रकार से गुरु को पूंछने पर गुरु कहने लगे कि-(नियमा अत्थि एवं दोन्निवि १) नियम से अस्ति है अर्थात् निश्चय यही है इसी प्रकार अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य के स्वरूप को भी जानना चाहिये (णेगमववहाराणं खेत्ताणुपुव्वी दव्वाइं किं संखेज्जाइं असंखेज्जाइं अणंताइं) शिष्य ने फिर प्रश्न किया कि हे भगवन् ! नैगम और व्यवहारनय से क्षेत्रानुपूर्वी द्रव्य क्या संख्यात है वा असंख्यात है अथवा अनंत है गुरु कहने लगे कि (नो संखेज्जाइं) संख्यात नहीं है क्योंकि आनुपूर्वी द्रव्य तीन प्रदेशि से लेकर अनंत प्रदेशि पर्यन्त है सो वे संख्यात प्रदेशों पर नहीं हैं किन्तु (असंखेज्जाइं) असंख्यात प्रदेशों पर अवगाहन की अपेक्षा असंख्यात क्षेत्रानुपूर्वी

है (नो अणंताइं एवं दोन्निवि २) अनंत भी नहीं है इसी प्रकार अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य भी जानने चाहिये २ (णेगमववहाराणं खेत्ताणुपुव्वीदव्वाइं लोगस्सकइ भागे होज्जा किं संखेज्जइ भागे होज्जा असंखेज्जइभागे होज्जा) (प्रश्न) नैगम और व्यवहार नय से क्षेत्रानुपूर्वी गत द्रव्य लोक के कितने भाग में होता है क्या लोक के संख्यात अथवा असंख्यात भाग में होता है तथा—(संखेज्जेसु भागेसु होज्जा असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा) बहुत से संख्यात भागों में वा बहुत से असंख्यात भागों में होता है (सव्वलोए होज्जा) या सर्व लोक में होता है । गुरु उत्तर देते हैं कि हे पृच्छक ! (एगं दव्वं पडुच्च लोगस्स संखेज्जइ भागे वा होज्जा) एक द्रव्य की अपेक्षा से लोक के संख्यात भाग में भी होता है (असंखेज्जइभागे वा होज्जा) असंख्यात भाग में भी होता है (संखेज्जेसु भागेसु वा होज्जा) लोक के बहुत से संख्यात भागों में भी होता है (असंखेज्जेसु भागेसु वा होज्जा) बहुत से असंख्यात भागों में भी होता है तथा—(देसूणे लोए वा होज्जा) एक अंश छोड़कर सर्व लोक में भी होता है अर्थात् अचित महास्कंध आनुपूर्वी द्रव्य तीन प्रदेशों से न्यून सर्व लोक में हो जाता है अनानुपूर्वी द्रव्य का एक प्रदेश दो प्रदेश अवक्तव्य द्रव्य के इनके स्थान को वर्ज कर देशू न सर्व लोक में हो जाता है क्योंकि यह तीन द्रव्य सर्व लोक में व्याप्त हो रहे हैं अपितु (नानादव्वाइं पडुच्च नियमा सव्वलोए होज्जा) नाना प्रकार के आनुपूर्वी द्रव्यों की अपेक्षा निश्चय ही सर्व लोक में होते हैं क्योंकि— यह द्रव्य सर्व लोक में सदैव काल विद्यमान रहते हैं (अणाणुपुव्वी दव्वाइं अवत्तव्वए दव्वाणिय जहेव हेट्ठा तहेवने यव्वाणि फुसणावि तहेव कालं तहेव) अनानुपूर्वी द्रव्य और अवक्तव्य प्राग्वत् जान लेने चाहियें, स्पर्शना द्वार और कालद्वार यह भी पूर्ववत् है ॥

भावार्थ—अनुगम द्वार नव प्रकार से वर्णन किया गया है जिसका विवर्ण पूर्व लिखित गाथा में होचुका है विद्यमान पदों की प्रतिपादनता के विषय में नैगम और व्यवहारनय के मत में क्षेत्रानुपूर्वी द्रव्यों की निश्चय ही अस्ति है इसी प्रकार अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्यों की भी अस्ति है फिर नैगम और व्यवहारनय से क्षेत्रानुपूर्वी द्रव्य असंख्यात है किन्तु संख्यात वा अनंत नहीं हैं क्योंकि तीनों द्रव्य अनंत है किन्तु नभ के असंख्यात प्रदेशों पर ही स्थिति करते हैं और दोनों नयों के मत में क्षेत्रानुपूर्वी गत एक द्रव्य लोक के संख्यात

असंख्यात वा बहुत से लोक के संख्यात भागों में वा बहुत से वा असंख्यात भागों में अथवा अल्प देश न्यून सर्व लोक में होजाता है क्योंकि यदि अचित्त महास्कंध सर्वलोक प्रमाण भी होजावे तो तब भी तीन प्रदेश न्यून होता है जो अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य के स्थानों को छोड़ देता है यह दोनों द्रव्य सदैव काल इस लोक में विद्यमान रहते हैं अपितु नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा निश्चय ही यह द्रव्य सर्वलोक में विराजमान रहते हैं और इसी प्रकार अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्यों के स्वरूप को भी जानना चाहिये और स्पर्शना द्वार काल द्वार प्राग्वत् ही जान लेने चाहिये ।

अथ स्थिति द्वार विषय ।

खेत्ताणुपुव्वीदव्वाइं कालओ केवचिरं होइ एगं दव्वं पडुच्च जहन्नेणं एगं समयं उक्कोसेणं असंखेज्ज कालं नाना दव्वाइं पडुच्च सव्वद्धा एवं दोन्निवि णेगमववहाराणं खेत्ताणु पुव्वी दव्वाइं कालउ केवचिरं अंतरं होइ एगं दव्वं पडुच्च जहन्नेणं एगं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं नानादव्वाइं पडुच्च नत्थि अंतरं एवं दोन्निवि णेगमववहाराणं खेत्ताणुपुव्वी दव्वाइं सेसदव्वाणं कइभागे होज्जा किं संखेज्जइ भागे एवं पुच्छाणि वयणं च जहेव हेट्ठा तहेव नेयव्वा अणाणुपुव्वी दव्वाइं अवत्तव्वगदव्वाणिवि जहेव हेट्ठा णेगमववहाराणं खेत्ताणुपुव्वीदव्वाइं कयरंमि भावे होज्जा नियमा साइ परिणामिए भावे होज्जा एवं दोन्निवि ॥

पदार्थ-(णेगमववहाराणं खेत्ताणुपुव्वीदव्वाइं कालओ केवचिरं होइ) शिष्य ने प्रश्न किया कि हे पूज्य ! नैगम और व्यवहार नय से क्षेत्रानुपूर्वी गत-द्रव्य काल से कब तक एक स्थान में स्थिति करते हैं गुरु कहने लगे कि भो शिष्य कि नैगम और व्यवहार नय के मत से क्षेत्रानुपूर्वी गत द्रव्यों की गति निम्न प्रकार से है यथा-(एग दव्वं पडुच्च जहन्नेणं एगं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जंकालं) एक द्रव्य की अपेक्षा जघन्यस्थिति एक समय प्रमाण उत्कृष्ट असं-

ख्यात काल पर्यन्त होती है यदि एक द्रव्य एक एक स्थान पर स्थित रहे तो न्यून से न्यून एक समय मात्र उत्कृष्ट असंख्यात काल पर्यन्त रह सकता है अपितु–(नानादव्वाइं पडुच्च सव्वद्धा एवं दोन्निवि) नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा सर्व काल में आनुपूर्वी द्रव्य रहते हैं और उसी प्रकार अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य भी जानने चाहिये (णेगमववहाराणं खेत्ताणुपुव्वीदव्वाइं कालओ केवचिरं अंतरं होइ) नैगम और व्यवहार नय के मत से जो क्षेत्रानुपूर्वी गत द्रव्य है उनका काल से कितना चिर अंतर होता है–ऐसा शिष्य के पूंछने पर गुरु कहने लगे कि–(एगं दव्वं पडुच्च जहन्नेणं एगं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जंकालं) एक द्रव्य की अपेक्षा जघन्य एक समय मात्र अन्तरकाल होता है उत्कृष्ट असंख्यात काल पर्यन्त अन्तर होता है किन्तु–(नानादव्वाइं पडुच्च नत्थि अंतरं एवं दोन्निवि) नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा अन्तरकाल नहीं होता है इसी प्रकार दोनों द्रव्यों के विषय में भी जानना चाहिये (णेगमववहाराणं खेत्ताणुपुव्वी दव्वाइं सेसं दव्वाणं कइ भागे होज्जा) (प्रश्न) नैगम और व्यवहार नय के मत से क्षेत्रानुपूर्वी द्रव्य शेष द्रव्यों के कितने भागों में होता है (किं संखेज्जइ भागे होज्ज़ा एवं पुच्छाणि वयणं च जहेवहेट्ठा तहेव नेयव्वा) क्या संख्यात भाग में होते हैं वा असंख्यात भाग में इत्यादि जैसे पूर्व इस विषय में लिखा गया है कि वैसे ही जानना चाहिये (अणाणुपुव्वी दव्वाइं अवत्तव्वगदव्वाणिवि जहेव हेट्ठा) अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य भी प्राग्वत हैं। (णेगमववहाराणं खेत्ताणुपुव्वी दव्वाइं कयरंमि भावे होज्जा) नैगम और व्यवहार नय के मत से क्षेत्रानुपूर्वी गत द्रव्य कौन से भाव में होते हैं–ऐसे पूंछने पर गुरु कहने लगे कि–(नियमासाइ परिणामिए भावे होज्जा) निश्चय ही यह द्रव्य सादि पारिमाणिक भाव में होते हैं किन्तु यह द्रव्य नित्य नहीं हैं, इसलिये सादि पारिणामिक भाव में कहे गये हैं–(एवं दोन्निवि) इसी प्रकार दोनों द्रव्य भी जानने चाहियें ॥

भावार्थ–नैगम और व्यवहार नय के मत से क्षेत्रानुपूर्वी गत द्रव्यों की स्थिति जघन्य एक समय प्रमाण उत्कृष्ट असंख्यात काल पर्यन्त है किन्तु सर्व द्रव्यों की अपेक्षा सर्व काल में नाना प्रकारों के द्रव्यों की स्थिति रहती हैं इसी प्रकार इनका अन्तर काल है शेष द्रव्यों के कितने भाग में यह द्रव्य हैं इस विषय में प्राग्वत् जानना चाहिये और यह द्रव्य नियम से सादि पारिणामिक

भात्र में होते हैं क्योंकि ये परिणमन शील है अपितु यह द्रव्य स्वाभाविक नित्य नहीं होते इसी प्रकार अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्यों के स्वरूप को भी जानना चाहिये ॥

अथ अल्प बहुत्वद्वार विषय ।

एएसि णं भंते णेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाणं अणाणुपुव्वीदव्वाणं अवत्तव्वगदव्वाण य दव्वट्ठयाय पयसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे २ हिंतो अप्पा वा वहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा गोयमा सव्वत्थोवाइं णेगमववहाराणं अवत्तव्वगदव्वाइं दव्वट्ठयाए अणाणुपुव्वीदव्वाइं दव्वट्ठयाए विसेसाहियाइं अणाणुपुव्वीदव्वाइं दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणाइं पएसट्ठयाए सव्वत्थोवाइं णेगमववहाराणं अणाणुपुव्वी दव्वाइं अप्पएसट्ठयाए अवत्तव्वगदव्वाइं पएसट्ठयाए विसेसाहियाइं आणुपुव्वीदव्वाइं पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणाइं दव्वट्ठपएसट्ठया सव्वत्थोवाइं णेगमववहाराणं अवत्तव्वगदव्वाइं दव्वट्ठयाए अणाणुपुव्वीदव्वाइं दव्वट्ठयाए अप्पएसट्ठयाय विसेसाहियाइं अवत्तव्वगदव्वगदव्वाइं पएसट्ठयाए विसेसाहियाइं आणुपुव्वी दव्वाइं दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणाइं ताइं चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणाइं सेत्तं अणुगमे सेत्तं णेगमववहाराणं अणोवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी॥ सेकिंतं संग्गाहस्स अणोवणिहिया खेत्ताणु जहेव दव्वाणुपुव्वी तहेव खेत्ताणुपुव्वी विसेत्तं संग्गाहस्स अणोवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी ॥

पदार्थ—(एएसि णं भंते णेगमववहाणं आणुपुव्वीदव्वाणं अणाणुपुव्वी दव्वाणं अवत्तव्वगदव्वाणंय दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाय कयरे२ हिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहियाइं वा) श्री गौतम प्रभुजी श्री

भगवान् से पूछते हैं कि–हे भगवन्! नैगम और व्यवहार नय से आनुपूर्वी द्रव्य, अनानुपूर्वी द्रव्य और अवक्तव्य द्रव्य, यह तीनों ही द्रव्य द्रव्यार्थिक से और प्रदेशार्थिक से तथा द्रव्य और प्रदेश दोनों के युगपत् से कौन २ से द्रव्य अल्प हैं वा बहुत हैं वा तुल्य हैं या विशेषाधिक हैं, इस प्रकार के पूछने पर श्री भगवान् उत्तर देते हैं कि–(गोयमा) हे गौतम (सव्वत्थोवाइं णेगमववहाराणं) सर्व से स्तोक नैगम और व्यवहार नय के मत से (अवत्तव्वगदव्वाइं दव्वट्ठयाए) अवक्तव्य द्रव्य द्रव्यार्थक से हैं १ अपितु (अणाणुपुव्वीदव्वाइं दव्वट्ठयाए विसेसाहियाइं) अनानुपूर्वी द्रव्य द्रव्यार्थक से विशेषाधिक है २ (आणुपुव्वी दव्वाइं दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणाइं) आनुपूर्वी द्रव्य द्रव्यार्थक से असंख्यात गुणाधिक हैं किन्तु (पएसट्ठयाए) प्रदेशार्थक से (सव्वत्थोवाइं णेगम ववहाराणं) सर्व से स्तोक नैगम और व्यवहार नय के मत से (अणाणुपुव्वी दव्वाइं अप्पएसट्ठयाए) अनानुपूर्वी द्रव्य अप्रदेशार्थक से हैं किन्तु (अवत्तव्वगदव्वाइं पएसट्ठयाए विसेसाहियाइं) अवक्तव्य प्रदेशार्थिक से विशेषाधिक हैं उनसे–(आणुपुव्वीदव्वाइं पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणाइं) आनुपूर्वी द्रव्य प्रदेशार्थक से असंख्यात गुणाधिक हैं अपितु (दव्वट्ठपएसट्ठयाए सव्वत्थो वा णेगमववहाराणं अवत्तव्वगदव्वाइं दव्वट्ठयाए) द्रव्यार्थक और प्रदेशार्थक से सर्व से स्तोक नैगम और व्यवहार नय की अपेक्षा से अवक्तव्य द्रव्य हैं अपितु (अणाणुपुव्वीदव्वाइं दव्वट्ठअप्पएसट्ठयाए विसेसाहियाइं) अनानुपूर्वी द्रव्य द्रव्यार्थक से और प्रदेशार्थक से विशेषाधिक हैं फिर उनसे (अवत्तव्वगदव्वाइं पएसट्ठयाए विसेसाहियाइं) अवक्तव्य द्रव्य प्रदेशार्थक से विशेषाधिक हैं फिर (आणुपुव्वीदव्वाइं दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणाइं) आनुपूर्वी द्रव्य द्रव्यार्थक से असंख्यात गुणाधिक हैं (ताइं चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणाइं) उन द्रव्यार्थक से प्रदेश असंख्यात गुणाधिक हैं (सेत्तं अणुगमे) यही अनुगम है (सेत्तं णेगमववहाराणं अणोवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी) यही नैगम और व्यवहारनय के मत से अनुपनिधि का क्षेत्रानुपूर्वी है। (सेकिंतं संगाहस्स अणोवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी जहेव दव्वाणुपुव्वी तहेव खेत्ताणुपुव्वी विसेत्तं संगाहस्स अणोवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी) (प्रश्न) संग्रह नय के मत से अनुपनिधि का क्षेत्रानुपूर्वी किस प्रकार से है (उत्तर) जैसे द्रव्यानुपूर्वी कथन की गई है वैसे ही क्षेत्रानुपूर्वी का भी समास जान लेना यही संग्रह नय के मत से क्षेत्रानुपूर्वी है ॥

भावार्थ–श्री गौतम स्वामीजी उक्त द्रव्यों को अल्प बहुत के नियम से भगवान् से विशेष निर्णय करते हैं कि हे भगवन्! उक्त तीनों द्रव्यों में अल्प बहुत्व कौन २ से द्रव्य हैं, श्री भगवान् कहते हैं कि हे गौतम! सर्व से स्तोक नैगम और व्यवहार नय के मत से द्रव्यों की अपेक्षा से अवक्तव्य द्रव्य हैं उन से अनानुपूर्वी द्रव्यों का द्रव्य विशेषाधिक है! और उनसे आनुपूर्वी द्रव्यों का द्रव्य असंख्यात गुणाधिक है। अपितु प्रदेशों की अपेक्षा से सर्व से स्तोक नैगम और व्यवहार नय के मत से अनानुपूर्वी द्रव्य अप्रदेशार्थक हैं। और अवक्तव्य द्रव्य प्रदेशों की अपेक्षा से उनसे विशेषाधिक हैं। फिर उनसे भी आनुपूर्वी द्रव्य प्रदेशों की अपेक्षा से असंख्यात गुणाधिक हैं किन्तु द्रव्य और प्रदेशों की अपेक्षा से सर्व से स्तोक नैगम और व्यवहार नय के मत से द्रव्यार्थक से अवक्तव्य द्रव्य हैं उनसे अनानुपूर्वी द्रव्य द्रव्य और अप्रदेशार्थक की अपेक्षा से विशेषाधिक हैं फिर उनसे अवक्तव्य द्रव्य प्रदेशों की अपेक्षा से विशेषाधिक हैं फिर आनुपूर्वी द्रव्य द्रव्यार्थक से असंख्यात गुणाधिक हैं किन्तु प्रदेश उनसे भी असंख्यात गुणाधिक हैं सो इसी का नाम अनुगम है नैगम और व्यवहार नय के मत से अनुपनिधि का क्षेत्रानुपूर्वी का समास सम्पूर्ण हुआ और संग्रह नय के मत से अनुपनिधि का क्षेत्रानुपूर्वी जैसे कि द्रव्यानुपूर्वी पहिले वर्णन की गई है उसी प्रकार जान लेनी चाहिये और संग्रह नय के मत से इसी का नाम अनुपनिधि का क्षेत्रानुपूर्वी कहते हैं।

अथ उपनिधि का पूर्वी विषय।

मूल–सेकिंतं उपणिहिया खेत्ताणुपुव्वी २ तिविहा पं० तं० पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी२ अहोलोए तिरियलोए उड्ढलोए सेत्तं पुव्वाणपुव्वी ॥१॥ सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी उड्ढलोए तिरियलोए अहलोए, सेत्तं पच्छाणुपुव्वी सेकिंतं अणाणुपुव्वी एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए तिगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी ॥

पदार्थ-(सेकिंतं उवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी २ तिविहा पं० तं०) (प्रश्न) अब क्षेत्रानुपूर्वी उपानिधिका कौनसी है (उत्तर) उपनिधिका क्षेत्रानुपूर्वी तीनों प्रकार से प्रतिपादन कीगई है जैसे कि (पुव्वाणुपुव्वी) पूर्वानुपूर्वी (पच्छाणुपुव्वी) पश्चात् आनुपूर्वी (अणाणुपुव्वी) अनानुपूर्वी (सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी २) (प्रश्न) पूर्वानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) पूर्वानुपूर्वी तीनों प्रकार से वर्णन कीगई है जैसे कि (अहोलोए तिरियलोए उड्ढलोए) अधोलोक तिर्यक्लोक ऊर्ध्वलोक (सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी) यही पूर्वानुपूर्वी है (सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी २) (प्रश्न) पश्चात् आनुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) पश्चात् आनुपूर्वी भी तीनों प्रकार से वर्णित है जैसे कि (उड्ढलोए तिरियलोए अहोलोए) ऊर्ध्वलोक तिर्यक लोक अधोलोक (सेत्तं पच्छाणुपुव्वी) यही पश्चात् आनुपूर्वी है (सेकिंतं अणाणुपुव्वी एयाए चेव एगुत्तरियाए तिगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरूवूणो) (प्रश्न) अनानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) इन्हीं तीनों आनुपूर्वी द्रव्यों को तीनों गच्छ करके अर्थात् (१-२-३) तीनों श्रेणियां स्थापन करके फिर इन्हीं को परस्पर गुणा करके दो आदि अंत के भंग न्यून करने से जो भंग शेष रहते हैं उन्हीं को अनानुपूर्वी कहते हैं (सेत्तं अणाणुपुव्वी) यही अनानुपूर्वी है ॥

भावार्थ-उपनिधि का क्षेत्रानुपूर्वी तीनों प्रकार से वर्णन कीगई है जैसे कि पूर्वानुपूर्वी १ पश्चात् आनुपूर्वी २ अनानुपूर्वी ३ सो पूर्वानुपूर्वी भी तीनों प्रकार से है अधोलोक तिर्यक्लोक ऊर्ध्वलोक इन्हीं को उत्था करके पठन करना उन का नाम पश्चात् आनुपूर्वी है अपितु अनानुपूर्वी में तीनों गच्छ करके फिर उनको परस्पर अभ्यास (गुणा) करने से यावन्मात्र भंग बनते हों उनमें से आदि और अंत के भंग को न्यून करने से यावन्मात्र भंग शेष रहे हों सो उन्हीं का नाम अनानुपूर्वी है ॥

अथ अधोलोक विषय ।

अहो लोए खेत्ताणुपुव्वी २ तिविहा पं० तं० पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी २ रयणप्पभा १ सक्करप्पभा २ वालु यप्पभा ३ पंकप्पभा ४ धूमप्पभा ५ तमा ६ तमतमा ७ सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी २

तमतमा जाव रयणप्पभा सेत्तं पुच्छाणुपुव्वी सेकिंतं अणाणुपुव्वी २ एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए सत्त गच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी ॥

पदार्थ-(अहो लोए खेत्ताणुपुव्वी २ तिविहा पं० तं० पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी) अधोलोक की अपेक्षा से क्षेत्रानुपूर्वी तीन प्रकार से वर्णन कीगई हैं जैसे कि पूर्वानुपूर्वी १ पश्चात् आनुपूर्वी २ और अनानुपूर्वी ३ इस प्रकार के गुरु के वचन सुनकर शिष्य ने प्रश्न किया कि (सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी २ रयणप्पभा सक्करप्पभा वालुयप्पभा पंकप्पभा धूमप्पभा तमप्पभा तमप्पभा तमतमाप्पभा) हे भगवन् ! पूर्वानुपूर्वी किसे कहते हैं, गुरु ने उत्तर में कहा कि अधोलोक के क्षेत्र की अपेक्षा से सात प्रकार की आनुपूर्वी है क्योंकि नीचे लोक में सात पृथिवियां है जैसे कि रत्नप्रभा १ शर्करप्रभा २ वालुप्रभा ३ पंकप्रभा ४ धूमप्रभा ५ तमप्रभा ६ तमतमाप्रभा ७ से यह अनुक्रमता पूर्वक गणन करने से इनकी आनुपूर्वी बन जाती है (सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी) यही पूर्वानुपूर्वी है (सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी तमतमा जाव रयणप्पभा सेत्तं पच्छाणुपुव्वी) (प्रश्न) पश्चात् आनुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) सातवें नरक से प्रथम पर्यन्त गणन करना उसे (७-६-५-४-३-२-१) पश्चात् आनुपूर्वी कहते हैं, सो यही पश्चात् आनुपूर्वी है (सेकिंतं अणाणुपुव्वी एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरिया सत्त गच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी) (प्रश्न) अनानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) इन सातों को एक एक की वृद्धि करते हुए जो सात गच्छ किये हैं जैसे कि (१, २, ३, ४, ५, ६, ७) इनको परस्पर गुणाकार करने से ५०४० भंग बन जाते हैं जिनमें आदि अंत के भंग को छोड़कर ५०३८ भंग रहते हैं उन्हीं का नाम अनानुपूर्वी है।

भावार्थ-अधोलोक की तीनों प्रकार से आनुपूर्वी होती हैं सात ही नरकों के नाम आनुपूर्वी और पश्चात् आनुपूर्वी पूर्ववत् ही जान लेनी चाहिये किन्तु अनानुपूर्वी में सात को परस्पर गुणाकार करने से ५०४० भंग बन जाते हैं सो उनमें से आदि अंत के भंग को छोड़कर शेष जो ५०३८ भंग रहते हैं उन्हीं को अनानुपूर्वी कहते हैं ॥

अथ तीर्यक्लोक विषय ।

तिरियं लोए खेत्ताणुपुव्वी २ तिविहा पं० तं० पुव्वाणु-पुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी २ जंबूद्दीवे लवणे २ धायइ ३ कालोय ४ पुक्खरे ५ वरुणे ६ ।७। खीर ८ घय ९ खोयनंदी अरुणवरे कुंडले रुयगे आभरण १ वत्थ २ गंध ३ उप्पल ४ पडमेय ५ पुढवी ६ निधि ७ रयणे ८ घासहर ९ दह १० नइओ ११ विजया १२ वक्खार १३ क-प्पिंदा १४ । १५ । २ कुरा १६ मंदर १७ आवासा १८ कूडा १९ नक्खत्त २० चंद २० चंद २१ सूरा यं २२ देवे १ । १ नागे १ । १ जक्खो १ । १ भूएय १ । १ सयंभू रमणे य १ । १ ॥ ३ ॥ सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी सेकिन्तं पच्छाणुपुव्वी २ सयंभू रमणे भूय जाव जंबूद्दीवे सेत्तं पच्छाणुपुव्वी सेकित्तं अणाणुपुव्वी २ एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए असंखिज्ज गच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नभासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी "

पदार्थ-(तिरियलोए खेत्ताणुपृव्वी २ तिविहा पं० तं० पुव्वाणुपुव्वी पच्छा-णुपुव्वी अणाणुपुव्वी) तिर्यक्लोक की क्षेत्रानुपूर्वी तीनों प्रकार से वर्णन की गई है जैसे कि पूर्वानुपूर्वी १ पश्चात् आनुपूर्वी २ और अनानुपूर्वी ३ इस प्रकार के गुरु के वचन सुनकर शिष्य ने प्रश्न किया कि (सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी २) हे भगवन् पूर्वानुपूर्वी किसे कहते हैं : गुरु कहने लगे कि भो शिष्य ! पूर्वानुपूर्वी निम्न प्रकार से है जैसे कि-(जंबूद्दीवे १ लवणे २) जंबूद्वीप १ लवणसमुद्र २ (धायई ३ कालोय) धात की खंड ३ कालोदधि ४ (पुक्खरे ५-६) पुष्कर-द्वीप ५ और पुष्करसमुद्र ६ (वरुणे ७ । ८) वरुणद्वीप ७ वरुणसमुद्र ८ (खीर ९-१०) क्षीरद्वीप ९ और क्षीर समुद्र १० (घयं ११ । १२) घृत-

१--अतोऽत् प्रा० व्या० अ० ८ सूत्र १२६ आदेर्शकारस्य अत्वंभवति यथादर्शनम् तथाम् कथम् वसहो मयो पवहो इत्यादि ॥

द्वीप ११ और घृतसमुद्र १२ (खोय १३ । १४) इक्षुद्वीप १३ और इक्षुसमुद्र १४ (नन्दी १५ । १६) नंदीद्वीप १५ नंदीसमुद्र १६ (अरुणवरे १७ । १८) अरुणद्वीप १७ और अरुणसमुद्र १८ कुंडल १९ । २०) कुंडलद्वीप १९ और कुंडलसमुद्र २० (रुयगे २१ । २२) रुचकद्वीप २१ और रुचकसमुद्र २२॥ अब विशेष द्वीपों के जानने का उपाय वर्णन करते हैं (आभरण १) आभूषणों के नामों पर द्वीप और समुद्र हैं १ (वत्थ २) वस्त्रों के नामों पर २ (गंध ३) गंध के नामों पर ३ (उप्पल ४ पउमेय ५ पुढवी ६ निधि ७) और यावन्मात्र उत्पल कमलों के नाम हैं ४ पद्म कमलों के नाम हैं ५ पृथिवियों के नाम हैं ६ और निधियों के नाम हैं ७ (रयणे ८ वासहर ९ दह १० नइउ ११ विजया १२ वक्खार १३ कप्पिंदा १४–१५) रत्नों के नामों पर ८ वर्ष धरों के नामों पर ९ (जो पर्वत क्षेत्रों के नियम कर्ता है) ह्रदों के नामों पर १० विजयों के नामों पर इसी तरह आगे भी जान लेने चाहिये वष्करों के नाम पर (यह भी पर्वत है) कल्पों के नाम पर १४ और इन्द्रों के नाम १५ (कुरु १६ मंदिर १७ आवास १८ कूडा १९ नक्खत्त २० चन्द २१ सूर २२ देवे २३ नाग २४ जक्खे २५ भूयय २६ सयंभूरमणे २७) देवकुरु आदि के नाम मंदिरों के नाम आवासों के नाम कूटों के नक्षत्रों के चन्द्रमा के सूर्य्य के यावन्मात्र नाम हैं उसी प्रकार द्वीप समुद्रों के असंख्यात नाम जानने चाहिये किंतु देव नाग यक्ष भूत स्वयम्भूरमण इन पांच द्वीप और पांच ही समुद्रों के एकैक ही नाम है इसलिये यह पांच एकत्व वर्णन किये गये हैं (सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी) यही पूर्वानुपूर्वी है (सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी २ सयंभूरमणे भूय जाव जंबूद्दीवे सेत्तं पच्छाणुपुव्वी) (प्रश्न) पश्चात् आनुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) स्वयंभूरमण समुद्र से लेकर जंबूद्वीप पर्य्यन्त यावन्मात्र द्वीप और समुद्र हैं उन्हीं का नाम पश्चात् आनुपूर्वी है (सेकिंतं अणाणुपुव्वी २ एयाए चेव एगा इयाए एगुत्तरियाए असंखिज्ज गच्छगयाए सेढीए अन्न मन्नम्भासो दुरूवणो सेत्तं अणाणुपुव्वी) (प्रश्न) अनानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) इन सर्व को एक एक की वृद्धि करते हुए असंख्यात गच्छ रूप श्रेणि की जाय फिर उन को परस्पर गुणा करें यावन्मात्र भंगबनें उनमें से आदि और अन्त के भंग को वर्ज करके शेष भंग अनानुपूर्वीय कहलाते हैं सो इसी का नाम अनानुपूर्वी है।

भावार्थ–जम्बूद्वीप से लेकर स्वयम्भू रमण समुद्र पर्य्यन्त गणन करने को

पूर्वानुपूर्वी कहते हैं स्वयम्भू रमण से जम्बूद्वीप पर्य्यंत गिणती को पश्चात् आनुपूर्वी कहते हैं असंख्यात रूप गच्छ श्रेणी का परस्पर गुणा करने पर यावन्मात्र भंग बनें उनमें से आदि और अंत के भंग को छोड़कर शेष भंग अनानुपूर्वी के होते हैं।

ऊर्ध्वलोक क्षेत्रानुपूर्वी विषय।

उड्ढलोए खेत्ताणुपुव्वी २ तिविहा पन्नत्ता तं० पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी सेकिन्तं पुव्वाणुपुव्वी २ सोहम्मे १ ईसाणे २ सणं कुमारे ३ माहिन्दे ४ बम्भलोए ५ लंतए ६ महासुक्के ७ सहस्सारे ८ आणए ९ पाणए १० आरणे ११ अच्चुए १२ गेविज्जविमाणे १३ अणुत्तरविमाणे १४ ईसीप्पभारा १५ सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी सेकिन्तं पच्छाणुपुव्वी ईसीप्पभारा जाव सोहम्मे सेत्तं पच्छाणुपुव्वी सेकिंतं अणाणुपुव्वी २ एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए पन्नरस गच्छगयाए सेढिये अन्न मन्नब्भासो दुरूवुणो सेत्तं अणाणुपुव्वी ॥

पदार्थ-(उड्ढलोए खेत्ताणुपुव्वी २ तिविहा पं० तं०) ऊर्ध्वलोक क्षेत्रानुपूर्वी तीनों प्रकार से वर्णित है जैसे कि (पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी) पूर्वानुपूर्वी पश्चात् आनुपूर्वी अनानुपूर्वी (सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी २) (प्रश्न) पूर्वानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) उर्ध्वलोक की पूर्वानुपूर्वी निम्न प्रकार से है जैसे कि-(सोहम्मेसाणेसणं कुमारे माहिन्देबम्भलोए लंतए महासुक्के सहस्सारे आणए पाणए आरणे अच्चुए गेविज्जविमाणे अणुत्तरोविमाणे ईसीप्पभारा सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी) सुधर्म्मदेवलोक इसी प्रकार देवलोक शब्द सर्वत्र संयोजन कर लेवें १ ईशान २ सनत्कुमार ३ माहेन्द्र ४ ब्रह्मलोक ५ लांतक ६ महाशुक्र ७ सहस्रार ८ आनत ९ प्राणत १० आरण ११ अच्युत १२ ग्रैवेयक १३ अनुत्तरविमान १४ ईषत्प्रभारा पृथिवी १५ इन्हीं का नाम पूर्वानुपूर्वी है। (सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी २ ईसीप्पभारा जावसोहम्मे सेत्तं पच्छाणुपुव्वी) (प्रश्न) पश्चात् आनुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) ईसत्प्रभा पृथिवी से लेकर सुधर्म देवलोक

पर्यन्त जो गणना है उन्हीं का नाम पश्चात् आनुपूर्वी है (सेकिंतं अणाणुपुव्वी २ एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए पन्नरसगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरूवुणो सेत्तं अणाणुपुव्वी) (प्रश्न) अनानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) इन पंच दश (१-२-३-४-५-६-७-८-९-१०-११-१२-१३-१४-१५) अंकों को परस्पर गुणा करने पर यावन्मात्र भंग*बने उनमें से आदि अंत के भंगों को छोड़कर शेष भंग अनानुपूर्वी कहलाते हैं सो इन्हीं का नाम अनानुपूर्वी है ॥

भावार्थ—उर्ध्व लोक की तीनों प्राग्वत् पूर्वियां हैं सो द्वादश कल्प देवलोक ग्रैवेयक १३ अनुत्तरि विमान १४ ईषत् प्रभा १५ इस प्रकार की गणना को पूर्वानुपूर्वी कहते हैं इससे विपरीत को पश्चात् आनुपूर्वी कहते हैं पंच दश अंकों की श्रेणी का परस्पर गुणा करने पर यावन्मात्र भंग बने उनमें से आदि अंतके भंग को छोड कर शेष रहे हुए भंग अनानुपूर्वी कहाते हैं सो इन्ही का नाम अनानुपूर्वी है ।

अथ प्रकारान्तर विषय ।

अहवा उवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी तिविहा पं० तं० पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी २ एग पए सोगाढे जाव असंखेज्जपए सोगाढे सेतं पुव्वाणु- सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी २ असंखेज्जपए सोगाढे जाव एगपए सोगाढे सेत्तं पच्छाणु सेकिंतं अणाणुपुव्वी एगाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए असंखेज्ज गच्छगयाए सेढीए अन्न मन्नब्भासो दुरूवुणो सेत्तं अणाणुपुव्वी सेत्तं उवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी ।

पदार्थ—(अहवा) अथवा (उवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी तिविहा पं० तं०) उपनिधि का क्षेत्रानुपूर्वी तीन प्रकार से वित्रर्ण की गई है जैसे—कि पुव्वाणुपुव्वी १ पच्छाणुपुव्वी २ अणाणुपुव्वी ३) पूर्वानुपूर्वी १ पश्चात् आनुपूर्वी २ अनानुपूर्वी ३ इस प्रकार गुरु के कहने पर शिष्यने फिर प्रश्न किया कि—गुरु

* नोट—१३०७६७४३६८०००१६ इतने भंग १५ अंको के होते हैं ॥

(सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी) हे भगवन् ! पूर्वानुपूर्वी किसे कहते हैं गुरुने उत्तर दिया भो शिष्य ! पूर्वानुपूर्वी उसका नाम है जो (एगपए सोगाढे जाव असंखेज्ज-पएसोगाढे सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी) द्रव्य अनुक्रमता पूर्वक आकाश के एक प्रदेश-से लेकर यावत् असंख्यात प्रदेशों पर्यन्त अवगाहन हुआ है उसे क्षेत्रानुपूर्वी कहते हैं (सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी २ असंखेज्जपएसोगाढे जाव एगपए सोगाढे सेत्तं पच्छापुव्वी) (प्रश्न) पश्चात् आनुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) जो असंख्यात प्रदेशोपरि द्रव्य अवगाहन हुआ है यावत् एक प्रदेशोपरि अवगाहन होरहा है उसे पश्चात् आनुपूर्वी कहते हैं (सेकिंतं अणाणुपुव्वी २ एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए असंखेज्ज गच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी (प्रश्न) अनानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) इस आनुपूर्वी को एक २ की वृद्धि करते हुए असंख्यात गच्छरूप श्रेणियें जब होजाएं तब उनको परस्पर गुणाकार करके फिर उसके आदि और अंत के रूप को छोड़ कर शेष जो भंग रहते हैं उनको अनानुपूर्वी कहते हैं क्योंकि अनानुपूर्वी में यावन्मात्र अंक होते हैं उनको परस्पर गुणा किया जाता है अपितु आदि और अंत के अंकों को वर्ज करके शेष रहे हुए अंक अनानुपूर्वी कहलाते हैं। (सेत्तं उवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी) यही उपनिधि का क्षेत्रानुपूर्वी होता है ॥

भावार्थ—उपनिधि का क्षेत्रानुपूर्वी तीन प्रकार से वर्णन कीगई है जैसे कि पूर्वानुपूर्वी, पश्चात् आनुपूर्वी, अनानुपूर्वी जो द्रव्य आकाश के एक प्रदेश से लेकर यावत् असंख्यात प्रदेशों पर अवगाहन हुआ है उसे पूर्वानुपूर्वी कहते हैं ठीक इससे विपरीत गणना को पश्चात् आनुपूर्वी कहते हैं और एक प्रदेश से लेकर यावत् असंख्यात प्रदेश पर्यन्त जो श्रेणियें हैं उनको परस्पर गुणा करने से यावत् प्रमाण भंग बनते हैं उनमें से आदि और अंत के भंग को वर्ज करके, शेष रहे हुए भंग अनानुपूर्वी कहलाते हैं यही उपनिधिका क्षेत्रानुपूर्वी है और इसे ही उपनिधिका कहते हैं ॥

अथ कालानुपूर्वी विषय ।

सेकिंतं कालाणुपुव्वी २ दुविहा पं० तं० उवणिहिया अणोवणिहिया तत्थ णं जा सा उवणिहिया सा ठप्पा तत्थ णं

जासा अणोवणिहिया सा दुविहा पं० तं० णेगमववहाराणं संगहस्स णेगमववहाराणं तहेव पंचविहा जाव तिसमयट्ठिइए आणुपुव्वी जाव असंखेज्ज समयट्ठिइए आणुपुव्वी एगसमय ट्ठितीय अणाणुपुव्वी दुसमयट्ठितीए अवत्तव्वए तिसमयट्ठितीयाओ आणुपुव्वीओ जाव असंखेज्ज समयट्ठितीयाओ आणुपुव्वीओ एगसमय ट्ठितीयाओ अणाणुपुव्वीओ दुसमयट्ठितीयाइं अवत्तव्वयाइं सेत्तं णेगमववहाराणं अट्ठपयपरूवणया एयाए चेव णेगमववहाराणं अट्ठपयपरूवणयाए किं पओयणं २ भंग समुक्कित्तणया कीरइ सेकिंतं णेगमववहाराणं भंगसमुक्कित्तणया २ अत्थि आणुपुव्वी अत्थि अणाणुपुव्वी अत्थि अवत्तव्वए एवं दव्वाणुपुव्वी गमेणं कालाणुपुव्वी एवित्ते चेव छव्वीसं भंगाणेयव्वा जाव सेत्तं णेगमववहाराणं भंगसमुक्कित्तणयाए एयाए णेगमववहाराणं भंगसमुक्कित्तणयाए किं पओयणं २ भंगोवदंसणया कीरइ सेकिंत्तं णेगमववहाराणं भंगोवदंसणया २ तिसमयट्ठिइए आणुपुव्वी एगसमयट्ठिइए अणाणुपुव्वी दुसमयट्ठितीए अवत्तव्वए एत्थंविसो चेव गमो सेत्तं भंगोवदंसणया सेकिंतं समोयारे णेगमववहाराणं आणुपुव्वी दव्वाइं कहिं समोयरंति किं आणुपुव्वि दव्वेहिं समोयरंति पुच्छागो, आणुपुव्वी दव्वेहिं समोयरंति नो अणाणुपुव्वी दव्वेहिं समोयरंति नो अवत्तव्वग दव्वेहिं समोयरंति एवं दोन्निवि सट्ठाणे २ समोयरंति सेत्तं समोयारे सेकिंतं अणुगमे २ नवविहे पण्णत्ते तंजहा संतपयपरूवणया जाव अप्पाबहु ॥

पदार्थ-(सेकिंतं कालाणुपुव्वी २ दुविहा पं० तं०) (प्रश्न) कालानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) कालानुपूर्वी द्विप्रकार विवर्ण कीगई है जैसे कि (उव-णिहियाय अणोवणिहियाए) उपनिधि का और अनुपनिधि का अपितु (तत्थ णं जा सा उवणिहियाए साठप्पा) जो उपनिधि का है वह इस समय स्थापनीय है क्योंकि उसका स्वरूप फिर किया जायगा किन्तु जो (तत्थ णंजा सा अणोव-णिहिया सा दुविहा पं० तं०) उनमें से जो अनुपनिधि का है वह द्विप्रकार से प्रतिपादन कीगई है जैसे कि (णेगमववहाराणं संग्गहस्स) नैगम और व्यव-हारनय और संग्रहनय के मत से किन्तु (णेगमववहाराणं तहेव पंचविहा) नैगम और व्यवहारनय से पूर्ववत् पांच प्रकार से वर्णन कीगई है (जाव तिसमयट्ठिइए आणुपुव्वी जाव असंखेज्ज समयट्ठिइए आणुपुव्वी) यावत् तीन समय की स्थिति वाला द्रव्य आनुपूर्वी संज्ञक होता है इसी प्रकार असंख्यात समय की स्थिति वाला भी आनुपूर्वी संज्ञक होता है स्थिति की अपेक्षा से द्रव्यों की कालानुपूर्वी बनती है क्योंकि अभेदरूप होने से अपितु (एगसमयट्ठितीए अणाणुपुव्वी) एक समय की स्थिति वाला द्रव्य अनानुपूर्वी होता है (दुसमय ट्ठितीए अवत्तव्वए) द्विसमय की स्थिति वाला द्रव्य अवक्तव्य संज्ञक होता है यह तीन भंग एक वचनान्त हैं अब तीनों के सूत्रकार बहुवचन सिद्ध करते हैं (तिसमयट्ठितीयाओ आणुपुव्वी जाव असंखेज्ज समयट्ठितीयाओ आणुपु-व्वीओ) बहुत से द्रव्य तीनों समय की स्थिति वालों की अपेक्षा से बहुतसी कालानुपूर्वियां होती हैं इसी प्रकार यावत् असंख्यात समय की स्थिति वालों द्रव्यों की अपेक्षा से बहुतसी कालानुपूर्वियां होती हैं । (एगसमयट्ठितीयाओ अणाणुपुव्वीओ) बहुत से द्रव्यों की एक समय की स्थिति की अपेक्षा से बहुत सी अनानुपूर्वियां होती हैं (दुसमयट्ठितीयाइं अवत्तव्वयाइं) बहुत से द्विसम की स्थिति वाले द्रव्यों की अपेक्षा से बहुत से अवक्तव्य द्रव्य होते हैं (सेत्तं णेगमववहाराणं अट्ठपयपरूवणया) यही नैगम और व्यवहारनय के मत से अर्थ पद की प्रतिपादनता है । जब गुरु ने इस प्रकार से कहा तब शिष्य ने शंका की कि हे भगवन् ! (एयाए णं णेगमववहाराणं अट्ठपयपरूवणयाए किं पओयणं) इन नैगम और व्यवहारनय के मत से अर्थ पद प्रतिपादनता का मुख्य प्रयोजन क्या है ? इस प्रकार शिष्य की शंका होने पर गुरु कहने लगे कि ! इनका मुख्य प्रयोजन (भंगसमुक्कित्तणया कीरइ) भंगों की समुत्कीर्तन

करना है अर्थात् इनके द्वारा भंगों की समुत्कीर्तनता कीजाती है जब गुरु ने इस प्रकार से कहा तब शिष्य ने फिर पूछा कि (सेकिंतं णेगमववहाराणं भंगसमुक्कित्तणया) वह कौनसी है जो नैगम और व्यवहारनय के मत से भंग समुत्कीर्तनता है, गुरु ने उत्तर दिया कि (अत्थि आणुपुव्वी अत्थि अणाणुपुव्वी अत्थि अवत्तव्वय एवं दव्वाणुपुव्वी गमेणं कालाणुपुव्वी एविचे चेव छव्वीसं भंगाणेयव्वा जाव सेत्तं णेगमववहाराणं भंगसमुक्कित्तणयाए) एक आनुपूर्वी द्रव्य है एक अनानुपूर्वी द्रव्य है २ एक अवक्तव्य द्रव्य है इसी प्रकार द्रव्यानुपूर्वीवत् कालानुपूर्वी जाननी चाहिये सो वही षट् विंशति भंग भी जानने चाहिये प्राग्वत् यावत् यही नैगम और व्यवहारनय के मत से भंगों की समुत्कीर्तनता है जब गुरु ने ऐसे कहा, तब फिर शिष्य ने शंका की कि (एयाए णेगमववहाराणं भंगसमुक्कित्तणयाए किंपओयणं २ भंगोवदंसणया कीरइ) इन नैगम और व्यवहारनय के मत से भंग समुत्कीर्तनता का मुख्य प्रयोजन क्या है जब शिष्य ने ऐसे कहा तब गुरु ने उत्तर दिया कि इनका मुख्य प्रयोजन भंगोपदर्शनता है अर्थात् इनके द्वारा भंगोपदर्शनता कीजाती है शिष्य ने फिर प्रश्न किया कि (सेकिंतं णेगमववहाराणं भंगोवदंसणया २ तिसमयट्ठिइए आणुपुव्वी एगसमयट्ठिइए अणाणुपुव्वी दुसमयट्ठितीय अवत्तव्वए एत्थ विसो चेव गमो सेत्तं भंगोवदंसणया) वह कौनसी नैगम और व्यवहारनय से भंगोपदर्शनता है गुरु ने कहा कि तीन समय की स्थिति वाला द्रव्यआनुपूर्वी संज्ञक है. एक समय की स्थिति वाला अनानुपूर्वी संज्ञक है, द्विसमय की स्थिति वाला अवक्तव्य संज्ञक है. सो इसी प्रकार यहां पर उन्हीं भंगों का उच्चारण करना चाहिये जो भंगपूर्व दिखलाए गए हैं से शब्द अर्थ शब्द का वाचक है सो यही भंगोपदर्शनता है (सेकिंतं समोयारे) (प्रश्न) समवतार किसे कहते हैं (णेगमववहाराणं आणुपुव्वी दव्वाइं कहिं समोयरंति) और नैगम व्यवहार नयके मतसे आनुपूर्वी द्रव्य कहांपर समवतार होते हैं (किं आणुपुव्वी दव्वेहिं समोयरंति पुच्छा) क्या आनुपूर्वी द्रव्यों में ही समवतार होते हैं या अनानुपूर्वी द्रव्यों में अथवा अवक्तव्य द्रव्यों में समवतार होते हैं (गोयमा आणुपुव्वी दव्वेहिं समोयरंति नो अणाणुपुव्वी दव्वेहिं समोयरंति नो अवत्तव्वगदव्वेहिं समोयरंति) भगवान् ने उत्तर दिया कि हे गौतम ! आनुपूर्वी द्रव्य आनुपूर्वी द्रव्यों में ही

समवतार होते हैं अनानुपूर्वी द्रव्यों में समवतार नहीं होते अवक्तव्य द्रव्यों में भी समवतार नहीं होते केवल स्वजाति में ही समवतार होते हैं। (एवं दोन्निवि सट्ठाणे २ समोयरंति सेत्तं समोयारे) इसी प्रकार अनानुपूर्वी द्रव्य और अवक्तव्य भी स्वस्थानों में ही समवतार होते हैं अन्य स्थानों में समवतार नहीं होते सो यही समवतार द्वार हैं (सेकिंतं अनुगमे २ नवविहे पं० तं०) (प्रश्न) अनुगम कितने प्रकार से प्रतिपादन किया गया है (उत्तर) नव प्रकार से जैसे कि (सेतं पयपरूवणया जाव अप्पाबहु) विद्यमान पदों की प्रतिपादनता यावत् अल्प बहुत पर्यन्त पूर्ववत् जानना चाहिये अब इनका पृथक् २ ता से विवर्ण किया जाता है जिससे बहुत ही सुलभ बोध हो।

भावार्थ—कालानुपूर्वी उसका नाम है जो द्रव्य काल से अभेद रूप हैं, जिनकी स्थिति काल से विद्यमान है सो कालानुपूर्वी कही जाती है स्थिति की अपेक्षा से कालानुपूर्वी बनजाती है सो कालानुपूर्वी के मुख्य दो भेद हैं उपनिधिका और अनुपनिधि का उनमें से उपनिधि का स्थापनीय है उसका स्वरूप फिर किया जायगा अपितु अनुपनिधि का दो प्रकार से कही गई है नैगम व्यवहार से और संग्रहनय से पुनः नैगम और व्यवहार नय के मतसे उसके ५ भेद हैं यावत् तीन समय की स्थिति वाला द्रव्य आनुपूर्वी संज्ञक होता है इसीप्रकार असंख्यात समय की स्थिति वाले द्रव्य को भी जान लेना चाहिये एक समय की स्थिति वाला अनानुपूर्वी होता है द्विसमय की स्थिति वाला अवक्तव्य संज्ञक होता है इन तीनों को बहुवचनान्त करने से आनुपूर्वी द्रव्य अनानुपूर्वी और अवक्तद्रव्य होते हैं, इस प्रकार जान लेने चाहिये यही नैगम और व्यवहारनय के मत से अर्थपद की प्रतिपादनता है सो इसका प्रयोजन भंगों की समुत्कीर्तन करना है। भंगों की समुत्कीर्तनता जैसे पूर्वद्रव्यानुपूर्वी में की गई है उसी प्रकार जान लेनी षट् विंशति भंगों का स्वरूप वहांपर दिखलाया गया है और भंग समुत्कीर्तनता का मुख्य प्रयोजन भंगोपदर्शनता है वहभी प्राग्वत् है क्योंकि पूर्व इनका सविस्तर स्वरूप दिखलाया जाचुका है अपितु नैगम और व्यवहार के मत यावन्मात्र द्रव्य हैं वह स्व जाति में समवतार होते है अन्यजातियों में नहीं जैसे कि आनुपूर्वी द्रव्य आनुपूर्वी द्रव्यों में समावेश किए जाते हैं अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्यों में नहीं, इसी प्रकार अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्यों के स्वरूप को भी जानना चाहिये इसी का नाम समवतार द्वार

है अतः अनुगम द्वार भाग्वत् नव प्रकार से प्रतिपादन किया गया है, विद्यमान अर्थोंका प्रतिपादन यावत् अल्प बहुत पर्यन्त जानना ॥ अब इनका सविस्तार स्वरूप वर्णन किया जाता है ॥

मूल–णेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाइं किं अत्थि नत्थि नियमा अत्थि एवं दोन्निवि ॥

पदार्थ—(णेगमववहाराणं आणुपुव्वी दव्वाइं किं अत्थि नत्थि नियमा अत्थि एवं दोन्निवि) (प्रश्न) नैगम और व्यवहार नय के मत से आनुपूर्वी द्रव्यों की अस्ति है किम्वा नास्ति है (उत्तर) नैगम और व्यवहार नय के मत से आनुपूर्वी द्रव्यों की निश्चय ही अस्ति है इसी प्रकार अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्यों की भी अस्ति है ॥

भावार्थ–नैगम और व्यवहार नय के मत से तीनों द्रव्यों की सदैव काल अस्ति है तीनों द्रव्य दोनों नयों के मत से सदैव काल विद्यमान रहते हैं ॥

अथ द्रव्यों के प्रमाण विषय ।

मूल--(णेगम ववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाइं किं संखेज्जाइं असंखेज्जाइं अणंताइं नो संखेज्जाइं असंखेज्जाइं नो अणंताइं एवं दोन्निवि णेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाइं लोगस्स किं संखेज्जइभागे पुच्छा एगं दव्वं पडुच्च संखेज्जइ भागे वा होज्जा जाव देसूणे लोए वा होज्जा नानादव्वाइं पडुच्च नियमा सव्वलोए होज्जा एवं दोन्निवि एवं फुसणावि णेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाइं कालओ केवचिरं होइ एगं दव्वं पडुच्च जहन्नेणं तिन्निसमया उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं नाना दव्वाइं पडुच्च सव्वद्धा णेगमववहाराणं अणाणुपुव्वीदव्वाइं कालओ केवचिरं होइ एगं दव्वं पडुच्च अजहन्नमणुक्कोसेणंएगं समयं नानाद्व्वाइं पडुच्च नियमा सव्वद्धा अवत्तव्वगदव्वाणं पुच्छा एगं दव्वं पडुच्च अजहन्नमणुक्कोसेणं दोसमयाइं नाना

दव्वाइं पडुच्च सव्वद्धा णेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाइं अंतर कालओ केवचिरं होइ एगं दव्वं पडुच्च जहन्नेणं एगं समयं उक्कोसेणं दोसमया नाना दव्वाइं पडुच्च नत्थि अंतरं णेगमववहाराणं अणाणुपुव्वीदव्वाणं पुच्छा एगं दव्वं पडुच्च जहन्नेणं दोसमया उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं नाना दव्वाइं पडुच्च नत्थि अंतरं णेगमववहाराणं अवत्तव्वगदव्वाणं पुच्छा एगं दव्वं पडुच्च जहन्नेणं एगं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं नाना दव्वाइं पडुच्च नत्थि अंतरं णेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाइं सेसदव्वाणं कइभागे होज्जा पुच्छा जहेव खेत्ताणुपुव्वीय भावो वितहेव अप्पा बहुंपि तहेवनेयजं जावसेत्तं णेगम ववहाराणं अणोवणिहिया कालाणुपुव्वी

पदार्थ–(णेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाइं किं संखेज्जाइं असंखेज्जाइं अणंताइं) (प्रश्न) नैगम और व्यवहारनय के मत से आनुपूर्वी द्रव्य क्या संख्यात द्रव्य हैं वा असंख्यात द्रव्य हैं तथा अनंत द्रव्य हैं (उत्तर) (नो संखेज्जाइं असंखेज्जाइं नो अणंताइं) संख्यात नहीं हैं असंख्यात हैं किन्तु अनंत भी नहीं है (एवं दोन्निवि) इसी प्रकार अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य भी जान लेने चाहिये । (णेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाइं लोगस्स किं संखेज्जइ भागे होज्जा पुच्छा) (प्रश्न) नैगम और व्यवहारनय के मत से आनुपूर्वी द्रव्य लोक के संख्यात भाग में होते हैं वा असंख्यात भाग में अथवा बहुत से संख्यात असंख्यात भागों में होते हैं तथा सर्व लोक में ही होते हैं (एगं दव्वं पडुच्च संखेज्जइ भागे होज्जा जाव देसूणे वा लोए होज्जा नानादव्वाइं पडुच्च नियमा सव्वलोए होज्जा) (उत्तर) एक द्रव्य की अपेक्षा से लोक के संख्यात भाग में होजाता है असंख्यात भाग में भी होजाता है यावत् स्वल्प भाग को छोड़कर सर्वलोक में भी होजाता है अचित महास्कंधवत् अथवा केवली की समुद्‌घातवत् अपितु नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा से निश्चय ही सर्व लोक में आनुपूर्वी द्रव्य होते हैं (एवं दोन्निवि) इसी प्रकार अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्यों के स्वरूप को भी जानना चाहिये (एवं फुसणावि) इसी

प्रकार स्पर्शना द्वार भी जान लेना चाहिये (णेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाइं कालओ केवचिरं होइ (प्रश्न) नैगम और व्यवहारनय के मत से आनुपूर्वी द्रव्य काल से कब तक रह सकता है अर्थात् स्थिति कितने चिर पर्यंत होसकती है (उत्तर) (एगं दव्वं पडुच्च जहन्नेणं तिन्निसमया उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं नानादव्वाइं पडुच्च सव्वद्धा) एक आनुपूर्वी द्रव्य की अपेक्षा से न्यून से न्यून तीन समय की स्थिति है उत्कृष्ट असंख्यात काल पर्यन्त एक द्रव्य रह सकता है अपितु नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा से आनुपूर्वी द्रव्य सर्व काल में रहते हैं। अथ अनानुपूर्वी विषय प्रश्न करते हैं। (णेगम ववहाराणं अणाणुपुव्वी दव्वाइं कालओ केवचिरं होइ (प्रश्न) नैगम और व्यवहारनय के मतसे अनानुपूर्वी द्रव्य कबतक रह सकता है (उत्तर) (एगं दव्वं पडुच्च अजहन्नमणुक्कोसेणं एगं समयं नाणादव्वाइं पडुच्च नियमा सव्वद्धा) एक द्रव्य की अपेक्षा से न तो जघन्य काल है न उत्कृष्ट काल है केवल एक समय मात्र अनानुपूर्वी द्रव्य स्थिति करता है किन्तु नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा से अनानुपूर्वी द्रव्य सदैव काल रहते हैं। अथ अवक्तव्य द्रव्य भी विषय निर्णय किया जाता (अवत्तव्वगदव्वाणं पुच्छा) (प्रश्न) नैगम और व्यवहारनय के मत से अवक्तव्य द्रव्य कबतक रह सकता है (उत्तर) (एगं दव्वं पडुच्च अजहन्नमणुक्कोसेणं दोसमयाइं नानादव्वाइं पडुच्च सव्वद्धा) एक द्रव्य की अपेक्षा से न तो जघन्य काल न उत्कृष्ट काल केवल दो समय की स्थिति होती है अपितु नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा से अवक्तव्य द्रव्य सदैव काल रहते हैं। अथ अंतर काल विषय प्रश्न किये जाते हैं। (णेगम ववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाणं अंतरं कालओ केवचिरं होइ) (प्रश्न) नैगम और व्यवहार नय के मत से आनुपूर्वी द्रव्य का काल से कितना चिर अन्तर काल होता है (उत्तर) (एगं-दव्वं पडुच्च जहन्नेणं एगं समयं उक्कोसेणं दो समया नानादव्वाइं पडुच्च नत्थि अंतरं) एक आनुपूर्वी द्रव्य की अपेक्षा से न्यून से न्यून एक समय का अंतर काल होता है क्योंकि सब से न्यून स्थिति अनानुपूर्वी द्रव्यों की है जब आनुपूर्वी द्रव्य आनुपूर्वी भाव को छोड़कर अनानुपूर्वी में चलागया फिर वहां से आनुपूर्वी में आगया तब न्यून से न्यून एक समय का अंतर काल हुआ और यदि उत्कृष्ट अंतर काल होजावे तो दो समय मात्र में होता है क्योंकि अवक्तव्य द्रव्य की स्थिति दो समय की है सो अवक्तव्य

द्रव्य में जाकर फिर आनुपूर्वी में चला जावे तब उत्कृष्ट अंतर काल दो समय प्रमाण हुआ, अपितु नाना प्रकार के आनुपूर्वी द्रव्यों की अपेक्षा से अंतर काल होता ही नहीं क्योंकि वे द्रव्य सदैव काल रहते हैं ॥ अब अनानुपूर्वी द्रव्यों के अन्तर काल विषय प्रश्न किया जाता है (णेगम ववहाराणं अणाणुपुव्वी दव्वाणं पुच्छा) हे भगवन् ! नैगम और व्यवहार नय के मत से अनानुपूर्वी द्रव्यों का अन्तरकाल कितने चिर का होता है, गुरु कहते हैं भो शिष्य ! (एगं दव्वं पडुच्च जहन्नेणं दो समया उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं नाना दव्वाइं पडुच्च नत्थि अंतरं) एक अनानुपूर्वी द्रव्य की अपेक्षा से न्यून से न्यून दो समय पर्यन्त अंतरकाल होता है जैसे कि अनानुपूर्वी द्रव्य अवक्तव्य द्रव्य में चलागया. अतः अवक्तव्य द्रव्यों की स्थिति दो समय प्रमाण है सो वहां पर दो समय स्थिति पूर्ण करके फिर अनानुपूर्वी द्रव्य में आजाए तो न्यून से न्यून दो समय मात्र अंतरकाल हुआ यदि वह द्रव्य आनुपूर्वी में चला जाय तो उत्कृष्ट असंख्यात काल पर्यन्त अन्तरकाल होजाता है क्योंकि आनुपूर्वी द्रव्यों की उत्कृष्ट स्थिति असंख्यात काल प्रमाण है इसलिये उत्कृष्ट अन्तरकाल असंख्यात काल पर्यन्त होता है अपितु नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा से अंतरकाल नहीं होता है क्योंकि अनानुपूर्वी द्रव्यों का सर्वथा कभी भी अभाव नहीं होता है इसलिये अंतरकाल भी नहीं है। अब अवक्तव्य द्रव्य के विषय में वर्णन किया जाता है (णेगमववहाराणं अवत्तव्वगदव्वाणं पुच्छा) हे पूज्य ! नैगम और व्यवहार नय के मत से अवक्तव्य द्रव्यों का अंतरकाल कितने चिर पर्यन्त होता है गुरु कहते हैं भो शिष्य ! (एगं दव्वं पडुच्च जहन्नेणं एगं समय उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं नाना दव्वाइं पडुच्च नत्थि अन्तरं) एक अवक्तव्य द्रव्य की अपेक्षा से न्यून से न्यून अंतरकाल एक समय मात्र होता है क्योंकि अनानुपूर्वी द्रव्यों की स्थिति एक समय मात्र की है जब अवक्तव्य द्रव्य अपने भाव को छोड़कर अनानुपूर्वी द्रव्य में चला गया और फिर वहां से अवक्तव्य द्रव्य के भाव को प्राप्त होगया तो न्यून से न्यून एक समय मात्र अंतरकाल हुआ यदि आनुपूर्वी में गया तो उत्कृष्ट असंख्यात काल प्रमाण अंतरकाल होजाता है अतः नाना प्रकार के अवक्तव्य द्रव्यों की अपेक्षा से अंतरकाल नहीं होता है क्योंकि इनका सर्वथा अभाव नहीं है अथ शेष द्रव्यों के कतिपय भाग में यह द्रव्य हैं इस विषय में वर्णन किया जाता है (णेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाइं सेसदव्वाणं कइ-

भागे होज्जा पुच्छा) हे भगवन् ! नैगम और व्यवहारनय के मत से आनुपूर्वी द्रव्य शेष द्रव्यों के कतिपय भाग में होता है गुरु कहते हैं (जहेव खेत्ताणुपुव्वीय भावो वितहेव अप्पाबहुपि तहेव नेयव्वं जाव सेत्तं णेगमववहाराणं अणोवणिहिया कालाणुपुव्वी) जैसे क्षेत्रानुपूर्वी का भाव वर्णन किया गया है उसी प्रकार कालानुपूर्वी का भी भाव जान लेना चाहिये और उसी प्रकार अल्प बहुत्वद्वार भी जान लेना यही नैगम और व्यवहारनय के मत से अनुपानिधि का कालानुपूर्वी है से शब्द अथ शब्द का वाची हैं इसीवास्ते सूत्र में से शब्द पुनः २ ग्रहण किया गया है।

भावार्थ—नैगम और व्यवहार नय के मतसे तीनों द्रव्य असंख्यात हैं और तीनों द्रव्य लोक के संख्यात भाग में वा असंख्यात भाग में वा देशून सर्व लोक में हो सकते हैं अतः तीनों द्रव्य नाना प्रकार के द्रव्यों अपेक्षा से सदैव काल विद्यमान रहते हैं इसी प्रकार स्पर्शनाद्वार जान लेना। नैगम और व्यवहार नय के मत से आनुपूर्वी द्रव्य जघन्य काल तीन समय उत्कृष्ट असंख्यात काल पर्यन्त रहता है अपितु नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा से यह द्रव्य सदैव काल रहते हैं तथा उक्त दोनों नयों के मतसे एक अनानुपूर्वी द्रव्य एक समय मात्र रहता है नाना प्रकार के द्रव्यों की अपेक्षा से सदैव काल रहते हैं और अवक्तव्य द्रव्य की स्थिति दो समय मात्र है नाना प्रकार के अवक्तव्य द्रव्य सदैव काल रहते हैं और नैगम व्यवहार नय के मत से एक आनुपूर्वी द्रव्य का जघन्य से एक समय प्रमाण उत्कृष्ट दो समय मात्र अंतर काल होता है किन्तु नाना प्रकार के आनुपूर्वी द्रव्यों की अपेक्षा से अंतर काल नहीं होता है और अनानुपूर्वी द्रव्य का जघन्य दो समय प्रमाण उत्कृष्ट असंख्यात काल का अंतर काल हो जाता है किन्तु नाना प्रकार के अनानुपूर्वी द्रव्यों का अंतर काल नहीं होता है क्योंकि वे सदैव काल रहते हैं नैगम और व्यवहार नयके मत से एक अवक्तव्य द्रव्य का जघन्य से एक समय प्रमाण उत्कृष्ट असंख्यात काल पर्यन्त अंतर काल है अपितु अनेक अवक्तव्य द्रव्यों की अपेक्षा से अंतर काल नहीं होता है सो अंतर काल का तात्पर्य इतना ही है कि—अपनी जाति को छोडकर पर जाति में प्रवेश करना फिर स्वजाति में आजाना तो उसको अंतर काल कहते हैं यह वर्णन उक्त दोनों नयों के मत से किया गया है और यह तीनों द्रव्य परस्पर द्रव्यों के कतिपय भागों में होते हैं इस विषय में

जैसे क्षेत्रानुपूर्वी में कथन किया गया है उसी प्रकार जान लेना चाहिये वैसेही अल्प बहुत्व द्वार का भी समास जान लेना। यह नैगम और व्यवहार नयके मत से अनुपनिधि का कालानुपूर्वी वर्णन की गई है अब संग्रहनय के मत से अनुपनिधि का कालानुपूर्वी का विवर्ण किया जाता है।

अथ संग्रह नय विषय।

सेकिंतं संग्गहस्स अणोवणिहिया कालाणुपुव्वी पंचविहा पं० तं० अट्ठपयपरूवणया एवमाइ जहेव खेत्ताणुपुव्वी संग्गहस्स तहा कालाणुपुव्वी एविभाणियव्वाइं नवरं ट्ठिइ अभिलावे जाव सेत्तं अणोवणिहिया कालाणुपुव्वी॥

पदार्थ-(सेकिंतं संग्गहस्स अणोवणिहिया कालाणुपुव्वी २ पंचविहा पं० तं०) हे पूज्य! संग्रह नय के मत से वर्णन की हुई अनुपनिधि का कालानुपूर्वी कौनसी है. गुरु कहते हैं कि-संग्रह नय के मत से अनुपनिधि का कालानुपूर्वी पांच प्रकार से प्रतिपादन कीगई है जैसे कि-(अट्ठपयपरूवणया एवमाइजहेव खेत्ताणुपुव्वी संग्गहस्स तहेव कालाणुपुव्वी एविभाणियव्वाइं) जैसे कि-अर्थ पद प्रतिपादनता १ भंगसमुत्कीर्तनता २ भंगोपदर्शनता ३ समवतार ४ और अनुगम ५ और शेष विवर्ण जैसे क्षेत्रानुपूर्वी का कथन किया गया है उसी प्रकार कालानुपूर्वी का भी समास जान लेना चाहिये (नवरं ट्ठिइअभिलावे जाव सेत्तं अणोवणिहिया कालाणुपुव्वी) किन्तु इतना विशेष है कि स्थिति बोधक सूत्र कहना चाहिये सो इसी का नाम अनुपनिधि का कालानुपूर्वी कहते हैं॥

भावार्थ-संग्रह नय के मत से अनुपनिधि का कालानुपूर्वी पांच प्रकार से वर्णन कीगई है शेष विवर्ण जैसे पूर्व क्षेत्रानुपूर्वी का विवर्ण किया गया है उसी प्रकार कालानुपूर्वी का विवेचन जान लेना चाहिये अपितु यहां पर स्थिति का अभिलापक ग्रहण करो सो इसी का नाम अनुपनिधि का कालानुपूर्वी कहते हैं अब इस के पश्चात् उपनिधि का कालानुपूर्वी का वर्णन किया जाता है॥

अथ उपनिधिका कालानुपूर्वी विषय।

सेकिंतं उवणिहिया कालाणुपुव्वी २ तिविहा पगणत्ते.

तंजहा पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी समय १ आवलिया २ आणा पाणु ३ थोवे ४ लवे ५ मुहुत्ते ६ अहोरत्ते ७ पक्खे ८ मासे ९ उऊ १० अयणे ११ संवच्छरे १२ जुगे १३ वाससए १४ वाससहस्से १५ वाससय सहस्से १६ पुव्वंगे १७ पुव्वे १८ तुडियंगे १९ तुडिय २० अड्डंगे २१ अडडे २२ अववंगे २३ अववे २४ हुहुअंगे २५ हुहुए २६ उप्पलंगे २७ उप्पले २८ पउमंगे २९ पउमे ३० णलिणंगे ३१ णलिणे ३२ अत्थिणिऊरंगे ३३ अत्थिणिउरे ३४ अजुयंगे ३५ अजुए ३६ नउअंगे ३७ नउय ३८ पउअंगे ३९ पउए ४० चूलिअंगे ४१ चूलिया ४२ सीसपहेलिअंगे ४३ सीसपहेलिए ४४ पलिउवमे ४५ सागरोवमभे ४६ ओसप्पिणि ४७ उस्सप्पिणि ४८ पोग्गलपरियट्टे ४९ तीतद्धा ५० अणागयद्धा ५१ सव्वद्धा ५२ सेतं पुव्वाणुपुव्वी सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी सव्वद्धा जाव समय सेत्तं पच्छाणुपुव्वी सेकिंतं अणाणुपुव्वी एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए अणंतगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी अहवा उवणिहिया कालाणुपुव्वी २ तिविहा पं० तं० पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी २ अणाणुपुव्वी सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी २ एग समयाट्टितीए जाव असंखेज्ज समयट्ठिइए सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी २ असंखेज्ज समयट्ठिइय जाव एगसमयट्ठिइय सेत्तं पच्छाणुपुव्वी सेकिंतं अणाणुपुव्वी २ एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए असंखेज्ज गच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी सेत्तं उवणिहिया कालाणुपुव्वी सेत्तं कालाणुपुव्वी ॥

पदार्थ-(सेकिंतं उवाणिहिया कालाणु पुव्वी २ तिविहा पं० तं० पुव्वाणु पुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी) हे भगवन् ! उपनिधि का कालानापूर्वी कितने प्रकार से विवर्ण की गई है । ऐसे शिष्य के पूछने पर गुरु कहते हैं भो-शिष्य ! उपनिधि का कालानुपूर्वी तीनों प्रकार से कथन की गई है जैसे कि-पूर्वानुपूर्वी १ पश्चात् आनुपूर्वी २ अनानुपूर्वी (सेकिंतं पुव्वाणु पुव्वी २) (प्रश्न) पूर्वानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) उपनिधि का कालानुपूर्वी उसका नाम है जो उपनाम समीप का है कालानुपूर्वी नाम कालानुक्रमता का है सो जो काल को समीप किया जाय वही उपनिधि का कालानुपूर्वी कही जाती है उसकी पूर्वानुपूर्वी निम्न प्रकार से है (समय १) सर्वसे सूक्ष्म जिस के द्विभाग न हो उसे समय कहते हैं वही काल की गणना का आदिभूत है इसलिये प्रथम समय कथन किया गया है फिर (आवलिया २) असंख्यात समयों के काल को आवलिका कहते हैं (आण पाणु ३) संख्यात आवलिकाओं का एकसाश्वोछ्वास होता है उसी को एक प्राण कहते हैं (थोवे ४) सात प्राणों का एक थोव (स्तोक) होता है (लवे ५) सात स्तोकों का एक लव होता है (मुहुत्ते ६) और ७७ लवों का एक मुहूर्त्त (दोघटिका) होता है (अहोरत्ते ७) तीस मुहूर्तों का एक अहोरात्र होता है (पक्खे ८) १५ पंचदश अहोरात्रों का एक पक्ष होता है (मासे ९) २ पक्षों का एक मास होता है (उऊ १०) दो मासों का एक ऋतु होती है (अयणे ११) और तीन ऋतुओं की एक अयण होती है (सम्वत्सरे १२) दो अयणों का एक सम्वत्सर (वर्ष) होता है (युगे) पांच सम्वत्सरों का एक युग होता है और (वाससए १४) बीस युगों के १०० वर्ष होते हैं (वाससहस्से १५) दश शत एकत्र करने पर एक सहस्र होता है (वाससयसहस्से १६) एक शत सहस्र वर्ष एकत्व होने पर एक लक्ष वर्ष होता है (पुव्वंगे १७) चौराशी ८४ लक्ष वर्षों का एक पूर्वाङ्ग होता है (पुव्वे १८) और ८४ लाख पूर्वाङ्गों का एक पूर्व होता है अर्थात् पूर्वांग को चौरासी लाख गुणा करने से एक पूर्व होता है एक पूर्व के सत्तर लाख करोड़ और छप्पन सहस्र करोड़ वर्ष होते हैं तथा अंकों को भी देख लीजिये ७०५६००००००००००

और (तुडियंगे १९) और एक पूर्व को ८४ लाख गुणा करने से एक त्रुटितांग होता है और (तुडिए २०) और त्रुटितांग को चोराशी लाख गुणा करने एक त्रुटित होता है (अडडांगे २१) चोराशी लाख त्रुटितों का एक

अटटांग होता है इसी प्रकार आगे सर्व को चोराशी लाख गुणा करते चले जाना (अडड २२) चोराशी लाख अटटांगों का एक अटट होता है (अववंगे २३) चोराशी लाख अटट को गुणा करने से एक अववंग होता है (अववे २४) और उसको चोराशी लाख गुणा करने से एक अवव होता है (हुहु अंगे २५) अवव को चौराशी लाख गुणा करने से एक हुहुतांग होता है (हुहुए २६) और हुहुतांग को चोराशी लक्ष गुणा करने से एक हुहुक होता है (उप्पलंगे २७) चोरासी लक्ष हुहुक को गुणा करने से एक उत्पलांग होता है (उप्पले २८) उत्पलांग को ८४ लक्ष गुणा करने से एक उत्पल होता है (पउमंगे २९) उक्त को ८४ लक्ष गुणा करने से एक पद्मांग होता है इसी प्रकार आगे भी समझ लेना किंतु पिछले से अगला चौरासी लाख गुणा करते जाना (पउमे ३०) पद्म (णलिणंगे ३१) नालिनांग (णलिण ३२) नलिन (अत्थिणि उरे ३३) अर्थिनि पूरांग (अत्थिणिपुरे ३४) अर्थिनी पूर (अजुयंगे ३५) अयुतांग (अजुय ३६) अयुत (नउअंगे ३७) नियुतांग और (नउय ३८) नियुत (पउमंगे ३९) और प्रयुतांग (पउय ४०) प्रयुत (चूलिअंगे ४१) चूलिकांग और (चूलिया ४२) चूलिका (सीस पहेलि अंगे ४३) शीर्ष प्रहेलिकांग और (सीस पहेलिय ४४) शीर्ष प्रहेलिका यह सर्व पिछले अंकों से अगला अंक चौराशी लाख गुणा किया जाता है तब शीर्ष प्रहेलिका के सर्व अंक इतने हुए, ७५०२६३२०, ३०७१२०१०२४११ ५७९७३५६९९७५६६४०, ६२१८९६६८४८०८०३२९६ इनों से आगे १४० वाली केवल बिन्दु लिखे जावें तब १९४ अंकों पर्यन्त संख्या शब्द व्यवहृत होता है अर्थात् गणना १९४ वें अक्षरों पर्यन्त है आगे उपमा से काम लिया जाता है जिसका विवर्ण क्षेत्र प्रमाण के विषय में किया जायगा (पलिउवमे ४५) पल्योपम प्रमाण और (सागरोवमे ४६) सागरोपम प्रमाण (उसप्पिणि ४७) उत्सार्पिणी काल (उस्सप्पिणिक ४८) अवसार्पिणी काल (पोग्गले परियट्टे ४९) दश कोटाकोटि सागरोपम से एक अवसार्पिणी काल होता है और दश कोटाकोटि सागरोपम प्रमाण एक उत्सार्पिणी काल अपितु अनन्त उत्सार्प्पिणी और अवसार्पिणियों के एकत्रित करने से एक पुद्गल परावर्तन होता है (तीतद्धा ५०) अनन्त पुद्गल परावर्तनों का भूतकाल है और (अणागयद्धा ५१) तावत्प्रमाण भविष्यत् काल है (सव्वद्धा ५२) दोनों के मिलने से सर्व

काल होता है (सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी) सो इसको पूर्वानुपूर्वी कहते हैं (सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी सव्वद्धा जाव समय सेत्तं पच्छाणुपुव्वी) हे भगवन् ! पश्चात् आनुपूर्वी किसे कहते हैं भो शिष्य ! सर्व काल से लेकर यावत् एक समय पर्यंत जो गणना कीजाती है उसी को पश्चात् आनुपूर्वी कहते हैं (सेकिंतं अणाणुपुव्वी २ एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए अणन्त गच्छ गयाए सेढीए अन्न मन्नब्भासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी) शिष्य ने फिर प्रश्न किया कि हे भगवन् ! अनानुपूर्वी किसे कहते हैं गुरु ने उत्तर दिया कि भो शिष्य ! यह जो पूर्वानुपूर्वी की गणना है इसको एक से वृद्धि करते हुए अनन्त गच्छ रूप श्रेणियें जब होजाएं तब परस्पर गुणा करने से यावन्मात्र भंग बनते हैं उनमें से आदि और अंत के भंग के न्यून करने से शेष रहे हुए भंगों को अनानुपूर्वी कहते हैं । यही अनानुपूर्वी का विवर्ण है । अब सूत्रकार अन्य प्रकार से भी इनका विवर्ण करते हैं जैसे कि--(अहवा उवणिहिया कालाणुपुव्वी तिविहा पं० तं० पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी) अथवा उपनिधि का कालानुपूर्वी तीनों प्रकार से विवर्ण की गई है जैसे कि पूर्वानुपूर्वी १ पश्चात् आनुपूर्वी २ अनानुपूर्वी ३ इस प्रकार के गुरु के वचन सुनकर शिष्य ने फिर प्रश्न किया कि हे पूज्य ! (सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी २ एगसमयाट्ठितीए जाव असंखेज्ज समयाट्ठिइए सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी) पूर्वानुपूर्वी किसे कहते हैं गुरु ने उत्तर दिया कि भो शिष्य ! पूर्वानुपूर्वी उसे कहते हैं जो द्रव्य काल से एक समय की स्थिति वाला है यावत् असंख्यात समयों की स्थिति वाला है इस प्रकार की अनुक्रमता पूर्वक गणना को पूर्वानुपूर्वी कहते हैं और यही पूर्वानुपूर्वी है (सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी २ असंखेज्जसमयट्ठिइए जाव एग समयट्ठिइय सेत्तं पच्छाणुपुव्वी) (प्रश्न) पश्चात् आनुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) जो पूर्वानुपूर्वी की गणना है उससे विपरीत गणना करना उसी का नाम पश्चात् आनुपूर्वी है जैसे कि--असंख्यात समयों की स्थिति वाले द्रव्य से लेकर एक समय की स्थिति पर्यन्त जो द्रव्य हैं उन्हें पश्चात् आनुपूर्वी कहते हैं और यही पश्चात् आनुपूर्वी है (सेकिंतं अणाणुपुव्वी २ एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए असंखेज्जगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी सेत्तं उवणिहिया कालाणुपुव्वी सेत्तं कालाणुपुव्वी) (प्रश्न) अनानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) इन एक समय से जो लेकर असंख्यात समयों पर्यन्त स्थिति वाले द्रव्य हैं उनकी असंख्यात गच्छरूप श्रेणी

जब की जावे तब उनको परस्पर गुणा करने से यावन्मात्र भंग बनते हैं उनमें से आदि अन्त के रूप को छोड़कर शेष अंक अनानुपूर्वी के माने जाते हैं इस लिये अनानुपूर्वी गत उपनिधि का कालानुपूर्वी का व्याख्यान किया गया और इसी को कालानुपूर्वी कहते हैं अपितु समानता से तीनों का विवर्ण सम्पूर्ण होगया।

भावार्थ—उपनिधि का कालानु पूर्वी तीनों प्रकारों से विवर्ण की गई है जैसे कि पूर्वानुपूर्वी १ पश्चात् आनुपूर्वी २ अनानुपूर्वी ३ अतः कालसे पूर्वानु-पूर्वी निम्न प्रकारसे है जैसे कि—जो विभाग से रहित और सबसे सूक्ष्म हो उसे समय कहते हैं सो काल से गणना जो की जाती है उसकी आदि में प्रथम समय ही ग्रहण किया जाता है अपितु असंख्यात समयों के प्रमाण से एक आवलिका होती है संख्यात आवलिकायों का एक प्राण होता है सात प्राणों का थोव (स्तोक) और सातों थोवों का एक लव, ७७ लवों का मुहूर्त, ३० मुहूर्तों की दिन रात्रि होती है १५ दिनों का एक पक्ष, २ पक्षों का मास, २ मासों का ऋतु ३ ऋतुओं की अयण २ अयणों का सम्वत्सर ५ सम्वत्सरों का युग, २० युगों का शतवर्ष १० शतवर्ष का एक सहस्र, १०० सहस्र का एक लक्ष ८४ लक्षवर्षों का एक पूर्वांग होता है और पूर्वांग को चौरासी लाख गुणा करने से एक पूर्व होता है इसी प्रकार शीर्षप्रहेलिका पर्यन्त चौरासी लाख गुणा करते जाना सो यहांतक गणित का विषय है उनके १९४ अक्षर बन जाते हैं इनसे आगे पल्योपम वा सागरोपम से काम लिया जाता है यह सर्व ५२ अंकों की पूर्वानुपूर्वी है इनका विवर्ण पदार्थ में किया गया है और इन्हीं को उल्था गणन करने पश्चात् आनुपूर्वी बन जाती है, अपितु ५२ अक्षरों को परस्पर गुणा करने से फिर आदि और अंत के रूप को छोड़ कर शेष जो भंग हैं उनको अनानुपूर्वी कहते हैं अथवा एक समय से लेकर यावत् असंख्यात समयों पर्यन्त पूर्वानुपूर्वी होती है इसको उल्था करने से पश्चात् आनुपूर्वी बन जाती है जैसे कि असंख्यात समय से लेकर यावत् एक समय पर्यंत अनानुपूर्वी है जो असंख्यात रूप श्रेणि को परस्पर गुणा करने से जो भंग बनते है उसके आदि और अंत के भंगों को छोड़कर शेष भंग अनानुपूर्वी के होते हैं सो इसी का नाम उपनिधि का कालानुपूर्वी है।

अथ उत्कीर्तन पूर्वानुपूर्वी विषय ।

सेकिंतं उक्कित्तणाणुपुव्वी २ तिविहा पन्नत्ते तंजहा पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी उसभे १ अजिय २ संभवे ३ अभिणंदणे ४ सुमई ५ पउमप्पहे ६ सुपासे ७ चंदप्पहे ८ सुविहे ९ सीमले १० सेज्जंसे ११ वासुपुज्जे १२ विमले १३ अणंते १४ धम्मे १५ संति १६ कुंथु १७ अरे १८ मल्ली १९ मुनिसुव्वए २० णमी २१ अरिट्ठनेमी २२ पासे २३ वद्धमाणे २४ सेत्तंपुव्वाणुपुव्वी सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी २ वद्धमाणे जाव उसभे सेत्तं पच्छाणुपुव्वी सेकिंतं अणाणुपुव्वी एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए चउव्वीसगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी सेत्तं उक्कित्तणाणुपुव्वी ॥

पदार्थ—(सेकिंतं उक्कित्तणाणुपुव्वी २ तिविहा पन्नत्तेतंजहा पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी) (प्रश्न) उत्कीर्तनानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) उत्कीर्तनानुपूर्वी भी तीनों प्रकार से विवर्ण की गई है जैसे कि—पूर्वानुपूर्वी १ पश्चात् आनुपूर्वी २ अनानुपूर्वी ३ (सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी २) (प्रश्न) पूर्वानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) पूर्वानुपूर्वी उसका नाम है जो अनुक्रमतापूर्वक गणन किया जावे जैसे कि—(उसभे) ऋषभदेव १ (अजिय) अजितनाथ २ (संभवे) शंभवनाथ ३ (अभिणंदणे) अभिनंदननाथ ४ (सुमई) सुमतिनाथ ५ (पउमप्पहेसुपासे चंदप्पहे) पद्मप्रभु ६ सुपार्श्वनाथ ७ चंद्रप्रभु ८ (सुविहि सीयलेसेज्जं सेवासुपुज्जे) सुविधिनाथ ९ शीतलनाथ १० श्रेयांसनाथ ११ वासुपूज्य स्वामी १२ (विमले अणंते धम्मेसंति) विमलनाथ १३ अनंतनाथ १४ धर्मनाथ १५ शान्तिनाथ १६ कुंथुनाथ १७ अरनाथ १८ मल्लिनाथ १९ मुनिसुव्रतस्वामी २० (णमीअरिट्ठनेमि पासेवद्धमाणे) नमिनाथ २१ अरिष्टनेमि २२

---

१ द्रेरोनया प्रा० व्या० अ० ८ पा० २ सू० ८० त्रशब्दे रेफस्य वा लुग् भवति ।

पार्श्वनाथ २३ वर्द्धमानस्वामी २४ (सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी) अथ यही पूर्वानुपूर्वी है अर्थात् अनुक्रमता पूर्वक यह गणना है (सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी २) (प्रश्न) पश्चात् आनुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) पश्चात् आनुपूर्वी उसे कहते हैं जो वर्द्धमानस्वामी से लेकर ऋषभदेव पर्यन्त गणना की जाए उसी का नाम पश्चात् आनुपूर्वी है (सेकिंतं अणाणुपुव्वी एयाए चे च एगाइयाइ एगुत्तरियाए च उव्वीसगच्छगयाएसेटिए अन्नमन्नब्भासो दुरूवुणो सेत्त अणाणुपुव्वी सेत्तं उक्कित्तणाणुपुव्वी) (प्रश्न) अनानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) अनानुपूर्वी उसका नाम है जो इनको एक २ की वृद्धि करते हुए चतुर्विंशति अंकों पर्यन्त गच्छरूप श्रेणि की जाए जैसे कि–१–२–३–४–५–६–७–८–६–१०–११–१२–१३–१४–१५–१६–१७–१८–१६–२०–२१–२२–२३–२४ फिर इनको परस्पर गुणा करना जैसे कि–१ को द्विगुण २ को त्रिगुण ६ फिर चतुर्गुण करने पर २४ इनको पांच गुणा करने से १२० फिर इन्हीं को ६ गुणा करने से ७२०, ७२० को ७ गुणा करने से ५०४० यावत् २७१४४६१७५७५८२६२२-५४७२०००० इसी प्रकार २४ अंक पर्यन्त परस्पर गुणा करके आदि और अंत के भंग को छोड़कर शेष भंग अनानुपूर्वी के होते हैं सो इसी का नाम अनानुपूर्वी है ॥ और यही उत्कीर्तनानुपूर्वी है ॥

भावार्थ–उत्कीर्तनानुपूर्वी के पूर्ववत् तीनों भेद हैं किन्तु अनानुपूर्वी में २४ चतुर्विंशति तीर्थकरों को चतुर्विंशति अंकों को परस्पर गुणा करने से यावन्मात्र भंग बनते हैं उनमें से आदि और अन्त के भंगों को वर्जके शेष भंग अनानुपूर्वी के होते हैं सो इसी का नाम अनानुपूर्वी है और इसे ही उत्कीर्तनानुपूर्वी कहते हैं ॥

अथ गणनानुपूर्वी विषय ।

सेकिंतं गणणाणुपुव्वी २ तिविहा पं० तं० पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी सेकिंतं पुव्वी एगो दस सयं सहस्स दससहस्साइं लक्खं दसलक्खं कोडि दसकोडिओ कोडिसयाइं सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी २ दसकोडिसयाइं जाव एको सेत्तं पच्छाणुपुव्वी सेकिंतं अणाणुपुव्वी एयाए चेव

एगादियाए एगुत्तरियाए दसकोडि सयाइं गच्छगया सेढीए अन्नमन्नऽभासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी सेत्तं गणणाणुपुव्वी ॥

पदार्थ-(सेकिंतं गणणाणुपुव्वी २ तिविहा पं० तं० पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी) (प्रश्न) गणनानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) गणनानुपूर्वी उसका नाम है जो गणना कीजाती है वह तीन प्रकार से वर्णन कीगई है जैसे कि पूर्वानुपूर्वी १ पश्चात् आनुपूर्वी २ अणाणुपूर्वी ३ (सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी) (प्रश्न) पूर्वानुपूर्वी किस प्रकार से वर्णन कीगई है (उत्तर) जैसे (एगोदस सयसहस्स दससहस्साइं लक्खं दसलक्खं कोडि) एक-दश १० शत १०० सहस्र १००० दशसहस्र १०८०० लक्ष १००००० दशलक्ष १०००००० कोटि १००००००० (दसकोडिओ कोडिसयं दसकोडिसयाइं सेत्तं गणणाणुपुव्वी) दश कोटि १०००८०००० इस प्रकार सौ करोड़ सहस्र करोड़ इत्यादि प्रकार से गणनानुपूर्वी होती है (सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी दसकोडिसयाइं जाव एक्को सेत्तं पच्छाणुपुव्वी) (प्रश्न) पश्चात् आनुपूर्वी किस प्रकार है (उत्तर) जो दश करोड़ से आरम्भ होकर एक पर्यन्त गणना कीजावे उसी का नाम पश्चात् आनुपूर्वी है (सेकिंतं अणाणुपुव्वी २ एयाए चेव एगादियाए एगुत्तरियाए दस कोडिसयाइं गच्छगया सेढीए अन्नमन्नभासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी सेत्तं गणणाणुपुव्वी) (प्रश्न) अनानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) जो आनुपूर्वी गत गणना है उनको एक से लेकर दश सहस्र कोटि प्रमाण गच्छरूप श्रेणि कीजावे फिर उनको परस्पर अभ्यास करके गुणा किया जावे यावत् प्रमाण भंग बने उनमें से आदि और अंत के रूप को छोड़कर शेष रूप अनानुपूर्वी के ही होते हैं ॥

भावार्थ-गणनानुपूर्वी भी पूर्ववत् तीनों प्रकार से वर्णित है किन्तु एक से लेकर दश सहस्र कोटि पर्यन्त गणना की संख्या वतलाई गई है अनुक्रमतापूर्वक गणना को पूर्वानुपूर्वी होते हैं । ठीक उसके विपरीत गणना का नाम पश्चात् आनुपूर्वी है । इनको परस्पर गुणा करके जो भंग होते हैं उनमें से आदि और अन्त के भंग को छोड़कर शेष भंग अनानुपूर्वी के ही होते हैं सो इसी का नाम गणनानुपूर्वी है ॥

अथ संस्थानानुपूर्वी विषय ।

सेकिंतं संठाणाणुपुव्वी २ तिविहा पं० तं० पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी २ समचउरंसे नग्गोहपारिमंडले साइ वामणेक्खुज्जे हुंडे सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी २ हुंडे जाव सामचउरंसे सेत्तं पच्छाणुपुव्वी सेकिंतं अणाणुपुव्वी एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए छगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी सेत्तं संठाणाणुपुव्वी ॥

पदार्थ—(सेकिंता संठाणाणुपुव्वी २ तिविहा पं० तं० पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी) (प्रश्न) संस्थानानुपूर्वी कितने प्रकार से विवर्ण कीगई है (उत्तर) तीनों प्रकार से है जैसे कि पूर्वानुपूर्वी १ पश्चात् आनुपूर्वी २ अनानुपूर्वी ३ यह तीन प्रकार हैं (सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी २ समचउरंसो नग्गोहपरि मण्डले साइ वामणेक्खुज्जु हुंडे सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी) (प्रश्न) पूर्वानुपूर्वी किस प्रकार से है (उत्तर) षट् प्रकार से वर्णन कीगई है जैसे कि—समचतुरंश संस्थान उसे कहते हैं जिसके शरीर के सर्व अंगोपांग पूर्ण हों और परियंक आसन में (जानु और स्कंधों की विषयता न होवे) न्यग्रोध परिमंडल उसका नाम है जिसका शरीर नाभि से उपरिभाग में प्रमाणयुक्त हो जैसे वट वृक्ष होता है २ सादि संस्थान उसका नाम है जिसके शरीर के अंगोपांग नाभि के नीचले भाग के सुंदर होवें ३ वामन संस्थान उसे कहते हैं जिसका हृदय पृष्टि भाग और उदर को छोड़कर शेष अंग हीन होवें अर्थात् प्रमाण पूर्वक न होवें ४ कुब्ज संस्थान वह होता है जिसका हृदय पृष्टिभाग और उदर यह सर्वथा लक्षण रहित होवे और शेष अंग सुंदर होवें ५ जो सर्व प्रकार के शुभ लक्षणों से वर्जित होता है और अंगोपांग भी सम नहीं है अपितु अदर्शनीय हैं उसीको हुंड संस्थान कहते हैं सो इन षट् प्रकार के संस्थानों को अनुक्रमतापूर्वक गणना करना उसी का नाम पूर्वानुपूर्वी है (सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी २ हुंडे जाव सम चउरंसे सेत्तं पच्छाणुपुव्वी) (प्रश्न) पश्चात् आनुपूर्वी

किस प्रकार से होती है (उत्तर) जो अनुक्रमपूर्वक गणना न की जावे वही पश्चात् आनुपूर्वी है जैसे कि-हुंड संस्थान यावत् सम चतुरंश संस्थान इसीका नाम पश्चात् आनुपूर्वी है-(सेकिंतं अणाणुपुव्वी २) एयाए चेव एगादियाए एगुत्तरियाए छगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नभासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी सेत्तं संट्ठाणाणुपुव्वी) (प्रश्न) अनानुपूर्वी की व्याख्या किस प्रकार से वर्णन की गई है (उत्तर) जैसे इन षट् गच्छरूपों की श्रेणी की जावे १-२-३-४-५-६ तब इनको परस्पर गुणा करके यावन्मात्र भंग बनें उनमें से आदि और अंत के रूप को न्यून करके शेषरूप अनानुपूर्वी के होते हैं और इसी का नाम अनानुपूर्वी है अतः इसी स्थानों पर संस्थानानुपूर्वी का समास हो गया है ॥

भावार्थ-संस्थानानुपूर्वी भी प्राग्वत् है किन्तु स्थानों के षट् भेद हैं जैसे कि समचतुरंश संस्थान १ न्यग्रोध परिमंडल संस्थान २ सादि संस्थान ३ वामन संस्थान ४ कुब्ज संस्थान ५ हुंड संस्थान ६ अनुक्रमता से गणना करने का नाम पूर्वानुपूर्वी है उल्था गणन करना उसे पश्चात् आनुपूर्वी कहते हैं २ षट् रूपों का परस्पर अभ्यास करके रूप बनाने फिर उनमें से आदि और अंत के रूप को छोड़ देना उसे अनानुपूर्वी कहते हैं ॥

अथ समाचारी आनुपूर्वी विषय ।

सेकिंतं समयारी आणुपुव्वी २ तिविहा पं० तं० पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी २ इच्छामिच्छातहक्कारो आवस्सियाए निस्सिहियाए आपुच्छणा य पडिपुच्छणा य छंदणा निमंत्तणा उवसंपया य काले समायारी भवे दसविहा उ १ सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी २ उवसंपया जाव इच्छा सेत्तं पच्छाणुपुव्वी सेकिंतं अणाणुपुव्वी एयाएचेव एगाइयाए एगुत्तरियाए दसगच्छगयाए सेढीए

१-७२० भंग होते हैं ।

अन्नमन्नब्भासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी सेत्तं समायारी आणुपुव्वी ॥

पदार्थ-(सेकिंतं समायारी आणुपुव्वी २ तिविहा पं० तं० पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी) शिष्य ने प्रश्न किया कि हे भगवन् ! समाचारी आनुपूर्वी किसे कहते हैं गुरुने उत्तर दिया कि भो ! शिष्य ! समाचार्यानुपूर्वी तीनों प्रकार से वर्णन कीगई है जैसे कि-पूर्वानुपूर्वी १ पश्चात् आनुपूर्वी २ अनानुपूर्वी ३ इस प्रकार गुरु के वचन सुनकर शिष्य ने फिर शंका की कि हे भगवन् (सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी २) पूर्वानुपूर्वी किसे कहते हैं गुरु कहते हैं पूर्वानुपूर्वी निम्नलिखितानुसार है ॥ (इच्छामिच्छा तहकारो) साधुओं को दश प्रकार समाचारी होती हैं जैसे कि-जो शिष्य ने काम करना हो तो पहिले गुरुसे इस प्रकार कहे कि-हे भगवन् ! यदि आपकी इच्छा हो तो अमुक काम करूं इसे प्रथम समाचारी कहते हैं १ द्वितीय समाचारी यह है जो भूल होने पर (मिच्छामि दुक्कडं) इस प्रकार कहा जाता है यथा "मैं अपनी भूल पर पश्चाताप करता हूं २ तृतीय समाचारी गुरु के वचन (तहत्ति) तथा इति कह कर श्रवण करे ३ (आवस्सियाय निसीहिया आपुच्छणायपडिपुच्छणा) चतुर्थी समाचारी उसे कहते हैं कि जब साधु उपाश्रय से अन्यत्र कहीं जाने लगे तब (आवस्सही२)-मैं आवश्यक कार्य के लिये जाता हूं-ऐसे शब्द उच्चारण करे ४ पांचवीं समाचारी जब उपाश्रय में प्रवेश करे तब "निस्सहि" २ ऐसे कहे ५ और छठी समाचारी में जो कार्य करने होवें तो गुरु से पूछकर करे ६ सप्तम समाचारी में यदि किसी अन्य मुनि ने कहा कि हे भगवन् ! कि आप मेरा अमुक कार्य करदें तब भी गुरु को पूछ ले कि यदि आपकी आज्ञा हो तो अमुक मुनिका अमुक कार्य करदूं इसे सप्तम समाचारी कहते हैं (छंदणा निमंत्तणाओवसंपयाय काले समायारी भवेदसविहाओ) जो अन्न पानी आदि हैं उनका सम विभाग करना और ऐसे कहना हे पूज्य ! मुझपर अनुग्रह करो-इसे अष्टम समाचारी कहते हैं ८ । नवमी आमंत्रण समाचारी होती है-जैसे कि पास वस्तु होने पर अथवा भविष्यत्काल में किसी प्रकार से आमन्त्रण करना इसे निमंत्रण समाचारी कहते हैं ९ दशम समाचारी उसका नाम है जो श्रुताध्ययन के वास्ते किसी अन्य मुनिवर के पास स्थिति करना और उसे कहना कि, मैं आपका

हैं इत्यादि शब्दों को उपसंपदा समाचारी कहते हैं सो यह दश प्रकार की समाचारी होती है (सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी) और इनकी अनुक्रमता पूर्वक गणना करने को पूर्वानुपूर्वी कहते हैं। अब प्रश्न, पश्चात् आनुपूर्वी के विषय में किया जाता है (सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी २ उवसंपया जाव इच्छा सेत्तं पच्छाणुपुव्वी) (प्रश्न) पश्चात् आनुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) जो उपसंपदा से लेकर इच्छाकार पर्यन्त गणन किया जाता है उसे पश्चात् आनुपूर्वी कहते हैं (सेकिंतं अणाणुपुव्वी २ एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तीरयाए दसगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी) (प्रश्न) अनानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) इन दश अंकों को १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, दश गच्छरूप श्रेणी करके फिर एक की एक के साथ वृद्धि करते हुए और परस्पर अभ्यास से गुणा करके यावन्मात्र रूप हों (नोट–३६२८८००) फिर उनमें से आदि और अंत के रूप को छोड़कर शेष रूप अनानुपूर्वी के होते हैं और इसे ही अनानुपूर्वी कहते हैं (सेत्तं समायारीयाणुपुव्वी) अथ शब्द मंगलवाची है यही समाचारी आनुपूर्वी है अपितु इसको ही समाचारी आनुपूर्वी कहते हैं ॥

भावार्थ–समाचारी आनुपूर्वी तीनों प्रकार से वर्णन की गई है पूर्वानुपूर्वी १ पश्चात् आनुपूर्वी २ अनानुपूर्वी ३ अपितु आनुपूर्वी में जो दश समाचारियों के नाम हैं वह श्री उत्तराध्ययन सूत्र के २६ वें अध्याय के अनुकूल नहीं है क्योंकि अर्थों में तो एकत्वता है किन्तु गणनानुसार एकता नहीं है इसलिये उत्तराध्ययनजी से उक्त नाम भावार्थ में दिये जाते हैं किसी आवश्यक काम के लिये जब जाना पड़े तब (आवस्सहि २) ऐसे कहना चाहिये १ और जब उपाश्रय में प्रवेश करे तब निस्सहि २ ऐसे कहे क्योंकि यह शब्द क्रिया का निषेध कारक है २ यदि कोई काम अपना करना होवे तब गुरुजी से पूछे कि हे भगवन्! मैं अमुक कार्य करूं। ३ यदि अन्य मुनिवर का काम करना होवे तब भी गुरुजी को पूछ के करे ४ और जो अपने पास वस्तु होवे उसकी अन्य मुनिवरों को निमंत्रणा करे ५ और अन्य मुनिवरों को उपदेश करे यदि आपकी इच्छा हो तो अमुक कार्य करो ६ किसी प्रकार भी भूल होने पर (मिच्छामि दुक्कडं) ऐसे कहे ७ गुरु के वचनों को तहत्ति करके सुने ८ और गुरु की

भक्ति करे ९ श्रुताध्ययन के वास्ते अन्य के समीप रहे १० ॥ इसे आनुपूर्वी कहते हैं ॥ और इन्हीं को उलथा गणन करने को पश्चात् आनुपूर्वी कहते हैं अपितु जो दश अंक हैं उनको परस्पर गुणा करने से ३६ लक्ष २८ हजार ८०० अंक बनते हैं उनमें से आदि और अंत के रूप को छोड़कर शेषरूप अनानुपूर्वी के होते हैं सो इसी को समाचारी आनुपूर्वी कहते हैं अब सूत्रकार भावानुपूर्वी का स्वरूप वर्णन करते हैं जिसके द्वारा भावों का भी बोध होजाए ॥

अथ भावानुपूर्वी विषय ॥

सेकिंतं भावाणुपुव्वी २ तिविहा पं० तं० पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी २ उदइए उवसमिय खईय खओवसमिए पारिणामिए सन्निवाइए सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी २ सन्निवाइए जाव उदइय सेत्तं पच्छाणुपुव्वी सेकिंतं अणाणुपुव्वी २ एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए छगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी सेत्तं भावाणुपुव्वी सेत्तं आणुपुव्वीति पयं सम्मत्तं ॥ १ ॥

पदार्थ—(सेकिंतं भावाणुपुव्वी २ तिविहा पं० तं० पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी) (प्रश्न) भावानुपूर्वी कितने प्रकार से वर्णन कीगई है (उत्तर) तीनों प्रकार से जैसे कि—पूर्वानुपूर्वी १ पश्चात् आनुपूर्वी अनानुपूर्वी (सेकिंतं पुव्वाणुपुव्वी २ उदइय उवसमिएखईए खओवसमिए पारिणामिए सन्निवाइय सेत्तं पुव्वाणुपुव्वी) प्रश्न) पूर्वानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) पूर्वानुपूर्वी षट् प्रकार से वर्णन कीगई है जैसे कि—उदयिक भाव १ उपशमिकभाव २ क्षायिक भाव ३ क्षयोपशमिक भाव ४ पारिणामिक भाव ५ सन्निपातिक भाव ६ इनका सविस्तर स्वरूप आगे लिखा जाएगा इसलिये यहां पर इनका अर्थ नहीं लिखा है इस प्रकार इन भावों की गणना को पूर्वानुपूर्वी कहते हैं (सेकिंतं पच्छाणुपुव्वी २ सन्निवाइय जाव उदइय सेत्तं पच्छाणुपुव्वी)

(प्रश्न) पश्चात् आनुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) जो सन्निपात से लेकर उदयिक भाव पर्यन्त गणना कीजावे उसी का नाम पश्चात् आनुपूर्वी है (सेकिंतं अणाणुपुव्वी २ एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए छगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरूवूणो सेत्तं अणाणुपुव्वी सेत्तं भावाणुपुव्वी सेत्तं आणुपुव्वी विषयं सम्मत्तं) (प्रश्न) अनानुपूर्वी किसे कहते हैं (उत्तर) इन पद अंकों को एक से लेकर १–२–३–४–५–६ एक एक की वृद्धि करते हुए जब पद गच्छरूप श्रेणी होजाए तब परस्पर अभ्यास से गुणा करे जिसके ७२० रूप होते हैं उनमें से आदि और अन्त के रूप को छोड़कर शेष रूप अनानुपूर्वी के होते हैं यही अनानुपूर्वी है और इसी स्थानोपरि भावानापूर्वी का समास सम्पूर्ण होगया है ॥

अथ शब्द मंगलवाची भी है इसलिये इस समास के अंत में दिया गया है और आनुपूर्वी पद की भी यहां पर समाप्ति है ॥

इति श्री अनुयोग द्वार शास्त्र में हिन्दी भाषा टीका रूप आनुपूर्वी पद समाप्त हुआ ॥

भावार्थ–षट् प्रकार के भावों को तीनों आनुपूर्वी आदि हैं जिनका सम्पूर्ण स्वरूप तो आगे लिखा जायगा किन्तु अनुक्रमता पूर्वक नामोत्कीर्तन यहां पर किया गया है सब भावों का आधार भूत प्रथम उदयिक भाव है फिर उपशम भाव है जिसका स्वरूप स्वल्प है क्षायिक भाव का उपशम से विशेष स्वरूप है अपितु क्षयोपशम का उससे भी विस्तारपूर्वक वर्णन है पारिणामिक भाव का क्षयोपशम भाव से विशेष कथन है सन्निपात का तो महान् स्वरूप है इस प्रकार से इनकी अनुक्रमता बांधी गई है पूर्वानुपूर्वी पश्चात् आनुपूर्वी प्राग्वत् हैं किन्तु अनानुपूर्वी के ७२० रूप बनते हैं जिन में दो रूप आदि और अन्त के न्यून करने से ७१८ रूप अनानुपूर्वी के होते हैं इसी का नाम अनानुपूर्वी है और भावानुपूर्वी भी इसी का नाम है अतः आनुपूर्वी पद की समाप्ति भी इसी स्थान पर होगई है इसके अनन्तर उपक्रम के द्वितीय भेद की व्याख्या कीजाती है ॥

अथ नाम विषय।

मूल–सेकिंतं नामे नामे दसविहे पराणत्ते तंजहा एग

नामे २ दुनामे २ तिनामे ३ चउनामे ४ पंचनामे ५ छःनामे ६ सत्तनामे ७ अट्ठनामे ८ नवनामे ९ दसनामे १० सेकिंतं एगनामे नामाणि जाणि काणिय दव्वाण गुणाण पज्जवाणं च तेसिं आगमणिहसे नामंति परूविया सन्ना १ सेत्तं एगनामे सेकिंतं दुनामे दुविहे पएणत्ते तंजहा एक्खरिए १ अणेगक्खरिए य सेकिंतं एगक्खरिए १ अणेगविहे पं० तं० ह्रीः श्री धी स्त्री सेकिंतं एगक्खरिए सेकिंतं अणेगक्खरिय २ अणेगविहे पएणत्ते तंजहा कन्ना वीणा लता माला सेत्तं अणेगक्खरिए अहवा दुनामे दुविहे पं० तं० जीवनामे य अजीवनामे य सेकिंतं जीवनामे २ अणेगविहे पं० तं० देवदत्ते जएणदत्ते विएहुदत्ते सोमदत्ते सेत्तं जीवनामे सेकिंतं अजीवनामे २ अणेगविहे पं० तं० घडो पडो कडो रहो सेत्तं अजीवनामे ॥ ८२ ॥

पदार्थ—सेकिंतं नामे नामे दसविहे पएणत्ते तंजहा एगनामे दुनामे २ तिनामे चउनामे पंचनामे छनामे सत्तनामे अट्ठनामे नवनामे दसनामे) शिष्य ने प्रश्न किया कि हे भगवन् ! नाम किसे कहते हैं गुरु ने उत्तर दिया कि—भो शिष्य ! नाम उसका नाम है जिसके द्वारा वस्तुओं के स्वरूप का पूर्ण बोध हो सो उस नाम के दश भेद विवर्ण किये गये हैं जैसे कि—जो ज्ञानादि गुण का प्रकाशक हो उसका नाम एक नाम है जिसके द्वारा दो पदार्थों का बोध हो उसे द्विनाम कहते हैं २ जिसके द्वारा तीन पदार्थों का ज्ञान हो उसको त्रिनाम कहते हैं ३ जो चार प्रकार से वस्तुओं का स्वरूप विवर्ण किया जाय वह चार नाम है ४ जो पांच प्रकार से पदार्थों का विवर्ण किया जाय वे पांच नाम हैं जिससे षट् प्रकार से वस्तुओं का स्वरूप वर्णन किया जावे वही षट् नाम है ६ जिससे सात प्रकार से वस्तु निरूपण की जावे वही सप्त नाम है ७ जिसके अष्टभेद वर्णन किये जावे उसीका नाम अष्ट नाम है ८ नव प्रकार से द्रव्यादि

१ नोटः—निकष स्फटिक चिकुरेषु; पृथुकस्य ह्रोसवति ॥

पदार्थों को कहा जाए वही नव नाम हैं ६ दश प्रकार से जो पदार्थ वर्णन किये जावें उन्हीं का नाम दश नाम हैं १० ॥ गुरु के इस प्रकार के वचन सुनकर शिष्य ने फिर प्रश्न किया कि हे भगवन् (सेकिंतं एगनामे २ नामाणि जाणि काणिय दव्वाण गुणाण पज्जवाणं चतेसिं आग मणिहसे नामंति परूविया-सन्ना १) एक नाम किस प्रकार से वर्णन किया गया है गुरु कहने लगे कि भो शिष्य ! एक नाम इस प्रकार से है जैसे कि–(नामाणि) नाम अभिधान (जाणि) यावन्मात्र उनमें से (काणिय) कितनेक एक नाम जैसे कि–द्रव्यों के (जीव जंतु आत्मा प्राणीसत्व) नाम जीव द्रव्य के अनेक नाम हैं उसी प्रकार आकाश द्रव्य के नाम हैं नभः आकाशमम्बरं इत्यादि यह द्रव्यों के नाम हैं और गुणनाम जैसे ज्ञानादि गुण हैं ज्ञान निबोध आत्मा इत्यादि तथा रूप, रस, गंध, स्पर्श यह भी अजीव गुण हैं और पर्यायनाम नरकातिर्यक् मनुष्यदेव इन भावों को प्राप्त होना उसे पर्यायनाम कहते हैं तथा एक गुण कृष्ण इत्यादि यह भी पर्यायवाची नाम हैं इत्यादि यह सर्व द्रव्य १ गुण २ पर्याय ३ च पुनः (तेसिं) उन सबको आगमरूपी निकष के (कसौटी) विषय नाम पदरूप संज्ञा प्रतिपादन कीगई हैं अथवा यह नाम पद आगम में कसौटी तुल्य है इसके द्वारा सर्व पदार्थों का बोध यथावत् होजाता है तथा द्रव्य १ गुण २ पर्याय ३ यह तीनों आगमरूपी कसौटी में यथावत् सिद्ध होचुके हैं जो संसार भर में वस्तु हैं वे सर्व समान प्रकार से एक नाम से भापण कीजाती है सर्व द्रव्यों के एकार्थ-वाची अनेक नाम होते हैं किन्तु वह एक नाम में ही गर्भित होजाते हैं तथा जैसे कसौटी (परीक्षणप्रस्तर) के द्वारा सुवर्णादि पदार्थों की परीक्षा कीजाती हैं उसी प्रकार ज्ञानरूपी कसौटी में जीवाजीव पदार्थ जो सुवर्णादि के तुल्य हैं उनकी परीक्षा कीजाती है तथा नामपद कसौटी तुल्य है (सेत्तं एगनामे) सो वही एक नाम है जो अनेक नाम होने पर भी एक ही अर्थ में रहते हैं । इस कथन से जिज्ञासुओं को कोप की आवश्यकता है क्योंकि–एक २ वस्तु के अनेक नाम कोपों में लिखे गए हैं सो आगमरूपी कसौटी में नामरूपी संज्ञा कथन कीगई है यही संज्ञा एक नाम है ॥

अब शिष्य द्विनाम के निर्णय के लिये पृच्छा करता है कि (सेकिंतं दुनामे २ दुविहे पं० तं० एगक्खरिए अणेगाक्खरिएय) (प्रश्न) द्विनाम किस प्रकार से वर्णन किया गया है (उत्तर) द्विनाम दो प्रकार से प्रतिपादन किया

गया है जैसे कि-एकाक्षरिक नाम और अनेकाक्षरिक नाम-शिष्य ने फिर शंका की कि हे भगवन् ! (सेकिंत एगक्खरिए २ अणेगविहे पराणत्ते तंजहा ह्रीः श्रीः धीः स्त्री सेत्तं एगक्खरियं) एकाक्षरिक नाम किस प्रकार से वर्णन किया गया है ॥ गुरु ने समाधान किया कि हे शिष्य ! एकाक्षरिक नाम उसे कहते हैं जिसके उच्चारण में एक ही अक्षर हो तथा जिसके उच्चारण में अनेक अक्षरों की प्राप्ति हो उसका नाम अनेकाक्षरिक है किन्तु एकाक्षरिक नाम के सूत्र ने चार उदाहरण दिये हैं जैसे कि-ह्री श्री धी स्त्री-यही एकाक्षरिक नाम हैं क्योंकि इनका उच्चारण रूप एक ही अक्षर है (सेकिंतं अणेगक्खरिय २ अणेगविहे पं० तं० कन्ना वीणा लता माला सेत्तं अणेगक्खरिएं) (प्रश्न) अनेकाक्षरिक नाम किसे कहते हैं (उत्तर) वह भी अनेक प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि-कन्या वीणा लता माला, यह सर्व अनेकाक्षरिक नाम हैं क्योंकि प्राकृत भाषा में द्विवचन के स्थानों पर बहुवचन दिया जाता है इसीलिये द्वि शब्द के स्थानोपरि अनेक शब्द ग्रहण किया गया है इस प्रकार गुरु शिष्य का समाधान करके फिर शिष्य को कहने लगे कि हे अंते वासिन् ! (अहवा दुनामे दुविहे पं० तं०) अथवा द्विनाम अन्य प्रकार से भी वर्णन किया गया है जैसे कि-(जीवनामेय) जीवनाम (अजीवनामेय) और अजीनाम च समुच्चयार्थ में है.शिष्यने फिर पूछा (सेकिंतं जीवनामे २) कि हे भगवन्! जीव नाम किस प्रकार से वर्णन किया गया है गुरु ने उत्तर दिया कि (अणेगविहे पं० तं०) भो शिष्य ! जीव नाम अनेक प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि-(देवदत्ते जराणदत्ते विराहुदत्ते सोमदत्ते सेत्तं जीवनामे) देवदत्त शब्द इसी प्रकार यज्ञदत्त, विष्णुदत्त, सोमदत्त, यही जीव संज्ञक नाम हैं (सेकिंतं अजीवनामे २) (प्रश्न) अजीव नाम किसे कहते हैं (उत्तर) अजीव नाम (अणेगविहे पं० तं०) अनेक विधि से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि-(घडो पडो कडो रहो) घट, पट, कट, रथ (सेत्तं अजीवनामे यही अजीव नाम है क्योंकि-घटपटादि अजीव पदार्थ हैं इसलिये इनको अजीव नाम से लिखा गया है ॥

भावार्थ-नामपद दस प्रकार से वर्णन किया गया है जो पदार्थ हैं उनको दस विभागों में करके जिज्ञासुओं के सुखाव बोध वास्ते नाम दिखलाया गया है क्योंकि- यावन्मात्र संसार में द्रव्य है उनमें से कितनेक द्रव्य गुण पर्यायों

के अनेक नाम एकार्थी होते हैं जैसे कि जीव चेतन आत्मा जंतु सत्त्व इत्यादि यह सर्व अनेक नाम एकार्थी हैं इसी प्रकार गुणों के नाम और पर्यायों के नाम भी समझने चाहिये सो आगमरूपी सुवर्ण की परीक्षा के विषय यह नाम पद-रूप संज्ञा कसौटीरूप से प्रतिपादन कीगई है इसके द्वारा द्रव्य गुण पर्यायों का भलीभांति सो बोध होजाता है सो इसी का नाम एकनाम है और द्विनाम भी द्विप्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि—एकाक्षरिक और अनेकाक्षरिक—एकाक्षरिक उसका नाम है जैसे कि "ह्रीः श्रीः धीः स्त्री" ये शब्द एकाक्षरिक हैं इससे यह सिद्ध होता है कि प्राकृत भाषा में किसी अनुकरण के विषय में इन संस्कृत शब्दों का प्रयोग हो सकता है क्योंकि प्राकृत के व्याकरण में इनकी सिद्धि इस प्रकार से कीगई है यथा— श्री, ह्री—कृत्स्न क्रियादिष्ट्यास्वित् ॥ प्रा० व्या० अ० ८ पा २ सू० १०४ ॥ ह्, श्री—ह्री इत्यादि शब्दों के संयुक्त अन्त व्यञ्जन के पूर्व इकार का आगम होजाता है तब निम्नलिखित सर्व रूप हुए अरिहइसिरी—हिरी—कसिणो—किरिया—दिट्ठिया—इस प्रकार रूप सिद्धि होनेपर सिरी (श्री१ *) और हिरी इस प्रकार के रूप बने और स्त्री शब्द प्राकृत भाषा में ऐसे बनता है जैसे कि स्त्री शब्द इस प्रकार से स्थित है तब सर्वत्र लव राम वन्द्रे प्रा० व्या० अ० ८ पा २ सूत्र ७९ ॥ वन्द्र शब्दादन्यत्र लवरा सर्वत्र संयुक्तस्योर्ध्वमधश्च स्थितानां लुग् भवति ॥

इस सूत्र से रकार का लोप होजाता है तब रेफ का लोप होने पर स्ती ऐसे शब्द बना फिर—स्तस्यथो समस्तस्तम्बे ॥ प्रा० व्या० अ० ८ पा २ सू० ४५ ॥ समस्त स्तंब वर्जितस्तस्यथो भवति । इस शब्द से स्ती शब्द के स्त को थी ऐसे रूप बन गया फिर अनादौ शेषा दशयोर्द्वित्वम् । सूत्र ८९ इस सूत्र से थी के थकार के दो रूप हुए तब थ्थी ऐसे रूप बना फिर द्वितीयतुर्ययो रुपरि पूर्वः । सू० ९० इस सूत्र से प्रथम थकार के स्थानोपरि तकार होगया तब त्थी इस प्रकार से प्राकृत भाषा में रूप सिद्ध हुआ तथा स्त्रिया इत्थी सू० १३० इस सूत्र से स्त्री शब्द को विकल्प से इत्थी ऐसे भी आदेश हो.

---

* क्विब्वचि प्रच्छिश्रिस्रुद्रुप्रुज्वां दीर्घोऽसम्प्रसारणञ्च, उणादिवृत्तौ द्वितीयपादस्य ५७ सूत्रम् ॥ अनेनसूत्रेण श्रिञ् सेवायाम् धातुत्वात् श्रीरूपं सिद्धं भवति ॥

जाता है सो मूल में अनुकरण अर्थ में स्त्री * शब्द ग्रहण किया गया है तथा सूत्र प्रमाण होने पर उक्त प्रयोग सर्वदा आचरणीय हैं इन्हीं को एकाक्षरिक नाम से लिखा गया है और द्विवचन के स्थान में प्राकृत भाषा में बहुवचन दिया जाता है इसलिये अनेकाक्षरिक नाम कन्या वीणा लतामाला इत्यादि प्रयोग ग्रहण किये गये हैं तथा द्विनाम अन्य प्रकार से भी वर्णन किया गया है जैसे कि--जीवनाम और अजीवनाम--जीवनाम के उदाहरण यह हैं--यथा देवदत्त यज्ञदत्त (म्नज्ञोर्णः) इस सूत्र से प्राकृत भाषा में ज्ञ को णकार हुआ और आदि यकार को जकार होजाता है फिर "अनादि शेषादेशयोर्द्वित्वं" इस सूत्र से णकार द्वित्व होगया तब जण्णदत्त ऐसे रूप बन गया और विष्णुदत्त को । सूक्ष्म श्नष्ण--स्नह्नक्ष्णां ण्हः । इस सूत्र से विण्हुदत्त बन गया और सोमदत्तादि यह सर्व जीव संज्ञक नाम हैं अजीव संज्ञक नाम निम्न प्रकार से हैं यथा--घटः पटः कटः रथः यह शब्द प्राकृत में घडो पडो कडो रहो इस प्रकार से लिखे गये हैं क्योंकि--(टोडः) इस सूत्र से प्राकृत में टकार को डकार हो जाता है तब कड भड घड पड यह शब्द सिद्ध होते हैं (अतः सेर्डोः) इस सूत्र से प्रथमान्त होजाते हैं क्योंकि सिवि भक्ति के स्थान में डोकार का आदेश होकर पडो घडो इत्यादि रूप सिद्ध होते हैं किन्तु रथ शब्द को रहो ॥ "ख, घ, थ, ध भाम्" इस सूत्र से थकार को हकार होगया तब रहो ऐसे प्रथमान्त शब्द सिद्ध हुआ सो यह सर्व अजीव शब्द के नाम हैं अतः इस प्रकार से द्वि प्रकार नाम पद की प्रतिपादनता की गई है इस के द्वारा जो जो द्वि प्रकार के द्रव्य हैं उन सभों का ज्ञान भली भांति से हो सकता है इसी कारण से सूत्रकार अब अन्य प्रकार से द्विनाम वर्णन करते हैं ॥

पुनः द्विनाम विषय ॥

अहवा दुनामे नवविहे पण्णत्ते तंजहा विसेसिएय १

---

* स्त्यायतेर्ड्रट् ॥ उणादि वृत्तौ चतुर्थपादस्य १६५ सूत्रम् ॥ स्त्यैशब्द संघातयोः ॥ अस्मात् ड्रट् । डित्वात् टिलोपः टित्वात्ङीप् । वलिलोपः । स्त्रीस्तन केशवती ॥ इति रूपं सिद्धं । तथा चे स्यतेस्त्यायते स्तृणातेस्तनोतेर्वा । औणादिक सूत्रेण ड्रट् प्रत्ययो धातोश्च सकारा देशो निपात्यते । टित्वातूङी । तृणाति स्वं परंच दोषेणाच्छादयतीति स्त्री ॥

अवसेसिएय २ ॥ १ ॥ विसेसियं दव्वं विसेसियं जीवदव्वं च अजीवदव्वं च २ अविसेसियं जीवदव्वं च विसेसियं नेरइउ- तिरक्ख जोणि उमणुस्सो देवो ३ अविसेसिउनेर इउविसेसि- उरयणप्पभाए सकरप्पभाए वा लुप्पभाए पंकप्पभाए धूमप्प- भाए तमाए तमतमाए ४ अविसेसिये रयणप्पभाए पुढवीने- रइए विसेसिए पज्जत्तए अपज्जत्तए ५ एवं जाव अविसेसिउ तमतमा पुढविनेरइउ विसेसिउ तमतमा पुढविनरेइउ पज्जत्ता- पज्जत्तउ ११ अविसेसिए तिरिक्ख जाणिएविसेसिए एगिं- दिय-वेइंदिए तेइंदिए चउरिंदिए पचेंदिए १२ अविसेसिए एगिंधिए विसेसिए पुढविकाइए आउकाइए तेऊकाइय वाऊ- काइय वणस्सइकाइय १३ अविसेसिए पुढविकाइए विसेसिए सुहम पुढविकाइय वादर पुढविकाइय १४ अविसेसिए सुहुम पुढविकाइए विसेसिए पज्जत्तए सुहुम पुढविकाइए अपज्ज- त्तए सुहुम पुढविकाइय १५ । अविसेसिए वादर पुढविकाइय विसेसिए पज्जत्तए वादर पुढविकाइय १६ अविसेसियं एवं आउकाइय १६ तेऊकाइय २२ वाउकाइय २५ वराणस्सइका- इय २८ अविसेसिए अपज्जत्तभेदेहिं भाणियव्वा अवसेसियं वेइंदिय विसेसियं पज्जतउय अपज्जत्तउय २६ एवं तेइंदिए ३० चउरिंदिय ३१ ॥

पदार्थ-(अहवा दुनामे दुविहे पन्नत्ते तंजहा विसेसिएय १ अवसेसिएयं २) गुरु शिष्य को द्विनाम अन्य प्रकार से भी दिखलाते हैं इसीलिये सूत्र में यह पद है अथवा द्विनाम द्वि प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि-- एक विशेष नाम दूसरा अविशेष नाम सो सर्व पदार्थ द्वि प्रकार से हैं इसी कारण से सूत्र-

कार ने इनका सविस्तर वर्णन किया है । अविशेष नाम का यह अर्थ है कि-जो नाम सर्व स्थानोंमें गर्भित होजावे, विशेष नाम उसे कहते है जो केवल उसी द्रव्य का बोधक होवे--जो निम्नलिखितानुसार उदाहरण हैं ॥ १ ॥ (अविसेसियंदव्वं विसेसियं जीवदव्वं च अजीवदव्वं च) अविशेष नाम साधारण रूप से द्रव्य का बोधक है क्योंकि यह शब्द जीवद्रव्य और अजीवद्रव्य दोनों में व्यवहृत होता है इसीलिये अविशेष नाम में द्रव्य शब्द ग्रहण किया गया है और विशेष शब्द में जीवद्रव्य और अजीवद्रव्य हैं २ और इसी प्रकार आगे भी सम्भावना करलेनी चाहिये जैसे कि--(अविसेसियं जीवदव्वं विसेसियं नेरइउतिरिक्ख जोणिउ मणुस्सो देवो २) अविशेषक जीवद्रव्य है विशेषक इसी जीव के भेद हैं जैसे कि--नारकीय १ तिर्यग्योनिक २ मनुष्य ३ और देव ॥ ४ ॥ ३ ॥ इसी प्रकार आगे हैं जैसे कि (अविसेसिय नेरइय) अविशेषक नाम नारकीय है और (विसेसिए) विशेषक नाम में नरकों के भेद हैं यथा--(रयणप्पभाए) रत्नप्रभा च पुनर् अर्थ में है (सकरप्पभाए) शर्करप्रभा (वालुप्पभाए) वालुप्रभा (पंकप्पभाए) पंकप्रभा (धूमप्पभाए) धूमप्रभा (तमप्पभाए) तमप्रभा (तमतमाप्पभाए) तमतमाप्रभा ७ यह सर्व नरकों के गोत्र विशेषक नाम में हैं ४ ॥ फिर (अवसेसिए) अविशेषक (रयणप्पभाए पुढवी नेरइय) रत्नप्रभा के नारकीय (विसेसिए) विशेषक उसके भेद (पज्जत्ताएय) पर्याप्त और (अपज्जत्तए) अपर्याप्त हैं ५ (एवं जाव अविसेसिए तमतमा पुढवि नेरइय) इसी प्रकार सर्व नरकों का स्वरूप जानना चाहिये यावत् अविशेषक तमतमापृथ्वी के नारकीय और (विसेसिय-पज्जत्तएय अपज्जत्तएय ११) विशेषक नाम में पर्याप्त और अपर्याप्त भेद जानने चाहियें ११ ॥ अब तिर्यक योनि के विषय में वर्णन करते हैं जैसे कि-(अविसेसिए) अविशेषक नाम में (तिरिक्खजोणिए) तिर्यक् योनिक् जीव हैं और (विसेसिए) विशेषक नाम में (एगिंदिए बेइंदिएत्तेइंदिए चउरिंदिए पंचेन्द्रिये १२) एकेन्द्रिय जीव हैं इसी प्रकार द्विइन्द्रिय जीव हैं, त्रिंइन्द्रिय

चतुरिंद्रिय और पंचिंद्रिय जीव हैं १२ और फिर (अविसेसिए) अविशेषक नाम में एकेन्द्रिय पद है और (विसेसिए विशेषक पद में पुढविकाइए आउकाइय तेउकाइय वाइय वणस्सइकाइए १३) पांच स्थावर हैं जैसेकि पृथ्वीकायिक जीव इसी प्रकार अप्कायिक जीव २ अग्निकायिक ३ वायु कायिक ४ वनस्पति कायिक ५ फिर (अविसेसिए) अविशेषक नाम में (पुढविकाइए) पृथ्वीकायिक हैं और (विसेसिइय) विशेषक पद में (सुहुमपुढविकाइय बादर पुढविकाइय) सूक्ष्म पृथ्वीकायिक और बादर (स्थूल) पृथ्वीकायिक हैं १४ फिर (अविसेसिए सुहुमपुढविकाइए) अविशेषक नाम में पृथ्वीकायिक सूक्ष्म जीव हैं और (विसेसिए पज्जत्तए सुहुमपुढविकाइए) विशेषक नाम में पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक और (अपज्जत्तए सुहुमपुढविकाइय १५) अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक हैं (अविसेसिय बादर पुढविकाइय) अविशेषक में बादर पृथ्वीकायिक हैं और (विसेसिए पज्जत्तए बादर पुढविकाइय) विशेषक नाम में पर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक है १६ (अविसेसिए) अविशेषक पद में (एवं आउकाइय) इसी प्रकार अप्काय के भी भेद जानने चाहिये जैसे कि—प्रथम भेद अविशेषक का होता है दूसरा भेद विशेषक होता है सो पृथ्वी कायवत् अप्काय के भी सूक्ष्म बादर पर्याप्त और अपर्याप्त भेद जानने चाहिये १६ (तेउ) चार भेद तेजस्काय के २२ (वाउ) चार ही वायुकाय के २५ (वणस्सइ २८) चार ही भंग वनस्पति के हैं (अविसेसिए अपज्जत्त भेदेहिं (भाणियव्वा) इस सूत्र का सम्बन्ध पूर्व सूत्र के साथ है अविशेषक नाम पद में अपर्याप्तादि भेद पूर्ववत् जानने चाहिये ॥

अब द्विइन्द्रिय आदि जीवों के विषय में वर्णन किया जाता है ॥

(अविसेसिउ वेइंदिउ) अविशेषक नाम में द्विइन्द्रिय जीव हैं और (विसेसिउ) विशेषक नाम में द्वीन्द्रिय जीवों के (पज्जत्तउय अपज्जत्तउय) पर्याप्त और अपर्याप्त भेद हैं २६ (एवंते इंद्रिय ३० चउरिंद्रिय ३१) इसी प्रकार त्रिरिंद्रिय और चतुरिंद्रिय जीवों के भेद भी जानने चाहिये अब पंचेंद्रियं के विषय में विवर्ण किया जाता है ॥

भावार्थ—द्वि नाम अन्य प्रकार से भी वर्णन किया गया है जैसे कि विशेषक नाम और अविशेषक नाम २ अविशेषक नाम से समान पदार्थों का बोध होता है विशेषक नाम से उनके भेदों का भी ज्ञान हो जाता है जैसे कि अवि-

शेपक नाम में द्रव्य शब्द ग्रहण किया है किन्तु विशेपक नाम में उसी के भेदों का विवर्ण है यथा जीवद्रव्य और अजीवद्रव्य-इस प्रकार आगे भी समझना चाहिये अविशेषक पद में जीव द्रव्य है विशेपक पद में चार गति रूप जीवों के भेद हैं फिर नरक गति अविशेपक पद है-सात उन के भेद विशेपक पद में ग्रहण किये गये हैं फिर रत्नप्रभा अविशेपक शब्द है पर्याप्त और अपर्याप्त उसके भेद विशेपक पद में लिये गये हैं इसी प्रकार सातों नरकों के स्वरूप को जानना चाहिये फिर अविशेपक शब्द में तिर्यग्योनि है विशेपक पद में एकेन्द्रिय से लेकर पंचेंद्रिय पर्यन्त जीव हैं और अविशेषक पद में पृथ्वीकायिक जीव हैं विशेपक पद में सूक्ष्म बादर उन जीवों के भेद हैं इसी प्रकार पर्याप्त और अपर्याप्त यह भी भेद जान लेने चाहिये जैसे कि-पृथ्वी के चार भेद विवर्ण किये गये हैं उसी प्रकार अप्काय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय इन के भेद भी जान लो अपितु द्विइन्द्रिय जीवों के पर्याप्त और अपर्याप्त इस प्रकार के द्वि द्वि भेद हैं जिस प्रकार द्विइन्द्रिय जीवों के भेद हैं तद्वत् त्रिरिंद्रिय चतुरिंद्रिय जीवों के भेद भी जान लेने चाहिये यहां तक ३१ सूत्र हुए हैं इसके अनंतर पंचेंद्रिय जीवों के भेदों का विवर्ण किया जाता है जिस के अविशेपक विशेपक पूर्ववत् भेद हैं ॥

॥ अथ पंचेंद्रियादि जीवों के विषय ॥

अवसेसिएपंचेंदिएतिरिक्खजोणिय विसेसिय जलयर पंचेंदियतिरिक्खजोणिय थलयरपंचेंद्रियतिरिक्ख जोणिय खेयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिय ३२ अविसेसिए जलयर पंचेंदिय तिरिक्ख जोणिय विसेसिय समुच्छिय जलयर पंचेंदियतिरिक्खजोणिय गब्भ वक्कंतियजलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिय ३३ अविसेसिय समुच्छिमजलयरपंचेंदिय तिरिक्खजोणियए विसेसिय पज्जत्तएसमुच्छिमजलयर पंचेंदियतिरिक्खजोणिय अपज्जत्तएसमुच्छिमजलयर पंचेंदिएतिरिक्खजोणियए ३४ अविसेसिए गब्भ वक्कंतिय

जलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिय विसेसिय पज्जत्तएय गब्भ वक्कंतियजलयरपंचेंदिय तिरिक्खजोणिए य अपज्जत्तए गब्भ वक्कंतियजलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिए ३५ अविसेसिए थलयरपंचेंदिएतिरिक्खजोणिए विसेसिए चउप्पए थलयरपंचेंदिएतिरिक्खजोणिए उरपरिसप्पथलय पंचेंदिए तिरिक्खजोणिए य ३६ अविसेसिए चउप्पएथलयरपंचेंदिय तिरिक्खजोणिए विसेसिए समुच्छिमचउप्पएथलयरपंचेंदिय तिरिक्खजोणिए गब्भ वक्कंतियचउप्पयथलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिएय ३७ अविसेसिए समुच्छिमचउप्पएथलयरपंचेंदिएतिरिक्खजोणिए य विसेसिए पज्जत्तयसमुच्छिम चउप्पयथलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिए य अपज्जत्तए समुच्छिमचउप्पयथलयरपंचेंदियएतिरिक्खजोणिएय ३८ अविसेसिए गब्भ वक्कंतियचउप्पयथलयरपंचेंदिएतिरिक्खजोणिए विसेसिए पज्जत्तए गब्भ वक्कंतियचउप्पयथलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिय अपज्जत्त गब्भ वक्कंतियचउप्पय थलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिय ३९ अविसेसिए परिसप्पथलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिय विसेसिए उरपरिसप्पथलयर पंचेंदियतिरिक्खजोणिय भुजपरिसप्पथलयरपंचेंदिय तिरिक्खजोणिए य ४० एतेवि समुच्छमा पज्जत्तगा अपज्जत्तगा य गब्भवक्कंतिय विपज्जत्तगा अपज्जत्तगा य भाणियव्वा अविसेसिए खेयरपंचेंदिएतिरिक्खजोणिए विसेसिए समुच्छिमखेयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिय विसेसिए पज्जत्तय समुच्छिम खेयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिए य ४७ अविसेसिए समुच्छिमखेयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिय विसेसिए पज्जत्तए

समुच्छिमखेयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिए य ४८ अविसेसिए गब्भ वक्कंतियखेयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिय विसेसिए पज्जत्तए गब्भ वक्कंतियखेयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिए य अपज्जत्तए गब्भ वक्कंतियखेयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिय ४९ ॥

पदार्थ–(अविसेसिए) अविशेषक पद में (पंचेंदिए तिरिक्ख जोणिय) पांचेंद्रिय तिर्यक् योनिक शब्द है और (विसेसिए) विशेषक पद में (जलयर पंचेंदियतिरिक्खजोणिए) जलचर पांचेंद्रिय तिर्यक् योनिक जीव हैं और (थलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिए) स्थलचर पांचेंद्रिय तिर्यक् योनिक जीव हैं (खेयरपंचेंदिएतिरिक्खजोणिए) और खेचर पांचेंद्रिय तिर्यग् योनिक् जीव हैं ३२ और (अविसेसिय) अविशेषक पद में (जलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिए) जलचर पांचेंद्रिय तिर्यक् योनिक् हैं। (विसेसिए) विशेषक पद में (समुच्छिमजलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिए) सम्मूर्च्छिम जलचर पांचेंद्रिय तिर्यक् योनिक् और (गब्भववकंतियजलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिय) गर्भ से उत्पन्न होने वाले जलचर पांचेंद्रिय तिर्यक् योनिक् शब्द हैं ३२ फिर (अविसेसिए) अविशेषक नाम में (समुच्छिमजलयरपांचिंदियतिरिक्ख जोणिए) सम्मूर्च्छिम जलचर पांचेंद्रिय तिर्यग् योनिक् हैं और (विसेसिय पज्जत्तए समुच्छिमजलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिय अपजत्तए समुच्छिमजलयर पंचेंदियतिरिक्खजोणिए य ३४) विशेषक में पर्याप्त सम्मूर्च्छिम जलचर पांचेन्द्रिय तिर्यग् योनिक् और अपर्याप्त सम्मूर्च्छिम जलचर पांचेन्द्रिय तिर्यग् योनिक जीव हैं ३४ अपितु फिर (अवसेसिए गब्भ वक्कंतियजलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिए) अविशेषक नाम में गर्भ से उत्पन्न होने वाले जलचर पांचेंद्रिय तिर्यग् योनिक जीव हैं और (विसेसिए पज्जत्तए गब्भ वक्कंतियजलयरपंचेंदिएतिरिक्खजोणिए अपज्जत्तए गब्भवक्कंतियजलयर पंचेन्द्रियतिरिक्खजोणिए य) विशेषक नाम में पर्याप्त गर्भ से उत्पन्न होने वाले जलचर पांचेन्द्रिय तिर्यग् योनिक और अपर्याप्त गर्भ से उत्पन्न होने वाले जलचर पांचेंद्रिय तिर्यक् योनिक जीव हैं अब स्थलचरों के विषय में विवर्ण किया जाता है (अविसेसिए थलयरपंचेंद्रिय

तिरिक्ख जोणिए) अविशेषक नाम में थलचर पांचेन्द्रिय तिर्यग् योनिक जीव हैं किन्तु (विसेसिए चउप्पएथलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिय उर पर परिसप्पथलयर पंचेन्द्रियतिरिक्खजोणिएय) विशेषक नाम में चार पाद वाले स्थलचर पांचेंद्रिय तिर्यग् योनिक और छाती के बल से चलने वाले सर्प स्थलचर पांचेंद्रिय तिर्यग् योनिक जीव हैं ३६ (अविसेसिए चउप्पएथलयरपंचेंदिए तिरिक्खजोणिएय) अविशेषक चार पाद वाले स्थलचर पांचेंद्रिय तिर्यग् योनिक जीव हैं और (विसेसिए सम्मुच्छिमचउप्पएथलयरपंचीन्द्रयतिरिक्ख जोणिए य गम्भ वक्कंतिय चउप्पएथलयरपंचेंद्रियतिरिक्खजोणिएय) विशेषक समुर्च्छिम चार पाद वाले स्थलचर पांचेंद्रिय तिर्यग् योनिक और गर्भ से उत्पन्न होने वाले चार पाद वाले स्थलचर पांचेंद्रिय तिर्यग् योनिक जीव हैं चपाद पूरणार्थ में है ३७ फिर (अविसेसिए सम्मुच्छिमचउप्पएथलयर पंचेंदियतिरिक्खजोणिए य) अविशेषक सम्मूर्छिम चार पाद वाले स्थलचर पांचेंद्रिय तिर्यक् योनिक और (विसेसिए पज्जत्तय सम्मुछिमचउप्पएथलयरपंचेंदिय तिरिक्खजोणिय अपज्जत्तय सम्मुच्छिमचउप्पएथलयरपंचेंदिएतिरिक्खजोणिए य) विशेषक नाम में पर्याप्त सम्मूर्च्छिम चार पाद वाले स्थलचर पांचेंद्रिय तिर्यक योनिक और अपर्याप्त सम्मूर्च्छिम चार पाद वाले स्थलचर पांचेंद्रिय तिर्यक योनिक जीव हैं ३८ (अविसेसिए गम्भ वक्कंतियचउप्पएथलयरपंचेंद्रियतिरिक्खजोणिए) अविशेषक नाम में गर्भ से उत्पन्न होने वाले चार पाद वाले स्थलचर पांचेंद्रिय तिर्यक् योनिक हैं और (विसेसिए पज्जत्तए गम्भवक्कंतिय चउप्पए थलयर पंचेंदिय तिरिक्ख जोणिय अपज्जत्तए गम्भवक्कंति चउप्पए थलयर पंचेंद्रिय तिरिक्ख जोणिय ३६) विशेषक पर्याप्त गर्भ से उत्पन्न होने वाले और चार पाद वाले स्थलचर पांचेंद्रिय तिर्यग् योनिक और अपर्याप्त गर्भ से उत्पन्न होने वाले चार पाद वाले स्थलचर पांचेंद्रिय तिर्यग् योनिक जीव हैं ३६ (अविसेसिए उरपारिसप्प थलयरपंचेंदिय तिरिक्खजोणिए) अविशेषक नाम में उरपारिसर्प स्थलचर पांचेंद्रिय तिर्यक् योनिक जीव हैं और (विसेसिए उरपारिसप्प थलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिय भुयपारिसप्पथलयरपंचेंद्रियतिरिक्खजोणिए य) विशेषक नाम में छाती के बल चलने वाले स्थलचर पांचेन्द्रिय तिर्यक् योनिक और भुजा के बलसे

चलने वाला परिसर्प स्थलचर पांचेंद्रिय तिर्यग् योनिक् जीव हैं ४० (एतेवि समुच्छिमा पज्जत्तगा अपज्जत्तगा गभ्भ वक्कंतिय विपज्जत्तगाय अपज्जत्तगाय भाणियव्वा) फिर इन के भी समूर्छिम अविशेषक पद में रख कर पर्याप्त और अपर्याप्त गर्भ से उत्पन्न होने वालों के भी पर्याप्त अपर्याप्त भेद जानने चाहिए ४६ अथ खेचरों के विषय में विवर्ण किया जाता है (अविसेसिए खेयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिय) अविशेषक नाम में खेचर पांचेंद्रिय तिर्यग् योनिक् शब्द है और (विसेसिए समुच्छिमखेयरपंचेंद्रियतिरिक्खजोणिय) विशेषक में समूर्च्छिम खेचर पांचेंद्रिय तियर्ग् योनिक हैं ४७ फिर (अविसेसिए समुच्छिम खहयर पंचेंद्रियतिरिक्खजोणिए) अविशेषक में समूर्च्छिम खेचर पांचेंद्रिय तिर्यग् योनिक हैं और (विसेसिए पज्जत्तए समुच्छिमखेयरपंचेंदियतिरिक्ख. जोणिए य) विशेषक में पर्याप्त समूर्च्छिम खेचर पांचेंद्रिय तियग् योनिक हैं ४८ फिर (अविसेसिए गभ्भ वक्कंतियखेयरपंचेंद्रियातिरिक्खजोणिए) अविशेषक में गर्भ से उत्पन्न होने वाले खेचर पांचेंद्रिय तिर्यक योनिक् जीव हैं और (विसेसिए पज्जत्तए गभ्भ वक्कंतिय खेयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिए य अपज्जत्तए गभ्भ वक्कंतियखेयरपंचेंद्रियतिरिक्खजोणिए य) विशेषक में गर्भ से उत्पन्न होने वाले खेचर पांचेंद्रिय तिर्यग् योनिक पर्याप्त और अपर्याप्त रूप दो भेद हैं इस प्रकार से तिर्यग् योनि के जीवों का विशेष और अविशेष नाम से विवर्ण किया गया है अब मनुष्य विषय विवर्ण किया जाता है ॥

भावार्थ—अविशेष नाम में पांचेन्द्रिय तिर्यक स्थापन करके विशेष नाम में फिर उनके जलचर स्थलचर और खेचर इस प्रकार के तीनों भेद विवर्ण किये गये हैं और फिर प्रत्येक २ के समूर्छिम और गर्भज पर्याप्त और अपर्याप्त इस प्रकार के चार चार भेद कहे हैं किन्तु स्थलचर के भेदों में चार पाद वाले जीव और सर्पादि भी ग्रहण किये गये हैं इनका पूर्ण विवर्ण पदार्थ में लिखा गया है क्यूंकि अविशेष नाम सामान्य अर्थ का सूचक है और विशेष नाम में उसके भेद वर्णन किये जाते हैं सो यह सर्व जलचर स्थलचर खेचर समूर्च्छिम और गर्भज पर्याप्त और अपर्याप्त प्रथम भेद को अविशेष नाम में रखकर फिर विशेष नाम में उनके भेद विवर्ण करने चाहिये अब मनुष्य जाति के विषय में वर्णन किया जाता हैं ॥

अथ मनुष्याणां भेदाना माह ।

अविसेसिओ मणुस्सो विसेसिओ समुच्छिम मणुस्सो य गब्भवक्कंति य मणुस्सोय ५० अविसेसिउ समुच्छिममणुस्सो विसेसिउ पज्जत्तउय अपज्जत्तउय ५१ अविसेसिउ गब्भ वक्कंतिय मणुस्सो विसेसिउ कम्मभूमिगो अकम्मभूमिउ य अंतर दीवगो य संखेज्जवासाउय असंखेज्जवासाउय पज्जत्तउ अपज्जत्तउ भेदो भाणियव्वो ५७-८५ ॥

पदार्थ-(अविसेसिओ मणुस्सो) अविशेषक नाम में मनुष्य शब्द है किन्तु (विसेसिओ) विशेष नाम में (समुच्छिम मणुस्सो य गब्भ वक्कंतियमणुस्सो य) समूर्च्छिम मनुष्य और गर्भ से उत्पन्न होने वाले मनुष्य हैं । अर्थात् गर्भज मनुष्य हैं ५० फिर (अविसेसिउ समुच्छिम मणुस्सो) अविशेष नाम में समूर्च्छिम मनुष्य हैं और (विसेसिओ पज्जत्तउ य अपज्जत्तउ य) विशेष नाम में पर्याप्त और अपर्याप्त उसके भेद हैं ५१ और (अविसेसिओ गब्भ वक्कंतियमणुस्सो) अविशेष गर्भज मनुष्य है किन्तु (विसेसिओ कम्म भूमिगो अकम्म भूमिउय अन्तरदीवगो य संखेज्जवासाउय असंखेज्जवासाउय पज्जत्ता अपज्जत्तउ भेउ भाणियव्वो) विशेष नाम में कर्म भूमिज मनुष्य १ अकर्म भूमिक मनुष्य २ और अन्तर्द्वीपों के मनुष्य ३ फिर संख्यात वर्षों की आयु वाले ४ और असंख्यात वर्षों की आयु वाले ५ फिर पर्याप्त और अपर्याप्त रूप यह दोनों भेद सर्व प्रकार से कहने चाहिएं अर्थात् मनुष्यों के भेदों में जो मनुष्य पंच दश क्षेत्रों में उत्पन्न होते हैं उनको कर्म भूमिक कहते हैं और तीस क्षेत्रों में उत्पन्न होने वालों को अकर्मक भूमिक कहते हैं ५६ अपितु ५६ अन्तर्द्वीपों के मनुष्य भी युगलिय संज्ञक हैं इन सर्व मनुष्यों के भेद पूर्ववत् करने चाहियें ५७ अब देवों के विषय में व्याख्यान करते हैं ॥

भावार्थ-अविशेष नाम में मनुष्य पद है विशेष नाम में समूर्च्छिम मनुष्य और गर्भज मनुष्य उनके भेद हैं । इसी प्रकार पर्याप्त और अपर्याप्त भेद भी

जान लेने चाहियें किन्तु जैसे सम्मूर्च्छिम मनुष्यों के भेद हैं उसी प्रकार गर्भज मनुष्यों के भेद भी जानने चाहिये अपितु विशेष इतना ही है कि गर्भज मनुष्यों के तीन भेद हैं कर्मभूमिक १ अकर्मभूमिक २ और अन्तरद्वीपों के मनुष्य ३ फिर इनके भी संख्यात वर्षों की आयु वाले और असंख्यात वर्षों की आयु वाले पर्याप्त और अपर्याप्त इत्यादि भेद वर्णन करने चाहियें। मनुष्यों के पश्चात् अब देवों का विवर्ण किया जाता है॥

अथ देवों विषय।

(अविसेसिउ देवो विसेसिउ भवणवासी वाणमंतर जोइसिय बिमाणिय ५८ अविसेसिउ भवणवासी विसेसिउ असुर कुमारो १ एवं नाग २ सुवन्ना ३ विज्जु ४ अणग्गि ५ दीव ६ उदहि ७ दिसा ८ वाउ ६ थणिउ १० ॥ ५६ ॥ सव्वेसिंपि अविसेसिउय विसेसिउय पज्जत्तग अपज्जत्तग भेया भाणियव्वो ६६ अविसेसिउ वाणमंतरो विसेसिउ पिसाय १ भूय २ जक्खे ३ रक्खसे ४ किन्नरे ५ किंपुरिसे ६ महोरगे ७ गंधव्वे ८ ॥ ६१ ॥ एतेसिंपि अविसेसिए विसेसिए पज्जत्ता अपज्जत्ताया भेया भाणियव्वा ७८ अविसेसिउ जोइसिओ विसेसिउ चंद १ सूर २ ग्गह ३ नक्खत्त ४ तारा ५ ॥ ७६ ॥ एते सिंपि अविसेसिए विसेसिए पज्जत्तय अपज्जत्तय भेदा भाणियव्वा ८० अवसेसिउ विमाणिओ विसेसिओ कप्पोवउयकप्पा तइउय ८४ अविसेसिओ कप्पोवउय विसेसिओसुहम्माए १ इसाणेय २ सणंकुमारेय ३ माहिंदए ४ बंभलोए ५ लंतए ६ महासुक्कय ७ सहस्सारे ८ आणय ६ पाणय ए १० आरणए ११ अच्चुयए १२ एतेसिंपि य अविसेसिय विसेसियं पज्जत्तय अपज्जत्तए भेदा भाणियव्वा ६८ अविसेसि

उ कप्पातइय विंसेसिउ गेविज्जउय अणुत्तरोववाइउय ६१ अविसेसिउ गेविज्जउ विसेसिउ हेट्ठिमगेविज्जए मज्झिमगेविज्जए उवरियगेवज्जएय ६३ अवसेसिए हेट्ठिमगेविज्जए विसेसिए हेट्ठिमहेट्ठिमगेवेज्जए हेट्ठिममज्झिमगेवेज्जए हेट्ठिम उवरिमगेवेज्जए ६४ अविसेसिए मज्झिमगेवज्जए विसेसिए माज्झिमहेट्ठिमगेवेज्जए मज्झिम मज्झिमगेवेज्जए मज्झिम-उवरिमगेवेज्जए ६५ अविसेसिए उवरिमगेवेज्जए विसेसिए उवरिमहेट्ठिमगेवेज्जए उवरिम मज्झिमगेवज्जए उवरिम उवरिमगेवेज्जए ६६ एतेसिंपिं सव्वेसिं अविसेसिए विसेसिए पज्जत्तएअपज्जत्तए भेया भाणियव्वा १०५ अविसेसिय अणुत्तरोववाइए विसेसिय विजय वेजयंतेए जयंतेए अपराजिए सव्वट्ठसिद्धय १०६ एतेसिंपि सव्वेसिं अविसेसियविसेसिय पज्जत्तयअपज्जत्तएभेया भाणियव्वा ११ । ११ अविसेसिए अजीवदव्वे विसेसिए धम्मत्थिकाय अधम्मत्थिकाय आगासत्थिकाय पोग्गलत्थिकाय अद्धासमय? अविसेसिए पोग्गलत्थिकाय विसेसिए परमाणु पोग्गले दुप्पएसिय त्तिपएसिय जाव दसपएसिए जाव अणंत पएसिये २ । २० सेत्तं दुनामे ८६ ॥

पदार्थ-(अविसेसिउ देवो) अविशेषक नाम में देव शब्द है किन्तु (विसेसिउ भवणवासी वाणमंतर जोइसिए वेमाणिय) विशेषक नाम में चारों प्रकार के देव हैं जैसे कि भवनपति १ वाणव्यंतर २ ज्योतिषी ३ वैमानिक ४-५८ फिर (अविसेसिउ भवणवासी) अविशेष नाम में भवनपति देव हैं और (विसेसिउ असुर कुमारो १ एवं नाग २ सुवन्ना ३ विज्जु ४ अग्गि ५ दीव ६ उदहि ७ दिसा ८ वाउ ६ थणिउ १०) विशेषक नाम में भवनपतियों की दश प्रकार की जातिग्रहण की गई है जैसे कि असुरकुमार १ नागकुमार २ सुपर्णकुमार ३ विद्युत्कुमार ८ वायुकुमार ६ स्तनितकुमार १० । ५६ ॥ (सव्वेसिंपि

अविसेसिउय विसेसिउय पज्जत्तग अपज्जत्तग भेया भाणियव्वा) अपि शब्द समुच्चयार्थ में है इसलिये इन सर्व भेदों के अविशेष नाम और विशेष नाम पर्याप्तअपर्याप्त यह सर्व भेद जानने चाहिये अथवा कहने चाहिये जैसे कि असुरकुमार अविशेष नाम है और पर्याप्त अपर्याप्त यह दोनों भेद विशेष नाम में ग्रहण किये गये हैं इसी प्रकार दशों जातियों के भेद जान लेने चाहियें ६९ अब व्यंतरों के विषय कथन किया जाता है अविसेसिउ वाणमंतरो) अविशेष नाम में वाणव्यंतर शब्द है और (विसेसिउ) विशेषक नाम में व्यंतरों के भेद विवर्ण किए गये हैं जैसे कि–(पिसाए) पिशाच जाति के व्यंतर इसी प्रकार (भूय) भूत २ (जक्खे रक्खसे) यक्ष ३ राक्षस ४ (किन्नरे किं पुरिसे) किंनर ५ किं पुरुष ६ महोरगेगंधव्वे) महोरग ७ गंधर्व ८ यह आठ जाति के व्यंतर प्रधान कहलाते हैं इसलिए इनका नाम सूत्र में दिया गया है और अष्ट अन्य परायादि जाति के व्यंतर समान होते हैं इसी लिए उनका नामोल्लेखन ही हुआ है ७० अपितु (एतेसिंपि अविसेसिउ विसेसिउ पज्जत्ता अपज्जात्ताय भेया भाणियव्वा) इनके भी अविशेष नाम और अविशेष नाम पर्याप्त अपर्याप्त इत्यादि प्राग्वत् भेद कहने चाहिए जैसेकि पिशाच जाति के व्यंतर अविशेष नाम हैं और विशेष नाम में पर्याप्त और अपर्याप्त भेद कहने चाहिये ७८ और (अविसेसिउ जोइसिउ) अविशेष नाम में ज्योतिष्क देव हैं किन्तु (विसेसिउ चंद सूर गाह नक्खत्त तारा) विशेषक पद में चंद्र १ सूर्य २ ग्रह ३ नक्षत्र ४ और तारे ५ हैं ७९ फिर (एतेसिंपि अविसेसिउ विसेसिउ पज्जत्तय अपज्जत्तय भेदा भाणियव्वा) इनके भी अविशेष और विशेष पर्याप्त और अपर्याप्त भेद कहने चाहिये जैसेकि–चन्द्र शब्द अविशेषक है और पर्याप्त अपर्याप्त उसके भेद विशेषक हैं इसी प्रकार सर्व की सम्भावना कर लेनी चाहिये ८४ और (अविसेसिउ वेमाणिउ) अविशेषक नाम में वैमानिक शब्द है अतः (विसेसिउ कप्पोवउय कप्पातइउय) विशेषक नाम में कल्प देवलोक और कल्पातीत देवलोग ग्रहण किये जाते हैं ८५ फिर (अविसेसिउ कप्पोवउय) आविशेष नाम में कल्प देव हैं अपितु (विसेसिउ सुहम्माए १ इसाणेसंणकुमारे माहिंदए विशेषक नाम में द्वादश कल्प देवलोक हैं जैसेकि–सुधर्मदेवलोक १ ईशानदेवलोक २ सनत्कुमार देवलोक ३ महेन्द्रदेवलोक ४ (बंभलोए लांतए महासुकए सहस्सारे) ब्रह्म देवलोक ५

लांतक देवलोक ६ महाशुक्र देवलोक ७ सहस्त्रार देवलोक ८ (आणयए पाणयए आरणए अच्चुयए) आनत देवलोक ६ प्राणत देवलोक १० आरण्य देवलोक ११ और अच्युत देवलोक १२। ८६ ॥ फिर इनके भी (एतेसिंपि अविसेसिउ विसेसिय पज्जत्तय अपज्जत्तय भेदा भाणियव्वो) अविशेष नाम और विशेष नाम पर्याप्त और अपर्याप्त रूप भेद कहने चाहियें ६८ फिर (अविसेसिउ कप्पातइउ) अविशेष नाम में कल्पातीत स्वर्ग हैं किन्तु (विसेसिउ गेविज्जउयं अणुत्तरो ववाइउय) विशेष नाम में ग्रैवेयक और अनुत्तरो वैमानवासी देव हैं ६६ अतः फिर भी (अविसेसिउ गेविज्जउ) अविशेष नाम में ग्रैवेयक हैं और (विसेसिउ हेट्ठिमहेट्ठिमगेविज्जउ) विशेपक नाम में अधः अधो गैवेयक १ (हेट्ठि मज्झिम गेविज्जउ) अधो मध्यम ग्रैवेयक (हेट्ठिम उवरिमगेवेज्जउ) नीचे के उपरला ग्रैवेयक फिर (अविसेसिए हेट्ठिमगेविज्जउ) अविशेष नीचे का ग्रैवेयक है और (विसेसिए हेट्ठिमग्रेवेज्जउ हेट्ठियमज्झिमगेवज्जउ हेट्ठिमउवरिमगेवेज्जए) विशेपक नाम में नीचला ग्रैवेयक १ नीचे के मध्यम ग्रैवेयक २ नीचे के उपरला ग्रैवेयक ३ फिर (अविसेसिए मज्झमगेवेज्जउ) अविशेष नाम में मध्यम ग्रैवेयक हैं किन्तु (विसेसिए मज्झिम हेट्ठिमगेवेज्जउ मज्झिम मज्झिम गेवेज्जए मज्झिमउवरिमगेवेज्जए) विशेष नाम में मध्यम के नीचे का ग्रैवेयक और मध्यम के मध्यम का ग्रैवेयक, मध्यम के उपर का ग्रैवेयक फिर (अविसेसिउ उवरिमगेवेज्जए) अविशप नाम में उपरला ग्रैवेयक है (विसेसिउ उवरिम हेट्ठिमगेवेज्जए उवरिम मज्झिम गेवेज्जए उवरिम उवरिम गेवेज्जए) और विशेष नाम में उपर के नीचे का ग्रैवेयक, फिर उपर के मध्यमका ग्रैवेयक और ऊपर के ऊपर का ग्रैवेयक ३ । १०० ॥ (एतेसिंसव्वेसिं अविसेसिउय विसेसिय पज्जत्तय अपज्जत्तय भेदाणेयव्वा) फिर इन के भी अविशेष और विशेष पर्याप्त और अपर्याप्त रूप भेद सर्व प्राग्वत् कहने चाहिये १०६ फिर (अविसेसिउ अणुत्तरोववाइउ) अविशेपक नाम में अणुत्तरोपातिक देव हैं किन्तु (विसेसिउ विजय विजयंत जयंत अपराजित सव्वट्ठसिद्धउ) विशेपक नाम में विजय १ विजयंत २ जयंत ३ अपराजित ४ सर्वार्थसिद्ध ५ यह पांच ही लोक देव हैं फिर (एतेसिंपि सव्वेसिं अविसेसिउ विसेसिय पज्जत्तए अपज्जत्तय भेदा भाणियव्वा) इन सर्वों के अविशेपक नाम और

विशेषक नाम पर्याप्त और अपर्याप्त नाम यह सर्व भेद कहने चाहिये क्युंकि समान भेद अविशेष नाम होता है और उसके भेदों को विशेष नाम कहते हैं ११५ ॥

अब अजीव द्रव्य के विषय में विवर्ण किया जाता है जैसेकि (अविसेसिउ अजीवदव्वं) अविशेष नाम में अजीव द्रव्य है और (विसेसिउ धम्मात्थिकाय अधम्मत्थिकाय आगासत्थिकाय पोग्गलत्थिकाय अद्धासमय,) विशेष नाम में धर्मास्तिकाय १ अधर्मास्तिकाय २ आकाशास्तिकाय ३ पुद्गलास्तिकाय और समय (काल) फिर (अविसेसिउ पोग्गलत्थिकाय) अविशेष नाम में पुद्गलास्ति काय है (विसेसिए परमाणु पोग्गले दुप्पएसिए तिपएसिए जावदस पएसिए जाव अणंतपएसिए) और विशेषक नाम में परमाणु पुद्गल द्विप्रदेशिक स्कंध त्रिप्रदेशिक स्कंध यावत् दश प्रदेशिक स्कंध संख्यात प्रदेशिक स्कंध असंख्यात प्रदेशिक स्कंध यावत् अनन्त प्रदेशिक स्कंध यह सर्व भेद विशेष नाम के हैं (सेत्तं दुनामे) अथ शब्द अथानन्तर के विषय में है और द्विनाम का विवर्ण पूर्ण हुआ इसी को द्विनाम कहते हैं ॥

भावार्थः—अविशेष नाम पद में देव शब्द ग्रहण किया गया है अतः विशेष नाम में चारों जाति के देव हैं फिर अविशेष नाम में भवनपति देव रख कर विशेष नाम में उनकी संख्या की गई है सो इसी प्रकार फिर उनके पर्याप्त अपर्याप्त भेद कथन किये गये हैं जैसे भवन पतियों का विवर्ण है उसी प्रकार वाण व्यंतर ज्योतिषी वैमानिक देवों के भी भेद जानने चाहिये अपितु आठ जाति के व्यंतर ५ ज्योतिषी २६ वैमानिक देवों के भेद हैं यह सर्व जीव द्रव्य के ही विशेष और अविशेष नाम से ११५ सूत्र विवर्ण किये गये हैं किन्तु अजीव द्रव्य के अविशेष नाम में धर्मास्तिकायादि पांच भेद हैं क्योंकि जीव द्रव्य का विवर्ण तो पहिले किया जा चुका है और अविशेष नाम में पुद्गलास्तिकाय के परमाणु पुद्गल से लेकर अनन्त प्रदेशिक स्कंध पर्यन्त विवर्ण है क्योंकि यह सर्व पारिणामिक भाव होने से विशेष नाम में ग्रहण किये गये हैं अतः धर्मास्तिकायादि अपने शुद्ध स्वभाव में स्थित हैं इसलिये उनके भेद नहीं कहे गये सो यह केवल दोनों सूत्र अजीव द्रव्य के हैं और इसी स्थान पर द्विनाम का विवर्ण भी पूरा किया गया है इसके अनंतर अब तीन नाम का व्याख्यान करते हैं ॥

॥ अथ त्रिनाम विषय ॥

(सेकिंतं तिनामे २ तिविहे पराणत्ता तंजहा, दव्वनामे गुणनामे २ पज्जवनामे सेकिंतं दव्वनामे २ छव्विहे पराणत्ते तंजहा धम्मात्थिकाय अधम्मात्थिकाय आगासत्थिकाय ३ जीवत्थिकाय ४ पोग्गलत्थिकाय ५ अद्धासमयए सेत्तं दव्वनामे सेकिंतं गुणनामे २ पंचविहे पराणत्ते तंजहा वन्ननामे गंधनामे रसनामे फासनामे संठाणनामे सेकिंतं वन्ननामे पंचविहे पराणत्ते तंजहा कालवन्न परिणामे नीलवन्न परिणामे लोहियवन्न परिणामे हलिद्धवन्न परिणामे सुकिलवन्न परिणामे सेत्तंवन्न नामे सेकिंतं गन्धनामे २ दुविहे पं० तं० सुभिगन्धनामे य दुभ्भिगंधनामे से त्तं गंधनामे सेकिंतं रसनामे २ पंचविहे पं० तं० तित्तरसनामे कडुयरसनामे कसायरसनामे अम्बिलरसनामे मुहुररसनामे से त्तं रसनामे सेकिंतं फासनामे २ अट्ठविहे पराणत्तं तं० कक्खड कासनामे मउयफासनामे गरुअफासनामे लहुअफासनामे सीयोफासणामे उसिण फासनामे निद्धफासनामे लुक्खफासनामे से त्तं फासनामे सेकिंतं संठाणपरिणामे २ पंचविहे पं० तं० परिमराडलसंठाण नामे वट्टसंठाणनामे तंसनामे चउरंसनामे आयासंठाण नामे सेत्तंसंठाणनामे सेत्तं गुणनामे सेकिंतं पज्जवनामे २ अणेगविहे पं० तं० एगगुणकालए दुगणकालए जाव दसगुणकालए संखेज्जगुणकालए असंखेज्जगुणकालए अणंतगुणकालए एगगुणनीलए दुगुणनीलए तिगुण नीलए जावदसगुणनीलए जावअणंतगुणनीलए एवंलोहि-

यहालिद्दसुक्कलावि भाणियव्वा एगगुणसुरभिगंधे दुगुणसुरभिगंधे तिगुणसुरभिगंधे जावदसगुणसुरभिगंधे संखेज्जगुणसुरभिगंधे असंखेज्जगुणसुरभिगंधे अणंतगुणसुरभिगंधे एवंदुरभिगंधो भाणियव्वा एगगुणातित्ते दुगुणतित्ते तिगुणतित्ते जावदसगुणतित्ते संखेज्जगुणातित्ते असंखेज्जगुणतित्ते अणंतगुणतित्ते एवंकडुयकसायअम्बिलमहुरा भाणियव्वा एगगुणकक्खडे दुगुणकक्खडे तिगुणकक्खडे जावदसगुणकक्खडे संखेज्जगुणकक्खडे असंखेज्जगुणकक्खडे अणंतगुणकक्खडे एवंमउयगरुयलहुअसीय उसीणनिद्धलुक्खे भाणियव्वा सेत्तं पज्जवनामे ॥

पदार्थ-(सेकिंतं तिनामे २ तिविहे पं० तं० दव्वनामे गुणनामे पज्जवनामे) (प्रश्न) तीन नाम किसे कहते हैं। (उत्तर) तीन नाम भी तीनों प्रकार से वर्णन किया गया है जैसेकि-द्रव्यनाम गुणनाम पर्यायनाम (सेकिंतं दव्वनामे २ छव्विहे पं० तं०) (प्रश्न) द्रव्यनाम कितने प्रकार से कहा गया है (उत्तर) द्रव्य नाम षट प्रकार से वर्णन किया है जैसे कि-(धमत्थिकाय) धर्मास्तिकाय (अधमत्थिकाय) अधर्मास्तिकाय २ (आगासत्थिकाय) अकाशास्तिकाय ३ (जीवत्थिकाय) जीवास्तिकाय ४ (पोग्गलत्थिकाय) पुद्गलास्तिकाय ५ और (अद्धासमय) कालद्रव्य (सेत्तं दव्वनामे) यही द्रव्य नाम है अर्थात् षट द्रव्यों का बोध होना और गति स्थिति अवगाह स्थान चैतन्यता संयोग वियोग परिमाणुओं का होजाना वर्तना यह षट ही इन के लक्षण हैं सो इन्हीं षट् द्रव्यों को द्रव्य नाम कहते हैं (सेकिंतं गुण नामे २ पंच विहे पंणतें तंजहा) (प्रश्न) गुणनाम किसे कहते हैं (उत्तर) गुणनाम पांच प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसेकि-(कालवन्ननामे) कृष्णवर्ण नाम (नीलवन्ननामे) नीलवर्ण नाम (लोहियवन्ननामे) रक्तवर्ण नाम (हालिद्दवन्ननामे) पीतवर्ण नाम (सुक्किलवन्ननाम) श्वेतवर्ण नाम (सेत्तंवन्ननामे) यही वर्ण नाम है क्योंकि द्रव्यों के मुख्यतया पांच ही वर्ण है जैसेकि कृष्ण १ नील २ रक्त ३ पीत ४ और श्वेत ५ (सेकिंतं गधनामे) (प्रश्न)

गंध नाम किसे कहते हैं (उत्तर) गंधनाम (दुविहे पं० तं०) दो प्रकार से कथन किया गया है जैसेकि--(सुरभिगंधनामे) एक सुगंध और द्वितीय (दुरभिगंधनामेय सेतंगंधनामे) दुर्गन्ध नाम अप शब्द प्राग्वत् है सो इसी को गंध नाम कहते हैं (सेकिंतं रस नामे २ पंचविहे पंणते तंजहा (प्रश्न) रसनाम किसे कहते हैं (उत्तर) रसनाम भी पांच प्रकार से कहा गया है जैसे कि-(तित्तरस नामे) श्लेष्मादि रोगों को हरण करने वाला तिक्तरस होता है (कडुयरस नामे) कंठ रोगादि के विध्वंस करने वाला कटुकरस होता है (कसाय रसनामे) कषायलारस रक्तविकारादि के दोषों को दूर करता है (अंबिल रसनामे) खट्टारस जो अग्निदीपक होता है (महुररसनामे) मधुररस जो पित्तादि के हरण करने वाला है इनका विवर्ण वैद्यक शास्त्र में सविस्तर कथन किया गया है क्योंकि यह पांच रस मुख्यता से संसार में हैं इसलिये इन का विवर्ण किया गया है किन्तु जो लवण रस भी एक प्रकार से माना जाता हैं वह इनके संयोग से ही उत्पन्न होता है इसलिये उसकी पृथक् भाव से विवक्षा नहीं की अब स्पर्श विषय प्रश्न करते हैं (सेकिंतं फासनामे २ अट्ठविहे पं० तं० (प्रश्न) स्पर्शनाम किसे कहते हैं (उत्तर) स्पर्शनाम आठ प्रकार से है जैसे कि-(कक्खुडफासनामे) कर्कस्पर्शनाम जैसे पाषाणादि १ (मउय फासनामे) मृदुस्पर्शनाम जैसे नवनीतादि पदार्थों में मृदुता होती है उसे मृदुस्पर्शनाम कहते हैं (गरुयफास नामे) गुरुस्पर्श नाम उसे कहते हैं जो पदार्थ उपरि प्रक्षेप किये हैं फिर वह अधोगमन स्वभाव वाले हैं जैसे लवण पाषाण अपादि ३ (लहुयफासनामे) लघुस्पर्शनाम जो पदार्थ लघु हैं जैसे कि अर्कतूलादि आक और सीमल आदि की रूई जिन्हों का ऊर्ध्वगमन स्वभाव हो ॥ ४ ॥ (सीयफासनामे) जो शीतस्पर्शनाम जैसे हैं मादि पदार्थ हैं ५ (उसणफासनामे) उष्णस्पर्शनाम जैसे अग्न्यादि पदार्थ हैं (निद्धफास नामे) स्निग्धस्पर्शनाम जिस के कारण से पदार्थ एकत्व होजावे जैसे तैलादि फिर (लुक्खफासनामे) रुक्ष स्पर्श नाम जैसेकि--भस्मादि पदार्थ हैं (सेत्तं फासनामे) यही आठ प्रकार स्पर्श नाम है क्योंकि यह सर्व पौद्गलिक गुण हैं अब संस्थानों के विषय में कहते है (सेकिंतं संठाण नामे पंचविहे पं० तं०)

१--गुरौ केवा ॥ प्रा० व्या० अ० ८ पाद १ सूत्र १०९ ॥

गुरौ स्वार्थे केऽसति आदेरतो अद्वा भवति ॥

(प्रश्न) संस्थान किसे कहते हैं (उत्तर) संस्थान (आकृति) पांच प्रकार से कहा गया है जैसे कि (परिमंडल संठाणनामे) परिमंडल संस्थान गोल आकृति जैसे चूड़ी (वट्टनामे) वृत्ताकार मोदकवत २ (तंस संठाणनामे) त्र्यंसाकार त्रिकोण जैसे सिंघाड़ा (चउरंस संठाणनामे) चतुरंसाकार चतुष्कोण (-आयत संठाणनामे) दीर्घाकार दंडवत् (सेत्तं संठाणनामे यही संस्थान नाम है (सेत्तं गुणनामे) और इसी को गुण नाम कहते हैं अत्र पर्याय विषय में कहते हैं (सेकिंतं पज्जवनामे अणेगविहे पं० तं०) (प्रश्न) पर्याय नाम किसे कहते हैं (उत्तर) पर्याय नाम अनेक प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि- जो द्रव्य के समान सदा स्थिर नरहे उसे पर्याय कहते हैं अथवा जो द्रव्य को अवस्थांतर करे उसे पर्याय कहते हैं तथा जो पूर्व पर्याय सर्वथा द्रव्य से भिन्न हो जावे और नूतन उत्पन्न हो उसे भी पर्याय कहते हैं जैसे कि-सुवर्ण के आभूषणादि नाना प्रकार के पर्याय धारण करते हैं सो यह पर्याय अनेक प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि-(एगगुणकालए) एकगुण कृष्ण द्रव्य सर्व द्रव्यों की अपेक्षा से है जैसे असत् कल्पना द्वारा यदि सर्व कृष्ण द्रव्य एकत्र किया जाय फिर उसके भेद किए जाएं उस द्रव्य की अपेक्षा एक परमाण्वादि द्रव्य एकगुण कृष्ण वर्ण कहा जाता है इसी प्रकार (दुगुणकालए) द्विगुण कृष्णवर्ण (तिगुणकालए) त्रिगुणकृष्णवर्ण (जावदशगुणकालए) यावत्दशगुण कृष्णवर्ण (संखेज्ज कालए) संख्यातगुण कृष्णवर्ण (असंखेज्जगुण कालए) असंख्यातगुण कृष्णवर्ण (अणंतगुण कालए) अनंतगुण कृष्ण वर्ण इसी प्रकार (एगगुण नीलए) एकगुण नीलवर्ण (दुगुण नीलए) द्विगुण नीलवर्ण (तिगुणनीलए) त्रिगुण नीलवर्ण (जावदसगुण नीलए) यावत्दशगुण नीलवर्ण (जावअणंतगुण नीलवण्ण) फिर संख्यात गुण नीलवर्ण असंख्यातगुण नीलवर्ण अनंतगुण नीलवर्ण (एवं लोहिंग हालिद्दसुक्कलावि भाणियव्वा) इसी प्रकार रक्तवर्ण पीतवर्ण और शुक्लवर्ण के भी भेद जानने चाहिए और (एगगुणसुरभिगंधे दुगुणसुरभिगंधे तिगुण सुरभिगंध जावदसगुणसुरभिगंधे) गंध की अपेक्षा से एकगुणसुगंध द्विगुण सुगंध त्रिगुणसुगंध यावत्दसगुणसुगंध भी होती है तथा (संखेज्जगुण सुरभिगंध) संख्यातगुण सुगंध (असंखेज्जगुण सुगंध) असंख्यातगुण सुगंध (-अणंतगुण सुरभिगंधे) अनंतगुण सुगंध (एवं दुरभिगंध) इसी प्रकार दुर्ग-

न्ध के भी भेद जानने चाहिये। अब रसों का पर्याय वर्णन करते हैं (एगगुण-तित्ते) एक गुण तिक्त रस (दुगुण तित्ते तिगुण तित्ते जाव दस गुणतित्ते (द्विगुण तिक्त रस त्रिगुण तिक्त रस यावत् दश गुण तिक्त रस (संखेज्ज गुणतित्ते असंखेज्ज गुण तित्ते अणंतगुण तित्ते) संख्यात गुण तिक्त रस असंख्यात गुण तिक्त रस अनंतगुण तिक्त रस (एवं कडुय कसाय अंबिल्ले महुराविभाणि यव्वा) इसी प्रकार कटु रस कषाय रस खट्टा रस और मधुर रसों के भेद भी जानने चाहिये॥

अथ स्पर्श विषय।

(एगगुण कक्खडे दुगुणकक्खडे तिगुणकक्खडे जावदसगुण कक्खडे संखेज्जगुण कक्खडे असंखेज्जगुण कक्खडे अणंतगुण कक्खडे) एक गुण कर्कश-स्पर्श द्विगुण कर्कशस्पर्श त्रिगुण कर्कशस्पर्श यावत् दश गुण कर्कशस्पर्श इसी प्रकार संख्यात गुण कर्कशस्पर्श असंख्यात गुण कर्कशस्पर्श अनंत गुण कर्कशस्पर्श (एवं मउय गरुय लहुय सीयउ सिण निद्धलुक्खा भाणियव्वा सेत्तं पज्जव नामे) इसी प्रकार मृदु स्पर्श गुरु स्पर्श लघु स्पर्श शीत स्पर्श उष्ण स्पर्श स्निग्ध स्पर्श रुक्ष स्पर्श इन सबों के भेद जानने चाहिये क्योंकि गुण कहने से यह तात्पर्य है कि पुद्गल द्रव्य गुण युक्त है और पर्याय परिवर्तन अवश्य होता रहता है सामान्य गुण द्रव्यों में अवश्य रहता है पुद्गल द्रव्य की पर्याय इसीलिये दिखलाई गई है कि जिज्ञासुओं को शीघ्र बोध होजावे क्योंकि यह द्रव्यरूपी होने से सब के प्रत्यक्ष है किन्तु धर्मादि द्रव्य अबोध प्राणियों के परोक्ष हैं इसी वास्ते उनकी पर्याय नहीं कथन कीगई अपितु सहवर्ती होने पर गुण शब्द ग्रहण किया गया है सो इसी का नाम पर्याय रूप तृतीय भेद है।

भावार्थ—जो पदार्थ हैं वे सर्व तीनों प्रकार से हैं जैसेकि—द्रव्यनाम गुणनाम और पर्याय नाम क्योंकि द्रव्य होनेपर गुण पर्याय सिद्ध होते हैं इसलिए ए तीन नाम में इन तीनों का ग्रहण किया गया है सो द्रव्य पद् प्रकार से हैं जो पूर्व लिखे गए हैं किन्तु पुद्गल द्रव्य पांच प्रकार से गुण कथन किए हैं जैसेकि—वर्ण १ गंध २ रस ३ स्पर्श ४ और संस्थापन ५ वर्ण पांच प्रकार के होते हैं जैसेकि कृष्ण १ नील २ रक्त ३ पीत ४ और श्वेत ५, गंध दो प्रकार है सुगन्ध और दुर्गन्ध, रस के पांच भेद हैं तिक्त रस १ कटुक रस २ कषाय रस ३ खट्टा रस

४ मधुर रस ५, स्पर्श के ८ भेद हैं कर्कशस्पर्श, मृदुस्पर्श, गुरुस्पर्श, लघुस्पर्श, शीतस्पर्श, उष्णस्पर्श, स्निग्धस्पर्श, रूक्षस्पर्श, और संस्थान के भी पांच ही भेद हैं जैसकि–परिमंडल संस्थान १ वृत्ताकार संस्थान २ त्र्यंससंस्थान ३ चतुरस्रसंस्थान ४ आयातसंस्थान ५ इनको गुणनाम कहते हैं क्योंकि पुद्गल द्रव्य के यही गुण हैं और इसी के होने से पुद्गल द्रव्य रूपी माना जाता है और पर्याय नाम उसे कहते हैं जो द्रव्य से द्रव्यान्तर करे स्वअवस्था से अवस्थान्तर कर देवे अपितु द्रव्य के समान जो सदा स्थिर रहे उसे ही पर्याय कहते हैं किन्तु जो द्रव्यों को द्रव्यान्तर तो करदेवे और आप उत्पन्न होकर नाश भाव को प्राप्त होता रहे उसे पर्याय कहते हैं सो वह ऊपर लिखे हुए पुद्गल द्रव्यों के भेदों का एक गुण से लेकर अनंतगुण पर्यन्त वृद्धिरूप अथवा हानि रूप करे उसी का नाम पर्याय है पुद्गल द्रव्यों के गुणों का नाश कभी नहीं होता किन्तु पर्यान्तर अवश्य होता है सो संसार भर में जो द्रव्य हैं वह सर्व तीनों नामों के अन्तर्गत है इसलिये तीनों नामों का विवर्ण पूर्ण हुआ अपितु नाम शब्द नपुंसकलिंग है इसलिये जिज्ञासुओं को लिंग बोध भी सुगम होजाए इस बात के आश्रित होकर सूत्र तीनों लिंगों के अंतिम वर्णों के स्वरूप का सामान्य प्रकार से विवर्ण करते हैं ॥

अथ तीनों लिंग विषय ।

तं पुणनामंतिविहं इत्थिपुरिसंनपुसगंचेव एएसिं तिण्हंपिहु अंतंमि परूवणं वोछं १ तत्थपुरिसस्सअंता आई ऊ उ हवंति चत्तारितेचेव इत्थियाए हवंति उयार परिहीणा २ अंतिय इंतिय उंतिय अंताउ नपुंसगस्स बोधव्वा एएसिंति एहं पियवोच्छामि निदरिसणं एतो ३ आकारंतोराया इकारंतो गिरीय सिहरी ऊकारंतो विराहू दुमोउ अंताउ पुरिसाणं ४ आकारंतोमाला इकारंतोसीरीय लच्छीय उकारंतो जंबूवहुयअंताउ इत्थीणं ५ अंकारंत धन्नं इकारंतं नपुंसगं अच्छि उकारंतं पीलुमहुंचअंता नपुंसाणं सेत्तंतिन्नामे ।

पदार्थ-(तंपुण नाम तिविहं) फिर वह नाम तीन प्रकार से और भी कहा गया है जैसेकि-(इत्थिपुरिसंनपुमगंचेव) स्त्री नाम पुल्लिंग नाम नपुंसक नाम क्योंकि निश्चयही लिंग तीनों हैं इसलिये (एएसिंति रांह पिकु) अत्र इन तीनों के (अंतमि पखवणं वोच्छं १) (अंतिम वर्णों की प्रतिपादनता करूंगा अपि शब्द समुच्चयार्थ में है १ अथ अंतिम वर्णों के विषय में कहते हैं (तत्थ पुरिसस्स अंता) उन में प्रथम पुरुष लिंग के अंत में (आईऊउहवंतिचत्तारि) आकार-ईकार-ऊकार-उकार यह चार वर्ण होते हैं (तेचेव इत्थियाएहवंति) और वही उक्त वर्ण स्त्री लिंग के अंत में होते हैं किन्तु-(उकारपरिहीणा) उकारांत को वर्जना चाहिये क्योंकि प्राकृत में स्त्रीलिंग उकारान्त शब्द नहीं होते २ (अंतिय इंतिय उंतिय) आकारांत इकारांत उकारांत (अंताउ नपुंसगाणं बोधव्वा) अंत में वर्णन होते हैं नपुंसक लिंग में ऐसे जानना चाहिये (एएसिंति राहं पिवोच्छामि) इन तीनों के उदाहरण भी कहूंगा- अपि शब्द पूर्ववत् है (निदरसणएतो ३) और शब्द भेद भी दिखलाऊंगा इन तीनों के उदाहरण विषय में कहते हैं ॥

(आकारांतो राया) प्राकृत में आकारान्त राया शब्द है और (इकारंतो गिरीयसिहरीय) इकारांत गिरी शब्द और शिखरी शब्द हैं और (ऊकारांतो विराहू दुमांउ) ऊकारान्त विराहू शब्द और दुमांऊ शब्द हैं (अंताउ पुरिसाणं ४) अंत में यह शब्द पुरुष लिंग में कहे गये हैं ४ अथ स्त्री लिंग के उदाहरण कहते हैं (आकारंता माला❋) आकारांत शब्द स्त्रीलिंग में माला होता है और (ईकारंत सिरीय लच्छीय) ईकारान्त सिरी और लच्छी शब्द हैं. चपादपूरणार्थ में है (ऊकारांता जंबू वहूय) ऊकारांत जंबू और वहू शब्द हैं (अंताउ इत्थीणं ५) स्त्रीलिंग में उक्त वर्ण अन्तिम होते हैं ५ अब नपुंसक लिंग के उदाहरण दिखलाते हैं यथा-(अकारंतधन्नं) अकारान्त धन और धान्य शब्द हैं (इकारंत नपुंसगं अच्छिं) इकारांत नपुंसक लिंग में अच्छि शब्द हैं (उका-

---

५ श्रु-गमि-वदि-विदि-दृशि-मुचि-वचि-छिदि-भिदि-भुजां-ओच्छं-गच्छं- रोच्छं-वेच्छं दच्छं-मोच्छं-वोच्छं-छेच्छं-भेच्छं-भोच्छं ॥

आदीनां धातूनां भविष्यद्विविहितस्यन्तानां स्थाने सोच्छमिदयोपि पात्यन्ते ॥

❋ अमेन्द्राम यज्ञत्रिमकुम सुमग्रपुर भङ्गीयमे २ गेर शुक शुक्र में स्वरेश माला ॥

उणादि प्र० पा० २ सू. १८ ॥ मालाते । निपा-त्यनाप्त्यर्थं-माला। स्त्रीलिंगं स्रक् ॥

रांत पीलुं महुच) उकारान्त पीलु और मधु शब्द हैं (अंतानपुंसगाणं) यह सर्व नपुंसक लिंग के अंत में वर्ण होते हैं (सेत्तंति नामे) और यही तीन नाम का स्वरूप हैं ॥

भावार्थ-तीनों नामों के अंतरगत तीनों लिंगों का विवर्ण किया गया है और इनके अंतिम वर्ण बतला कर इनके उदाहरण भी दिखलाए गए हैं अपितु यह सर्व प्राकृत के व्याकरण से ही रूप सिद्ध होते हैं क्योंकि पुल्लिंग में आकारान्त ईकरान्त उकारान्त और ऊकरांत यह चार शब्द बतलाए हैं किंतु अकारान्त ऋकारांतादि शब्दों को ग्रहण नहीं कियागया इस से यह न समझ लीजिये कि प्राकृत भाषा में अकारांत शब्द होते ही नहीं अतः प्रथमा को (अतः से डों) इस सूत्र से डोकार आदेश होकर ओकारांत शब्द बन जाते हैं यथा धम्मो-घडो-पडो-इत्यादि इसी प्रकार पितृ शब्द को (आसौनवा) इस सूत्र से आकारान्त करने से पिया शब्द होजाता है यदि पितृ शब्द को (नाम्रयरः) इस सूत्र से अरकरेंता फिर (अतः सेडोंः) इस सूत्र से डोकार आदेश कर के पियरो ऐसे शब्द बन गया इत्यादि-इसी प्रकार और भी शब्दों के रूपों को जानना चाहिये किन्तु स्त्रीलिंग में उकारांत शब्द नहीं हैं शेष सर्व शब्द होते हैं क्योंकि स्त्रीलिंग में जो धेनु आदि शब्द हैं उन को (अक्लीवेसौ) इस सूत्र से प्रथमा विभक्ति के एक वचन को दीर्घ हो जाता है तब प्राकृत में "धेणू" ऐसे प्रयोग बन गया इसलिये उकारांत शब्दों को छोड़ कर केवल सूत्र में उकारांत ही शब्द ग्रहण किया गया है तथा सूत्र के लाघवार्थ भी यह कथन ठीक सिद्ध होता है और अकारांत इकारांत उकारांत यह तीनों शब्द नपुंसक लिंग के अंत में होते हैं अब तीनों लिंगों के प्राकृत में उदाहरण निम्न प्रकार से हैं यथा राजन् शब्द को संस्कृत के (न्यक्) सूत्र से दीर्घ हो कर फिर (नः) सूत्र से नकार का लोप होकर फिर राजा ऐसे प्रयोग बन गया अपितु (राज्ञः) इस प्राकृत के सूत्र से राजा शब्द का "राया" ऐसे प्रयोग बन गया सो यह शब्द आकारांत पुल्लिंग हो गया और इकारान्त गिरि शब्द है जिसको (अक्लीवेसौ) इस सूत्र से दीर्घ होकर गिरी और शिखरी इत्यादि प्रयोग बन जाते हैं फिर उकरांत विष्णु शब्द को (सूक्ष्म श्नष्ण स्न ह ह्नणाराहः) इस सूत्र से विराहु आदेश होकर फिर उक्त सूत्र से दीर्घ हो गया तब विराहू ऐसे प्रयोग बन गया और इसी प्रकार संस्कृत द्रुम शब्द का प्राकृत में दुमोत्त बन जाता है

और स्त्रीलिंग के रूप निम्न प्रकार से है आकारान्त शब्द स्त्रीलिंग में माला दयालुता इत्यादि हैं क्योंकि अदंत शब्द स्त्रीलिंग में होता ही नही अपितु इकारान्त श्री शब्द को (ई–श्री–ह्री–कृत्स्त्रक्रियादिष्टयास्वित) इस सूत्र से सिरी ऐसे प्रयोग बन गया फिर (अक्लीबेसौ) इस सूत्र से दीर्घ होकर सिरी प्रयोग सिद्ध हो गया और लक्ष्मी शब्द को (क्षोक्ष्यादौ) इस सूत्र से लच्छि शब्द बनगया अपितु उक्त सूत्र से फिर प्रथमान्त करलेना तब 'लच्छी' प्रयोग सिद्ध हो गया और ऊकारान्त जंबू वा वधू इत्यादि शब्द हैं और नपुंसकलिंग के उदाहरण यह हैं अकारांत शब्द धंन है; जिस को (क्लीबेस्वरान्म से) इस सूत्र से प्रथमा के एक वचन सि के स्थान पर मकार हो गया धनं वा धणं ऐसे प्रयोग बन गये और इकारान्त शब्द अग्नि है जिसके ग्न कार को (छोक्ष्यादौ) इस सूत्र से छकार होगया है तब अच्छि ऐसे प्रयोग बन गया फिर पूर्ववत् प्रथमान्त करलेना चाहिये और उकारान्त पीलु और मधु शब्द हैं यह सर्व नपुंसकलिंग के उदाहरण दिखलाए गये हैं इस कथन से निश्चय होता है कि लिंगानुशासन द्वारा लिंग बोध अवश्य होना चाहिये क्योंकि धर्मादि शब्द पुल्लिंग लक्ष्मी आदि शब्द स्त्रीलिंग धनादि शब्द नपुंसकलिंग यह सर्व संक्षेप से वितर्ण किया गया है अब इसी की सिद्धि के वास्ते चार नाम के सूत्र में व्याकरण की सन्धि विषय में कहते हैं ॥

॥ अथ चार नाम विषय ॥

व्याकरण के संधि प्रकरण विषय ।

सेकिंतं चउनामे चउव्विहे पं० तं० आगमेणं १ लोवेणं २ पगइए ३ विगारेणं ४ सेकिंतं आगमेणं २ पद्मानिपयांसिसेत्तं

---

१ लक्ष्मुशुण ॥ उणादि प्र० अ० ३ । सूत्र १६० ॥

लक्षदर्शनाङ्कनयोः । चुरादिरात्मने० । अस्मादी प्रत्ययः अस्य मुडागमः । णिलोपः । लक्ष्मीः पद्मा विभूतिश्च । कृदिकारादिति ङीपि लक्ष्मीत्यपि भवतीति दुर्घटे रक्षितः । लक्ष्म्या अन्वेति पामादिराठात् न प्रत्ययो अकारान्ता पैशाश्च । लक्ष्मणः सुमित्रा पुत्रो लक्ष्मण सारसप्रिया इति उज्ज्वलदत्त टीका ॥

२ जैन शब्दानुशासन सम्पूर्ण वा उनके सम्बन्धि अन्य ग्रन्थ अवश्य देखने चाहिये जिनसे उक्त सूत्रों का आशय सुगम होजावे ।

आगमेणं सेकिंतं लोवेणं २ ते अत्र तेऽत्र पठो अत्र पठोत्र घटो अत्र घटोत्र सेत्तं लोवेणं सेकिंतं पगइएणं ३ अग्निएतौ पटूइमौ शाले[२] एते माले इमे सेत्तं पगइए सेकिंतं विगारेणं दंडस्य अग्रं दंडाग्रसाआगता सागता दधिइदं दधीदं नदीइह नदीह मधुउदकं मधूदकं सेत्तं विगारेणं सेत्तं चउनामे ॥

पदार्थ—(सेकिंतं चउनामे २ चउव्विहे पं. तं.) से शब्द अथ शब्द का वाची है इसलिये से शब्द प्रश्न की आदि में ग्रहण किया जाता है सो अव प्रश्न लिखते हैं (प्रश्न) चार नाम किस प्रकार से हैं (उत्तर) चार नाम चार प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि–(आगमेणं १) अक्षरों के आगम से जो नाम पद बनाया जता है अर्थात वर्णों के आगम से पद बनता है इसी प्रकार (लोवेणं) वर्णों के लोप होने से पद होता है (पगइए ३) प्रकृति भाव से पद बनता है (विगारेणं ४) अक्षरों के विकार होने से जो पद बनता है सो इन्हीं का नाम चार नाम है अव सूत्रकार इनके उदाहरण देते हैं जैसे कि (सेकिंतं आगमेणं २) (प्रश्न) आगम से पद किस प्रकार से होता है (उत्तर) विभक्त्यंत पद होता है और उसमें ही वर्ण का आगम हो जाता है जैसे कि–(पद्मानि पयांसि) पद्म शब्द है फिर " जश्शसः " शिः इस सूत्र से नपुंसक लिङ्ग में प्रथमा विभक्ति के वहुवचन (जस् को) शिका आदेश होगया फिर पद्म–शि इस प्रकार रूप होने पर शकार का लोप करके इकार मात्र रह गया तव पद्म इ ऐसे हुआ फिर " शावचः " इस सूत्र से पद्म शब्द को नम का आगम हुआ तव पद्म–नम्–इ इस प्रकार शब्द बना फिर अम् मात्र का लोप होने पर पद्म-न्-इ ऐसे पद रहा अपितु " न्यक् सूत्र से नकार से पूर्व पद्म शब्द का आकार दीर्घ होगया तव पद्मा-न्-इ इस प्रकार से प्रयोग वन गया फिर " अन चक् शब्द रूपं पर वर्णमा श्रयेत् " इस वचन से पूर्ण प्रयोग वनगया है जैसे कि–" पद्मानि " सो यह नपुंसक लिंग के प्रथमा का वहुवचनान्त पद है सो यह आगम होने पर पद वना है इस का अर्थ है कि वहुत से पद्म हैं द्वितीय उदाहरण–पयस् शब्द है फिर नपुंसक लिंग प्रथमा के वहुवचन के स्थानों पर " जस् " प्रत्यय को शिका आदेश होगया फिर इकार मात्र शेष रहा

---

२ शल चलने घञंतात् शाल शब्द सिद्धोभवति पश्चात् स्त्रीलिंगे शाला इतिसिद्धम् ।

नच पयस्–इ इस प्रकार से रूप बना फिर "शावचः" सूत्र से नम्‌का आगम हुआ फिर अम् मात्र का लोप करके न्-कार शेष रहा तब–पय–न्–स्–इ इस प्रकार से प्रयोग हुआ क्योंकि नम्‌का आगम अंत के अच् के पीछे होता है इसलिये इस प्रकार से प्रयोग बना फिर "न्यक्" सूत्र से दीर्घ करके अनचकं शब्द रूपं पर वर्णमा श्रयेत्" इस वचन से परिपक्व प्रयोग बनगया. तब "पयांसि" यह रूप सिद्ध हुआ इसका अर्थ यह है कि बहुत जल है वा बहुत दूध हैं इसी प्रकार अन्य वर्णों के भी आगम होजाते हैं जैसेकि–"ङनस्तट सोऽश्च" इस सूत्र से तट्‌मात्र का आगम होजाता है तथा सट् का आगम इत्यादि अनेक प्रकार के वर्णों का आगम होता हैं इसी लिये इसे आगम कहते हैं (सेत्तं आगमेणं) यही आगम वर्ण का स्वरूप है और आगम होने से ही पद्बन जाता है ॥ अब लोप वर्णों का विवर्ण किया जाता है ॥ (सेकिंतं लोवेणं २) (प्रश्न) वर्णों के लोप होने से पद कैसे बनता है (उत्तर) वर्णों के लोप होने से पद इस प्रकार से होता है जैसेकि (ते अत्र तेत्र पटोअत्र पटोत्र) तद् शब्द को "ससोचात्" इस सूत्र से दकार मात्र को अत् हो गया तब "पदे" सूत्र से पूर्व अकार का लोप हो गया तब "त" ऐसे प्रयोग बन गया फिर पुंलिङ्ग में प्रथमा के बहुवचन जस् प्रत्यय को "जसः शि" इस सूत्र से शिकार का आदेश हो गया फिर शिकार का लोप होकर इकार मात्र शेष रहा तब त–इ–ऐसे प्रयोग बन गया अतः फिर "इक्येङन्" सूत्र से संधि कार्य करके अर्थात् अकार वर्ण को इकार वर्ण परवर्ती होने पर एकार होजाता है तब "ते ऐसे प्रयोगबना फिर ते अत्र ऐसी स्थिति करने पर "पदान्तेऽतो" इस सूत्र से अत्र शब्द के अकार का लोप कर के "तेत्र" प्रयोग बन गया किन्तु जहां पर वर्णों का लोप किया जाता है वहां पर "ऽ" इस प्रकार से एक चिन्ह भी करदेते हैं जैसेकि "तेऽत्र" इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिये, इसका अर्थ यह है कि वे यहां पर हैं इसी प्रकार "पटोअत्र" शब्द को "पदांतेऽत्येद्" इसी सूत्र से पटोत्र प्रयोग होगया. अर्थ यह है कि वस्त्र यहां पर है –तथा (घटोअत्र, घटोत्र) घटः शब्द प्रथमा का एक वचन है इसके सकार को "सजुरहससोऽतिष्यक्वसन्सु ध्वन्सोरिः इस सूत्र से सकार को रिकार होगया फिर इकार मात्र का लोप करके शेष रकार रहगया फिर "अतोऽद्धप्युः" इस सूत्र से रकार को उकार होगया फिर "इक्येङन्" इस सूत्र

से संधि कार्य करके घटोअत्र प्रयोग होगया फिर " पदान्तेऽत्येङ् " इस सूत्र से अकार मात्र का लोप करके घटोऽत्र इस प्रकार से प्रयोग बनगया इसका अर्थ यह है कि–घट यहां पर है (सेत्तं लोवेणं) इस प्रकार अन्य वर्णों उदाहरण भी जानने चाहिये इसका नाम लोप पद कहा जाता है अर्थात् वर्णों का लोप किया जाता है–

अब प्रकृतिभाव का विवर्ण किया जाता है ॥ (सेकिंतं पगईए २) (प्रश्न) प्रकृति भाव किसे कहते हैं (उत्तर) प्रकृतिभाव उसका नाम है जो संधिकार्य के प्राप्त होने पर भी संधि कार्य न किया जाय और इस प्रकरण को निषेध संधि भी कहते हैं अब इसके उदाहरण दिखलाए जाते हैं जैसे कि–(अग्नीए तौपदूइमौ) जो द्विवचन होता है उसको द्विवचन की क्रिया दी जाती है सो यह " अग्नि " इस प्रकार से रूप स्थित है फिर इसको प्रथमा के द्विवचन की प्राप्ति होगई तब " अग्निऔ " ऐसे रूप बनगया फिर " इदुतो गिग्वौतोऽस्त्रेः " इस सूत्र से औ मात्र को गिकार का आदेश होगया फिर अग्नि–गि ऐसे सिद्ध हुआ फिर गकार की इत् संज्ञा करके शेष इकार मात्र रह गया तब अग्नि–इ इस प्रकार से प्रयोग बनगया फिर " दीर्घः " इस सूत्रसे दीर्घ करके तब अग्नी ऐसे परिपक्व प्रयोग बनगया सो यह प्रथमा का द्विवचन है इसको द्विवचन की क्रिया करने से अग्नी एतौ ऐसे प्रयोग रक्खा किन्तु अब इसको " अस्वे " इस सूत्र से संधि कार्य की प्राप्ति हुई थी अर्थात् इकार को यकार की प्राप्ति थी किन्तु "गितः" सूत्र से संधि कार्य का निषेध किया गया क्योंकि जिसका गकार इत्संज्ञक होजाता है फिर उसकी संधि नहीं की जाती इसलिये अग्नी एतौ, ऐसा ही प्रयोग बना रहा इसका अर्थ यह है कि यह दो अग्नियें हैं इसी प्रकार " पटु इमौ " पटु शब्द को " इदुतौ गिग्वौ तोऽस्त्रेः " इससूत्र से पटु प्रयोग बनगया फिर " पटुइमौ " पद रखने पर गितः सूत्र से संधि कार्य की निषेध किया गया क्योंकि यहां पर " अस्वे " सूत्र की प्राप्ति थी किन्तु " गितः " सूत्रने संधि कार्य का निषेध कर दिया है इसका यह अर्थ है कि यह दोनों बुद्धिमान् हैं सर्व यह द्विवचनांत पद हैं इसी प्रकार (शाले एते माले एते) यह स्त्रीलिंग को द्विवचनान्त दोनों पद हैं इनकी सिद्धि निम्न प्रकार से है;– यथा " शाल शब्द को अजाद्यताम् " इस सूत्र से आडंत करके शाला शब्द सिद्ध होता है यह एक वचनान्त शब्द है किन्तु स्त्रीलिंग

के प्रथमा के द्विवचन को "आदर्थोतोगौः" इस सूत्र से गौकार आदेश होगया फिर गकार की इत् संज्ञा करके शेष ईकार रह गया तब "इवर्येऽव्" सूत्र से संधि कार्य किया गया तब शाले एते यह प्रयोग सिद्ध होगया इसी प्रकार माले एते शब्द भी जानना चाहिये क्योंकि यह दोनों शब्द स्त्रीलिंग के द्विवचनान्त हैं (सेत्तं पगईए) इसे ही प्रकृतिभाव कहते हैं अपितु प्रकृति भाव के अन्य नियम प्राकृत भाषा के व्याकरण में देखने चाहिये क्योंकि वहां पर प्रकृति भाव के बहुत से सूत्र वर्णन किये गये हैं किन्तु यहां पर तो केवल उदाहरण मात्र ही कथन किया गया है और इनका अर्थ यह है कि द्वेशाभायँ हैं दो मालायें हैं यदि यहां पर प्रकृति भाव न किया जाता तब "एतोऽव्यय वापाव" सूत्र से संधि कार्य्य होजाता सो निषेध संधि के द्वारा संधि कार्य्य का निषेध होगया॥ अब विकार भाव का वर्णन करते हैं॥ (सेकिंतं विगारेणं २) (प्रश्न) वर्णों के विकार होने पर पद कैसे बनता है अथवा विकार करने से पदान्त कैसे होता है (उत्तर) वर्णों के विकार करने से जो पद बनते हैं उनके उदाहरण नीचे पढ़िये (दंडस्य अग्रं दंडाग्रं सा आगता सागता) यहां पर अकार को विकार होगया जैसे दंड—अग्रं—सा—आगता—यह दो शब्द हैं इनको "दीर्घः"* इस सूत्र से दीर्घ होगया तब दंडाग्रं सागता यह दोनों प्रयोग सिद्ध हुए इनका अर्थ यह है कि दंड का जो अग्र भाग है उसी को दंडाग्र कहते हैं और स्त्रीवाची शब्द में सा-का प्रयोग होता है तब "सागता" शब्द का अर्थ यह हुआ कि- "वह आई" इसी प्रकार (दधि इदं दधीदं) यह दधि है इस अर्थ वाले शब्द को "दधि इदं को" दधीदं" दीर्घः "सूत्र की प्राप्ति हुई तब उक्त प्रयोग सिद्ध होगया और (नदिइह नदीह) नदिइह शब्द को भी" दीर्घः "सूत्र से नदीह होगया अर्थात् यह नदी है फिर (मधुउदकं) (मधूदकं) मधुउदकं शब्द को" दीर्घः "सूत्र से ही बनगया अर्थात् मधुरूप पानी है (सेत्तं विगारेणं) इसी को विकार कहते हैं क्योंकि सवर्णी वर्ण को दीर्घता की प्राप्ति होती है और इसी को विकार के नाम से सूत्र ने सिद्ध किया है यदि असवर्णी वर्णों की प्राप्ति हो तो "नयु वर्णस्यास्वे" इस सूत्र में संधि कार्य्य नहीं होता अर्थात् दीर्घादि कार्य्य नहीं होते तथा "एदोतोः स्वरे "स्वरस्योद्वृत्ते" "त्यादेः" इत्यादि

---

* दीर्घः शा० व्या० अ० १ पा० १ सू० ७७ ॥ अकः स्थाने परेया वा सहितस्य तदा समानो दीर्घो नित्यं समस्योच परे, दंडाग्रं, सागता, मुनीन्द्रं । नदीय । मधूदकं । वधूदरं । पितृषभः ॥

सूत्र संधिकार्य के निषेध कर्ता हैं अतः ऋकार का प्रयोग सूत्र में इसलिये नहीं दिखलाया कि ऋकार के स्थानोपरि इकार अकार उकार आकार इत्यादि आदेश होजाते हैं यथा एक उदाहरण देखिये "महा ऋषि" ऐसे रूप स्थित है तब इसको " इत् कृयादौ " इस सूत्र से ऋकार को इकार होगया तब " महाइषि " ऐसे प्रयोग बनगया फिर " शषोसः " सूत्र से मुर्धन्य षकार को दंती सकार होगया तब " महाइसि " इस प्रकार से प्रयोग बनगया फिर " इवर्णेङर् " सूत्र से संधि कार्य करने से अर्थात् अकार को परवर्ती अच् के साथ ही एकार होगया तब–महेसि ऐसे प्रयोग बनगया फिर " अक्लीबेसौ " सूत्र से प्रथमान्त शब्द दीर्घ होकर " महेसी " इस प्रकार से रूप बना सो इसी प्रकार अन्य भी रूप जानने चाहिये (सेतं चउनामे) यही चार नाम का स्वरूप है और इसे ही चार नाम कहते हैं अथ शब्द पूर्ववत है ॥

भावार्थ–चार नाम चार प्रकार से वर्णन किया गया है जैसेकि–आगम १ लोप २ प्रकृति भाव ३ विकार ४ आगम नाम उसे कहते हैं जो वर्णों के आगम से पदबनते हों जैसेकि–" पद्मानि " " पयांसि " यह नपुंसकलिङ्ग के प्रथमान्त बहुवचन हैं इनका नम् का आगम हुआ है सो इसी को आगम नाम कहते हैं लोप नाम यह है कि–तेअत्र–तेऽत्र–पटोअत्र–पटोत्र–घटोअत्र–घटोत्र इनमें पदान्त से परवर्ती अकार मात्र का लोप किया गया है और " पदान्तेऽस्येङ " सूत्रकी सर्वत्र प्राप्ति है सो इसीको लोप नाम कहते हैं–क्योंकि अकार मात्रका लोप किया गया है अतः प्रकृति भाव उसे कहते हैं–जिन शब्दों को संधि कार्य्य की प्राप्ति भी होजावे फिर भी वह शब्द वैसे ही बने रहे किन्तु संधि न की जावे उसे प्रकृति भाव कहते हैं जैसाकि " अग्नीएतौ " " पटूइमौ " " शागलेएते " " मालेइमे " इन शब्दों को " अस्वे " सूत्र से संधि कार्य प्राप्त था अपितु किया नहीं गया क्योंकि यदि संधि कार्य करते तब " अग्नीतौ " ऐसे प्रयोग बनजाता इसलिये यह सर्व द्विवचनांत शब्द प्रकृति भाव में रहते हैं और संधि प्राप्त होने पर भी संधि कार्य्य नहीं किया जाता सो इसी का नाम प्रकृति भाव है ॥ विकार का यह अर्थ है कि यदि दो वर्ण सवर्णी एक रूप हो जायें तब उनको परस्पर मिलाकर दीर्घ किये जायं उसीको विकार कहते हैं जैसाकि दंड–अग्रं–यह शब्द है और डकार में अकार है सो अग्र शब्द के अकार के साथ उसको दीर्घ किया जाता है तब "दंडाग्रं" यह प्रयोग बनगया इसी प्रकार

सा-आगता-सागता । दधि-इदं-दधीदं । नदी-इह-नदीह । मधु-उदकं-मधूदकं । इत्यादि रूप सिद्ध होते हैं यह सर्व वर्ण स्वजाति वाले वर्णों के साथ दीर्घता को प्राप्त होगये हैं सो इन्हीं को विकार नाम से कहते हैं यह सर्व व्याकरण के प्रयोग हैं इनके वर्णन करने का मुख्य प्रयोजन यह है कि सर्वनाम चार प्रकार से ही होते हैं क्योंकि कोई आगम से पद बनता है कोई लोप से २ कोई प्रकृति भाव से ३ कोई विकार से ४ जब इनका पूर्ण बोध होजावे तब ज्ञान के चतुर्दश दोष सुगमता से दूर होसकते हैं क्योंकि –" हीणक्खरं अच्चक्खरं पयहीणं" इत्यादि यह ज्ञान के दोष बतलाये गये हैं किन्तु जो व्याकरण के शेष प्रकरण हैं उनका संक्षेपता से विवर्ण पांच नाम में किया गया है इसलिये अब पांच नाम का विवर्ण करते हैं ॥

॥ अथ पांच नाम विषय ॥

सेकिंतं पंच नामे २ पंचविहे पं० तं० नामिकं १ नैपातिकं २ आख्यातिकं ३ औपसर्गिकं ४ मिश्रंच ५ अश्वइतिनामिकं १ खल्विातिनैपातिकं २ धावतीत्याख्यातिकं ३ परीत्यौपसर्गिकं ४ संयतइातिमिश्रं ५ सेतं पंच नामे ॥

पदार्थ–(सेकिंतं पंच नामे २ पंचविहे पं० तं०) अब शिष्य फिर प्रश्न करता है कि हे भगवन् ! पांच नाम कितने प्रकार से वर्णन किया गया है इस प्रकार से शिष्य के प्रश्न को सुन कर गुरुने उत्तर दिया कि भोशिष्य ! पांचनाम पांच प्रकार से वर्णन किया गया है जैसेकि–(नामिकं) जो नाम (नाममाला) आदि कोशों में वर्णन किये गये हैं उनको नामिक कहते हैं तथा नाम शब्द प्रकृति का नाम भी है क्योंकि प्रकृति से परे ही प्रत्ययों की संयोजना की जाती है सो जो प्रकृति में ही आकृति रहे उसको नामिक कहते हैं द्वितीय (नैपातिकं) जो निपात में वर्णन किये गये हैं उनको नैपातिके शब्द कहते हैं तृतीय (आख्यातिकं) जो आख्यात में शब्दों का विवर्ण किया गया है उसको आख्यातिक कहते हैं चतुर्थ (औपसर्गिकं) नाम जो उपसर्गों में वर्णन किया गया है उसको औप-

१ समास १ तद्धित २ धातु ३ निरुक्ति ४ इनका विवर्ण आगे किया जावेगा ॥

नोट १× अप्राप्तस्य प्राप्त्यर्थं प्राप्तस्य च निषेधार्थं निपातनमिति कथ्यते ॥

सर्गिक कहते हैं पंचम (मिश्रंच) नाम मिश्र होता है जो उपसर्ग धातुक्त आदि प्रत्ययों द्वारा सिद्ध होता है उसको मिश्र नाम कहते हैं अब सूत्रकार इनके उदाहरण दिखलाते हैं (अश्व इति नामिकं) अश्व इस प्रकार से एक नाम है फिर इसको प्रकृति रूप स्थापन करके प्रत्ययों की संयोजना करनी चाहिये जैसेकि अश्वः, अश्वौ, अश्वाः, अश्वं, अश्वौ, अश्वान् इत्यादि सातों विभक्तियों के रूप जानने चाहिये इसी प्रकार पुरुष धर्म वृक्ष घटपटादि सर्व नाम प्रकृति रूप होते हैं फिर यह प्रत्ययों के लगाने से विभक्तियांत पद होजाते हैं सो जो नाम (नाम मालादि) कोशों में पठन किये गये हैं उनको नामिक कहते हैं जिसका उदाहरण सूत्र में अश्व शब्द से सूचित किया गया है अश्व शब्द गोड़ेका वाची हैं १ अब निपातका उदाहरण देते हैं (खल्विति नैपातिकं २ (खलु आदि नैपातिक शब्द हैं और इनके अंतरगत ही अव्यय प्रकरण है क्योंकि जो शब्द तीनों लिंगों और सातों विभक्तियों और सर्व वचनों में एक समान रहे उस शब्द की अव्यय संज्ञा होती है। निपात उसको कहते हैं जिसका सूत्रों द्वारा कुछ और रूप सिद्ध होता हो किन्तु निपात करके उसका वही रूप रखा जाए वही नैपातिक होता है २ और जो क्रिया के बोधक पद हैं उनको आख्यातिक पद कहते हैं जैसे कि—(धावति त्याख्यातिकं ३) धावति यह क्रिया पद है यथा अमुक पुरुषः धावति अमुक पुरुष भागता है इसकी सिद्धि निम्न प्रकार से हैं। सर्त्ते धौवेगे। शाक०। अ० ४। पा० २। सूत्रं० ५६। इस सूत्र से सृगतौ धातु को " धौ " आदेश होगया फिर " क्रियार्थो धातु " इस सूत्रसे धातु संज्ञा बांधकर फिर " सति " शा०। अ० ४। पा० ३। सू० २१७। इस सूत्र से वर्त्तमान काल में लट् का आगम हुआ फिर लट् के स्थान पर " लोऽन्ययुष्मदस्मासु तिप्तसझि सिप्थस्थ मिब्वस् मस् " इन प्रत्ययों की प्राप्ति हुई अपितु इनके अन्य पुरुष, मध्यम पुरुष, उत्तम पुरुष, तीनों भेद करके फिर एक २ के तीन २ वचन करने चाहिये अतः " धौति " इस प्रकार से अन्य पुरुष के एकवचन को फिर " कर्तरिशप " ॥ शा०। अ० ४। पा० ३। सू० २० इस सूत्र से शप् का विकर्ण हुआ अतः शपावितौ कर के शेष आकार रहा तब " धौ—अ—ति " इस प्रकार से रूप बना तब " एचोऽव्ययवायाव् " शा० अ० १ पा० १ सूत्र ६६ इस सूत्र से औकार को आव् आदेश कर के फिर अनचकं शब्द रूप पर वर्णमाश्रयेत् इस वचन से संनिकर्ष करना चाहिये तब धावति

ऐसे एक क्रियापद सिद्ध हुआ अपितु, धावति–धावतः–धावन्ति, यह तीनों वचन अन्यपुरुष के हैं और धावसि–धावथः धावथ–यह तीनों मध्यम पुरुष के हैं और धावामि–धावावः–धावामः यह तीनों उत्तम पुरुष के हैं सो इसी प्रकार दशों लकारों में सर्व क्रिया पदों के रूप जानने चाहिये अतः इसी को आख्यातिक पद कहते हैं और आख्यातिक पद में सर्वगण सर्वा प्रक्रियाएं लकारार्थादि सर्वगर्भित हैं किन्तु सूत्र में केवल उदाहरण मात्र ही एक प्रयोग दिखलाया गया है अब औपसर्गिक पद का विवर्ण करते हैं यथा (परीत्यौपसर्गिकं ४) प्र, परा, अप, सम्, अनु, अव, निर्, दुर्, वि, आङ्, नि, अधि, अपि, अति, सु, उत्, अभि, प्रति, परि, उप, यह उपसर्ग हैं और यह नाना प्रकार के अर्थों में प्रयुक्त होते हैं सो परि आदि उपसर्गों से युक्त जो पद कहे गये हैं वह औपसर्गिक पद हैं अतः उपसर्ग के सम्बंध होने पर धातुओं के अर्थों का भी परिवर्तन होजाता है यथा, आहार, विहार, संहार, प्रहार इत्यादि प्रयोगों में अर्थों का परिवर्तन होता है इसलिये उपसर्गों का विशेष विवर्ण उपसर्ग इत्यादि व्याकरण ग्रंथों से देखना चाहिये सूत्र में केवल एक उदाहरण दिखलाया गया है किन्तु परि[१] उपसर्ग " परिसमंततोभाव व्याप्ति दोषाख्यानो परम भूषण पूजा वर्जन लिंग नति वसन व्याप्ति शोक वीप्सासु " इन द्वादश अर्थों में व्यवहृत होता है इसलिये उपसर्गों में रहने वाले पद को औपसर्गिक पद कहते हैं अब मिश्रज पद का विवेचन करते हैं (संयतइतिमिश्रं ५) मिश्रज नाम उसको कहते हैं जो दोतीन प्रकरणों से मिलकर शब्द बनता हो जैसेकि सम् उपसर्ग है यम् उपरमें धातु हैं कृदन्त क्त प्रत्यय है सो तीनों के मिलने से "संयत" शब्द बनगया है इस लिये इसको मिश्रज नाम कहते हैं (सेत्तं पंचनामे) सो यह पांच नाम का स्वरूप पूर्ण होगया है और इसको पांच नाम कहते हैं।

---

१ परिएतेषु द्वादश स्वर्थेषुवर्तते । समन्त तो भावे परिभ्रमति । व्याप्तौ परिमतोसिनाग्रामः । दोषाख्याने परिभवति देवदत्तः । परमेपरि पूर्णो घटः । भूषणे परि करोति कन्याम् । पूजायां परिचारायति गुरून् । वर्जने परित्रिगर्तेभ्यो वृष्टोदेवः । आलिङ्ग परिष्वजते कन्याम् । निवसने परिदधाति । व्याप्तौ परि वाहकः । शोके परि दीव्यति । वशिायां वृत्तं वृत्तं परि सिंचति । सो यह द्वादश अर्थों में परि उपसर्ग व्यवहृत होते हैं इसी प्रकार अन्य उपसर्ग भी नाना प्रकार के अर्थों में व्यवहृत होते हैं फिर उनका उसी प्रकार से अर्थ किया जाता है इसलिये सूत्रकार ने औपसर्गिक पद वहीं बतलाया है जो पद उपसर्गों के अंतर्गत रहनेवाला हो ॥

भावार्थ–पांच नाम पांचों प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि नामिक १ नैपातिक २ आख्यातिक ३ औपसर्गिक ४ और मिश्रम ५–नामिक उसे कहते हैं जो मूल प्रकृति रूप होवे जैसे अश्व शब्द के बल प्रकृति रूप है फिर इसको विभक्तियों द्वारा पद किया जाता है नैपातिक प्रयोग खल्वित्यादि हैं जो स्वयमेव होने वाले हों उसे नैपातिक पद कहते हैं आख्यात वृति से आख्यातिक पदों का भलीभांति से बोध हो जाता है जैसे धावति इत्यादि यह क्रिया पद है इनके द्वारा क्रिया पदों का ज्ञान ठीक होता है यथा स धावति तौ धावतः, ते धावन्ति, त्वं धावसि, युवाम् धावथः ,युयम् धावथ, अहं धावामि, आवाम् धावावः , वयं धावामः । अर्थात् वह भागता है वह दो भागते हैं, वह बहुत से भागते हैं, तू भागता है, तुम दोनों भागते हो, तुम सब भागते हो, मैं भागता हूं, हम दो भागते हैं हमसब भागते हैं इत्यादि यह सब आख्यातिक पदहैं । जो उपसर्गों द्वारा सिद्ध हो उसे औपसर्गिक पद कहा जाता हैं अतः जो कतिपय प्रकरणों से सिद्ध हो उसे मिस्र नाम कहते हैं जैसे संयत शब्द है सो यही पांच प्रकार के नाम हैं किन्तु तीन नाम चतुर्नामि पांच नाम इनमें केवल व्याकरण का स्वरूप दिखलाया गया है इस लिये सूत्रकारका आशय सिद्ध होता है कि शब्द शास्त्र (व्याकरण) अवश्यमेव पठन करना चाहिये और साथ ही जैन न्याय (तर्क) शास्त्र का भी बोध होना चाहिये इसलिये जो जैन व्याकरण है उनमें यथाशक्ति परिश्रम करना वह शास्त्र विहित है क्योंकि श्री प्रश्न व्याकरण सूत्र के द्वितीय श्रुत स्कंध के द्वितीयाध्याय में लिखा है कि तथा च पाठः ।

मूल–नामक्खायं निवात उवसग्गतद्धिय, समाससंधिपयहे उजोगिय उणाइकिरिय विहाण धातुसर विभत्तिवणजुत्तं-तिकालं दशविहंपि सच्च जहभणियं तहयकम्मुणाहुंदि दुवालसभविहायहोइ भासावयणंपिय होइ सोलस्स विहंएवं अरहंतमणुणायं ॥

टीका–तथा नामाख्यात निपातोपसर्ग तद्धित समास संधिपदहेतु योगिकोणादि क्रिया विधान धातु स्वरविभक्ति वर्णयुक्तमिति तत्र नामेति पद शब्द सम्बन्धान्नाम पदमेव प्रसरत्तापितच्चा व्युत्पन्नेतर भेदात् द्विधातत्र व्युत्पन्नं देवदत्तादि

अभ्युत्पन्नंवित्थेत्यादि आख्यातिपदं साध्यक्रिया पदं यथा अकरोत् करोति क-रिष्यति तत्तदर्थद्योत नाय तेषु तेषु निपन्ती तिनिपाताः तत्पदं निपातपदं यथा वाचा खल्वित्यादि उपसृज्यंते धातु समीपे युज्यंते इत्युपसर्गास्तद्रूपं पदमुपसर्गपदं मपरावेत्यादिवत् तस्मैहितं तद्धितमित्यान्वर्थाभिधाय कार्ये प्रत्ययास्तेताद्धिताः तदन्तंपदं यथा गोभ्योहितोगव्योदेशः नाभेरपत्यं नाभेय इत्यादि समसनं संमासः पदानामेकी करण रूपः तत्पुरुषा दिस्तत्पदं समासपदं यथा राज पुरुषेत्यादि संधिः सन्निकर्षस्तेन पदं यथा दधीदं नद्येषेत्यादि तथाहेतु साध्या विना भूतत्व लक्षणा यथा नित्यः शब्दः कृतकत्वादितियोगिकंयदेतेषामेवदुव्यादिसंयोगत्र-तयथाउपकरोतिसेनयाभि याति अभिषेणयतीत्यादि तथा उणादिउणप्रभृति प्रत्ययान्तपदं यथा आशुस्वादु तथा क्रियाविधानं सिद्ध क्रिया विधेः कान्तप्र-त्ययान्तपदविधेरित्यर्थः यथा पाचकः पाक इत्यादि तथा धातवोभ्वादयः क्रि-याप्रतिपादिकाः स्वरा अकारादयः खड्गादयोवासतकचिद्रसाइतिपाठः तत्रर-साःशृङ्गारा दयो नवयदाह शृङ्गारहास्य करुणारौद्र वीरभयानकः—वीभत्साद्भुत शान्ताश्चनव नाट्यरसास्मृताः विभक्तयः प्रथमाद्याः सप्त वर्णा ककारादि व्यञ्जनानिएभिर्युक्तंयत्तथा अथ सत्यं भेद तमाह त्रकाल्यं त्रिकाल-विशयं दश विधमपिसत्यं भवतीति योगः दश विधत्वंच सत्यस्यजन पद सम्मत सत्यादि भेदात् आहच जणवय १ संमय २ ठवणा ३ नाम ४ रूवे ५ पडुच्च ६ सच्चेयववहार ७ भाव ८ जोगे ९ दशमेउवम्म सच्चेयात्ति तत्र जन पद सत्यं यथा उदकार्थे कोंकणादि देशरूढयापय इति वचनं संमत सत्यं यथा समानेपि पङ्कसम्भवे गोपालादि नामपिसम्मसत्वे नारविन्द मेव पङ्कजमुच्यते न-कुवलयादीनि स्थापना सत्यं प्रतिमादिषु नामसत्यं यथा कुलमवर्द्धयन्नपि कुल-वर्द्धन इत्युच्यते रूपसत्यं यथा भावतो असमणो पितद्रूपधारि श्रमण इत्युच्यते प्रतीतसत्यं यथा अनामिका कनिष्टकां प्रतीत्यदीर्घेत्युच्यतेसैवमध्यं मांप्रतीत्य ह्र-स्वेतिव्यवहारसत्यं यथा गिरितृणादिषुदह्यमानेषु व्यवहाराद्गिरिर्दह्यते इति भाव-सत्यं यथा सत्यपिपञ्च वर्णत्वे शुक्लत्वलक्षण भावोत्कटत्वाच्छुक्ला बलाकेति योगसत्यं यथा दण्डयोगाद्दण्डेत्यादि औपम्यसत्यं यथा समुद्रवत्तडाग इत्यादि तथा जहभणियत्त तहयकम्मुणाहोइत्ति यथा येनप्रकारेण भाणितं भणन क्रियादश विधसत्यंसद भूतार्थतयाभवति तथा तेनैव प्रकारेणकर्मणा वाक्षरलेखनाति क्रि-ययासद्भूतार्थं ज्ञापने सत्यं दश विधमेव भवतीति अनेन चेदमुक्तं भवति न केवलं

सत्यार्थं वचनं वाच्यं हस्तादि कर्मोप्य व्यभिचार्यार्थं सूचकमेवे मुभयत्राप्य व्यभिचारि तथा पराव्यसनस्या कुटिलाध्यवसायस्यच तुल्यत्वादिति तथा दुवाल सविहाय होइ भासत्ति द्वादश विधाच भवति भाषा तथाच प्राकृत संस्कृत भाषा मागध पिशाचसूरसेनीच षष्ठोत्र भूरि भेदो देश विशेषादपभ्रंशः इयमेव षड्विधा भाषा गद्य पद्य भेदेन भिद्या माना द्वादश धाभवतीति तथा वचन मपिषोडश विधं भवति तथाहि वयणातियं ३ लिंगतियं ३ कालतियं ३ तहपरोक्ख पच्चक्खं उवणीयाइ चउक्कं अज्झत्थं चेवसोलसमं तत्र वचनत्रयं एक वचनद्विवचन बहु वचन रूपं तथा धर्मः धर्मौ धर्माः लिंगत्रिकं स्त्री पुंनपुंसक रूपं यथा कुमारि वृक्षा कुण्डं कालत्रिकमतीतानागत वर्त्तमान कालरूपं यथा अकरोत् करिष्यति करोति प्रत्यक्षं यथायं एषः परोक्ष यथा सातथाऽपनीत वचनंगुणोप नयन रूपं यथा रूपवानयं अपनीय वचनं गुणाय नयन रूपं यथा दुःशीलोयं उपनीतापनीत वचनं यत्रैकं गुण मुपनीय गुणान्तर मपनीयते यथा रूप वानयं किन्तु दुःशीलः विपर्ययेणत्वऽपनीतोपनीत वचनं तद्यथा दुःशीलोयं किन्तु रूपवान् अध्यात्म वचनं अभिप्रेतमर्थगोपयितु कामस्य सहसा तस्यैव भणन मति एव मितिइक्क सत्यादि स्वरूपाव धारण प्रकारेण अर्हदनुज्ञातं ॥

भावार्थ–नाम पद उसे कहते हैं जो विभक्ति से रहित हो किन्तु कतिपय व्याकरणों में नाम पदकी प्रकृति संज्ञा बांधी है, और प्रकृतिसे परे प्रत्ययों की संयोजना की है जैसे कि–धर्म शब्द को पुल्लिंग में सातों विभक्तियों से इस प्रकार साधन किया * "अव्ययात्स्वोजस्" "एकद्विबहो" इन शाकटायन व्याकरण के सूत्रों का यह आशय है कि–अव्ययसेपरेसु–औ,, जस् ,, प्रत्यों की प्राप्ति होती है फिर उनके यथाक्रम एकवचन द्विवचन, और बहु वचन किये जाते हैं किन्तु उकार और जकार की इतसंज्ञा है अतः जिसकी इत् संज्ञा होती है उसका लोप होजाता है तब, स्, आ, ऽस्, ऐसे प्रत्यय रहते हैं "प्रत्ययः कृतोऽपरश्याः" शा० अ० २। पा-१। सू०४१। इस सूत्र से प्रत्यय संज्ञा की गई है किन्तु "परः" ।१। १।१४४। प्रत्यय प्रकृति से परवर्तीही होते हैं जैसे कि धर्म शब्द तो प्रकृति रूप है सब धर्म स्, धर्म औ धर्म अस्, ऐसे एकवचन द्विवचन और बहुवचन किये गये फिर "सुप्पदम्" १। १। ६२। इस सूत्र से सुबन्त और तिङन्त के प्रत्यय लगने से पद बन जाता है तब "धर्म स्" ऐसे शब्द के सकार को "सजू रहस्सो ऽतिप्पक स्नमुध्वन्सोरिः"

* यह अधिकार सूत्र है

१।१।७२। इस सूत्र से रिकार किया गया फिर इकार के इत् संज्ञा करके " रः पदान्ते विसर्जनीयः ।१।१।६७। इस सूत्र से रेफ की विसर्ग की गई तब धर्मः ऐसे प्रयोग सिद्ध होगया और धर्म औ शब्द को एजू च्यैच् " १।१।८२। सूत्र से संधि कार्य करके " धर्मौ " प्रयोग सिद्ध होगया और धर्म अस् शब्द को " एदे " ।१।२।१०६। सूत्र से अकार के लोप की प्राप्ति थी किन्तु " मत्याः" ।१।२।१६२। सूत्र से अत्पात्र को आत् होगया फिर उस के अकार को " दीर्घः" सूत्र से दीर्घ किया गया और सकार को रिकारादेश और रेफ को विसर्जनीय पूर्व सूत्रों से करलेने चाहिये तब " धर्माः " ऐसे प्रयोग प्रथम विभक्ति के बहु वचन का सिद्ध होता है ॥ यदि कार्यान्तर में कोई व्यक्ति व्यापृत हो उसको अपने सन्मुख करना होतो उसको सम्बोधन कहते हैं और उसकी विवक्षायें आमन्त्र्ये १।३।६६। सूत्र से सु औजस। एकत्वादि संख्या में प्रत्यय लगाये जाते हैं फिर ह्रस्वोऽग्निन्त्याद॥१।२।१२२॥

सूत्र से एक वचन में सु का लोप करके और सम्बोधन में हे शब्द का प्रयोग करना चाहिये तब हे धर्म, हेधर्मौ हेधर्माः ऐसे प्रयोग बन जाते हैं और " कर्मणि " १ । ३ । १०५ । सूत्र से क्रिया विषय में कर्म होता है सो कर्म में अम् और शस्, यह प्रत्यय लगाये जाते हैं जिसमें ट और शकार की इत्संज्ञा होती है फिर " मोऽणोऽमः । १ । २ । । ३६ । सूत्र से अम् मात्र के अकार को मकार होगया फिर " पदस्य " १ । २ । ६२ । सूत्र से पद की ही लुग्की प्राप्ति होती थी किन्तु " शष्ट्याः स्थानऽतेऽल : । १ । १ । ४७ । इस सूत्रसे अन्त के वर्णका लोप किया जाता है तब " धर्मम् " ऐसे प्रयोग सिद्ध होगया फिर धर्म औ शब्द की पूर्ववत् एच् करलेना चाहिये तब धर्मौप्रयोग सिद्ध होगया और " नन्तः पुंसः " १ । १ ७६ । शस् के स्थान पर साथ अच्नान्त शब्द होजाता है तब धर्मान् ऐसे रूप सिद्ध हुआ और तृतीया विभक्ति के " टाभ्यां भिस्सिद्धौ " सूत्र से टाभ्याम् भिस प्रत्यय होते हैं और-" हेतु कर्तृकरणेत्थं भूतलक्षणे " । १ । ३ । १२८ । इत्यादि कारणों में तृतीयाविभक्ति

होती है फिर "ङसास्येस्स्ये नाचम्" १ । २ । १६५ । इस सूत्रसे टा मात्रको इन आदेश होगया फिर "अभिणे" इस सूत्रसे नकार को णकारादेश होगया किन्तु "ञ्चुल्टुस्तौनान्तरे" १ । २ । ५१ । श—और च वर्गमें ल—और टवर्ग में स और तवर्ग में न को णकारादेश नहीं होता फिर "इक्येङ्" सूत्रसे एङ् करने से "धर्मेण" ऐसे प्रयोग सिद्ध हुआ और भ्याम् प्रत्यय के परे होने से "भ्यत्याः" सूत्रसे दीर्घ होकर धर्माभ्याम् रूप बनगया फिर ऐस्भिसोऽप्रशः । १ । २ । १६४ । इस सूत्र से भिस् मात्र को ऐसादेश होगया फिर ऐचादेश करने से और सकार को रिकारादेश रेफ को विसजर्नीय तब परिपक्व प्रयोग धर्मैः सिद्ध हुआ फिर "ङेभ्यां भ्यस्" । १ २ । २३४ । सूत्रसे चतुर्थी को उक्तप्रत्ययों की प्राप्ति हुई फिर ङसेत्यादि सूत्र से ङेकोयकरादेश होगया और भ्यत्याः सूत्रसे धर्म शब्दका अकार दीर्घ होगया तब एकवचन में धर्माय द्विवचन में धर्माभ्याम् प्रयोग सिद्ध हुए और बहुवचन में बहोसिस्भ्येत् । १ । २ । १६३ । सूत्रसे एकार की प्राप्ति होती है तब धर्मेभ्यः ऐसे प्रयोग बनजाता है "अपायेऽवधौ" । १ । ३ । १५६ इस सूत्रसे पांचवीं विभक्ति की सिद्धि होती है और ङसिभ्यां भ्यस् प्रत्ययों की प्राप्ति है फिर ङित्तावितौ करके ङसेत्यादि सूत्र से ङसि को आत् का आदेश होजाता है फिर उसे "दीर्घः" सूत्र से दीर्घ करलेना चाहिये फिर "चर्जशः" सूत्र से विराम में जश् को चर भी होजाता है तब धर्मात् वा धर्माद् ऐसे प्रयोग बनजाते हैं और भ्याम् परवर्ती होने पर प्राग्वत् ही कार्य किया जाता है और भ्यास् को भी पूर्ववत् ही कार्य होता है तब धर्माभ्याम् धर्मेभ्यः प्रयोग सिद्ध हुए और ङसोसाम् । १ । ३ । १६२ । सम्बन्ध में षष्ठी होती है उसके प्रत्यय ङस् ओस् आम् हैं फिर ङसेत्यादि सूत्र से ङस् को "स्य का आदेश होजाता है तब धर्मस्य प्रयोग सिद्ध हुआ फिर ओस्परे होने पर एत्व होगया फिर एचोऽच्ययवायाव । १ । १ । ६६ । सूत्र से अया देश किया गया फिर सकार को पूर्ववत् कार्य करने से धर्मयोः प्रयोग सिद्ध होगया और नम्रहस्वाद्साटः । १ । २ । ३३ ।

इस सूत्र से आम् मात्र को नाम् आदेश किया गया फिर " नाम्यतिसृचतुष्वः १ । २ । १४० । सूत्र से पूर्वअक् दीर्घ किया तब धर्माणां प्रयोग सिद्ध होगया और "आधारे । १ । ३ । १७५ । सूत्र से आधार में सातवीं विभक्ति होती है उसके ङिओस् और सुप् प्रत्यय हैं जिनको पूर्व सूत्रों से ही धर्मे धर्मयोः धर्मेषु प्रयोग बनाये जाते हैं ॥

सो इसीप्रकार वृक्ष घटपट कुंभादि शब्दों को भी जानना चाहिये इस प्रकार नाम शब्दको विभक्त्यन्त करना चाहिये सो यही नाम शब्द है और आख्यात प्रकरण में सर्व धातुः प्रक्रियागणादि का समवेश है और धातुएं भी परस्मैपदी आत्मनेपदी और उभयपदी आख्यात प्रकरण में ही कथन की गई हैं और धातुओं को क्रिया पद भी कहते हैं और दश ही लकारों में अन्य पुरुष मध्यम पुरुष उत्तम पुरुष गिने जाते हैं इसलिये आख्यात प्रकरण का ठीक २ बोध होना चाहिये और निपात उसे कहते हैं जो अप्राप्ति की करे और प्राप्ति का निषेध करे वही निपात होता है जैसेकि खल्वादि शब्द हैं और विंशति उपसर्ग गण है प्र परादि उपसर्ग के बल से धातु के अर्थ में भी परिवर्तनता होजाती है जैसेकि—आहार विहारादि शब्द हैं तद्धित प्रकरण में अनेक प्रकार के प्रत्ययों का विवर्ण है जैनः नाभेयः वैयाकरणः सौगतः शैवः वैष्णवः अकारः इत्यादि शब्द सर्व तद्धित प्रत्ययान्त हैं और षट् प्रकार के समास होते हैं ॥ जिनके बोध से समासान्त पदोंका ज्ञान भली प्रकार होजाता है और संधि प्रकरण से संधि ज्ञान होता है किन्तु संधियें पांच प्रकार से प्रतिपादन की गई हैं जैसे कि—अच्संधि—

अचों के साथ अचों का मिलजाना उसे अच्संधि कहते हैं जैसे कि नयन, लवन, रायौ, नावौ, दध्यत्र, शम्वत्र, मध्वपनय, वध्वानेनं, पित्रर्थः लाकृति, महर्ऋषि दंडाग्रमुनीन्द्र, मधुदकम् पितृषभः देवेन्द्र, एहि गंधोदकम् मालोठा, महर्षि, तवैषा, तवौदनं, मौढः प्रैषः स्वैरिणी अक्षौहिणी तवौकारः बिम्बौष्ठी सुखार्तः प्रार्णम्

प्राघ्र्णीति, प्रेषयति, तेऽत्र, पटोऽत्र, गवाग्रं, गवेश्वरः गवेन्द्र, गवाक्षः इत्यादि सर्व अच्संधि के हैं

निषेधसंधि—

प्लुत शब्द के परे होनेपर संधि कार्य नही किया जाता किन्तु यह नियम इति शब्द के परे होनेपर नहीं है जैसेकि—सुश्लोका ३ इति तव सुश्लोकेति भी बन जायगा । और मुनीइमौ, साधूएतौ अमीअत्र, अमूआसाते । खट्वेअत्र कुलेइमे । पचेतेअत्र पचेथेअत्र पचावहेअत्र, अ अपेहि । इ इन्द्रंपश्य । उ उत्तिष्ठ आएवं मन्यसे । आएवंकिलतत् । आउष्णम् ओष्णम् अथौ अस्मै नो इंद्रियम् ॥ इत्यादि प्रयोग प्रकृति भाव के हैं

द्वित्वसंधि—

तीर्र्थं अर्हन् मरुत्त् निध्ध्यान्तं प्रच्च्युतं देवदत्ता ३ दध्ध्यत्तः इन्द्रः दर्शनं हर्षः तर्पः अश्श्यात् कुड्ङास्ते कन्याच्छत्रम् देवच्छत्रम् म्लेच्छति आच्छिनत्ति आच्छिदत्त इत्यादि प्रयोग द्वित्वसंधि के होते हैं ॥

हलसंधि—

अङ्मात्रम्, अजमात्रम्, ककुम्मण्डलं, ककुब्मण्डलं, वाङ्मधुरा वाग्मधुरा षण्नया षड्नया तन्नयनंतद्नयनम्, वाङ्मयं, गन्ता, चङ्क्रम्यते अभ्रंलिहः त्वः श्योंसि त्वश्यंसि त्वल्लुंनासि, सम्राट, गूढंस्वाराट् उत्थितः कश्शुभः मज्जति। तेच्छेते, यज्ञः कण्ष्ण्डे कट्टीकते पेष्टा तट्टकारेण । मधुलिट्सीदति । महानषण्ढः ल्ल्लुनाति भवाल्लिंखति अञ्झलौ त्रिष्टुब्भुतं वाग्घसति, तद्धितम् अच्छपम्. भवाञ्च्छूरः भवाञ्शूरः नृंःपाति कांस्कान भवांश्छादयति भवांष्टीकते । भवांष्ठकारयति, भवान्त्सरति, प्रशाञ्चिनोति पुंश्चली पुंस्कोकिलः वृक्षहसति, देवायान्ति, अधोदेहि, भगोदेहि, असाइन्दुः असाविन्दुः । असाविन्दुः । तस्मा आसनम् । तस्मा यांसनं । देवायांसते । अत्रणोऽस्मि, धर्मोजयति, एषकरोति, सयाति,

---

१—पांचों संधियों का पूर्ण विवर्ण शाकटायन व्याकरण से देखें और इन शब्दोंकी साधनिका भी प्रक्रिया संग्रह नामक कृति से देखिये ।

अनेषागच्छति। अहरत्र, अहोभ्याम्, अहोरूपम्, अहोरात्रिः अहोरूपम्। इत्यादि प्रयोग हलसंधि के हैं

विसर्जनीय सन्धि।

मुनिरस्मि। साधुर्दयते, कश्छादयति, कष्टीकते। कश्शुभः कःशुभः। कष्पुंडे कःपण्डे। कस्साधु, कःसाधु। कस्स्खलति। कः+खनति कः ऽपचति कःऽफलति निरस्कृत्य तिरःकृत्यातिरः+कृत्य ॥ नमस्कृत्य पुरस्कृत्य। चतुष्कटकं दुष्कृतं द्विष्करोति धनुष्खण्डयति। अयस्कारः यशस्कामः यशस्काम्यति गीष्पासा, गी+काम्यति चतुष्टयम् निष्पतति। निस्तपति कस्कः। कौतस्कुतः सर्पिष्कुण्डिका भ्रातुष्पुत्रः इत्यादि प्रयोग विसर्जनीय संधिके हैं सो इनकी शब्द साधिनिका शब्दागम जाननी चाहिये किन्तु किसी २ आचार्य ने तीनही संधियें स्वीकार की हैं जैसेकि-ःसञ्ज्ञास्वर प्रकृति हलज विसर्ग जन्मा सन्धिस्तु पञ्चकमिनीन्थ पिराहुरन्ये तत्रस्वरप्रकृति हलजविकिल्पतोऽस्मिन् सन्धित्रिधा कथितवान् गुणकीर्ति सूरिः ॥ १ ॥

भावार्थः-संज्ञा, स्वर, प्रकृतिभाव, हल और विसर्ग संधियों के स्थान पर गुणकीर्तिसूरि ने स्वर, प्रकृति, और हल् यह तीनही संधियें स्वीकार की हैं वास्तव में तीनों संधियों में पांचों संधियों का समावेश होजाता है इसलिये संधि पदका भी पूर्ण बोध होना चाहिये फिर सुबन्त और तिङन्त प्रत्ययों के लगने से पद संज्ञा होती है इसलिये पदज्ञान होने पर हेतु ज्ञानभी होना चाहिए हेतु दो प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि अन्वय व्यतिरेक जो वस्तु विद्यमान होने पर विद्यमानभाव रहता है उसे अन्वय हेतु कहते हैं जैसे कि धूमके होने पर अग्निका अस्तित्व है। और व्यतिरेक हेतु वह होता है जो एकके अभाव होने पर द्वितीय का भी अभाव होजाए उसे व्यतिरेक हेतु कहते हैं जैसे कि अग्नि के अभाव में धूमका अभाव रहता है सो यही व्यतिरेक हेतु होता है तथा श्रीस्थानाङ्ग सूत्रके चतुर्थस्थान के तृतीय उद्देश में लिखा है कि अहवाहे ऊचउव्विहे पन्नत्ते तंजहा

पच्चक्खे अणुमाणे उवमे आगमे अहवाहेऊ चउव्विहे पण्णत्ते तंजहा अत्थित्तं अ-त्थिसोहेऊ अत्थितंणत्थि सोहे ऊणत्थितं अत्थिसोहे ऊ णत्थितं णत्थिसोहेऊ॥

वृत्ति—अहवेत्ति। हेतोः प्रकारान्तरता द्योतके विकल्पार्थे हिनोति गमयति प्रमेयमर्थं सवाहीयते अधिगम्यतेऽनेनेतिहेतुः प्रमेयस्य प्रमितौ कारणं प्रमाण मित्यर्थः सचतुर्विधः स्वरूपादि भेदात्तत्र॥ पच्चक्खेति अश्नात्यश्नुते व्याप्नोति अर्थानित्यक्ष आत्मतम्प्रति यद्वर्त्तते ज्ञानं तत्प्रत्यक्षं निश्चयतोऽवधिमनः पर्याय केवलानि अक्षाणि चेन्द्रियाणि प्रति यत्तत्प्रत्यक्षं व्यवहार तस्तच्च चक्षुरादि प्रभवमिति लक्षणमिदमस्य अपरोक्षतयार्थस्य ग्राहकं ज्ञानमीदृशं प्रत्यक्ष मितरज्ज्ञेयं परोक्षं ग्रहणे क्षया १ ग्रहणापेक्षयेति भावः अन्विति लिङ्गदर्शन सम्बन्धानुस्म रणयोः पश्चादात्मानं ज्ञानमनुज्ञानं एतल्लक्षणमिदं साध्याविना भूतलिङ्गात् साध्यनिश्चायकं स्मृतं अनुमानं तदभ्रान्तं प्रमाणत्वात्समक्ष वदिति॥ १॥ ए-तच्चसाध्या विना भूतहेतु जन्यत्वेवा व्युपचाराद्धेतुरिति तथा उपमानं उपमां सैवोपम्यं अनेन गवयें न सदृशौ गौरिति सादृश्य प्रतिपत्ति रूपं उक्तंच गान्दृष्ट्वाय मरण्यन्वं गवयंवीक्षते यदा भूयोव पवसा मान्य भाजंवर्त्तुल कण्ठकं॥ १॥ तस्यामेव त्वस्थायां यदिज्ञानं प्रवर्त्तते पशुनैतेन तुल्योसौ गोपिण्ड इतिसोपमेति २ अथवा श्रुताति देशवाक्य समानार्थो पलम्भने संज्ञासंज्ञि सम्बन्ध ज्ञान मुपमानं मुच्यत इति आगम्यन्ते परिच्छिद्यते अर्था अनेनेत्यागम आप्तवचन सम्पाद्यो विप्रकृष्टार्थ प्रत्यय उक्तंच—दृष्टेष्टा व्याहता द्वाक्यात्परमार्थाभि धायिनः तत्वग्राहि तयोत्पन्नं मानंशाब्दं प्रकीर्तितं॥ १॥ आप्तोप ज्ञनुलंघ्य मदृष्ट ष्टविरोधकं तत्वो-पदेश कृत्सार्थं शास्त्रंका पथ घट्टनमिति॥ २॥ इहान्यथा नुपपन्नत्व लक्षण हेतुजन्यत्वा दनुमानमेव कार्ये कारणो पचाराद्धेतुः सच चतुर्विधः चतुर्भंगी रूपत्वात् तत्रअस्ति विद्यतेतदितिलिंगभूतं धूमादिवस्तु इतिकृत्वा अस्तिसोग्न्या-दिः साध्योर्थ इत्येवं। हेतुरिति अनुमानं तथा तदग्न्यादिकं वस्त्वतोनास्तिअसौ तद्विरुद्धः शीतादिरर्थ इत्येवमपि हेतुरनुमानमिति तथानास्ति तदग्न्यादिक मतः शीतकालास्ति सशीतादिरर्थ इत्येवमपि हेतुमानमिति। तथानास्तितदवृक्ष त्वा-दिकमिति तथा नास्ति सशिंशपात्वादिकोर्थ इत्यपि हेतुरनुपानमिति इहचशब्दे

कृतकत्वस्यास्ति त्वादस्सानित्यत्व घटवत् तथा धूमस्यास्तित्वा दिहास्त्यग्नि मं-हानस इवेत्यादिक स्वभावानुमानं कार्यानुमानञ्च प्रथम भङ्ग के न सूचितं तथा अग्नेरस्तित्वात् धूमास्तित्वाद्वा नास्तिशीत स्पर्श इत्यादि विरुद्धोपलम्भानुमानं विरुद्धकार्यो पलम्भानुमानं च तथा अग्नेर्धूमस्य वाचित्वान्नास्ति शीतस्पर्श ज-नितदंत वांणारोम हर्षादि पुरुषविकारो महानसवदिति कारण विरुद्धो पलम्भा-नुमानं कारणविरुद्धकार्यो पलम्भानुमानचं द्वितीय भंग के नाभिहितं तथा छत्रा देरग्नेवानास्ति त्वादस्ति क्वचित् कालादिविशेषे आतपः शीतस्पर्शोवापूर्वोप लब्धप्रदेश इवेत्यादि विरुद्धकारणउपलम्भानुमानं विरुद्धानुपलम्भानुमानं च तृती-य भङ्ककेनोक्तं तथा दर्शनसामग्र्यां सत्यां घटोपलम्भस्य नास्तित्वा नास्तीह घटो विवक्षितप्रदेशवदित्यादि स्वभावानुपलब्ध्यानुमानं तथा धूमस्य नास्तित्वा ना-स्त्य विकलो धूमकारणकलापः प्रदेशान्तरव दित्यादिकार्यानुपलब्धयमानं तथा वृक्षनास्तित्वात् शिशपा नास्तीत्यादि व्यापकानुं पलम्भानुमानं तथा अग्नेर्ना-स्तित्वात् धूमो नास्तीत्यादि कारणनुपलम्भानुमान च चतुर्थभंगकेना विरुद्धमिति नं च वाच्यंन जैनप्रक्रियेयं सर्वत्र जैनाभिप्रतान्यथा नुपपन्नत्वरूपस्य हेतुलक्ष-णस्य विद्यमानत्वादिति

सारांश—हेतु चार प्रकारसे वर्णन किया गया है जैसाकि–प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, और आगम, अथवा अस्तिमें अस्ति १ अस्तिमें नास्ति २ नास्ति में अस्ति ३ नास्ति में नास्ति ४ सो यह सर्व हेतु तत्वों के निर्णय के लिये ही प्रतिपादन किये गये हैं इनका कुछ विवर्ण तो वृत्ति में ही किया जा चुका है किन्तु विस्तार पूर्वक कथन इसी सूत्र के गुण प्रमाण के अधिकार में किया गया है और अन्वय व्यतिरेक आदि हेतुओं का भी विवर्ण उसी स्थल पर किया है जो अस्तिमें अस्ति पद है उसमें अति व्याप्ति अव्याप्ति असंभव आदि दोषों को दूर करके केवल शुद्ध न्याय का ही विवर्ण है जैसे कि धूम की अस्ति होने से अग्नि का अस्तित्वस्वतः सिद्ध है इसी प्रकार शेष भंगों का स्वरूप भी वृत्ति में लिखा गया है इसी लिये यहां पर इसका विस्तार

नहीं किया इसलिये हेतु ज्ञान में निष्णात होकर फिर यौगिक पदों में विज्ञ होना चाहिये तथा लिंग ज्ञानका पूर्ण बोध होना चाहिये जैसे कि पुल्लिंग, स्त्रीलिंग, नपुंसक, जिनके निम्न लिखितानुसार नियम हैं यथा पुल्लिङ्ग कटणथप-भमयरषसस्वन्त भिमनलौ कि श्तिव् ॥ ननकौ घघञौ दः किर्भावे खोऽकर्तरि च कः स्यात् ॥

ॐ नमः सर्वज्ञाय । लिङ्गानुशासन मन्तरेण शब्दानुशासन नावीकलमिति सामान्य विशेषलक्षणाभ्यां लिङ्ग मनुशिष्यते ॥ नामेति वक्ष्यमाणामिह संबध्यते । कटणथपभ मयरषसान्तं स्वन्तं च नाम पुल्लिङ्गं स्यात् । कादयोऽकारान्त । गृह्यन्ते पृथकसन्त निर्देशात् । द्विस्वरसन्तानां नपुंसकत्वस्य वक्ष्यमाणत्वेन एकत्रिस्वरादिसन्ता गृह्यन्ते । । कान्तः आनकः पटहो दुन्दुभिश्च । इत्यादि ॥ टान्तः कक्षापुटः सार संग्रह ग्रन्थः इत्यादि ॥ णान्तः गुणःशुम्बेऽप्रधानादौ । इत्यादि ॥ थान्तः निशीथः अर्धरात्रः । शपथः समयः । इत्यादि ॥ पान्तः, क्षुपो लता समुदायः । इत्यादि ॥ भान्तः दर्भो बर्हिः । इत्यादि ॥ मान्तः गोधूमो नागरके स्यादित्यादि ॥ यान्त भागधेयो दायादः । राजदेये तु पुस्त्रियोर्वक्ष्यते । शुभे तु तन्नामत्वादेव क्लीबत्वम् । तन्दुलीय शाकविशेष । इत्यादि ॥ रान्तः निदर कन्दरा । इत्यादि ॥ षान्त गवाक्षः । गवाक्षी शक्रवारुण्यां गवाक्षो जालके कपौ इत्यादि ॥ सन्तः माश्चन्द्रमासयो पुंसि । अनेहाः कालः । इत्यादि ॥ नन्तः ग्रावा पाषाणो गिरिश्च । इत्यादि; उकारान्तः तर्कुः सुभवेष्ट नमन्या धारमाण्डं च मन्तुः अपराधः इत्यादि; अन्तान्तं नाम पुंलिङ्गम् । पर्यन्तोऽवसानम् । विष्यन्तः मरणम् । मत्यन्तस्य बाहुलकत्वान्नपुंसकत्वमेव ॥ इमन्प्रत्ययान्तम् अल्प्रत्ययान्तं च नाम पुंलिङ्गम् ॥ इमन्, प्रथिमा । म्रदिमा । द्रढिमा । इत्यादि । नन्तत्वेनैव सिद्धे इमन्ग्रहणम् "आत्वांतत्वादिः" इति नपुंसक बाधनार्थम् । यस्त्वौणादिक स्तस्याश्रयालि-ङ्गता । भरिमा पृथ्वी, वरिमा तपस्वी । इत्यादि ॥ अल, प्रभवः । " प्रभवस्तु पराक्रमे । मोक्षेपवर्गः " इत्यादि ॥ तथा क्यन्तं श्तिवन्तं च नाम पुंलिङ्गम् ॥

क्तिः, अयं वृत्तिः वृतूङ् धातुस्तदर्थश्च ॥ शितव्, अयं पचतिः डुपचीष् धातुस्तदर्थश्च ॥ शितव् साहचर्यात् ' इकिश्तिवस्वरूपार्थे " इति विहितस्यैवके ग्रहणम् ॥ तथा नप्रत्ययान्तं च नाम पुंलिङ्गम् 'स्वप्नः स्वापे प्रस्तुप्तस्य विज्ञाने दर्शनेऽपि च ' ॥ प्रश्नपृच्छा । नङ् विश्नो गमनम् ॥ तथा घप्रत्ययान्तं घञ्प्रत्ययान्तं च नाम पुंलिङ्गम् घः करः । ' करो वर्षोपले रश्मौ पाणौ प्रत्यायशुण्डयोः ' ॥ परिसरो मृत्यौ देवोपान्तप्रदेशयोः ॥ उरश्छदः कवचं । प्रच्छदश्चोत्तरपटः । छदस्य तु नपुंसकता वक्ष्यते । इत्यादि ॥ घञन्तम्, पादः । पादो बुध्नांह्रि तुर्यांशरश्मिप्रत्यन्तपर्वतादिषु ॥ आप्लावः स्नानम् ॥ भावः । ' भावःसत्तास्वभावाभि प्रायचेष्टात्मजन्मसु ॥ क्रियालीलापदार्थेषु विभूतिबन्धजन्तुषु ' ॥ अनुबन्धः प्रकृत्यादेरनुपयोगी ॥ दासंज्ञकाद्धातोर्यः किः प्रत्ययोविहितस्तदन्तं नाम पुंलिङ्गम् ॥ आदिः प्राथम्यम् । व्याधिः रोगः । उपाधि धर्मचिन्ता । कैतवं कुटम्बव्यापृतो विशेषणंच । उपधिः कपटम् । उपनिधिः न्यासः प्रतिनिधिः प्रतिनिधिः प्रतिबिम्बम् । संधिः पुमान् सुरङ्गादौ । परिधिः परिवेषः । अवधिस्त्व व धानादौ । प्रणिधिः प्रार्थनमवधानं च अ । समाधिः प्रति समाधानं नियमो मौनं चित्तैकाग्र्यं च । विधिः कालः कल्पः ब्रह्मा विधिवाक्यं विधानं दैवं प्रकारश्च । वालधिः पुच्छम् । शब्दधिः कर्णः । जलधिः समुद्रः । अन्तर्द्धिर्व्यवधा । प्रधेस्तु नेमौ स्त्रीपुंसत्वं रोग विशेषे स्त्रीत्वम् इषुधेस्तु स्त्रीपुंसत्वं वक्ष्यते । इत्यादि ॥ भावेखः, भावेऽर्थेयः खो विहितस्तदन्तं नाम पुंलिङ्गम् । आशितस्य भवनम् आशितंभवो वर्तते, तृप्तिरित्यर्थः ॥ भाव इति किम् । आशितो भवत्यनया आशितंभवापञ्चपूली । अकर्तरि च कः स्यात् । भावे कर्तृवर्जिते च कारके यः कः प्रत्ययस्तदन्तं नाम पुंलिङ्गम् ॥ आखूना मुत्था नमाखूत्थः विहन्यतेऽनेनास्मिन्वा विघ्न अन्तरायः । इत्यादि । अकर्तरि चेतिकिम् । जानातीति ज्ञा परिषद् ॥

हस्त स्तनौष्ठ नख दन्त कपोल गुल्फ, केशान्धु गुच्छ दिनसर्तु पतद्ग्रहाणाम् ।
निर्यासना करस कण्ठ कुठार कोष्ठ, हैमारि वर्ष विष बोल रथाशनीनाम् ॥

हस्तादीनां नाम जलध्यादीनां तु सभिदां सप्रभेदानामपि पुंलिंगं भवति । हस्त-नाम पञ्चशाखः । करः । शयः । अयं शय्या यामपि यान्तत्वात्पुंसि । हस्तस्य तु पुंनपुंसकत्वम् ॥ स्तननाम, स्तनः । पयोधरः। कुचः । वक्षोजः । इत्यादि ॥ ओष्ठनाम, ओष्ठः । अधरः । दन्तच्छदः इत्यादि ॥ नखनाम करजः । कररुहः । मदनांकुशः । इत्यादि ॥ नखः पुंक्लीबः ॥ नखरस्तु त्रिलिंगः ॥ दन्तनाम दन्तः । दशनः । अयं रुद्रटेन क्लीबेऽपि निबद्धः दशनानि च कुन्दकालिकाः स्युः इति । तच्चिन्त्यम् । द्विजः रदः रदनः । इत्यादि ॥ कपोलनाम, कपोल गण्डः । गल्लः । इत्यादि ॥ गुल्फनाम, गुल्फः । घुटुः । प्रपदः । आप्रपदः । खुरकः निस्तोदः पादशीर्षः इत्यादि ॥ हस्ति गुल्फस्तु मौहः । घुटिकघुण्टिघुण्टगुल्फास्तु स्त्री पुंसलिंगा वक्ष्यन्ते ॥ केशनाम, केशः । शिरोजः । शिरोरुहः चिकुरः । चिहुरः । कचः । अयं बाहुलकद्व्रणेऽपि पुंसि । गुरोःपुत्रे तु देहि नामत्वात्सिद्धम् । इभ्यां तु योनिमत्त्वात्स्त्रीत्वम् । अस्रः । वेल्लिताग्रः । इत्यादि ॥ वृजिनश्च । यद्गौडः । वृजिनं कल्मषे क्लीबं केशेना कुटिले त्रिषु " कुन्तलःश्च । ' कुन्तलाः स्युर्जनपदो हलो बालश्च कुन्तलः ' । हले बाहुलकात्पुंसि । बालः पुंनपुंसको वक्ष्यते । तद्विशेषोऽपि केशः । कुरलः अलकः ॥ अन्धुः कूपस्तन्नाम, अन्धुः । ढूहिः । प्रहिः । इत्यादि । कूपस्तु स्त्रीपुंसलिंगः ॥ गुच्छनाम, गुच्छः । गुत्सः गुलुञ्छः । स्तवकस्तु पुंक्लीबः । दिननाम, घस्रः सूर्याङ्कः । दण्डयामः । दिनादिवसवासराणां पुंनपुंसकत्वम् । दिवाह्नोस्तुनपुंसकत्वम् ॥ स इति समासस्याख्या पूर्वाचार्याणाम् । तन्नाम, बहुव्रीहिः । अव्ययीभावः । द्वन्द्वः । इत्यादि॥ ऋतुनाम, हेमन्तः । वसन्तशिशिरानिदाघाः पुंनपुंसकाः । शरत्प्रावृड्वर्षाश्च स्त्रीलिङ्गाः । ऋतुस्तु उदन्त त्वात्पुंसि । पतद्ग्रह आचेलका धारस्तन्नाम, प्रतिग्रहः। प्रतिग्राहः । इत्यादि । निर्यासनाम, वृक्षादीनांरसः । गुग्गुलुः । श्रीपृष्टः । श्रीवेष्टः । सर्जरसः । ऊषः । उलूखलंनपुंसकम् निर्यासस्तुपुंनपुंसकः । कुम्भकुन्दोलूखले तु बाहुलकान्नपुंसके ॥ नाकनाम, स्वर्गः । स्वःअव्ययम् । नाकत्रिदिवौपुंनपुंसकौ । दिवंत्रिविष्टपंक्लीबे । द्योदिवौस्त्री ॥ रसाःशृङ्गारादयः स्तन्नाम, शृङ्ग-

रहास्यकरुण रौद्रवीरभयानक शान्तवीभत्साद्भुता इति । वत्सलस्तुपुत्रादि स्नेहात्मारतिभेद एव । शृङ्गारःपुक्लीवः । गोडस्तुशृङ्गारवीरौ वीभत्सरौद्रं हास्यंभयानकम् । करुणाचाद्भुतं शान्तंवात्सल्यं च रसादश ' १ इति कण्ठनाम, गलः नालः ॥ कुठारनाम, परशुः । पर्शुः । स्वधितिः । इत्यादि । कुठारःपुंस्त्री॥ कोष्ठनाम, कुशूलः । इत्यादि । हैमनाम, हैमो भेषजभेदः । किराततिक्तःकिरातकसंज्ञः ॥ अरिनाम, द्विषन । प्रत्यर्थी । रिपुःइत्यादि ॥ वर्षनाम, वत्सः । संवत्सरः । संत्रदित्ययमव्ययम पीतिकाथित् । वर्षहायनाब्दास्तुपुंक्लीवाः । शरत्समेतुस्त्रीलिङ्गे ॥ विषनाम, गरः । वृक्षसुतः । क्ष्वेडः । वत्सनाभः । इत्यादि ॥ विषकालकूटगरलहालाहलकाकोलाःपुंनपुंसकाः । मधुरस्यवाहुलकात्क्लीवत्वम् ॥ बोलऔषध विशेषस्तन्नाम, गन्धरसः । प्राणः । इत्यादि ॥ रथनाम पताकी । स्यन्दनः । पुंनपुंसकोऽयमितिगौडशेषः । रथःपुंस्त्री ॥ अशनिनाम, पविः । इत्यादि ॥ अशनिःपुंस्त्री । वज्रकुलिशौपुंक्लीवौ । भिदुरंवाहुलकातक्लीवम् ॥ स्त्रीलिङ्गं योनिमद्वक्रसेनावल्लितडिन्निशाम् ॥वीचितन्द्राऽवटुग्रीवाजिह्वाशस्त्रीदयादिशाम्॥१॥

नामेति स्मर्यते । यो निमदादीनां नाम स्त्रीलिङ्गं भवति । पुरुषी । स्त्री । रामा । वामा । हस्तिनी । वशा ह्यी ।अश्वा । मकरी मत्सी । मयुरी । इत्यादि चग्रीनाम उपदेहिका इत्यादि । सेनानाम । चमूः पृतना । वाहिनी । इत्यादि । वल्ली । अजमोदायां तुअस्य बाहुलकात् स्त्रीत्वम् ॥ तडिन्नाम । शम्पा । चपला । चरा । इत्यादि । निशानाम । तुङ्गी । तमी । निट्शब्दोऽप्यस्ति निशावाची ॥ वीचिनाम । वीचिः । उत्कालिका । लहरी । भङ्गिः । इत्यादि । तरङ्गोल्लोलकल्लोलानां । पुंस्त्वमुक्तम् ॥ तन्द्राशब्देनालस्यनिद्रे गृह्येते ॥ अवटुनाम् घाटा । कृकाटिका इत्यादि । अवटोस्तु स्त्रीपुंसत्वम् ॥ ग्रीवानाम । ग्रीवा । अयं तच्छिरायामपि ॥ जिह्वानाम । रसज्ञेत्यादि ॥ शस्त्रीनाम । शस्त्री । असिपुत्री । इत्यादि ॥ दयानाम । दया । करूणा । इत्यादि । दिग्नाम । आशा । ककुप् । इत्यादि ॥

अथ नपुंसक लिङ्ग :

नलस्तुतत्तसंयुक्तरऋयान्तं नपुंसकम् ॥ वेधआदीन् विना सन्तं द्विस्वरमकर्तरि ।

नान्तं लान्तं स्त्वन्नं तान्तं त्तान्तं संयुक्ता येरु यास्तदन्तं च नपुंसकलिङ्गं स्यात् । नान्तमजिनंचर्मेत्यादि ॥ लान्तं, चक्रवालं समूहः । दलं शकलम् । स्त्वन्तम् । वस्तुतत्त्वं पदार्थश्च । मस्तु दधिनिस्यन्दः ॥ तान्तं शीतमनुष्णम् अद्भुतमाश्चर्यमित्यादि । त्तान्तं भित्तं शकलम्, निमित्तं हेतुरित्यादि ॥ त्तस्य संयुक्तम् पृथगुपन्यासत्पूर्वेऽसंयुक्ता गृह्यन्ते ॥ संयुक्तरान्तम् अग्रं पुरः अधिकं च गोत्रं नाम कुलं चेत्रंच ॥ शुक्रं सप्तमो धातुः । इत्यादि ॥ संयुक्तरुशब्दान्तम् श्मश्रु कूर्चम् इत्यादि ॥ संयुक्तयान्तं शल्यं लक्ष्यं वेध्यं च । साम्नाय्यं हव्यमित्यादि वेधस्प्रभृतीन् वर्जयित्वा सकारान्तं द्विस्वरं च नपुंसकम् । इदं रक्षः निशाचरः ॥ उपः प्रभातं सन्ध्यायां तु पुंस्त्री ॥ तपः कृच्छ्राचरणम् ॥ माघे पुंनपुंसकम् ॥ रजो रेणुः । पुंसीति गौडः ॥ जोपान्त्योऽयम् ॥ यादोजलचरः ॥ रोचिः शोचिश्च दीप्ती ॥ वेध आदीनिति किम् । वेधा बुधो विष्णुर्विधिश्च ॥ सहा हेमन्त ॥ नभा मेवादिः ॥ ओका आश्रयः ॥ ओकस्य तु कान्तत्वात्पुंस्त्वम् । पूर्वापि वादो योगः । तेनाम्भः स्रोतो याद इत्यादीनां नद्यादिनामत्वेऽपि क्लीवत्वमेव ॥ गुणवृत्तेस्त्वाश्रय लिङ्गता परत्वात् ॥ द्विस्वरमिति अनुवर्तते, अकर्तरि विहितो मो म:तदन्तं नाम नपुंसकम् ॥ धाम तेजः वर्ष्म प्रमाणं शरीरं च ॥ तर्म यूपाग्रम् । वर्त्म मार्गः ॥ अकर्त्तरीति किम् ॥ ददातीति दामा ॥ करोतीति कर्मा ॥

सारांश–लिंगानुशासन बिना शब्दानु शासन का सम्पूर्ण बोध नही हो-सक्ता इसलिये लिङ्ग ज्ञानकी अत्यन्त आवश्यकता है सो इस कारिका में पु-ल्लिंग के निम्न प्रकार नियम बतलाये गए हैं जैसाकि–क–ट–ण–थ–प–भ–म–य–र–ष–सान्त–स्नन्त–नाम पुल्लिंग होते हैं

ककारान्त–कान्तःआनकः । पटहोदुन्दुभिश्चः ।

टकारान्त–कवाटुः सारसंग्रहग्रन्थः ।

णान्तः—गुणः शब्द है

थान्तः—निशीथ शब्द है जो अर्द्ध रात्रीका वाचक है

पान्तः—क्षुप शब्द है जो लताओं के समुदाय में व्यवहृत होता है

भान्तः—दर्भ शब्द है

मान्तः—गोधूम शब्द है

यान्तः—भागधेया शब्द है

रान्तः—मिर्दरः

षान्तः—गवाक्षः

सान्तः—मास् (माश्चन्द्रमासयो)

नन्तः—गीवा वकारान्तः तर्कुः—मन्तान्तं नाम । पर्यन्तो । इमन्प्रत्ययान्तम् प्रथिमा । अलन्तः प्रभवः । वयन्तं । हृति । रितवन्त : पचति । नप्रत्ययान्तः स्वप्नः । घप्रत्ययान्तः और घञ्प्रत्ययान्त शब्द भी पुल्लिंग होते हैं जैसाकि—करः घयन्तः पादः भावः । किप्रत्ययान्तः आदि ब्यादि शब्द हैं भाव में जो " त्व " प्रत्यय आता है वह भी पुल्लिंग ही होजाता है जैसे कि आशितभवो और भाव कर्तृ को वर्जके जो अकर्तामें क प्रत्यय है वहभी पुल्लिंग ही होजाता है यथा विघ्न । शब्द है ॥ फिर हस्त के वाचक शब्द भी पुलिंग होते हैं जैसाकि—पंचशाखः इसीप्रकार स्तना—ओष्ट—करजः—दन्तः—कपोलः—गुल्फः शिरोजः गौडः—कुंतलः वालः कुरलः—अन्धुः गुच्छः घलः दंडपामः हेमन्तः गुग्गुलः स्वर्गः गलः पर्शुः रिपुः—वत्सः इत्यादि यह सर्व शब्द पुलिंग में ग्रहण किये जाते हैं इसीप्रकार अन्य शब्दों को भी जानना चाहिये ।

योनि और मदादि शब्द स्त्रीलिंगीय होते हैं जैसे कि-स्त्री-पुरुषी-रामा-अभ्रा इत्यादि और वर्ग्गनाम त्रपदेहिकादि है चमूः-वल्ली-अजमोदा-शम्बा-तुंगी-तमी वीचिनाम-लहरी-घाटा-ग्रीवा-रसज्ञा-शस्त्री-दया-आशा-ककुप इत्यादिशब्द स्त्रीलिंगीय होते हैं और नान्त-लान्त-स्नन्त-तान्त चान्त-संयुक्त येरुरु इत्यादि यह शब्द नपुंसक लिंगीय होते हैं इनके प्रयोग निम्नलिखितनुसार हैं जैसकि-अजिन-चक्रवालं ।

दलं।वस्तुतत्त्वं-मस्तु-शीत-भिन्तं-निमित्तंअग्रं-गोत्रं-चेत्रं-शुक्रं-श्मश्रु-शल्यं ,साम्राज्यं प्रभातं,धाम,शरीरं, इत्यादि यह सर्व शब्द नपुंसकलिंगीय हैं इस प्रकार लिंगा नुशासन से लिंग बोध करके योग पदका अनुयोग करना चाहिये फिर उणा- दि प्रत्ययों को भी अभिगम करके श्रुत ज्ञान में निष्णातहो उणादि प्रत्यय निम्न प्रकार से है तथा च पाठः—

कृवापा जिमिस्वादिसा ध्यशूभ्य उण् ॥ १ ॥

डुकृञ् करणे । वागातिगन्धनयोः ॥ पा पाने (जि अभि भवे (डुमिञ् प्रक्षेपणे । ष्वद आस्वादने साध संसिद्धौ अशू व्याप्तौ । एभ्योऽष्टधातुभ्य उ- णप्रत्ययः स्यात् । करोतीति कारुः । प्रसिद्धोऽसौ क्रियाशब्दः शिल्पिन्यपि च वर्त्तते । तथा च धरणिकोशः कारुः शिल्पिनि कारके । राघवस्य ततः कार्य- कारुर्वानरपुङ्गवः । सर्ववानरसेनानामाश्वागमनमादिशत् । ७, २८, । इति भट्टिः । स्त्रियामुङ्तः कारुः स्त्री ॥ वातीति वायुर्वातः आतो युक् चिणकृतोः पा, ७, ३, ३३ । इति युक् उभयत्र वायोः प्रतिषेधो वक्तव्यः पा. ६, ३, २६, १, । इति देवताद्वन्द्वेच । पा. ६, ३, २६ इत्यानङ् न भवति । वायुवग्नी । अग्निवायू ॥ पिवत्यने नौषधमिति पायुर्गुदस्थानम् । गुदंत्वपानं पायुर्नेत्यमरः ॥ जयत्यभि- भवति रोगानिति जायुरौषधं वैद्योऽपि ॥ मिनोति प्रक्षिपति देह उष्माणमिति मायुः पित्तम् । मायुः पित्तं कफः श्लेष्मेत्यमरः । गोपूर्वात् गां वाचं विकृतां मिनोति प्रक्षिपतीति गोमायुः शृगालः ॥ स्वद्यत इति स्वादु मिष्टम । त्रिलिंगः । शीघ्रद्रव्ये- ऽसत्त्वे क्लीवम् । क्लीवे शीघ्राद्यसत्त्वे स्यात् । १, १, १, ६३, । इत्यमरस्त्रिलिं- गे । पृथ्वादिभ्य इमनिच् । पा० ५, १, १२२, । स्वादिमा । स्त्रियां ङीप् । स्वाद्वीत्यपि ॥ साध्नोति परकार्यमिति साधुः सज्जनः । स्त्रियां वोतो गुणवचनात् । पा० ४,१,४४, । इति ङीष् । साध्वी सती पतिव्रता । अम० २ ६, १, ६ । पृथ्वादित्वात्साधिमा ॥ अश्नुत इत्याशु शीघ्रं धान्यस्य च नाम । पृथ्वादित्वा दाशिमा धान्यवाचित्वे पुंसि । आशुर्व्रीहिः पाटलः । अम० २,६, १५ ॥ बहुलवचनात् रह त्यागे । ष्णा शौचे । कृक लौल्ये हल विलेखने । वस

निवासे। एभ्योऽप्युण भवति ॥ गृहीत्वा रहति त्यजति चन्द्रमिति राहुः स्वर्भानुः। स्नात्यङ्गमिति स्नायुःशरीरबन्धः। स्नायुःस्त्री वस्नसा स्मृतेत्यमरः ॥ कन्यते नेनेति काकुः स्त्रियां विकारो यः शोकभीत्यादि भिर्ध्वर्ने रित्यमरः ॥ हल्यतेऽनेनेति हालुर्दन्तः ॥ सर्वोऽत्रवसति सर्वात्रासौ वसति । अत्रार्थे वासु । वासुश्चासौ देवश्चेति वासुदेवः । तथा च स्मृतिः । सर्वत्रासौ समस्ते च वासत्यत्रेति वै यतः । ततोसौ वासुदेवेति विद्वद्भि परिगीयते ॥ १ ॥ सर्वत्रासौ वसत्यात्मरूपेण विश्वम्भरत्वादिति वासुः ॥ वासुर्नारायण पुनर्वसु विश्वरूपाः । १ १ २६ । इति त्रिकाण्डशेषे । वसुदेवस्यापत्य मित्य स्मिन्नर्थे ऋष्य न्धकवृष्णिकुरुभ्यश्च । पा० ४, १-११४ इत्यणि कृते वासुदेव इत्यपि व्युत्यत्त्यन्तरम् ॥

दृसनिजानिचारिचाटिभ्यो ञुण् ॥ ३ ॥

दॄ विदारणे । षण दाने । जन जनने । चर गतौ । चट भेदने ॥ एभ्यो ञुण् स्यात । दीर्य्यत इति दारु क्लीबे काष्ठम । अर्धर्चादिः देवदारुः पुंसि । अमुं पुरः पश्यसि देवदारुम् । २ ३६ इति रघुः । नपुंसके दारु । दारुणी । दारूणि । काष्ठे दार्विन्धनं त्वेध इत्यमरः ॥ सनोति सनुते वा । सानुः पर्वतैकदेशः । सानुः शृङ्गेबुधे मार्गे वात्यायां पल्लवे वने । नान्त० १६, । इति विश्वः । पर्वतैकदेशे स्नु प्रस्थः सानुरस्त्रियामिति कश्चित ॥ जायन्ते जनयान्तिवा । जानुर्जङ्घोपरिभागः । क्लीबे जानु । जानुनी । जानूनि । जानूरुपर्वाष्ठीवदस्त्रियामित्यमरः । प्रसंभ्यां जानुनार्ज्ञुः । पा० ५, ४, १२६ । प्रज्ञुः प्रगतजानुकः संज्ञुः संहतजानुक इत्यमरः । ऊर्ध्वाद्विभाषा । पा० ५, ४, १३० । ऊर्ध्वज्ञुरूर्ध्वजानुः स्यात् । ञानुबन्धक ग्रहणं जान्वित्यत्र जनिवध्योश्च । पा० ७, ३, ३५ । इत्यनेन वृद्धिप्रतिषेधो माभूत् ॥ चरति चक्षुरादिष्विति चारु शोभनम् ॥ चाटु प्रियं वाक्यम् । चाटुर्नारि प्रियोक्तिः स्यादीति रत्नमालाकोशः । चकार च बहुचाटून्प्रौढ योषिद्वदस्य । ११, ३६ । इति माघः । माघे नपुंसकमपि दर्शितम् । चाटु चाकृतकसंभ्रममासां कार्मणत्वमगमन्रमणेषु । १०, २७ । चाटुः पिचिण्डे च नु तौ चाटूरालापे, तत्प्रमपमित्युत्पालिनीकोशः । मृगय्वादित्वात्कुप्रत्यये चटु वित्यपि

भवति । चटु चाटु प्रियं वाक्यमिति हृष्टचन्द्रः । वत्सेनौदस्य मानोरचितचटुशतं मोचितः स्वर्गिवर्गैरिति बालरामायणञ्च् ॥

इण्षिञ्जिदीङ्ष्यविभ्यो नक्

इक् गतौ । षिञ् बन्धने । जि जये । दीङ् क्षये । उप दाहे । अव रक्षणे । एभ्यो नक् स्यात् । इनो राज्ञि प्रभौ सूर्ये । नृपे पत्यौ । नान्ते १, । इति विश्वः सह इनेन वर्तत इति सेना । सेनयाभियात्य भिषेणयति ॥ सिनः काणः ॥ जिनो बुद्धः । जिनः स्यादतिवृद्धेऽपि बुद्धे चार्हति जित्वरे । विश्वे नान्त० १, ॥ दीनो दुर्गतः ॥ उष्णभीषत्तमम् । ज्वरत्वरैत्यूह । जनमसम्पूर्णम् । सर्वस्वे तु ऊनयतेरूनमिति साधितम् ॥

सारांश—कृ-वा-पा-जि-मि-स्वदि-साध-इन धातुओं को उण्प्रत्यय होजाता हैं तब इनके प्रयोग निम्नलिखितानुसार बनजाते हैं जैसेकि करोतीतिकारुः । वातीतिवायुर्वातः ॥ पिवत्यनेन नीपधमिति पायुर्गुदस्थानम् । जयत्याभि भवति रोगानितिजायुरौषधं वैद्योपि । मिनोति प्रक्षिपति देह उष्माणमिति मायुः पित्तम् । स्वद्यत इति स्वादुमिष्टम् । साध्नोति परकार्यमिति वा स्वकार्यमिति साधुः सज्जनः । इस प्रकार उण् प्रत्ययान्त प्रयोग बनते हैं तथा सूत्र में बहुवचन होने से—रह त्यागे । ष्णाशोचे । ककलौल्ये । हल विलेखने । वसनिवासे । इन धातुओं को भी उण् प्रत्ययान्त करने से इस प्रकार प्रयोग बनते हैं जैसाकि गृहीत्वा रहति त्यजति चन्द्रमिति राहुः स्वर्भानुः । स्नात्यङ्ग मिति स्नायुः शरीरबन्धः । कक्यतेऽनेनति काकुः । हल्यतेऽनेनेति हालुर्दन्तः । सर्वोऽत्रवसति सर्वत्रासी वसति अत्रार्थेवासु ॥ १ ॥

दृ—षणु-जन-चर-चट-इनधातुओं को ञुण् प्रत्यय होजाता है तब इनके प्रयोग इस प्रकार से बनते हैं जैसेकि दीर्य्यत इति दारु । सनोति सनुत वा सानुः पर्वतैकदेशः । जायन्ते जनयन्ति वा । जानु जङ्गो परिभागः । चरति चक्षुरादिष्वति चारुशोभनम् । चाटु प्रियवाक्यम् । २ और-इक्गतौ षिञ्-बंधने

जिजये-दीङ् क्षये-उपदाहे-अवरक्षणे इन धातुओं को नक् प्रत्यय होजाता है तब इनके प्रयोग इस प्रकारसे बनते हैं जैसेकि इनः तथा सह इनेन वर्तत इति सेना सिनः काणः। जिनो जिनेन्द्रदेवः बुद्धो वा। जिनः अतिवृद्धेऽपि बुद्धे अर्हतिच। दीनो दुर्गतः। उष्णा भीषत्तप्तम्। इत्यादि अनेक प्रकार से उणादि प्रत्ययों का उणादि वृत्तिमें विवर्ण किया गया है सो जो शब्द उणादि प्रत्ययान्त हो उन्हें उणादि प्रत्ययान्त कहते हैं तथा जिस शब्द की व्युत्पत्ति किसी प्रकार से भी सिद्ध न होती हो वह उणादि प्रत्ययों से सिद्ध की जाती है इसलिये उणादि प्रत्ययों का अवश्य ही बोध होना चाहिये फिर क्रियापद जैसे कि करोति, पचति, इत्यादि हैं धातु भ्वादि हैं स्वर अकारादि हैं तथा स्वरपड्जादि इनका वेत्ता होकर फिर विभक्ति प्रकरण को भी जानना चाहिये तथा कारक विधि को ठीक २ जानकर फिर उसके अनुसार वचनानुयोग करना चाहिये जैसे कि।

तत्र पञ्चविधः कर्ता, कर्म सप्तविधं भवेत्।
करणं द्विविधं चैव संप्रदानं त्रिधा मतम्॥ १॥
अपादानं द्विधा चैव तथा धारश्चतुर्विधः।

तत्रेति॥ तत्र तस्मिन् त्रयोविंशतिधति दर्शिते कारक चक्रे पञ्चविधः कर्ता, सप्तविधं कर्म, द्विविधं करणम्, त्रिविधं संप्रदानम्, द्विविधमपादानम्, चतुर्विधमधिकरणं चेति।

तत्र पञ्चविधः कर्ता यथा—स्वतन्त्रकर्ता, हेतुकर्ता, कर्मकर्ता, अभिहितकर्ता, अनभिहितकर्ता चेति। तत्राद्योयथा पुण्यं करोति श्राद्धः, मैत्रीं भजन्ते सन्तः। हेतुकर्ता यथा—हितं लभयन्ति विनीतान्धीराः। क्लेशादेव लोकं नियमयन्ति। 'तत्प्रयोजको हेतुश्च' इति हेतुसंज्ञा॥ कर्मकर्ता यथा—स्वयमेव मुच्यन्ते कुशलबुद्धयः। स्वयमेव दृश्यन्ते दुष्टजनदोषाः। स्वयमेव छिद्यन्ते प्राकृतजनस्नेहाः। कर्मवत्कर्मण तुल्यक्रियः' इति हि कर्मवद्भावः॥ अभिहितकर्ता यथा—साधवः परार्थमापादयन्ति 'अभिहिते प्रथमा' इति प्रथमा॥ अनभिहितकर्ता यथा—साधुभिरापाद्यन्ते परार्थाः। 'अनभिहित कर्तरि' इति तृतीया॥

कर्म सप्तविधं कथम् । ईप्सितं कर्म, अनीप्सितं कर्म, ईप्सितानीप्सितं कर्म, अकथितं कर्म, कर्तृकर्म, अभिहितं कर्म, अनभिहितं कर्म चेति ॥ तत्रेप्सितं कर्म यथा-दुर्विज्ञानमपि धर्मं विज्ञातुं श्रद्दधात्युदारधीः । कर्तुरीप्सिततमं कर्म इति कर्मसंज्ञा ॥ (अनभिहिते कर्मणि द्वितीया अनीप्सितं यथा—कल्याणमपि धर्मं प्रक्षिपन्ति पापबुद्धयः विषं भक्षयन्ति क्षुद्राः । तथायुक्तं चानीप्सितम् इति कर्मसंज्ञा ॥ ईप्सितानीप्सितं यथा—पायसं भक्षयंस्तत्र पतितं रजोऽपि भक्षयति बालकः ॥ अकथितं यथा—गां दोग्धि पयो गोपालकः । यज्ञदत्तं याचते कम्बलं ब्राह्मणः । ईशितारं भिक्षते सुवर्णमाकिञ्चन । व्रजमवरुणद्धि गां गोपालः । उपाध्यायं पृच्छति शास्त्रं शिष्यः । वृक्षमवचिनोति फलानि दारकः । शिष्यं ब्रवीति धर्मं गुरुः । ' गतिबुद्धि-' इत्यादिना कर्मसंज्ञा ॥ अभिहितं कर्म यथा कटाः क्रियंते देवदत्तेन ॥ अनभिहितं कर्म यथा—कटं करोति देवदत्तः ॥

कतमद्विविधं करणम् । बाह्यमाभ्यन्तरं चेति ॥ शरीरावयवादन्यद्यत्तद्बाह्यं यत्तदाभ्यन्तरम् । यथा मनसा पाटलिपुत्रं गच्छति देवदत्तः । चक्षुषा रूपं गृह्णाति नरः । साधकतमं करणम् इत्यनेन करणसंज्ञायां कर्तृकरणयोस्तृतीया इति तृतीया ॥

कतमंत्त्रिविधं सम्प्रदानम् । प्रेरकमनुमन्तृकम निराकर्तृकं चेति ॥ तत्र प्रेरकं यथा ब्राह्मणाय गां ददाति धार्मिकः । स हि ब्राह्मणो मनसाद्य गां मह्यं देहि इति प्रेरयति तस्मात्प्रेरक मित्युच्यते ॥ अनुमन्तृकं यथासूर्यायार्घ्यं ददाति पुरुषः । स सूर्यो न प्रेरयति न निराकरोति तस्मादनुमन्तृकः ॥ अनिराकर्तृकं यथा पुरुषोत्तमाय पुष्पं ददाति पुरुषः स पुरुषोत्तमोमह्यं पुष्पं न ददातीति न प्रार्थयते नानुमन्यते न निराकरोति तस्मादनिराकर्तृकमित्युच्यते । कर्मणायमभिप्रैति इति संप्रदानसंज्ञायाम् चतुर्थी संप्रदाने इति चतुर्थी ॥

कतमद्विविधमपादानाम् । चलमचलं चेति ॥ तत्र चलं यथा धावतो रथात्पतति सारथिः । परिधावतो । हस्तिनोऽङ्कुशं धारयन्पततया धोरणः ॥

अचलं यथा-ग्रामा दागच्छति देवदत्तः ॥ पर्वतादवतरन्ति महर्षयः । ध्रुवमपाये ऽपादानम् इत्यपादानसंज्ञायाम् अपादाने पञ्चमी' इति पञ्चमी ॥

कतमच्चतुर्विधमधिकरणम् । व्यापकमौपश्लेषिकं वैषयिकं सामीपिकं चेति ॥ तत्र व्यापक यथा—तिलेषु तैलं व्याप्तम् । औपश्लेषिकं यथा—कट आस्ते पुरुषः । शकट आस्ते ब्राह्मणः । वैषयिकं यथा—वनेषु शार्दूला वसन्ति ॥ सामीपिकं यथा नद्यां वसति घोषः । आधारोऽधिकरणं " इत्यधिकरण संज्ञायां " सप्तम्यधिकरणे च इति सप्तमी ॥

करोति कारकं सर्वं तत्स्वातन्त्र्य विवक्षया ॥ ३ ॥

करोतीति कारकमित्यन्वर्थसंज्ञा तर्हि कर्तैव कारकसंज्ञो भवति नैतरे । अत्रोच्यते । तान्यपि कारकाण्येव,कुतः, तद्व्यापारेपि स्वातन्त्र्यविवक्षायां प्रतिकारकं स्वातन्त्र्यं विवक्ष्यते । अतः कर्मकरणसंप्रदानापादाना धिकरणानामपि कारकत्वं सिद्धम् ॥ ३ ॥

तत्र कर्तर्यभिहिते प्रथमैव विधीयते ।

तृतीया वाऽथ वा षष्ठी स्मृताऽनाभिहिते द्विधा ॥ ४ ॥ तत्रेति ॥ तत्र कर्तृ कर्मकरणसंप्रदानापादानाधिकरणेषु मध्ये अभिहिते कर्तरि प्रथमैव भवति । यथा । पचत्यो दनं देवदत्तः ॥ अनभिहिते कर्तरि द्वे विभक्ती भवतः । तृतीया वा अथवा षष्ठीति । तत्र तृतीया यथा । आदेनः पच्यते देवदत्तेन । ' कर्तृकरणयोस्तृतीया " इति तृतीया " । षष्ठी यथा परलोकहितस्य सेवितव्यो धर्मः । परलोकहितेन वा सेवितव्यो धर्मः । ' कृत्यानां कर्तरि वा इति षष्ठी ॥

तथा कर्मण्यभिहिते, विभक्तिं विद्धि पूर्विकाम्
अनुक्ते प्रथमां हित्वा पंचमीं सप्तमीं तथा ॥ ५ ॥

तथेति ॥ यथाभिहिते कर्तरि प्रथमा तथा कर्मण्यभिहिते प्रथमैव भवति । यथा ओदनः पच्यते देवदत्तेन । आहारो दीयते देवदत्तेन ॥ अनुक्त इति ॥ अनुक्ते कर्मणि प्रथमां पंचमीं सप्तमीं वर्जयित्वा शपाश्चतस्रो विभक्तयो भवन्ति । काः

शेषाः । द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, षष्ठी चेति ॥ तत्र द्वितीया यथा-ग्रामंगच्छति पुरुषः कर्मणि द्वितीया ' तृतीया यथा-पुत्रेण सञ्जानीते पिता । पुत्रसञ्जानीत इत्यर्थः । संज्ञोन्यतरस्यां कर्मणि " इति तृतीया ॥ चतुर्थी यथा-ग्रामाय व्रजति पुरुष । ' गत्यर्थ कर्मणि इति चतुर्थी षष्ठी यथा-कटस्यकारको-ः

देवदत्तः । कर्तृकर्मणोः कृति ' इति षष्ठी ॥ ५ ॥

तृतीया पञ्चमी चैव षष्ठी च करणे त्रिधा ।

तृतीयेति ॥ तृतीया यथा-परशुना वृक्षं छिनत्ति देवदत्तः ' कर्तृकरणयो-स्तृतीया ॥ पञ्चमी यथा-स्तोकान्मुक्तः स्तोकेन मुक्तः । इति तृतीया । ' करणे च स्तोकाल्पकृच्छ्रकतिपयस्यासत्ववचनस्य इति पञ्चमी ॥ षष्ठी यथा-घृतस्य संजानीते मित्रं घृतेन मित्रं प्रेक्षत इत्यर्थः ' ज्ञोविदर्थस्य करणे ' इति षष्ठी ॥५॥

षष्ठी चतुर्थी तृतीया संप्रदाने तथा त्रिधा ॥ ६ ॥

षष्ठीति । षष्ठी यथा-पुनर्पण मृगश्चन्द्रमसो दातव्यः । चंद्रमसे दातव्य इत्यर्थः । चतुर्थ्यर्थे बहुलं छन्दसि ' इति संप्रदाने षष्ठी ॥ चतुर्थी यथा-क्षुधिता यौदनं ददाति देवदत्तः । चतुर्थी संप्रदाने इति चतुर्थी ॥ तृतीया यथा दास्या माला संप्रयच्छते । युवा दास्यै माला ददातीत्यर्थ । समस्तृतीया इति सूत्रे दाणश्च सा चेच्चतुर्थ्यर्थे इति तृतीया उभयमनेसंभाव्यते । तृतीयाविभक्ति रात्मनेपदविधानं च यदयंयोगस्तृतीयायुक्ताद्दाणः । दाणश्च सा चेच्चतुर्थ्यर्थे इत्यात्मनेपद मनुशास्ति अशिष्टव्यवहार तृतीया चतुर्थ्यर्थे भवतीति वक्तव्यम् । अशिष्ठ व्यवहारो धूर्तव्यवहारः ॥ ६ ॥

पञ्चमी खल्वपादाने वर्तते न ततोऽन्यथा

सप्तम्येवाधिकरणे कारकस्यैव संग्रहः ॥ ७ ॥

पञ्चमी इति ॥ पञ्चमी यथा-पर्वतादवतरन्ति महर्षय । अपादाने पञ्चमी ॥ सप्तम्येवेति । सप्तमी यथा-ग्रामे वसति । सप्तम्यधिकरणे च ' इति सप्तमी ॥

कारकस्येति । दिङ्मात्र प्रदर्शितम् ॥ कारक संग्रहो विस्तरेण वृत्त्यादिषु द्रष्टव्य इति ॥

सारांश–पांच प्रकार का कर्ता, और सात प्रकार से कर्म, दो प्रकार से करण और तीन प्रकार से संप्रदान होता है दो प्रकार से अपादान और चार प्रकार से आधार होता है षष्टी को कारक संज्ञा नहीं है क्योंकि–षष्टी के वल सम्बन्ध में ही होती है इसलिये कारक छै ही हैं क्योंकि कारण उसे कहते हैं जिसको क्रिया स्पर्श मानहो इनका पूर्ण विवर्ण ऊपर संस्कृत में किया जा चुका है हिंदी में इसलिये विस्तार नहीं किया है इसका संस्कृत बहुत ही सुगम है सो इसी का नाम विभक्ति प्रकरण है ॥

............फिर अकारादि वर्ण त्रिकाल (भूत भविष्यत वर्तमान) दश प्रकार का सत्यवचन संस्कृत १ प्राकृत २ मागधी ३ पेशाची ४ शौरसेनी ५ अपभ्रंश ६गद्य और पद्य के करने से द्वादश प्रकार की भाषायें और षोडश प्रकार प्रत्यक्षादिवचन इनके सीखने की भगवान् की आज्ञा है क्योंकि सत्यवचनानुयोग के लिये ही शब्द नय का उक्त कथन है इसलिये ही श्री स्थानाङ्ग सूत्र के दशवें स्थान में दश प्रकार से शुद्धवचनानुयोग कथन किया गया है जैसे कि–................................... ।

दसविहे सुद्धावायाणु जोगे पण्णत्ते तंजहा चंकारे मंकारे पिंकारे सेयंकारे सायंकारे एगत्ते पुडत्ते संजूहे संकामिए भिन्ने ॥ दसेत्यादि ॥ शुद्धा अनपेक्षितं वाक्यार्था यावाक् वचनं सूत्र मित्यर्थ स्तस्या अनुयोगो विचारः शुद्धवागनुयोगः सूत्रेचाऽपुंवद्भावः प्राकृतत्वा त्तत्र चकारा दिकायाः शुद्धवाचो यो नुयोगः स चकारा दिरेव व्यपदेश्य स्तत्र ॥ चंकारेत्ति ॥ अत्रा नुस्वारो लाक्षीण को यथा ॥ सुङ्कसाणिचरे इत्यादौ ॥ ततश्चकार इत्यर्थ स्तस्यचानुयोगो यथा च शब्दः समाहारेत रेत रयोगसमुच्चयान्वा चया वधारण पाद पूरणाधिक वचनादिष्वत्रि तत्र ॥ इत्थो औस यणाणियत्ति ॥ इह सूत्रे चकारः समुच्चयार्थः स्त्रीणां शय नाना चापरि भोग्यता तुल्य त्व प्रतिपादनार्थः ॥ मंकारेत्ति ॥ मकारानुयोगो यथा ॥ स-

मणंवामाहणंवात्ति ॥ सूत्रे मा शब्दो निषेधे अथवा ॥ जेणमेव समणे भगवं महावीरे तेणामेवेति ॥ अत्र सूत्रे आगमिक एव येनेने त्यनेनैव विवाचित मतोनेति २ ॥ पिंकारोत्ति ॥ अकार लोप दर्शनेना नुस्वाराग मेनचा पि शब्द उक्त म्नुदनुयोगो यथा अपि सम्भावनानिवृत्य पेक्षा समुच्चय गर्हाशिक्षाम र्षणभूषण प्रश्नेष्विनि तत्र ॥ एवं पिएगेआसासे ॥ इत्यत्र सूत्रे एवमपि अन्यथा योति मकारान्तर समुच्चयार्थोऽपि शब्द इति ३ ॥ सेयंकारोत्ति ॥ इह प्याकारोऽलाक्षणिकस्तेन सेकार इति तदनुयोगो यथा ॥ सेभिक्खेवे ॥ त्यत्र से शब्दोऽथार्थोऽथ शब्दश्च प्रक्रिया प्रश्नानन्तय मंगलोप न्यास प्रतिवचन समुच्चयेष्टि त्यानन्तर्यार्थः से शब्द इति क्वचित् तस्येत्यर्थो ॥ ऽथवा सेयंकार इति ॥ श्रेय इत्येतस्य करणं श्रेयस्कारः श्रेयस उच्चारण मित्यर्थ स्तदनुयोगो यथा ॥ सेयमे अहिज्जिओ अज्झयण ॥ मित्यत्र सूत्रे श्रेयोऽतिशयेन प्रशस्यं कल्याण मित्यर्थोऽथवा ॥ सेयकाले अकम्मवा विभवइ ॥ इत्यत्र सेय शब्दो भविष्यदर्थः ४ ॥ सायंकारोत्ति सायमिनि निपातः सत्यार्थ स्तस्मा द्वर्णात्कार इत्यनेन छान्दसत्वा त्कार प्रत्ययः करणं वा कार स्ततः सायंकार इति तदनुयोगो यथा सत्यं तथा वचन सद्भाव प्रश्नेष्वीत एतेच चकारादयो निपाता स्तेषा मनुयोगगभणनं शेषनि पातादिशब्दानुयोगो पलक्षणार्थं मिति ॥ एगत्तेत्ति ॥ एकत्व मेकवचनं तदनुयोगो यथा सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्राणि मोक्षमार्ग इत्यत्रैकवचनं सम्यग्दर्शनादीनां समुदितानामेवै कं मोक्षमार्गस्वख्यापनार्थ मसमुदितत्वेत्व मोक्षमार्गतेति प्रतिपादनार्थं मिति ६ ॥ पुहत्तेति ॥ पृथक्त्वं भेदो द्विवचन बहुवचने इत्यर्थ स्तदनुयोगो यथा ॥ धम्मात्थिकाए धम्मात्थिकायदे से धम्मत्थिकायप्पदेसा ॥ इह सूत्रे धर्मास्तिकाय प्रदेशा इत्येव द्बहुवचनं तेषा मसंख्या तत्वख्यापनार्थं मिति ७ ॥ संजूहेत्ति ॥ संगतं युक्तार्थं यूथं पदानां पदयो वी समूहः सयूथं समास इत्यर्थ स्तदनुयोगो यथा सम्यग्दर्शन शुद्धं सम्यग्दर्शनेन सम्यग्दर्शनाय सम्यग्दर्शनाद्वा शुद्धंसम्यग्दर्शन शुद्ध मित्यादि रनेकधेति ८ ॥ संकामियत्ति ॥ संकामित विभक्ति वचनाद्यन्तर तथा परिणामितं तदनुयोगो यथा साहुणवन्दणेणं नासइपावं असं कियाभावा ॥ इह साधूना मित्ये

तस्याः षष्ठ्याः साधुभ्यः सकाशादित्येवं लक्षणं पञ्चमीत्वेन विपारिणामं कृत्वा अशंकिताभावा भवंतीत्ये तत्पदं सम्बन्धनीयं तथा अच्छंदाजेन भुंजंति न से चाइत्ति वुच्चइ ॥

इत्यत्र सूत्रेन सत्यागी त्युच्यत इत्येक वचनस्य बहुवचनतया परिणामं कृत्वा नते त्यागिन उच्यंते इत्येवं पद घटना कार्येति ॥ ६ ॥ भिन्न मिति क्रमकाल भेदादिभिभिन्नं विसदृशं तदनुयोगो यथा तिविहंति विहेण मिति ॥ संग्रह मुक्ता पुन र्मणेण मित्यादिना तिविहेणंति विवृत मिति क्रम भिन्न क्रमेणहि तिविह मित्ये तन्न करोमी त्यादिना विवृत्य तत त्रिविधेनेति विवरणीयं भवतीति अस्यच क्रम भिन्नरथा नुयोगोयं यथा क्रम विवरेणाहि यथा संख्यदोषः स्यादिति तत्परिहारार्थं क्रमो भेद स्तथाहि नकरोमि मनसा नकारयामि वाचा कुर्व्वतं नानुजानामि कायेनेति प्रसज्यते अनिष्टश्चै तत्प्रत्येक पक्षस्यै वेष्टत्वा त्तथाहि मनः प्रभृतिभिर्न करोमि तैरेव न नुजानामीति तथा कालतो भेदो तीतादिनिर्देशे प्राप्ते वर्त्तमाना दिनिर्देशो यथा जम्बूद्वीप प्रज्ञप्त्यादिषु ऋषभ स्वामिन माश्रित्य ॥ सक्केदे विंदेदेवरणया वंदइ नमंसइत्ति ॥ सूत्रे तदनुयोगश्चायं वर्त्तमान निर्देश स्त्रिकालभाविष्वपि तीर्थं करेष्वे तन्न्याय प्रदर्शनार्थं इति इदंच दोषादि सू वत्रय मन्य यापि विमर्श नीयं गभीरत्वा दस्येति वाग नुयोगत स्त्वर्थानुयोगः प्रवर्त्तत इति ।

भावार्थ--दश प्रकार शुद्ध वचनानुयोग प्रतिपादन किया गया है जैसे कि चकारानुयोग १ चाव्य यकिनन २ अर्थों में व्यवहृत होता है इस प्रकार बोध होने पर फिर यथा स्थान च अव्यय का अनुयोग करना चाहिये, अनुस्वार केवल प्राकृत के लाक्षणिक के लिये ही है मंकारे २ मा शब्द किन २ अर्थों में संघटित है जैसेकि " समणंवा माहणंवा " इस सूत्र में " मा " शब्द निषेध के लिये विद्यमान है तथा " जेणा मेव समणे भगवं महावीरे तेणा मेव " इस सूत्र में मकार वीप्सा अर्थ में व्यवहृत है इसलिये मकार के अर्थों को ज्ञाता होकर फिर मकारानुयोग करना चाहिये पिंकारे ३ अपिशब्द किन २ अर्थों में प्रयुक्त किया जाता है जैसेकि--अपिसंभावनायाम् समुच्चय गर्हा शिष्या

मर्षण भूषण मश्नादि में अपिशब्द आता है इसलिये इस का ठीक २ बोध होने पर फिर इसका अनुयोग करना चाहिये ।

सेयंकारे ४ से शब्द मागधी भाषा में अथ शब्द का वाची है जैसाकि " सेकितं " अथ कितत् तथा अन्य अर्थों में भी व्यवहृत हो जाता है इस लिये से शब्द के अर्थों को जान कर फिर इसका प्रयोग करना चाहिये ।

सायंकारे -५-सात् निपात का प्रयोग भी यथा स्थान करना चाहिये क्यों कि यह निपात बहुत से अर्थों व्यवहृत होता है ।

एगत्ते ६ एकवचन का अनुयोग करना चाहिये जैसेकि-सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्राणि मोक्ष मार्गः- इस सूत्र में एकवचन का अनुयोग किया गया है इस लिये यथा स्थान एक वचन का जो अनुयोग किया जाता है उसे एक वचनानुयोग कहते हैं पुहुत्ते ७ । पृथक् २ वचनों का अनुयोग करना जैसे कि, धम्मत्थिकाय धम्मत्थि कायदेसे धम्मत्थि "पएसा" जहाँ पर प्रदेश शब्द को बहुवचन इस लिये दिया गया है कि-प्रदेश असंख्ये हैं इसलिये यथा स्थान पुहुत्त शब्द के अर्थों को जानकर इसका प्रयोग करना चाहिये ।

संजूहे ८—जो पद विग्रह किया जाता है उसे संयूथ पद कहते हैं अर्थात् समासान्त जो पद है उनको समासान्त करके दिखलाना उसे ही संयूथ पद कहते हैं ॥

संकामिए ९—विभाक्तियों का जो संक्रमण किया जाता है उसे संक्रमण कहते हैं इस लिये संक्रमण के साथ जो पद बनते हैं उन्हे संक्रमनानुयोग कहते हैं ।

भिन्न १०—काल भिन्नानुयोग जैसे कि—भूत भविष्यत वर्तमान काल के वचनों को यथा योग्य परिवर्तन करना उसे भिन्नानुयोग कहते हैं

इन दश सूत्रों का विस्तार पूर्वक विवर्ण वृति में लिखा जा चुका है

इसलिये इनका संक्षेप से विवर्ण किया है अतएव इन सूत्रों के जब पूर्ण अर्थों को जाना जाए फिर उन्हीं के अनुसार भाषण किया जाय तब शुद्ध वचनानुयोग होता है इस लिये सदैवकाल इनका अभ्यास करके वचन सुशिक्षा करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है शेष व्याकरण के प्रकरणों का आगे विवर्ण किया जायगा। अब पांच नाम के पश्चात् षट् नाम का विवर्ण किया जाता है किन्तु छ नाम में षट् भावों का अधिकार है इसलिये भावों का विवेचन करते हैं।

अथ षट् भाव विषय।

सेकिंतं छनामे २ छव्विहे पं० तं० उदइए १ उवसमिए २ खइए ३ खउवसमिए ४ पारिणामिए ५ सन्निवाइए ६ सेकिंतं उदइए २ दुविहे पं० तं० उदइएय उदय निप्फन्नेय सेकिंतं उदय २ अट्ठण्हं कम्म पगडीणं उदयएणं सेत्तं उदया सेकिंतं उदय निप्फन्ने २ दुविहे पं० तं० जीवोदय निप्फन्नेय अजीवोदय निप्फन्नेय सेकिंतं जीवोदय निप्फन्ने २ अणेगविहे पं० तं० (नेरइए)[1] १ तिरिक्खजोणिए २ मणुस्से ३ देवे ४ पुढविकाइए ५ आऊकाइए ६ तेऊकाइए ७ वाऊकाइए ८ वणस्सइकाइए ९ तस्सकाइए १० कोहकसाय ११ माणकसाए १२ मायाकसाए १३ लोभकसाए १४ कण्हलेसा १५ नीललेसा १६ काउलेसे १७ तेऊलेसे १८ पम्हलेसे १९ सुक्कलेसे २० इत्थिवेदए २१ पुरिसवेदए २२ नपुंसकवेदए २३ मिच्छदिट्ठी २४ असन्नी २५ अन्नाणी २६ आहारए २७ अनि-

---

१ द्वारेया। प्रा० व्या० अ० ८ पा० १ सूत्र ७९॥

द्वारशब्दे आत्परह्‌ वाभवन्ति कर्णनेरइयो नारइयो॥

रए २८ सजोगी २६ संसारत्थे ३० छउमत्थे ३१ असिद्धे ३२ अकेवली ३३ सेत्तं जीवोदय निप्फन्ने सेकिंतं अजीवोदय निप्फन्ने २ अणेग विहे पं० तं० उरालिय वासरीर १ उरालिय सरीरप्पउगपारिणामियादव्वं वेउव्वियं वासरीरं ३ वेउव्विय-सरीरप्पउगपरिणामियादव्वं ४ आहारगंवासरीरं ५ आहारग सरीरप्पउगपरिणामियं वादव्वं ६ तेयगवासरीरं ७ तेयगस-रीरपओगपरिणामिआ वादव्वं ८ आहारगसरीरं ६ आहा-रगसरीरप्पउगपरिणामियंवादव्वं पओगपरिणामिए वरणे गंधे १२ रसे १३ फासे १४ सेत्तं अजीवोदय निप्फन्ने सेत्तं उदय निप्फन्ने सेत्तं उदइए नामे ॥

पदार्थः—(सेकिंत छनामे २ छव्विहे पं. तं.) वह षट् नाम कौनसे हैं (उत्तर) षट् नाम छै प्रकार से प्रतिपादन किये गये हैं जैसेकि (उदइए १ उवसमिए २ खइए ३ खउवसमिए ४ पारिणामिए ५ संन्निवाइये ६) उदय शब्द से ठण प्रत्यय करने से औदयिक भाव होजाता है क्योंकि उदयं भवं औदयिकं । अर्थात् जो उदय करके भोगा जाय उसे औदायिक कहते हैं अतः नाम में जो भाव शब्द ग्रहण किया गया है वह केवल नाम और भाव अभेदो पचार के ही मत से है क्योंकि नाम और भाव में परस्पर अभेद भी होता है इसी लिये औदयिक भाव शब्द ग्रहण किया गया है अथवा यथोक्त उदय करके जो नाम उत्पन्न होता है उसे औदयिक भाव कहते हैं १ द्वितीय औपशमिक भाव है वह भी ठण् प्रत्ययान्त है क्योंकि औपशमिक भाव उसे कहते हैं जो प्रकृतियाँ नतो क्षय हुई हैं और नहीं औदायिक भाव में हैं उन्हें औपशमिक भाव कहते हैं भस्माच्छादित अग्निराशिवत् २ क्षायिक भाव भी ठण् प्रत्यया-न्त है जो कर्मोंकी सर्व प्रकृतियें क्षय होगई हो उसे क्षायिक भाव कहते हैं ३

यदि कुछ प्रकृतियें क्षय होगई हों और कुछ उपशम हुई हों तो उसे क्षयोपशम भाव कहते हैं ४ जो परिवर्त्तन शील हो उसे परिणामिक भाव कहते हैं ५ जो औदयिकादि भावों से मिलकर भंग बनाए जाते हैं उसे सन्निपात भाव कहते हैं। अथ उदय भावका सविस्तर स्वरूप लिखा जाता है (सेकिंतं उदइय २ दुविहे पं० तं० उदयए उदयनिप्फन्नेय) (प्रश्न) अब वह औदयिक भाव कौनसा है (उत्तर) औदायिक भाव द्विप्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसेकि–एकतो औदयिक भाव द्वितीय औदायिक निष्पन्न भाव अर्थात् एकतो उदय में रहने वाली प्रकृतियें द्वितीय उनके जो फल भोगने में आते हैं उन्हें औदयिक निष्पन्नभाव कहते हैं इस प्रकार से गुरुके कहने पर शिष्यने फिर प्रश्न किया कि–(सेकिंतं उदइय २ अट्ठण्हं कम्मपगडीणं उदयणं सेत्तं उदइय) हे भगवन् ! औदायिक भाव किसे कहते हैं गुरुने उत्तर दिया कि हे शिष्य ! जो आठ कर्मों की प्रकृतियें हैं वह औदयिक भाव में हैं और उन्हें ही औदयिक भाव कहते हैं (सेकिंतं उदइय निप्फन्ने २ दुविहे पं० तं०) (प्रश्न) औदायिक निष्पन्न भाव किस प्रकार से वर्णन किया गया है (उत्तर) औदायिक निष्पन्न भाव द्विप्रकार से वर्णन किया गया है जैसेकि (जीवोदय निप्फन्नेय अजीवोदय निप्फन्नेय) जीवके उदय से निष्पन्न और अजीव के उदय से निष्पन्न अर्थात् जो कर्मों के प्रभाव से जीवके भावों से निष्पन्न होता है उसे जीवोदय निष्पन्न कहते हैं जो अजीव से फल निष्पन्न हों उन्हें अजीवोदय निष्पन्न कहते हैं अब प्रथम जीवोदय निष्पन्न का विवेचन करते हैं यथा (सेकिंतं जीवोदय निप्फन्नेय २ अणेग विहे पं० तं० (प्रश्न) जीवोदय निष्पन्न भाव कितने प्रकार से वर्णन किया गया है (उत्तर) जो मूल कर्मों की प्रकृतियों के प्रभाव से जो जीवोदय भाव है वह अनेक प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसेकि (नेरइय १ तिरिक्ख जोणिए २ मणुस्से ३ देवे ४) नैरयिक भाव १ तिर्यग् योनिकभाव २ मनुष्य भाव ३ और देवभाव ४ इसी प्रकार (पुढविकाइए ५ आऊकाइए ६ तेऊकाइए ७ वाऊकाइए ८ वणस्सइकाइए

६ तसकाइए १०) पृथ्वीकायिक १ जलकायिक २ अग्निकायिक ३ वायुकायिक ४ वनस्पतिकायिक ५ त्रसकायिक १० और (कोह कसाए ११ माण कसाए १२ माया कसाए १३ लोभ कसाए १४) क्रोध कषाय, मान कषाय, माया (छल) कषाय, लोभ कषाय १४ (कण्ह लेसा १५ नील लेसा १६ काउ लेसे १७ तेउ लेसे १८ पम्ह लेसे १९ सुक्क लेसे २०) कृष्ण लेश्या १५ नील लेश्या १६ कापोत लेश्या १७ तेजु लेश्या १८ पद्म लेश्या १९ शुक्ल लेश्या २०, और (इत्थिवेदए २१ पुरिसवेदए २२ नपुंसगवेदए २३) स्त्री वेद २१ पुरुष वेद २२ नपुंसकवेद २३ (मिच्छदिट्ठि २४) मिथ्या दृष्टि २४ (असण्णि २५) असंज्ञी भाव २५ (अणाणी २६) अज्ञानता २६ (आहारए २७) आहारक भाव २७ (अविरए २८) अव्रतभाव २८ (सजोगी २९) योगयुक्त होना २९ (संसारत्थे ३०) सांसारिकभाव ३० (छउमत्थे ३१) छद्मस्थभाव ३१ (असिद्धे ३१) असिद्ध भाव और (अकेवली ३२) अकेवली भाव ३२ (सेत्तं जीवोदयनिप्पन्न) सो यही जीवोदय निष्पन्न भाव है. अब जीवोदय के पश्चात् अजीवोदय के फल वर्णन करते हैं (सेकिंतं अजीवोदय निप्फन्ने २ अणेगविहे पं० तं० (अथ शब्द प्राग्वत् है (प्रश्न) वह अजीवोदय निष्फन्न भाव कितने प्रकार से वर्णन किया गया है (उत्तर) अजीवोदय भाव अनेक प्रकार से वर्णन किया गया है क्योंकि–जो शरीरादिक का द्रव्य है वह अजीव द्रव्य का ही समूह है इसलिये उसको अजीवोदय निष्फन्न कहा गया है वास्तव में तो वह भी जीवोदय भाव में है किन्तु विशेष पर्यायों की अपेक्षा प्रयोग द्रव्य अजीवोदय निष्पन्न माना गया है अब इसी बात को सूत्रकार दिखलाते हैं (उरालियं वासरीरं १) वा शब्द परस्परापेक्षा के वास्ते है मनुष्य और तिर्यग् का भव से प्रधान औदारिक शरीर १ और (उरालियं सरीरप्पउगपरिणामियं दव्वं २) औदारिक शरीर के योग्य पारिणामिक प्रयोग द्रव्य अर्थात् औदारिक शरीर के योग्य ५ वर्ण २ गंध ५ रस ८ स्पर्श और

श्वासोच्छ्वासादि के योग्य द्रव्य हैं उन्हें औदारिक शरीर प्रयोग पारिणामिक द्रव्य कहते हैं इसीप्रकार आगे भी समझना चाहिये (वेउव्विय सरीरं ३) वैक्रिय शरीर ३ और (वेउव्विय सरीर पओग परिणामियंदव्वं ४) वैक्रिय शरीर प्रयोगिक पारिणामिक द्रव्य ४ (आहारगं वा सरीरं ५) आहारिक शरीर ५ ५ और (आहारग सरीर पयोग परिणामियंवादव्वं ६) आहारिक शरीर के पारिणामिक द्रव्य ६ (तेयग वा शरीरं ७) तेजस् शरीर ७ (तेजस् सरीर पओग परिणामियं वादव्वं ८) तेजस शरीर प्रयोगिक पारिणामिक द्रव्य ८ (कम्मयं सरीरं ६) कार्मण सरीर ६ और (कम्म सरीर पओग परिणामियं वादव्वं १०) कार्मण शरीर प्रायोगिक पारिणामिक द्रव्य १०) शिष्यने फिर प्रश्न किया कि हे भगवन् ! प्रयोग परिणाम क्या है गुरुने प्रति वचन में कहा कि भो शिष्य ! (पउग परिणामिय) प्रयोग पारिणामिक द्रव्य उसे कहते हैं जो जीव ने ग्रहण किया हुआ द्रव्य है क्यों कि प्रयोग १ मिस्सा २ विसेसा ३ यह तीनो प्रकार से द्रव्य है प्रयोग वह होता है जो जीवने ग्रहण किया है मिस्सा वह होता है जो जीवने छोड़ दिया हो (विसेसा उसे कहते हैं जो अपने आप परिणमनशील हो जैसे बादलादि सो प्रयोग पारिणामिक द्रव्यसे परिणमन हुए हैं (वएणे ५) पांच वर्ण (गंध २) दो गंध (रसे ५) ५ रस (फासे ८) ८ स्पर्श (सेत्तं अजीवोदयानिप्फन्ने) सो यही अजीवोदय निष्पन्नभाव है क्योंकि यह सर्व ५ शरीर और पांचों के परिणामिक द्रव्य अजीवोदय निष्पन्न हैं (सेत्तं उदय निप्फन्न सेत्त उदयनामे) सो यही उदय निष्पन्न और इसे ही औदयिक नाम कहते हैं ॥

नोट—१ औदयिक, २ औपशमिक, ३ क्षायिक, ४ क्षायोपशमिक व ५ पारिणामिक इन पांच भाव के उत्तर भेद ५३ होने हैं सो इस प्रकार हैं।

औदयिक के उत्तर भेद २१, औपशमिक के २, क्षायिक के ६, क्षायोपशमिक के १८, पारिणामिक के ३ सब मिलकर ५३ उत्तरभाव हुए.

औदयिक भाव के २१ भेद इस प्रकार हैं-४ गति, ६, लेश्या, ४ कषाय, २ वेद, १ अज्ञान, १ असिद्धपन, १ मिथ्यात्वपन, १ अविरतिपन.

औपशमिक भाव के २ भेद-१ उपशम समकित, २ उपशम चारित्र.

क्षायिक भाव के ६ भेद-१ दानलब्धि, २ लाभलब्धि, ३ भोगलब्धि, ४ उपभोगलब्धि, ५ वीर्यलब्धि, ६ केवलज्ञान, ७ केवलदर्शन, ८ क्षायिक समकित, ६ क्षायिक चारित्र.

क्षायोपशम के १८ भेद-दानादिक, ५ अंतराय, १० उपयोग, १ क्षयोपशमसमकित, १ क्षयोपशमचारित्र, १ देशविरतिचारित्र.

पारिणामिक के ३ भेद-१ जीव पारिणामिक, २ भव पारिणामिक, ३ अभवपारिणामिक.

उपर्युक्त ५३ उत्तरभाव का वासठिया लिखते हैं।

गाथा-४ गइ, ५ इंदिय, ६ काए, ३ जोग, ३ वेय, ४ कसाय, ८ नाणेसु, ७ संजम, ४ दंसण, ६ लेस्या, २ भव, ६ सम्मे, २ सन्नी, २ आहारे।

अर्थः—४गति, ५ इन्द्रिय, ६ काय, ३ योग, ३ वेद ४ कषाय, ८ ज्ञान (५ ज्ञान और ३ अज्ञान) ७ संयम, ४ दर्शन, ६ लेश्या, २ भव्य तथा अभव्य ६ शम, २ संज्ञी तथा असंज्ञी, २ आहारक व अणाहारक इन ६२ मार्गणा के ऊपर ५ मूल भाव व ५३ उत्तर भाव बतलाते हैं।

५३ उत्तर भाव के ऊपर मार्गणा के ६२ द्वार कहते हैं ।		मूल भाव ५	उत्तर भाव ५३	उदय भाव २१	उपशम भाव २	क्षायिक भाव ९	क्षयोपशम भाव १८	पारिणामिक भाव २
१	नरकगति १	५	३३	१३	१	१	१५	३
२	तिर्यंचगति २	५	३९	१८	१	१	१६	३
३	मनुष्यगति ३	५	५०	१८	२	९	१८	३
४	देवगति ४	५	३७	१७	१	१	१५	३
५	एकेंद्रिय १	३	२५	१४	०	०	८	३
६	बेंद्रिय २	३	२६	१३	०	०	१०	३
७	तेंद्रिय ३	३	२६	१३	०	०	१०	३
८	चौरिंद्रिय ४	३	२७	१३	०	०	११	३
९	पंचेंद्रिय ५	५	५३	२१	२	९	१८	३
१०	पृथ्वी १	३	२५	१४	०	०	८	३
११	अप २	३	२५	१४	०	०	८	३
१२	तेउ ३	३	२४	१३	०	०	८	३
१३	वाउ ४	३	२४	१३	०	०	८	३
१४	वनस्पति ५	३	२५	१४	०	०	८	३
१५	त्रस ६	५	५३	२१	२	९	१८	३
१६	मनजोग १	५	५३	२१	२	९	१८	३
१७	वचन जोग २	५	५३	२१	२	९	१८	३
१८	काया जोग ३	५	५३	२१	२	९	१८	३
१९	स्त्रीवेद १	५	४१	१८	२	१	१८	३
२०	पुरुष वेद २	५	४१	१८	२	१	१८	३
२१	नपुंसक वेद ३	५	४१	१८	२	१	१८	३
२२	क्रोध १	५	४५	२१	२	१	१८	३
२३	मान २	५	४५	२१	२	१	१८	३
२४	माया ३	५	४५	२१	२	१	१८	३
२५	लोभ ४	५	४५	२१	२	१	१८	३
२६	मतिज्ञान १	५	४५	१९	२	२	१५	२
२७	श्रुत० २	५	४०	१९	२	२	१५	२
२८	अवधि ३	५	४८	१९	२	२	१५	२
२९	मनः पर्यव ४	५	३४	१५	२	२	१४	२
३०	केवल ५	३	१४	३	०	९	०	२
३१	मति अ० ६	३	३५	२१	०	०	११	३
३२	श्रुत अ० ७	३	३५	२१	०	०	११	३

५६ उत्तर भाव के ऊपर मार्गणा के ६२ द्वार कहते हैं।		मूल भाव ५	उत्तर भाव ५२	उदय भाव २१	उपशम भाव २	क्षायिक भाव ९	क्षयोपशम भाव १८	पारिणामिक भाव २
३३	विभंग ८	३	३५	२१	०	०	११	३
३४	सामायिक १	५	३३	१५	१	१	१४	२
३५	छेदोपस्थापनीय२	५	३३	१५	१	१	१४	२
३६	परिहारविशुद्ध ३	५	२९	११	१	१	१४	२
३७	सूक्ष्मसंपराय ४	५	२१	४	१	१	१३	२
३८	यथाख्यात ५	५	२८	३	२	९	१२	२
३९	देश विरति ६	५	३३	१६	१	१	१३	२
४०	असंयम ७	५	४१	२१	१	१	१५	३
४१	चक्षुद०१	५	२१	२१	२	२	१८	३
४२	अचक्षु० २	५	२१	२१	२	२	१८	२
४३	अवधि ३	५	२१	२१	२	२	१८	३
४४	केवल ४	३	१४	३	०	९	०	२
४५	कृष्ण १	५	३९	१६	१	१	१८	३
४६	नील २	५	३९	१६	१	१	१८	३
४७	कापोत ३	५	२९	१६	१	१	१८	३
४८	तेजु ४	५	३८	१५	१	१	१८	३
४९	पद्म ५	५	३८	१५	१	१	१८	३
५०	शुक्ल ६	५	४७	१५	२	९	१८	३
५१	भव्य १	५	५२	२१	२	९	१८	२
५२	अभव्य २	३	३४	२१	०	०	११	२
५३	उपशम १	५	३८	१९	२	१	१४	२
५४	क्षयोपशम २	३	३६	१९	०	०	१५	२
५५	क्षायक ३	५	४५	१९	२	९	१४	२
५६	मिश्र ४	३	३३	२०	०	०	११	२
५७	सास्वादन ५	३	३२	१९	०	०	११	२
५८	मिथ्यात्व ६	३	३५	२१	०	०	११	३
५९	संज्ञी १	५	५३	२१	२	९	१८	३
६०	असंज्ञी २	३	२९	१५	०	०	११	३
६१	आहारक १	५	५३	२१	२	२	१८	३
६२	अणाहारक २	५	५०	२१	२	९	१५	३
	मार्गणा	६२	६२	६२	४२	४४	६०	६२

भावार्थः—षद्नाम में षट् भावों का विवरण किया गया है अतः भाव और नाम में अभेद माना है इसी लिये नाम पद में भावों का विवर्ण है जैसे कि—औदयिक भाव १ औपशमिक भाव २ क्षायिक भाव ३ क्षयोपशम भाव ४ पारिणामिक भाव ५ सान्निपातिक भाव ६. औदयिक भाव उसे कहते हैं जिससे कर्मों की प्रकृतियें उदय होकर कर्मों का फल दें १ औपशमिक भाव उसका नाम है जो कर्म न तो क्षय हुए हैं और न उदय भाव में हैं इस लिये उन्हें उपशम भाव कहते हैं २ यदि कर्म क्षय हुए हों तो उसे क्षायिकभाव कहते हैं ३ यदि कुछ क्षय हुए हैं और कुछ उपशमभाव में हैं उन्हें क्षयोपशम भाव कहते हैं ४ जो द्रव्य परिणमनशील हों उन्हें पारिणामिक भाव कहते हैं ५ अपितु जो इन के संयोग होने से नाम उत्पन्न होता है उसे सान्निपातिक भाव माना गया है फिर उदय भाव दो प्रकार से माना है जैसे कि—एकतो औदयिक भाव—द्वितीय औदयिक निष्पन्न भाव—औदयिक भाव में आठों कर्मों की सर्व प्रकृतियें हैं और औदयिक निष्पन्न भाव दो प्रकार से माना गया है क्योंकि जो वस्तु उदय होती है उसका फल अवश्य होता है उसे उदयनिष्पन्न भाव कहते हैं वह भी दो प्रकार से हैं एक तो जीवोदय—द्वितीय अजीवोदय—जीवोदय उसे कहते हैं जो जीव की शक्ति से पर्यायें उत्पन्न हों जैसे कि ४ चार गतियें षट्कायें चतुर कषायें तीनों वेद षट् लेश्यायें मिथ्यादृष्टिभाव अव्रतभाव असंज्ञिभाव अज्ञानभाव आहारिकभाव छद्मस्थ भाव संयोगभाव संसारभाव असिद्ध और अकेवलीभाव यह सर्व आठों कर्मों की प्रकृतियों के ही फल हैं और इनके सहचारी ५ निद्रा हास्यादि सर्व और प्रकृतियें भी जान लेनी चाहिये। लेश्यायें इस लिये औदयिक भाव में हैं कि योगों के संबंध होने से ही लेश्याओं की उत्पत्ति है इस लिये अन्य सर्व प्रकृतियें भी ग्रहण करनी चाहियें यह सर्व जीवोदय निष्पन्नभाव है और अजीवोदय निष्पन्नभाव उसका नाम है जिसमें प्रयुक्त द्रव्य परिणाम को प्राप्त हों उसको अजीवोदय निष्पन्न भाव कहते हैं जैसे कि पांच शरीर पांच शरीरों का परिणमनशील द्रव्य और वर्ण ५ गंध २ रस ५ स्पर्श ८ पूर्वोक्त यह सर्व द्रव्यों के कारण से ही परिणत होते हैं इस लिये उन्हें अजीवोदय निष्पन्न भाव माना गया है साथ ही अन्य द्रव्य शरीरों के सहचारी भी जान लेने चाहिये और यह भी जीव के कर्मोदय से ही प्राप्त होते हैं किन्तु विशेष पुद्गलद्रव्यके सम्बन्ध होने से इनको अजीवोदयनिष्पन्न

भाव माना गया है अतः इसी स्थान पर औदयिकभाव का समास सम्पूर्ण हो गया है अब इसके पश्चात् औपशमिकभाव का विवर्ण किया जाता है ॥

॥ अथ औपशमिकभाव विषय ॥

मूल—सेकिंतं उवसामिए ? २ दुविहे प. तं. उवसमेय उवशमनिप्पन्ने य सेकिंतं उवसमे २ मोहणिज्जस्स कम्मस्स उवसमेणं सेकिंतं उवसम निप्पन्ने ? २ अणेगविहे प. तं. उवसंतकोहे उवसंत माणे उवसंत माया उवसंतलोभे उवसंतपेज्जे उवसंत दोसे उवसंतदंसणमोहणिज्जे ७ उवसंत चरित्त मोहणिज्जे ८ उवसंतिया सम्मत्तलद्धि उवसामिया चरित्तलद्धि १० उवसंत कसाय छउमत्थे वीयरागे ११ से तं उवसम निप्पन्ने सेतं उवसामिए नामे ॥

पदार्थः—(सेकिंतं उवसमिए ? २ दुविहे प० तं०) अव वह कौनसा है औपशमिक भाव ? (उत्तर) औपशमिक भाव दो प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि (उवसमेय उवसमनिप्पन्नेय) उपशमभाव और उपशमनिष्पन्न भाव च पाद पूरणार्थ है (सेकिंतं उव्वसमे २) वह उपशमभाव कौनसा है ? (मोहणिज्जस्सकम्मस्स उवसमेणं) (उत्तर) मोहनीय कर्म की अष्टाविंशति प्रकृतियों का उपशम श्रेणी में उपशम होजाना उसे उपशम-भाव कहते हैं णं इति वाक्यालंकारार्थ में है (सेकिंतं उवसमनिप्पन्ने २) (प्रश्न) वह उपशम निष्पन्न भाव कौनसा है ? (उत्तर) उपशमनिष्पन्न भाव (अणेगविहे प० तं०) अनेक प्रकार से प्रतिपादन किया गया है क्योंकि मोहनीय कर्म की प्रकृतियों के उपशम होने से जो फल उपलब्ध होते हैं उन्हें उपशमनिष्पन्न भाव कहते हैं सो वह फल निम्नलिखितानुसार हैं (उवसंतकोहे १ उवसंतमाणे २ उवसंतमाया ३ उवसंतलोभे ४) क्रोध का उपशान्त होजाना जैसे भस्माच्छा-

---

१ पद्म-छद्म-मूर्ख-द्वारे-वा। प्रा० व्या० अ० ८ पा० २ सू० ११२ ॥

गुरु संयुग्मस्यान्त्य, व्यञ्जनात् पूर्वं उद्धा भवति ॥

दित अग्नि होती है तद्वत् क्रोध होना इसी प्रकार मान माया लोभ और (पेज्जे ५ उवसंतदोसे ६ उवसंतदंसणमोहणिज्जे ७ उवसंत चरित्तमोहणिज्जे ८) उपशान्त राग ५ उपशान्त द्वेष ६ उपशान्तदर्शनमोहनीय कर्म ७ उपशान्त चारित्र मोहनीय कर्म ८ (उवसमिया सम्मत्तलद्धी ९ उवसमियाः चरित्तलद्धी १०) उपशान्त सम्यक्त्वलब्धि ९ उपशमचारित्रलब्धि १० (उवसंतकसायछउमत्थवीयरागे ११) उपशान्तकषायछद्मस्थवीतराग जो एकादशवें गुणस्थानवर्ती जीव हैं (सेतं उवसमनिप्फन्ने सेतं उवसामिये नामे) सो यही उपशमनिष्पन्नभाव है और इसे ही उपशम नाम कहते हैं॥

भावार्थः—औपशमिक भाव भी दो प्रकार से वर्णन किया गया है एक तो उपशम द्वितीय उपशमनिष्पन्न। उपशम उसे कहते हैं जिस के द्वारा मोहनीय कर्म की अष्टाविंशति प्रकृतियें भस्माच्छादित अग्निवत् उपशम हों द्वितीय उपशम निष्पन्न उसका नाम है जो मोहनीय कर्म के उपशम होने से फलों की प्राप्ति हो जैसे कि चारों कषायों का उपशम होना राग और द्वेष का उपशम होना और दर्शनमोहनीय कर्म का उपशम होना चारित्रमोहनीय कर्म का उपशम होना और इन दोनों के फल उपशम सम्यक्त्वलब्धि और उपशमचारित्रलब्धि का प्राप्त होजाना अर्थात् शंकादि का उपशम होना और उपशान्त कषाय छद्मस्थ वीतराग पद का प्राप्त होना यह सर्व उपशम भाव के फल हैं इन्हें उपशम निष्पन्न भाव कहते हैं॥ उपशम भाव का प्रतिपक्ष क्षायिक भाव है इसलिये अब क्षायिक भाव का विवर्ण किया जाता है॥

॥ अथ क्षायिक भाव विषय ॥

मूलः—सेकिंतं क्खइए ? २ दुविहे प० तं० खइएय खइय निप्फन्नेय सेकिंतं क्खइए? २ अट्ठएहं कम्मपगडीणं क्खएणं सेतं क्खइए सेकिंतं क्खइय निप्फन्ने २ उप्पन्ननाणदंसणधरे अरहा जिण केवली खीणाभिणीबोहियनाणावरणे १ खीणसुय नाणावरणे २ खीण उहीनाणावरणे ३ खीण मणपज्जवनाणावरणे ४ खीण केवलनाणावरणे ५ अणावरणे निरावरणे

खीणावरणे नाणावरणिज्जेकम्मविप्पमुक्के केवलदंसी सव्वदंसी खीणनिद्दे खीणनिद्दानिद्दे खीणपयले खीणपयलापयले खीणथीणनिद्धी १० खीणचक्खुदंसणावरणे ११ खीण अचक्खुदंसणावरणे १२ खीण उहीदंसणावरणे १३ खीण केवलदंसणावरणे १४ अणावरणे निरावरणे खीणावरणे दरिसणावरणिज्जस्स कम्मस्स विप्पमुक्के खीण सायावेयणिज्जे १५ खीण असायावेयणिज्जे १६ अवेयणे निव्वेयणे खीणवयणे सुभासुभवेयणिज्जे विप्पमुक्के खीणकोहे खीणमाणे खीणमाया खीण लोभे २० खीणपेज्जे २१ खीणदोसे २२ खीणदंसण मोहणिज्जे २३ खीणचरित्त मोहणिज्जे २४ अमोहे निमोहे खीणमोहे मोहणिज्जे कम्म विप्पमुक्के खीण नेरइयाउए २५ खीण तिरियाउय २६ खीणमणुयाउय २७ खीण देवाऊय २८ अणाउए निराउए खीणाउय आउयकम्मविप्पमुक्के गइ जाइ सरीरं गोवंग बंधण संघायण संघयण संठाण अणेग वोंदिविंद संघाय विप्पमुक्के खीण सुभनामे २९ खीण असुभनामे ३० अनामेनिन्नामे ३० खीणनामे सुभासुभनामकम्म विप्पमुक्के खीण उच्चा गोए ३१ खीण नीयागोए ३२ अगोए निगोए खीणगोए सुभा सुभ गोत्तकम्म विप्पमुक्के खीणदाणंतराय,३३ खीण लाभ अंतराय ३४ खीण भोगान्तराय ३५ खीण उवभोगान्तराय ३६ खीणवीरियांतराय ३७ अणन्तराय खीण अंतराय कम्मस्स विप्पमुक्के सिद्धे बुद्धे मुत्ते परिनिवुडे अंतग सव्वदुख पहीणे सेत्तं खइय निप्पन्ने सेत्तं खइय नामे.

पदार्थ—(सेकिंतं खइए? २ दुविहे प०तं०) (प्रश्न) वह क्षायिकभाव कौनसा है? (उत्तर) क्षायिकभाव दो प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि (खइपय

खइय निप्पन्नेय) एक क्षायिकभाव द्वितीय क्षायिकनिष्पन्न भाव (सेकिंतं खइय? २ (प्रश्न) क्षायिक भाव किसे कहते हैं? (उत्तर) अट्ठण्हं कम्म पगडीणं खइयणं सेत्तं खखइय) आठ कर्मों की प्रकृतियोंका क्षय होजाना उसे क्षायिक भाव कहते हैं क्योंकि क्षायिक भाव उसी का नाम है जो सर्व कर्म प्रकृतियों से रहित हो ॥ अब क्षायिक निष्पन्नका वर्णन करते हैं (सेकिंतं खखइय निप्पन्ने २) (प्रश्न) क्षायिक निष्पन्नभाव किसे कहते हैं? (उत्तर) क्षायिकनिष्पन्नभाव के निम्न लिखित लक्षण हैं? (उप्पन्न नाणदंसणधरे) जिनको ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीय के क्षय होने के कारण से ज्ञान और दर्शन उत्पन्न हुआ है इसलिये उत्पन्नज्ञानदर्शन के धरने वाले (अरहाजिणे केवली) सर्व के पूजनीय अर्हन् फिर राग द्वेष के जीतने से जो जिन कहलाए हैं और सम्पूर्ण ज्ञान के कारण से जिन को केवली कहा जाता है और जो आठों कर्मों की प्रकृतियों को क्षय कर के फिर उन के फल को प्राप्त हुए हैं वह सिद्ध हैं अब प्रथम ज्ञानावरणीय कर्म की प्रकृतियों का विवर्ण करते हैं यथा (खीणाभिणि बोहियनाणावरणे) क्षीण किया है आभिनिबोधिक ज्ञान का आवरण और (खीण सुय नाणा वरणे) क्षीण हैं जिन के श्रुतज्ञानावरणे (खीण ओहिनाणावरणे) क्षीण हैं जिन के अवधिज्ञानावरण ३ खीणमणपज्जवनाणावरणे) क्षीण हैं मनःपर्यय ज्ञाना वरण ४ (खीण केवलनाणावरणे) क्षीण हैं केवलज्ञानावरणे ५ (अणाज्ञानावरणे) आवरण से रहित हैं निरावरणे) निरावरण हैं (खीणावरणे) जिनका आवरण क्षीणता को प्राप्त होगया है जब कि आवरण सर्वथा क्षीण है तब (नाणावरणिज्जे कम्मविप्पमुक्के) ज्ञानावरणीय कर्म से विप्रमुक्त हुए अर्थात् ज्ञानावरणीय कर्म की पांचों प्रकृतियों के आवरण क्षय करके केवल ज्ञान के धारक हुए फिर सर्वथा आवरण क्षीण करके केवल दर्शन भी प्राप्त· इस लिये दर्शनावरणीय कर्म की प्रकृतियों का विवर्ण करते हैं (केवलदंसीसव्वदंसी) ज्ञानावरणीय कर्म के क्षय होने से केवल ज्ञानी होकर फिर दर्शना वरणीय कर्म के क्षय होने से केवलदर्शी और सर्वदर्शी हुए हैं अब इन की प्रकृतियों का स्वरूप कहते हैं (खीणनिद्दे ६) जिन्हों ने निद्रा क्षीण की है निद्रा उसका नाम है जिसमें सुखपूर्वक सो कर अपनी इच्छानुसार उठे ६ और (खीणनिद्दानिद्दा,) जिन्हों ने क्षीण की है निद्रानिद्रा क्योंकि-निद्रा

निद्रा उसे कहते हैं जिसमें सुखपूर्वक सोकर दुःखपूर्वक जागृत अवस्था को प्राप्त होवे (खीण पयले ८) और जिसन क्षीण की है प्रचला नामक निद्रा जो बैठेहुए को भी आजाती है ८ (फिर खीणपयलापयला ९) क्षीण की है प्रचलाप्रचला—जो निद्रा चलते समय भी प्राप्त हो जाती है और (खीण स्थीण-निद्धि १०) क्षीण है जिनके स्त्यानगिर्द्ध जो महा अशुभ कर्मों के उदय से जीव को होती है (खीणचक्खुदंसणावरणे) क्षीण हो गया है चक्षुओं का आवरण ११ (खीण अचक्खुदंसणावरणे) क्षीण है चक्षुभिन्न इन्द्रियों का आवरण अर्थात् चार इन्द्रियों के आवरण भी क्षीण हो गये हैं १२ (खीण उहीदंसणावरणे १३) क्षीण है जिनके अवधि दर्शनावरण १३ और (खीण केवलदंसणावरणे १४) केवलदर्शनावरण भी क्षय होगया है इसलिये (अणावरणे) अनावरण है (निरावरणे) निरावरण है (खीणावरणे) क्षीण आवरण है (दरिसणावरणनिज्जकम्मस्सविप्पमुक्के) इसलिये दर्शनावरणीय कर्म से विप्रमुक्त है अर्थात् जो दर्शनावरण कर्म के आवरण है उन्हों से रहित होगया है इस वास्ते सर्वदर्शी शब्द ग्रहण किया है अब वेदनीय कर्म का स्वरूप कहते हैं ॥ (खीण साया वेयणिज्जे १५ खीण असाया वेयणिज्जे १६) क्षीण है शाता वेदनीय कर्म १५ और क्षीण है अशाता वेदनीय कर्म १६ क्योंकि वेदनीय कर्म के क्षय होने से शाता वेदनीय और अशाता वेदनीय यह दोनों प्रकृतियें क्षय होगई हैं। फिर आत्मिक सुख प्रकट होगया है क्योंकि यह दोनों प्रकृतियें विनाशवती हैं सो वेदनीय कर्म के क्षय होने से (अवेयणे निवेयणे खीणवेयणे) वेदना से रहित हुए। जिनकी वेदना चली गई है अपितु क्षीण वेदना होगई है फिर (सुभासुभवेयणिज्ज कम्मविप्पमुक्के) शुभाशुभ वेदनीय कर्म से रहित हुए अतः वेदनीय कर्म से पीछे अब मोहनीय कर्म का स्वरूप लिखा जाता है. (खीण कोहे खीण माणे खीण माया खीण लोभे २०) क्षय हो गया है क्रोध मान माया लोभ २० (खीण पेज्जे २१ खीण दोसे २२) क्षीण होगये हैं राग और द्वेष फिर (खीण दंसणमोहणिज्जे २३) जिनके दर्शनमोहनीय कर्म की तीनों प्रकृतियें क्षय हो गई हैं जैसे कि सम्यक्त्व मोहनीय १ मिश्र मोहनीय २ मिथ्यात्व मोहनीय तथा (खीण चरित्तमोहणिज्जे २४) चारित्र मोहनीय कर्म की भी दोनों प्रकृतियें क्षय हो गई हैं जैसे कि कषाय और नो कषायों के १६ भेद हैं नो

कषायों के हास्यादि नव भेद हैं २४ इसलिये (अमोहे निर्मोहे खीणमोहे) मोहनीय कर्म के क्षय होने से अमोह निर्मोह और क्षीणमोह हो गये हैं अतः (मोहणिज्जे कम्मविप्पमुक्के) मोहनीय कर्म से विप्रमुक्त हो गये अर्थात् मोहनीय कर्म से सर्वथा रहित होकर फिर आयुष कर्म से रहित हुए इसालिये अब आयुकर्म की प्रकृतियों का विवर्ण करते हैं (खीण नेरईयाउए २५ खीण तिरियाउए २६ खीण मणुयाउए २७ खीण देवाउए २८) क्षीण करदी हैं नरकायु तिर्यक् आयु मनुष्य आयु और देवायु जब चारों प्रकार से आयु क्षय करदी तब (अणाउए निराउए खीणाउए) अनायु हुए निरायु हुए अपितु क्षीणायु हुए फिर (आउए कम्मस्स विप्पमुक्के) आयुकर्म से सर्वथा विप्र मुक्त हुए अर्थात् आयु कर्मों के बंधनो से छूट गये फिर नाम कर्म की प्रकृतियों से भी रहित हुए जिन का विवर्ण निम्न. लिखितानुसार है (गइ जाइ शरीर गोवंगवंधण संघायण संघयण संठाण अणेगबोधि विंद संघाय विप्पमुक्के) नामकर्म के उदय से ही शरीर की रचना है इसालिये इनकी सर्व प्रकृतियों का विवर्ण किया गया है जैसे कि चार गतियें पांच जातियें पांच शरीर तीनों के अंगोपांग ५ बंधन ५ *संघातन ६ संहनन ६ संस्थान अनेक प्रकार के शरीरों का वृन्द और उनके संघात सर्व प्रकार से विप्रमुक्त हुए अर्थात् नामकर्म की प्रकृतियें क्षय करी फिर (खीण सुभनामे २८) क्षीण किया शुभ नाम २८ और (खीण अशुभनामे ३०) क्षीण कर दिया है अशुभ नाम जैसे अनादेज्ञ नामादि (अनामे निन्नामे खीणनामे) इसालिये अनाम निर्नाम और क्षीणनाम हुए अतः (खीण सुभासुभनामकम्मविप्पमुक्के) क्षीण कर दिया है शुभाशुभ नाम इसी वास्ते नाम कर्म से रहित हुए फिर (खीण उच्चागोए ३१ (खीण नीयागोए ३२) गोत्रकर्म के क्षय होने से ऊंचगोत्र और नीचगोत्र भी क्षीण कर दिया है इस लिये (अगोए निगोए खीणगोए सुभासुभगोत्तकम्मविप्पमुक्के) गोत्रकर्म के क्षय होने से अगोत्र निगोत्र क्षीणगोत्र हो गये अतः शुभाशुभ गोत्र कर्म के बंधन से मुक्त हुए फिर (खीण दाणंतराय ३३) अंतराय कर्म के क्षय होने से दानांतराय भी क्षय कर दी (खीण लाभांतराय ३४) क्षीण की है लाभांतराय ३४ खीण भोगांतराय ३५) क्षय करदी है भोगांतराय ३५ फिर (खीण उव भोगांतराय ३६) क्षीण करदी है उपभोगांतराय जो वस्तु पुनः पुनः आ-

सेवन करने में आती है उन्हें उपभोग कहते हैं (खीण वीरियंतराय ३७) क्षीण की है बल वीर्य की अंतराय जब अंतराय कर्म की पांचों प्रकृतियें क्षय हो गई तब (अणंतराय) अंतराय रहित हुए (नाणंतराय) नहीं रही है जिन के अंतराय (खीणंतराय अतः क्षय हो गई है सर्वथा अंतराय पुनः (अंतराय कम्मस्सविप्पमुक्के) अंतराय कर्म के बंधनों से मुक्त हुए इस लिए (सिद्धे बुद्धे मुत्ते परिवीवुडे अंतग , जो आत्मा क्षायिक भाव वाले हैं उनको सिद्ध, बुद्ध, मुक्त शीतलीभूत दुःखों के अंतकर्त्ता (सव्वदुक्खप्पहीणे) सर्व दुखों से रहित ऐसे कहते हैं अर्थात् उनको उक्त नामों से कहाजाता है (सेतं खइय निप्फन्ने सेतं खइय नामे) अथ शब्द प्रागवत है यही क्षायिक निष्पन्न भाव है और इसे ही क्षायिक नाम कहते हैं सो इसी स्थानोपरि क्षायिक भाव का समास पूर्ण हो गया है इस के आगे क्षयोपशम भाव का विवर्ण किया जाता है ॥

भावार्थ—क्षायिक भाव दो प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि एकतो क्षायिक भाव द्वितीय क्षायिक निष्पन्न भाव है क्षायिक भाव उसे कहते हैं जिससे आठों कर्मों की प्रकृतियों का क्षय हो और क्षायिकनिष्पन्न भाव उस का नाम है जो आठों कर्म की प्रकृतियों के क्षय होने से सुख का अनुभव किया जाता है जैसे कि—मतिज्ञानावरणीय १ श्रुतज्ञानावरणीय २ अवधिज्ञानावरणीय ३ मनःपर्यवज्ञानावरणीय ४ केवलज्ञानावरणीय ५ इन पांचों के क्षय होने से जीव सर्वज्ञ हो जाता है फिर निद्रा १ निद्रानिद्रा २ प्रचला ३ प्रचला प्रचला ४ स्त्यानगिद्धि निद्रा ५ चक्षुदर्शनावरणीय ६ अचक्षुदर्शनावरणीय ७ अवधिदर्शनावरणीय ८ केवलदर्शनावरणीय ९ इन प्रकृतियों के क्षय होने से जीव सर्वदर्शी होजाता है और शातावेदनीय और अशातावेदनीय के क्षय होने से जीव वेदनीय कर्म से रहित होता है फिर क्रोध मान माया लोभ राग और द्वेष सम्यक्त्व मोहनीय मिथ्यात्व मोहनीय मिश्र मोहनीय १६ कषायों नव नोकषायों के क्षय करने से जीव क्षीणमोहणीय कहा जाता है पुनः नरकायु तिर्यग् आयु मनुष्य आयु देवायु के क्षय करने से जीव निरायु हो जाता है अतः चारों गतियां पांचजातियां ५ शरीर तीनों के अंगोपांग ५ बंधन ५ संघातन श्लेष रूप ६ संहनन ६ संस्थान अनेक प्रकार की शरीरों की आकृतियां और शुभनाम अशुभनाम को क्षय करके जीव क्षीण नाम वाला हो जाता है अर्थात् अपने निज स्वभाव अमूर्ति भाव में आ जाता है क्योंकि नाम कर्म

सूत्रधार (बढ़ई) के समान शरीर की रचना करता है फिर ऊंच गोत्र और नीच गोत्र की प्रकृतियों को क्षय करने से जीव अगौत्रिक हो जाता है फिर दानांतराय लाभान्तराय भोगान्तराय उपभोगान्तराय बलवीर्यान्तराय इन पांचों प्रकृतियों के क्षय होने से अनंत शक्ति सम्पन्न जीव हो जाता है फिर उस जीव को सिद्ध बुद्ध मुक्त शीतलीभूत सर्व दुखों का अंतकर्ता इत्यादि नाम हो जाते हैं इस लिये इसको क्षायिकभाव कहते हैं और यही क्षायिक भाव का स्वरूप है अब क्षायिक भाव के पीछे क्षायोपशम भाव का विवर्ण किया जाता है।

॥ अथ क्षयोपशम भाव विषय ॥

मूल—सेकिंतं खओवसमिए? २ दुविहे प० तं० खओवसमिए य खओवसम निप्फन्नेय सेकिंतं खओवसमे?२ चाण्हंघाइकम्माणं खओवसमेणं तंजहा नाणावरणिज्जस्स दंसणा वरणिज्जस्स मोहणिज्जस्स अंतराइस्स ४ खओवसमेणं सेतं खओवसमेणं सेकितं खओवसमेनिप्फन्ने?२ अणेगविहे प.तं. खओवसमिया आभिणिबोहियनाणलद्धी१ खओवसमिया सुयनाणलद्धी२ खओवसमिया ओहिनाणलद्धी ३ खओवसमिया मणपज्जवनाणलद्धी४ खओवसमियाम इअणाणलद्धी५ खओवसमियासुयअणाणलद्धी ६ खओवसमियाविभंगणाणलद्धी७ खओवसमिया चक्खुदंसण लद्धी ८ एवं अचक्खुदंसणलद्धी ९ ओहिदंसणलद्धी १० एवं सम्मदंसणलद्धी ११ मिच्छादंसणलद्धी १२ सम्मामिच्छादंसण लद्धी १३ खओवसमिया सामाइयचरित्तलद्धी १४ एवंछेदोवठावण लद्धी१५ परिहार विसुद्धियलद्धि१६ सुहुमसंपरायलद्धी१७खओवसमयाचारित्ताचारित्तलद्धि १८ खओवसमियादाणलद्धि १९ एवं लाभ२०भोग२१ओवभोग२२खओवसमियावीरियलद्धी२३ खओवसमियाबालवीरियलद्धी २४ खओवसमियापंडियविरीयलद्धि २५

खओवसमियवालपंडियलद्धी२६ खओवसामियसोइंदियलद्धि२७ खओवसामियाचक्खुइंदियलद्धी२८ खओवसमियाघणिदियलद्धि २९ खओवसमिया जिंभिदियलद्धि ३० खओवसामिय फासिंदिय लद्धी ३१ खओवसीमया आयारधरे ३२ एवं सुयगड़धरे ३३ ठाणांगधरे ३४ समवायधरे ३५ विवाह पारणात्तिधरे ३६ एवं नायाधम्मकहा ३७ आवासगदसा अंतगओदसा ३८ अणुतरो ववाइयदसा ४० पाराहावागरे ४१ खओवसम्मिया विवांगसुयधरे ४२ खओवसमिया दिट्ठिबायधरे ४३ खओवसमिया नवपुवधरे ४४ जो चौद्दसपुव्वधरे ४५ खओवसमियागणीवायए ४६ सेतं खओवसमेनिष्फन्ने सेतं खओवसामिये नामे ॥

पदार्थ-(सेकिंतं खओवसमिय२ दुविहे पं० तं०) अब वह क्षयोपशमभाव कितने प्रकार से वर्णन किया गया है (उत्तर) क्षयोपशम भाव दो प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि (खओवसमेय १ खओवसम निष्फन्नेय) एक क्षयोपशम भाव द्वितीय क्षयोपशम निष्पन्न भाव (सेकिंतं खओवसमे २ चउण्हंपं- कम्माणं खओवसमेणं तंजहा) (प्रश्न) क्षयोपशम किसे कहते हैं (उत्तर) क्षयोपशम भाव उसका नाम है चारों घातिक कर्मों के क्षयोपशम होने से निष्पन्न होता है जैसे कि- (नाणावरिणज्जस) ज्ञानावरणीय के (दंसण वरणिज्जस्स २) दर्शना वरणीय के २ (मोहणीज्जस्सइ) मोहनीय कर्म के (अंतराइयस्स ४) अंतराय के ४ (खओवसमेणं) क्षयोपशम होने से जो भाव उत्पन्न होते हैं उसे क्षयो पशम भाव कहते हैं अर्थात जब चारों कर्म क्षयोपशम भाव में होते हैं तब क्षयोपशम भाव कहा जाता है (सेतं खओवसमे) सो वही क्षयोपशम भाव है अर्थात कुछ उक्त कर्म क्षय हो गये हों और कुछ उपशम हुए हों तब उसको क्षयोपशम भाव कहते हैं ।

॥ अथ क्षयोपशम निष्पन्न का विवर्ण करते हैं ॥

(सेकिंतं खओवसमे निष्फन्ने २ अणेग विहे पं० तं०) (प्रश्न) क्षयोपशम निष्पन्न भाव कितने प्रकार से विवर्ण किया गया है (उत्तर) क्षयोपशम

निष्पन्न भाव अनेक प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि- (खओव-समिया भिणिबोहिय नाणलद्धी १) ज्ञाना वरणीय कर्म के क्षयोपशम होने मति ज्ञान की लब्धि उत्पन्न होती है अतः पूर्णतया मति ज्ञान का उत्पन्न होना यह क्षयोपशम भाव का मूल कारण है क्योंकि केवल ज्ञान के बिना ही शेष यावन्मात्र सूत्र दिये गये हैं वे सर्व क्षयोपशम भाव से ही उत्पन्न होते हैं इसलिये आगे सर्व अंको की सम्भावना इसी प्रकार कर लेनी चाहिये (खओवसमिया सुयनाणलद्धी १२) क्षयोपशम भाव से श्रुत ज्ञान की लब्धि उत्पन्न होती है (खओवसमिया ओही नाण लद्धी १३) क्षयोपशम से अवधि ज्ञान की लब्धि उत्पन्न होती है ३ (खओवसमिया मणपज्जव नाणलद्धी ४) क्षयोपशम से मनः पर्यय ज्ञान की लब्धि होती है ४ (खओव समिया मइअणाणलद्धी ५) क्षयोपशम से मति अज्ञान की लब्धि उत्पन्न होती है अत यह नञ् समासान्त पद है जो कुत्सित ज्ञान है वही मति अज्ञान है क्यों कि न ज्ञानं इति अज्ञानं---जो ज्ञान का प्रति पक्ष हो उसी का नाम अज्ञान है. अतः व्यवहारिक वस्तुओं को छोड कर षट् द्रव्यों के विचार में ज्ञान अज्ञान की भली प्रकार से परीक्षा हो जाती है इसी प्रकार (खओवसमिया सुय-अणाण लद्धीई) क्षयोपशम से श्रुत अज्ञान की लब्धि है (खओवसमिया विभंग नाणलद्धी ७ क्षयोपशम से विभंग ज्ञान की लब्धि है अर्थात् अवधि ज्ञान के जो विपरीत हो उसे विभंग ज्ञान कहते हैं और (खओवसमिया चक्खु दंसण लद्धी ८) क्षयोपशम भाव से चक्षु दर्शन की लब्धि उत्पन्न होती है (खओवसमिया अचक्खु दंसणलद्धी) क्षयोपशम से अचक्षु चारों इंद्रियों के दर्शन की लब्धि है (खओवसमिया ओहि दंसणलद्धी १०) क्षयोपशम से अवधिदर्शन की लब्धि है १० अथ दर्शन विषय में कहते हैं (खओवसमिया सम्मदंस्सणलद्धी ११) क्षयोपशम से सम्यक् दर्शन की लब्धि उत्पन्न होती है. अर्थात् जब मोहनीयकर्म की प्रकृतियें क्षयोपशम होती हैं तब सम्यक् दर्शन उत्पन्न होजाता है इसलिए क्षयोपशम भाव में सम्यक् दर्शन प्राप्त है। (खओवसमिया मिच्छा दंसणलद्धी १२) क्षयोपशम से मिथ्या दर्शन की लब्धि उत्पन्न होती है अतः मिथ्यात्व में रुचि का होना यह भी क्षयोपशम भाव में है (खओवसमिया सम्मा मिच्छा दंसणलद्धी १३) क्षयोपशम भाव से मिश्र दर्शन की लब्धि उत्पन्न होती है १३ और (खओवसम समाईय चरित लद्धी १४)

क्षयोपशम भाव से समायिक चरित्र की लब्धि उत्पन्न होती है १४) (खओव समछेदोवठा वणियाचरितलद्धी १५) क्षयोपशम भाव से छेदोपस्थापनीय चरित्र की लब्धि उत्पन्न होती है-१५ और (खओवसमिया परिहार विसुद्धि चरित लद्धी १६) क्षयोपशम भाव से परिहार विशुद्ध की चरित्र लब्धि है १६ इसी प्रकार (सुहुम संपरागलद्धी १७) सूक्ष्म सम्पराग चरित्र की लब्धि है और (खओवसमिया चरिता चरितलद्धी १८) क्षयोपशम भावसे ही चारित्रा चरित्र की लब्धि प्राप्त होती है अर्थात् श्रावक व्रति का प्राप्त होना यह क्षयोपशम भाव का महात्म्य है १८ और (खओवसमिया दाणलद्धी १९) क्षयोपशम से दान लब्धि होती है १९ (एवं लाभ) इसी प्रकार क्षयोपशम भाव से लाभ लब्धि होती है २० (भोगलद्धी २१) भोग लब्धि होती है २१ (उव भोग २२) जो वस्तु पुनः आसेवन करने में आती है उसकी लब्धि भी क्षयोपशम भाव से होती है २२ (खओवसमिया वीरियलद्धी २३) क्षयोपशम भाव से वीर्य की लब्धि उत्पन्न होती है यह सर्व अंतराय कर्म के क्षयोपशम होने का फल है तथा भेदान्तर विषय में कहते हैं (खओवसमिय वालवीरिय लद्धी २४) क्षयोपशम से वाल वीर्य की लब्धि उत्पन्न होती है २४ और (खओवसमिया पंडियवीरियलद्धी २५) क्षयोपशम से पंडित वीर्य की लब्धि होती है फिर (खओव समिया वाल पं० वीरिय लद्धी) २६ क्षयोपशय भाव से वाल पंडित की वीर्य की लब्धि होतीहै २६ अर्थात् जो अज्ञानता से मिथ्यात्व में परिश्रम किया जाता है उसे वाल वीर्य कहते हैं जो ज्ञान से सम्यग् दर्शन में परिश्रम किया जाताहै वे पंडित वीर्यहोता है २ जो देश व्रति जन परिश्रम करतेहैं उन्हें वाल पं. वीर्य कहते हैं ३ । और (खओवसमिया सोइंदियलद्धी २७) क्षयोपशम से श्रोतेंद्रिय की लब्धि प्राप्त होती है और अर्थात जो श्रुत इंद्रिय में सुनने की शक्ति है वह भी क्षयोपशम भाव से होती है इसी प्रकार-(खओवसमिया चक्खिदियलद्धी २८) क्षयोपशम से चक्षुरिंद्रिय की लब्धि होती है २८ (खओवसमिया घाणिंदिय लद्धी २९) क्षयोपशम से घ्राणेंद्रिय की लब्धि होती है २९ (खओवसमिया जिब्भिदिय लद्धी ३०) क्षयोपशम से रसेन्द्रिय की लब्धि होती है ३० (खओवसमियाफासिंदियलद्धी-३१) क्षयोपशम से स्पर्शेन्द्रिय लब्धि होती है ३१ (खओवसमिया आयारधरे ३२) क्षयोपशम से अचारांग सूत्र के धरने की लब्धि होती है अर्थात आचारांग के पठन करने की शक्ति भी क्षयोपशम भाव पर

निर्भर है इसी प्रकार (एवं सुयगडे ३३) सूत्र कृतांग की लब्धि ३३ (ठाणां गधरे ३४) स्थानांग की लब्धि ३४) (समयांग धरे ३५) समवायांग सूत्र के धारने की शक्ति ३५ (विवाह पएणतिधरे ३६) विवाह प्रज्ञप्ति के धारने की लब्धि ३६ (एवं नामा धम्म कहा ३७) इसी प्रकार ज्ञाता धर्म कथांग की धारने की लब्धि ३७ (उवासगदसा ३८) उपासक दशांग के धारने की लब्धि ३८ (अंत गडदसाउ ३९) अंतगड़ दशांग के धारने की लब्धि ३९ (अणुत्तरो ववा इयदसाउ ४०) अनुतरो ववाइ दशांग सूत्र ४० (पराह वागरे ४१ , प्रश्न व्याकरणांग सूत्र ४१ (खओवसमिया विवागधरे ४२) क्षयोपशम से ही विपाक सूत्र के धारने की लब्धि और (खओवसमिया दिट्ठीवायधरे ४३) क्षयोपशम से दृष्टि वादांग के धारने की लब्धि उत्पन्न होती है और (खओव समिया नवपुव्वधरे ४४) क्षयोपशम से नव पूर्व धारने की लब्धि (जाव दस चउपुव्वी ४९) यावत चर्दश पूर्व पर्यंत क्षयोपशम से ही धारने की लब्धि होती है अर्थात ११-१२-१३-१४ इन पूर्वों के धारने की लब्धि भी क्षयोपशम भाव से होती है और (खओवसमिया गणी वायतए ५०) क्षयोपशम भाव से गणिपद या वाचकपद की प्राप्ति होती है क्योंकि यावन्मात्र उपाधियें हैं वे सर्व क्षयोपशम भाव से ही प्राप्त होती हैं ५० (सेतं खओवसमे निप्फन्ने सेतं खओवसमिए नामे) सो यही क्षयोपशम निष्पन्न भाव है और इसी स्थान पर क्षयोपशम भाव की समाप्ति है क्योंकि कर्मों क क्षयोपशम भाव से ही उक्त वस्तुओं की प्राप्ति होती है ।

भावार्थ—क्षयोपशम भाव भी दो प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि एकतो क्षयोपशम भाव द्वितीय क्षयोपशम निष्पन्न भाव अतः क्षयोपशम भाव उसे कहते हैं जो चारों घातिओं कर्म क्षयोपशम भाव को प्राप्त हो जाव तब क्षयोपशम भाव होता है जैसे कि—ज्ञानावरणीय कर्म १ दर्शनावरणीय कर्म मोहनीय कर्म ३ अंतराय कर्म अपितु क्षयोपशम निष्पन्न भाव उसका नाम है जो क्षयोपशम भाव होने पर फलों की प्राप्ति होती है उसको क्षयोपशम निष्पन्न भाव कहते हैं सो क्षयोपशम भाव के निम्न लिखित फल हैं चार ज्ञान तीन अज्ञान तीन दर्शन तथा सम्यक् दर्शन मिथ्या दर्शन समामिथ्या दर्शन साम यिक चरित्रच्छेदोपस्थानीय चारित्र परिहार विशुद्धि चारित्र सूक्ष्म संपराय चारित्र और क्षयोपशम भाव से चारित्रा चरित्र (देश वृति) की लब्धि पुनः

पांचों अंतरायों का क्षयोपशम होना इसी प्रकार बाल वीर्य पंडित वीर्य बाल पंडित वीर्य पांचों इंद्रियों की पूर्ण शक्ति का होना द्वादशांग वाणी का अध्ययन करना और क्षयोपशम भाव से नव पूर्व से चतुर्दश पूर्व के पठन की शक्ति का होना और गणि आदि उपाधियों का मिलना यह सर्व क्षयोपशम भाव से फल उत्पन्न होते हैं और इन्हीं को क्षयोपशम निष्पन्न भाव कहते हैं अतः विचारणीय इतना ही कथन है कि सम्यग् दृष्टि जीवों को तो ज्ञानादि की लब्धियें उत्पन्न होती है मिथ्या दृष्टि जीवों को तीन अज्ञान मिथ्या दर्शन आदि उत्पन्न होते है और यह भाव संसारी सर्व जीवों को होता है इसका लक्षण यह है कि कुछ प्रकृतियें क्षय हुई हों और कुछ उपशम हुई हों अब इसके पीछे पारिणामिक भाव का विवर्ण किया जाता है ॥

॥ अथ पारिणामिक भाव विषय ॥

मूल-सेकिंतं पारिणामिए भावे २ दुविहे पं० तं० साइय पारिणामिय अणादिय· पारिणामिण्य सेकिंतं सादि पारिणामिय २ अणेगविहे पं० तं० जुन्नासुरा जुन्नघयं जुन्नतं दुलाचेव-अभ्भाय अभ्भरुक्खा जुन्नगुलासंभ्भागंधव्व नगराय १ उक्कावाया दिसादाहा विज्जुयागज्जिया निग्घाया जूवाजक्खा लित्ता धूमिया महियारओग्घाया चन्दोवरागा सूरो वरागा चंदपरिवेसा सूरपरिवेसा पडिचंदा पडिसूरा इंद्रधणुं उदगमच्छाकवि हसिया अमोहा वासावास धरागासो नगरो घडो पव्वडपापालो भवणो निरयापासा उरपणप्प भासकरप्पभा वालुपप्पहा पंकप्पभा धूमप्पभा तमातम तमा सोहम्मे कप्पे ईसाणोजाव आणपपाणप आरणाप अच्चुरागेवज्जए अणुत्तरे इसाप्पभाए परमाणुपोगलय दुप्पएसिये जावदस पएसिये संखेज्ज पएसिये असंखेज्ज पएसिये अणंत पएसिये सेतंसादिये पारिणामिए सेकिंतं अणादिय· पारिणामिए अणेग विहे पं० तं० धम्मत्थि

काय १ अधम्मत्थिकाय २ आगासत्थिकाय ३ जीवात्थिकाय ४ पुग्गलत्थिकाय ५ अद्धासमए ६ लोए ७ अलोय ८ भवसिद्धिया ९ अभव सिद्धिया १० सेतं अणादिय पारिणामिय सेतं पारिणामिए भावे ॥

पदार्थ (सेकिंतं पारिणामिय भावे २ दुविहे पं० तं०) अब क्षयोपशम भाव के पश्चात् पारिणामिक भाव का विवर्ण करते हैं शिष्य ने प्रश्न किया कि हे भगवन् पारिणामिक भाव कितने प्रकार से प्रतिपादन किया गया है गुरु कहते हैं पारिणामिक भाव दो प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि (साइय पारिणामिए य अणादिय पारिणामिए य) एक सादि पारिणामिक भाव है द्वितीय अनादि पारिणामिक भाव है सादि पारिणामिक भाव उसे कहते हैं जो पुद्गल सादि सान्त भाव में ठहरते हैं उनको सादि पारिणामिक भाव कहते हैं अतः जो अनादि अमादि काल से परिणत हो रहे हैं और द्रव्यार्थिक नया पेक्षपा तद्वत् रहते हो उन्हें अणादि पारिणामिक भाव कहते हैं अब प्रथम सादि पारिणामिक भाव का स्वरूप दिखाया जाता है (सेकिंतं सादि पारिणामि २ अणेग विहे पं० तं०) (प्रश्न) सादि पारिणामिक भाव कितने प्रकार से प्रतिपादन किया गया है (उत्तर) सादि पारिणामिक भाव अनेक प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे—(जुन्नसुरा * जुन्नगुला) जीर्ण सुरा जीर्ण गुड क्योंकि सादि पारिणामिक उसे कहते हैं जो द्रव्य परिणमन शील होते हैं उन्हें सादि पारिणामिक भाव कहते हैं जैसे कि जवसुरा के परिणमन की भी आदि है और जीर्ण भाव की भी आदि है अर्थात् जब नूतनसुरा उत्पन्न की गई है तब उसमें जीर्ण भाव भी अवश्य है क्योंकि परमाणु परिणमन शील होते हैं जीर्ण शब्द इस लिये सूत्र में दिया गया है कि जिज्ञासुओं को शीघ्र बोध होजावे इसी प्रकार गुड के भी स्वरूप को भी जानना चाहिये अपितु जिसका आदि है उस पर्याय का अंत भी साथ है इसीलिये (जुण्णंत दुलाचेव) जीर्ण तण्डुल आदि को भी निश्चय ही प्राग्वत् जानना चाहिये अब इसी प्रकार के उदाहरण और भी दिखलाए जाते हैं ॥

---

* नोट—उज्जीर्यो ॥ प्रा० व्या० अ० ८ पा० १। सू० १०२। जीर्ण शब्दे दूत उद् भवति ॥

(अभ्भाय अम्भ रुक्खा) बादलों का परिणमन होना तथा वृत्तों के आकार पर बादलों का होजाना (संज्झा) संध्या के समय बादलों का नाना प्रकार से रंगो में परिणमन होना (गंधर्व नगराय) गंधर्व नगर के समान आकाश में बादलों का तथा अन्य प्रकार के परमाणुओं का परिणमन होना ? (उक्का वाया) उल्कापात आकाश से अग्नि का पतित होना (दिसा दाहा] दिग्दाह होना (विज्जुआ) विद्युत् का होना (गज्जिया) गर्जित शब्द होना (निग्घाया) निर्घात होना तथा (जुवा) शुक्ल पक्ष के तीन दिन पर्यन्त बाल चन्द्र का रहना अर्थात शुक्ल पक्ष के तीन दिन पर्यन्त चंद्रको बालचंद्र कहते हैं (जक्खा लित्तए) आकाश में यक्षकृत कार्य होने (धूमिया) धूम का होना (महिया) स्नेहका पतित होना तथा श्वेतरजादिका होना तथा ओसका गिरना (रओग्घाया) रजघात का होजाना (चंदोवरागा सूरोवरागा) चंद्र सूर्यों को ग्रहण लगजाना बहुवचन इसलिये ग्रहण किया गया है कि सार्द्धद्वीपवर्ती द्वीपों में सर्व चंद्र सूर्यों को सम काल में ग्रहण होता है (चंदपरिवेसा सूरपरिवेसा) चंद्र सूर्य का परिवेष होना अर्थात परिवारक होना (कुंडल होजाना) (पडिचंदा पडिसूरा) दो चंद्र दो सूर्यों का आकाश में दृष्टि गोचर होना (इंद्र धनु) इंद्र धनुष का होना (उदगमच्छा) उदकमत्स्य उसे कहते हैं जो इंद्र धनुष का खंड होता है (कवि हसिया) आकाश में भयानक शब्दों का होना तथा बादलों के बिना विद्युत् संपतन होना (अमोहा) आकाश में नाना प्रकार के चिन्हों का दीखना (वासावासधरा) भरतादि क्षेत्र और हेमवंतादि वर्षधर पर्वत यह सादिपारिणामिक इसलिये हैं कि परमाणुओं की उत्कृष्ट स्थिति असंख्यात काल पर्यन्त होती है फिर वे अवश्यही चलनशील होजाते हैं इसी अपेक्षा से इन को सादि परिणाम में रक्खा गया है किन्तु द्रव्यार्थिक नयापेक्षा वे भरतादि क्षेत्र और चून है मंतादि पर्वत शाश्वत हैं नित्य हैं अतः पर्यायार्थिक नयापेक्षा से वेसादि पारिणामिक भाव में हैं इसी प्रकार आगे भी संयोजना करनी चाहिये (गामो) शुलक से (जगात) सहित होता है (नगरो) जो शुलक से युक्त होता है घर (घर) गृह पव्वड (पर्वत (पयालो) पाताल कलश (भवण) भवनपत्यादि देवों के भवन (निरय नरक और नरकों के आवास (पासाउ) प्रासाद-(रयणप्प भासक्करपभा) रत्न प्रभाशर्कर प्रभा (वालुप्पहा पकप्पहा) वालुप्रभा पंकप्रभा (धूमप्पभा तमप्पभा तमतमाप्पभा

धूम प्रभातम प्रभातम तमःप्रभा अब देवों का स्वरूप लिखते हैं (सोहम्मे कप्पे) सुधर्म कल्प (ईसाणे) ईशान कल्प (जाव आणए पाणए आरणए अच्चुए) यावत् आनत देवलोक, प्राणत देवलोक, आरण्य देवलोक, अच्युत देवलोक (गेवेज्जए नव ग्रैवेयक देवलोक (अणुत्तेर) पांच अनुत्तर विमान और (इसीप्पभाए) ईषत् प्रभा पृथिवी परमाणु पोग्गले (परमाणुपुद्गल वा (दुप्पएसिए) द्विप्रदेशिक स्कंध (जाव दस पएसिए) यावत् दश प्रदेशिक स्कंध (संखेज्ज पएसिए) संख्यात प्रदेशिक स्कंध (असंखेज्ज-पएसिए) असंख्यात प्रदेशिक स्कंध (अणंतप्पएसिए) अनंत प्रदेशिक स्कंध यह सर्व (सेतं सादि पारिणामिए) सादि पारिणामिक भाव में हैं क्योंकि यह सर्व कथन पर्यायार्थिक नयापेक्षा से है अपितु द्रव्यार्थिक नया' पेक्षा उक्त सर्व कथन शाश्वत और नित्य है अतः पुद्गल द्रव्य की उत्कृष्ट स्थिति असंख्यात काल पर्यन्त होती है फिर वह परिवर्तन शील हो जाता है इसी लिये उक्त कथन सादि पारिणामिक भाव में रक्खा गया है। अब अनादि पारिणामिक भाव का कथन किया जाता है क्योंकि अनादि पारिणामिक भाव उसे कहते हैं जो अनादि काल से उसी भाव में परिणमन हो रहे हैं कभी भी अन्य भाव में परिणत नहीं होते उसे अनादि पारिणामिक भाव कहते हैं जैसे कि (सेकिंतं अणादि पारिणामिए) अथ सादि पारिणामिक भाव के पीछे शिष्य ने प्रश्न किया कि हे भगवन् ! अनादि पारिणामिक भाव किसे कहते हैं गुरु ने उत्तर दिया कि भो शिष्य ! (अणेग विहे पएणत्ते-तंजहा) अनादि पारिणामिक भाव अनेक प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि-(धम्मत्थिकाय) धर्मास्तिकाय १ (अहमत्थिकाय) अधर्मास्तिकाय २ (आगासत्थिकाय ३) आकाशास्तिकाय ३ (जीवत्थिकाय) जीवास्तिकाय ४ (पुग्गलत्थिकाय) पुद्गलास्तिकाय ५ (अद्धा समय) काल (लोए) लोक (अलोए) अलोक ८ (भवसिद्धिया ९ अभवसिद्धिया १०) भव्य सिद्ध भाव ९ और अभव्य सिद्ध भाव १० अर्थात् भव्य भाव अभव्य भाव अतः मोक्ष के योग्य और अयोग्य यह सर्व सादि पारिणामिक भाव नहीं हैं अतः एव यह सर्व (सेतं अणादिय पारिणामिए सेतं परिणामिए नामे) अनादि पारिणामिक भाव हैं क्योंकि यह सर्व पदार्थ अनादि काल से स्वगुण में ही स्थित हैं किन्तु पुद्गल द्रव्य के समान परिवर्तन शील नहीं हैं यदि यह शंका

उत्पन्न हो कि सादि पारिणामिक भाव में भी सर्व पुद्गल द्रव्य की पर्यायों का विवर्ण किया गया है और अनादि पारिणामिक भाव में पुद्गल द्रव्य को अनादि पारिणामिक भाव में दिखलाया गया है इसका कारण क्या है इस बात का समाधान यह है कि जो सादि पारिणामिक भाव में विवर्ण हैं वह सर्व पर्यायार्थिक नयापेक्षा से सिद्ध हैं अतः जो अनादि पारिणामिक भाव में पुद्-गल द्रव्य को सम्मिलित किया गया है इसका कारण यह है कि अनादिकाल से पुद्गल द्रव्य परिवर्तन शील है और यह अपना गुण किसी और द्रव्य को नहीं देता इसीलिये इस द्रव्य को दोनों भावों में माना गया है सो इसी स्थान पर पारिणामिक नाम का समास पूर्ण हो गया है और इसी को पारिणामिक भाव कहते हैं ॥

भावार्थ–पारिणामिक भाव दो प्रकार से प्रतिपादन किया गया है सादि पारिणामिक भाव और अनादि पारिणामिक भाव सादि पारिणामिक भाव उसका नाम है जो द्रव्य परिवर्तन शील हैं उनकी नाना प्रकार की आकृतियों का हो जाना उसे सादि पारिणामिक भाव कहते हैं तथा जो पदार्थ द्रव्यार्थिक नया पेक्षा नित्य और ध्रुव है परंतु पर्ययार्थिक नया पेक्षा से अनित्यता भी दिखला रहे हैं उस अनित्यता की अपेक्षा से उन्हें भी सादि पारिणामिक भाव वाले कह सकते हैं अतः अनादि पारिणामिक भाव उसका नाम है जो पदार्थ अनादि काल से अपने गुण में ही स्थित हैं पर गुण में परिवर्तनता नहीं करते सदैव काल अपनी २ पर्यायों में ही रहते हैं उन्हें अनादि पारिणामिक भाव कहते हैं अब इनके पृथक् पृथक् उदाहरण कहते हैं। जीर्ण सुरा जीर्ण गुड़, जीर्ण घृत, और चांवल, बादल, आकाश में बादलों की वृक्षों की आकृति का होना, संध्या गांधर्वनगर उल्कापात दिग्दाह विद्युत् स्तनित शब्द निर्घात (रजधूलि) युव, यक्षाकार, धूममही, रजघात चन्द्रग्रहण सूर्यग्रहण चन्द्र परिवेष सूर्य परिवेष, प्रतिचन्द्र और प्रातिसूर्य, इन्द्र धनुष और उसका खंड आकाश में भयानक शब्द अमोघ और भरतादिवास वर्ष धर पर्वत ग्राम, नगर घर पाताल भूमि भवन नरक प्रासाद ७ सातों नरक स्थान २६ देवलोक सिद्ध शिला परमाणु पुद्गल यावत् अनंत प्रदेशिक स्कंध यह सर्व सादि पारिणामिक भाव में हैं क्योंकि पर्याय परिवर्तन शील है इसी लिये इनको सादि पारिणामिक माना गया है और अनादि पारिणामिक भाव निम्न लिखितानुसार है।

षट् द्रव्य लोक अलोक भव्य, अभव्य यह दश अंक अनादि पारिणामिक है अतः यह परिवर्तन शील नहीं है अब इसके आगे सन्निपातिक नाम का विवर्ण किया जाएगा क्योंकि पारिणामिक भाव का स्वरूप सम्पूर्ण हो गया है ॥

॥ अथ सन्निपातिक भाव (नाम) विषय ॥

मूल—सेकिंतं संनिवाइय नामे २ जन्नं एएसिं चेव उदइय उवसमिएखइयखओवसमिएपारिणामियाणं भावाणं दुग संजोएणं तियसंजोएणं चउक्कसंजोएणं पंचकसंजोएणं जेणं निष्फज्जइ सव्वे से संन्निवाइए नामे २ तत्थणं दसदुग संजोगा दस तिगसंजोगा पंच चउकसंजोगाए कयपंच सं-जोगा तत्थणं जे ते दसदुग संजोगा तेणं इमे अत्थि नामे उद-इएउवसमनिंप्फन्ने १ अत्थि नामे उदइयखइगनिष्फन्ने २ अत्थि नामे उदइय खओवसमनिष्फन्ने ३ अत्थि नामे उदइय पारिणामिएनिष्फन्ने ४ अत्थि नामे उवसमिएखइयनिष्फन्ने ५ अत्थि नामे उवसमिएखओवसमनिष्फन्ने ६ अत्थि नामे उवसमिएपारिणामिएनिष्फन्ने ७ अत्थि नामे खइयखओव समनिष्फन्ने ८ अत्थि नामे खइयपारिणामिएनिष्फन्ने ९ अत्थि नामे खओवसमिएपारिणामिए निष्फन्ने १० कयरे से नामे उदइयउवसमनिष्फन्ने उदइएत्ति मणुस्से उवसंता कसाया एस णं से नामे उदइयउवसमनिष्फन्ने १ कयरे से-नामे उदइयखइयनिष्फन्ने उदइयत्ति मणुस्से खइयं सम्मत्तं एस णं सेना मे उदइयखइयनिष्फन्ने २ कयरे से नामे उदइय खओवसमनिष्फन्ने उदइयात्ति मणुस्से खओवसमियाइं इन्दियाइं एस णं से नामे उदइयखओवसमिएनिष्फन्ने३कयरेसे नामे उदइय

पारिणामिए निष्फन्ने उदइयत्तिमणुस्सेपारिणामिएजीवे एस णं से नामे उदइयपारिणामिएनिष्फन्ने ४ कयरे से नामे उवसामिएखइय निष्फन्ने उवसंता कसाया खइयं सम्मत्तं एस णं से नामे उवसमिये खइयनिष्फन्ने ५ कयरे से नामे उवसमिएखओवसामिएनिष्फन्ने वउसान्त कसाया खओवसमियाइं इन्दियाइं एस णं से नामे उवसमिए खओवसमनिष्फन्ने कयरे से नामे उवसमिए पारिणामिएनिष्फन्ने उवसन्त कसाया पारिणामिए जीवे एस णं से नामे उवसमपारिणामिएनिष्फन्ने ७ कयरे से नामे खइय खओवसमनिष्फन्ने खइयं सम्मत्तं खओवसमियाइं इंन्दियाइं एस णं से नामे खइय खओवसमनिष्फन्ने ८ कयरे से नामे खइय पारिणामिएनिष्फन्ने ? खइयं सम्मत्तं पारिणामिए जीवे एस णं से नामे खइयपारिणामिएनिष्फन्ने ९ कयरे से नामे खओवसमियंपारिणामिएनिष्फन्ने खओवसमियाइं इंन्दियाइं पारिणामिए जीवे एस णं से नामे खओवसमिएपारिणामिए निष्फन्ने ॥ १० ॥

पदार्थ-(सेकिंतं सन्निवाइए नामे २) अब पारिणामिक भाव के पश्चात् सान्निपातिक भाव का विवर्ण किया जाता है क्योंकि सान्निपातिक भाव उसे कहते हैं जो औदयिक औपशामिक क्षायिक क्षयोपशम पारिणामिक भावों के मिलने से भंग बनते हैं उन्हें सन्निपातिक भाव कहते हैं इसी बात को सूत्र में स्पष्ट किया है जैसे कि शिष्य ने प्रश्न किया कि हे भगवन् ! सान्निपातिक किसे कहते हैं (उत्तर) (जन्नं एएसिं चेव उदइय उवसमिय खइय खओवसामिए पारिणामियाणं भावाणं दुग संजोएणं, तिय संजोएणं, चउक्क संजोएणं, पंचक्क संजोएणं जेणं निप्पज्जइ सव्वे से सन्निवाइए नामे) इन औदयिक २ औपशमिक क्षायिक ३ क्षयोपशमिक ४ और पारिणामिक भावों के मिलने से जो द्विक् संयोगी, तीन संयोगी, चार संयोगी, पांच संयोगी भंग बनते हैं उन सबका सन्नि-

पातिक नाम होता है परन्तु उनमें से (दस दुग संजोगा) दश भंग द्विसंयोगी (दसतिग् संजोगा) दश भंग तीन संयोगी होते हैं और (पंच चउक्क संजोगा) पांच भंग चार संयोगी होते हैं अपितु (एक्के पंचसंजोगा) पांच संयोगी एकही भंग होता है (तत्थणं जे ते दस दुग संजोगा ते णं इमे) उन सर्व भंगों में से जो दश भंग द्विक् संयोगी हैं वह इस प्रकार से हैं जो आगे कहे जाते हैं-- (अत्थि नामे उदयिय उवसमनिप्फन्ने) जो औदयिक और औपशामिक भाव के मिलने से नाम उत्पन्न होता है उसको अस्ति औदयिक औपशमिक सान्निपातिक भाव कहते हैं इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिये (अत्थि नामे उदइय खइय निप्फन्ने २) अस्तिनामे औदयिक क्षायिक-निष्पन्न है (अत्थि नामें उदइय खओवसमनिप्फन्ने ३) अस्ति औदयिक क्षयोपशम नाम है ३ (अत्थि-नामे उदइय पारिणामिए निप्फन्ने ४) अस्ति औदयिक पारिणामिक निष्पन्न नामे है ४ (अत्थि नामे उवसमिएखइयनिप्फन्ने ५) अस्ति औपशमिक क्षायिक निष्पन्न नाम है ५ (अत्थि नामे उव समिए खओवसमनिप्फन्ने ६) अस्ति औपशमिक क्षयोपशमिक निष्पन्न नाम है ७ (अत्थि नामे खइयखओवसमनिप्फन्ने ८) अस्ति क्षायिक क्षयोपशमिक निष्पन्न नाम है ८ (अत्थि नामे खइय पारिणामिए निप्फन्ने ९) अस्ति क्षायिक पारिणामिक निष्पन्न नाम है सो यह भंग सिद्ध भगवंतों में होता है क्योंकि क्षायिक सम्यक्त्व पारिणामिक भाव में जीव है सो यह भंग सिद्ध में ही होता है अपितु शेष भंग केवल दिग् दर्शन मात्र ही कथन किये गये हैं इस लिये दो संयोगी केवल नवमां भंग विद्यमान रूप है शेष भंग अविद्यमान रूप हैं तथा उदय मनुष्य गति १ क्षयोपशमिक इन्द्रिय २ पारिणामिक जीव ३ जघन्यता से यह भंग सर्वत्र विद्यमान है किन्तु संयोगी केवल नवमें भंग की अस्ति है शेष नव भंग कथन मात्र ही है जैसे कि (अत्थि नामे खओवसमिए पारिणामिएनिप्फन्ने १०) अस्ति क्षयोपशमिक पारिणामिक निष्पन्न नाम है १० यह दश भंग दो संयोगी दिखलाए गये हैं अब शिष्य ने पुनः इस स्वरूप को पूछ कर निर्णय किया है जैसे कि--कयरे से नामे उदइय उवसम निप्फन्ने उदयइयत्ति मणुस्से उवसंत कसाया एस णं से नामे उदइयउवसमनिप्फन्ने १) हे भगवन् ! जो औदयिक और औपशमिक निष्पन्न है वह कौनसा नाम है गुरु कहते हैं कि भो शिष्य औदयिक भाव में मनुष्य गति है उपशम भाव में उपशांत कषाय है इसलिये

यही नाम औदयिक उपशम निष्पन्न कहा जाता है १ किन्तु यह भंग दिग् दर्शन मात्र ही है क्योंकि दर्शन मोहनीय कर्म की प्रकृतियें उपशम भाव में सम्भव हो सकती है किन्तु पारिणामिक भाव इस में नहीं है इसलिये यह भंग केवल दिग्दर्शन मात्र ही है इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिये १ ॥ (कयरे से नामे उदइयखइय निप्फन्ने उदइयएत्ति मणुस्से खइयं सम्मत्तं एस णं सेनामे उदइयखइयानिप्फन्न १) (प्रश्न) औदयिक और क्षायिक निष्पन्न नाम कौनसा है (उत्तर) औदयिक भाव में मनुष्य गति है और क्षायिकभाव समम्यक्त्व हैं इसलिये इन से उत्पन्न हुए औदयिक क्षायिक निष्पन्न नाम होता है २ (कयरे से नामे उदइए खउवसमनिप्फन्ने उदइयत्तिमणुस्से खओवसमियाइं इंदियाइं एस णं से नामे उदइय खओवसमिए निप्फन्ने ३) (प्रश्न) औदयिक क्षयोपशम निष्पन्न नाम कौनसा है (उत्तर) उदय भाव में मनुष्य गति हैक्षयोपशम भाव में इंद्रिय हैं सो यही औदयिक क्षयोपशमिक निष्पन्न नाम है ३) (कयरे से नामे उदइय पारिणामिएनिप्फन्ने) औदयिक पारिणामिक निष्पन्ने नाम कौनसा है (उत्तर) (उदइएत्ति मणुस्से पारिणामिए जीवे एस णं से नामे उदइय पारिणामिए निप्फन्ने ४) औदयिक भाव में मनुष्य भाव है पारिणामिक भाव में जीव है सो इसी का औदयिक पारिणामिक निष्पन्न नाम है ४ (कयरे से नामे उवसमिएखइयानिप्फन्ने] उपशम और क्षायिक निष्पन्न नाम कौनसा है. (उत्तर) उवसांत कसाया खइयं सम्मत्तं एस णं से नामे उवसमिए खइयनिप्फन्ने ५) उपशान्त कषाय क्षायिक सम्यक्त्व इन्ही का नाम औपशमिक क्षायिक निष्पन्न नाम है ५ (कयरे से नामे उवसमिएखओवसमनिप्फन्ने उवसंता कसाया खओवसमियाइं इन्दियाइं एस णं से नामे उवसमिएखओवसमिएनिप्फन्ने ६) (प्रश्न) औपशमिक क्षयोपशमिक निष्पन्न नाम कौनसा है (उत्तर जैसे उपशमक कषाय हैं क्षयोपशमिक भाव में इन्द्रिय हैं सो यही औपशमिक क्षयोपशमिक निष्पन्न नाम है ६ । (कयरे से नामे उवसमिए पारिणामिय निप्फन्ने) (प्रश्न) औपशमिक पारिणामिक निष्पन्न नाम किसे कहते हैं (उवसान्त कसाया पारिणामिए जीवे एस णं से नामे उवसमिए पारिणामिएनिप्फन्ने ७) (उत्तर) उपशम कषाय हैं पारिणामिक जीव हैं सो इसी का नाम उपशम पारिणामिक निष्पन्न भाव है ७ (कयरे से नामे खइयखओवसमिएनिप्फन्ने :) (प्रश्न) क्षायिक और क्षयोपशमिक निष्पन्न

नाम किसे कहते हैं (खइय सम्मत्तं खओव सभियाइं इन्दियाइं एस णं से नामें खइय खओव समनिप्फन्ने) ८ (उत्तर) क्षायिक सम्यक्त्व क्षयोपशमिक इन्द्रिय सो इसी का नाम क्षायिक क्षयोपशमिक भाव है ८ (कयरेसे नामे खइय पारिणामिएनिप्फन्ने) (प्रश्न) क्षायिक और पारिणामिक निष्पन्न नाम किसे कहते हैं (उत्तर) (खइयं सम्मत्तं पारिणामिए जीवे एस णंसे नामे खइय पारिणामिएनिप्फन्ने ९) क्षायिक सम्यक्त्व पारिणामिक जीव है इन दोनों के निष्पन्न हुए नाम को क्षायिक पारिणामिक भाव कहते हैं सो यह द्विसंयोगी नवमां भंग सिद्ध भगवन्तों में होता है शेष भंग केवल दर्शन मात्र हैं (कयरे से नामे खओवसमिएनिप्फन्ने) (प्रश्न) कौनसा क्षयोपशमिक और पारिणामिक निष्पन्न नाम है (उत्तर) खओवसमियाइं इंदियाइं पारिणामिए जीव एस णंसे नामे खओवसमिएपारिणामिएनिप्फन्ने १०) क्षयोपशमिक भाव में इन्द्रिय हैं पारिणामिक जीव है सो इनके निष्पन्न हुए नाम को क्षयोपशमिक पारिणामिक भाव कहते हैं १० इन सर्व द्विसंयोगी भंगों में केवल नवमां भंग सिद्ध है शेष भंग दर्शन मात्र हैं अब तीन संयोगी दश भंगो का विवेचन किया जाता है ॥

भावार्थ सान्निपातिक भाव उसे कहते हैं जो औदायिक १ औपशमिक २ क्षायिक ३ क्षयोपशमिक ४ पारिणामिक ५ इनके संयोग से द्वि संयोगी, तीन संयोगी, चार संयोगी पांच संयोगी भंग उत्पन्न होते हैं जिसमें दश भंग संयोग वाले हैं दश भंग तीन संयोग वाले हैं ५ पांच भंग चार संयोगी हैं अपितु एक भंग पांच संयोगी है यह षड् विंशति भंग सान्निपातिक भाव में कहे जाते हैं अब प्रथम दो संयोगी दश भंगो का नाम लिखा जाता है। १ औदयिक औपशमिक २ औदयिक क्षायिक ३ औदयिक क्षयोपशमिक ४ औदयिक पारिणामिक ५ औपशमिक क्षायिक ६ औपशमिक क्षायोपशमिक ७ औपशमिक पारिणामिक ८ क्षायिक क्षयोपशमिक ९ क्षायिक पारिणामिक यह भंग सिद्ध भगवन्तों में होता है १० क्षयोपशमिक पारिणामिक यह दश भंग दो संयोगी जिसमें नवमां भंग सिद्धों में है शेष भंग दिग्दर्शन मात्र ही हैं और सर्व भंगों के उदाहरण पदार्थ में दिये गये हैं अब तीन संयोगी भंगों का विवरण किया जाता है क्योंकि दो भाव एकत्र करने से दो संयोगी भंग बन जाते हैं तीन

भाव एकत्व करने से तीन संयोगीभंग उत्पन्न होते हैं इसलिये तीन संयोगी भंगों का विवरण किया जाता है।

॥ अथ तीन संयोगी भंग विषय ॥

तत्थ णं जे ते दसातिगसंजोगा ते णं इमे अत्थि नामे उदइयउवसमिएखइयानिप्फन्ने १ अत्थि नामे उदइयउवसमिए खओवसमेनिप्फन्ने २ अत्थि नामे उदइयउवसामिएपारिणामिय निप्फन्ने ३ अत्थि नामे उदइयखइयखओवसमनिप्फन्ने ४ अत्थि नामे उदइयखइयपारिणामिएनिप्फन्नेय ५ अत्थि नामे उदइयखओवसामियपारिणामियनिप्फन्ने ६ अत्थि नामे उवसमियखइयखओवसमनिप्फन्ने ७ अत्थि उवसामिएखइयपारिणामियनिप्फन्ने ८ अत्थि नामे उवसखओवसमियपारिणामियनिप्फन्ने ९ अत्थि नामे खइय खओव समिए पारिणामिय निप्फन्ने १० कयरे से नामे उदइयउवसामियखइयानिप्फन्नेय उदइएत्ति मणुस्से उवसन्ता कसाया खइयं सम्मत्तं एस णं से नामे उदइएउवसामिएखइय निप्फन्नेय १ कयरे से नामे उदइय उवसामिएखओवसामिय निप्फन्ने उदइएत्ति मणुस्से उवसंता कसाया खओवसमियाइं इंन्दियाइं एस णं से नामे उदइय उवसमिएखओवसम निप्फन्ने २ कयरे से नामे उदइय ओवसमिए पारिणामिए निप्फन्ने उदइयत्ति मणुस्से उवसंता कसाया पारिणामिए जीवे एस णं से नामे उदइयखइयखओवसमीनिप्फन्ने ३ एवं उदइय खइयखओवसामिय ४ कयरे से नामे उदइय खइयपारिणामियनिप्फन्ने उदइयत्ति मणुस्से खइयं सम्मत्तं

पारिणामिए जीवे एस णं से नामे उदइयखइयपारिणामिय निप्फन्ने ५ कयरे से नामे उदइयखओवसमिएपारिणामिय निप्फन्ने उदइएत्ति मणुस्से खओवसमियाइं इन्दियाइं पारिणामिय जीवे एस णं से नामे उदइयखओवसमिएपारिणामिएनिप्फन्ने ६, कयरे से नामे उवसामिएखइयखओवसमिएनिप्फन्ने उपसन्ता कसाया खइयं सम्मत्तं खओवसमियाइं इन्दियाइं एस णं से नामे उवसामियखइयखओवसमनिप्फन्ने ७ कयरे से नामे उवसामियखइयपारिणामिए निप्फन्ने उवसंता कसाया खइयं सम्मत्तं पारिणामिए जीवे, एस णं से नामे उवसमिएखइयंपारिणामिएनिप्फन्ने ८ कयरे से नामे उवसमिएखओवसमिएपारिणामियनिप्फन्ने उवसंता कसाया खओवसमियाइं इन्दियाइं पारिणामिए जीवे एस णं नामे उवसामियखओवसमिइयपारिणामिए निप्फन्ने ९ कयरे से नामे खइयखओवसमिएपारिणामिए निप्फन्ने खइयं सम्मत्तं खओवसमियाइं इन्दियाइं पारिणामिए जीवे एस णं से नामे खइयखओवसमिएपारिणामियनिप्फन्ने १० ॥

पदार्थ—(तत्थणं जे ते दसतिग संयोगा तेणं इमे) इन षड्विंशति भंगों में जो दश तीन संयोगी भंग हैं वह इसप्रकार से हैं (अत्थि नामे उदइयउवसमिए-खइय निप्फन्ने १) अस्ति औदयिक १ औपशमिक २ क्षायिक निष्पन्न नाम हैं) (अत्थि नामे उदइयउवसमिएखओवसमनिप्फन्ने २) औदयिक १ औपशमिक २ क्षयोपशमिकनिष्पन्न नाम है २ (अत्थि नामे उदइयउवसमिएपारिणामिए निप्फन्ने ३) औदयिक १ औपशमिक २ पारिणामिक ३ निष्पन्न एकनाम है ३ (अत्थि नामे उदइयखइयखओवसमनिप्फन्ने ४) औदयिक १ क्षायिक २ क्षयोपशमनिष्पन्न नाम है ४ (अत्थि नामे उदइयखइयपारिणामिएनिप्फन्ने

५ औदयिक १ क्षायिक २ और पारिणामिक निष्पन्न नाम है ५ यह भंग केवली भगवान् में होता है क्योंकि औदयिक भाव में मनुष्य गति है क्षायिक भाव में केवल ज्ञान दर्शन चारित्र होता है पारिणामिक भाव में जीव होता है इसलिये पांचवां भंग केवली भगवान में कहा जाता है और (अत्थि नामे उदइयखओवसमिएपारिणामिएनिप्फन्ने ६) औदयिक १ क्षयोपशमिक २ पारिणामिक ३ निष्पन्न एक नाम होता है ६ यह भंग चारों गतियों में होता है जैसे कि औदयिक भाव में कोई गति स्थापन करो १ क्षयोपशमिक भाव में इंद्रिय होती है २ पारिणामिक भाव में जीव है ३ सो यह भंग चारों गतियों में है जैसे कि मनुष्य गति १ तिर्यक् गति २ देव गति ३ नरक गति ४ शेष आठ भंग दिग्दर्शन मात्रही हैं किन्तु किसी स्थान पर उनकी अस्तित्व नहीं होती केवल अस्तित्व उक्त दोनों भंगो की है (अत्थि नामे उवसमिएखइय खओवसमनिप्फन्ने ७) औपशमिक क्षायिक क्षयोपशम निष्पन्न एक नाम होता है (अत्थि नामे उवसमिएखइयपारिणामिएनिप्फन्ने ८) औपशमिक क्षायिक और पारिणामिक भाव निष्पन्न एक नाम होता है ८ अत्थि नामे उवसमिए खओवसमिएनिप्फन्ने ९) औपशमिक क्षयोपशमिक और पारिणामिक निष्पन्न एक नाम होता है ९ (अत्थि नामे खइय खओवसमिएपारिणामियनिप्फन्ने१०) क्षायिक क्षयोपशमिक और पारिणामिक निष्पन्न एक नामे होता है १० यह तो तीन संयोगी केवल १० भंग दिखलाये गये हैं अतः इनके अर्थों का अब विवर्ण करते हैं। (कयरे से नामे उदइयउवसमिएखइयनिप्फन्ने) (प्रश्न) औदयिक औपशमिक और क्षायिक निष्पन्न नाम कौनसा होता है (उत्तर) (उदइएत्ति मणुस्से उवसंता कसाया खइयं सम्मत्तं एस णं से नामे उदइयउव समिएखइयनिप्फन्नेथ १) औदयिक भाव में मनुष्य गति है उपशान्त कषाय है क्षायिक सम्यक्त्व है सो इसी का नाम औदयिक औपशमिक क्षायिक निष्पन्न नाम है १ (कयरे से नाम उदइयउवसमिएखओवसमनिप्फन्ने) (प्रश्न) औदयिक औपशमिक क्षयोपशमिक निष्पन्न नाम किस प्रकार से होता है (उत्तर) (उदइयत्ति मणुस्से उवसन्ता कसाया खओवसमियाइं इन्दियाइं) औदयिक भाव में मनुष्य गति है उपशम भाव में उपशान्त कषाय हैं क्षयोपशम भाव में इन्द्रियां है सो (एस णं से नामे उदइएउवसमिएखओवसमीनप्फन्ने २) इसी को औदयिक औपशमिक क्षयोपशम निष्पन्न नाम कहते हैं २

(कयरे से नामे उदइय उवसमिए पारिणामिएनिप्फन्ने) (प्रश्न) औदयिक औपशमिक पारिणामिक निष्पन्न नाम कौनसा है (उत्तर) (उदइएत्तिं मणुस्से उवसंता कसाया पारिणामिए जीवे एस णं से नामे उदइय खइयपारिणामिए निप्फन्ने ३) औदयिक भाव में मनुष्य गति है उपशम भाव में उपशान्त कषाय है पारिणामिक जीव हैं सो इन्हीं का नाम औदयिक चायिक और पारिणामिक निष्पन्न नाम है ३ (कयरे से नामे उदइयखइयखओव समिएनिप्फन्ने) (प्रश्न) औदयिक क्षायिक क्षयोपशमिक निष्पन्न नाम कौनसा होता है (उत्तर) (उदइएत्ति मणुस्से खइयं सम्मत्तं खओवसमइन्दियाइं एस णं से नामे उदइयखइयखओवसमनिप्फन्ने ४) औदयिक भाव में मनुष्य गति है क्षायिक सम्यक्त्व और चयोपशम भाव में इन्द्रियां हैं सो इन्हीं को औदयिक क्षायिक क्षयोपशमिक निष्पन्न नाम कहते हैं ४ (कयरे से नामे उदइयखइयपारिणामिएनिप्फन्ने) (प्रश्न) औदयिक क्षायिक पारिणामिक निष्पन्न नाम कौनसा होता है (उत्तर) (उदइएत्ति मणुस्से खइयं सम्मत्तं पारिणामिए जीवे एस णं से नामे उदइयखइयपारिणामिएनिप्फन्ने ५) औदयिक भाव में मनुष्य गति है और क्षायिक भाव में चायिक सम्यक्त्व है और पारिणामिक भाव में जीव है सो इन्हीं को औदयिक चायिक पारिणामिक निष्पन्न भाव कहते हैं ५) सो यह भाव केवली भगवानों में होता है क्योंकि औदयिक भाव में मनुष्य गति है चायिक भाव में चायिक सम्यक्त्व है और पारिणामिक भाव में जीव है सो यह भंग श्री केवली भगवानों में है (कयरे से नामे उदइयखओवसमिएपारिणामिएनिप्फन्ने) (प्रश्न) औदयिक चयोपशमिक और पारिणामिक निष्पन्न भाव कौनसा है (उत्तर) (उदएत्ति मणुस्से खओवसमियाइं इंदियाइं पारिणामिए जीवे एस णं से नामे उदइयखओवसमिएपारिणामिएनिप्फन्ने ६) औदयिक भाव में मनुष्य गति है चयोपशम भाव में इन्द्रियां हैं और पारिणामिक भाव में जीव है सो इन्हीं करके उत्पन्न हुए नामको औदयिक क्षयोपशमिक और पारिणामिक भाव कहते हैं ६ अतः यह भंग चारों गतियों मे होता है जैसे कि औदयिक भाव में चारों गतियों में से कोई गति ले लो क्षयोपशमिक भाव में इन्द्रियां हैं और पारिणामिक भाव में जीव है इसी लिये चारों गतियों में यह भंग होता है शेष तीन संयोगी आठ ८ भंग दिग दर्शन मात्र हैं (कयरे से नामे उवसमिए

खइएखओवसामिएनिप्फन्ने) औपशमिक क्षायिक और क्षयोपशमिक भाव किसे कहते हैं (उत्तर) (उवसंता कसाया खइयं सम्मत्तं खओवसमिया इंदियाई एस णं से नामे उवसामियखइएखओवसमनिप्फन्ने ७) उपशम भाव में कषाय है क्षायिक भाव में क्षायिक सम्यक्त्व है और क्षयोपशम में इन्द्रियां हैं सो इस नाम को औपशमिक क्षायिक और क्षयोपशमिक निष्पन्न भाव कहते हैं (कयरे से नामे उवसमिएखइयपारिणामिएनिप्फन्ने ७) (प्रश्न) औपशमिक क्षायिक और पारिणामिक निष्पन्न भाव किसे कहते हैं (उत्तर) उवसंता कसाया खइयं सम्मत्तं पारिणामिए जीवे एस णं से नामे उवसमिएखइयपारिणामिएनिप्फन्ने ८) उपशांत कषाय हैं क्षायिक सम्यक्त्व है और पारिणामिक जीव है सो इस नाम को औपशमिक क्षायिक और पारिणामिक निष्पन्न भाव कहते हैं ८ । (कयरे से नामे उवसमिएखओव समियपारिणामिएनिप्फन्ने) औपशमिक क्षयोपशमिक और पारिणामिक निष्पन्न नाम कौनसा होता है (उत्तर) (उवसंता कसाया खओवसमिया इंदियाई पारिणामिए जीवे एस णं से नामे उवसामिएखओवसामिएपारिणामिए निप्फन्ने ९) उपशांत भाव में कषाय हैं क्षयोपशम भाव में इन्द्रियां हैं और पारिणामिक भाव में जीव है सो इसी नाम को औपशमिक क्षयोपशमिक और पारिणामिक निष्पन्न भाव कहते हैं ९ कयरे से नामे खइयखउवसमिएपारिणामिएनिप्फन्ने (प्रश्न) क्षायिक और क्षयोपशमिक और पारिणामिक निष्पन्न नाम कौनसा होता है (उत्तर) क्षायिक सम्यक्त्व है क्षयोपशमिक इन्द्रियां हैं और पारिणामिक जीव है सो इसी नाम को क्षायिक क्षयोपशमिक और पारिणामिक निष्पन्न भाव कहते हैं १० सो यह तीन संयोगी दश भंगों का अर्थ वर्णन किया गया है जिसमें केवल दो भंगों का अस्तित्व है शेष भंग दिग्दर्शन मात्र हैं अब चार संयोगी ५ भंगों के स्वरूप कथन किया जाता है।

भावार्थ—यदि तीनों भावों को एकत्व किया जाए तब उनके तीन संयोगी दश भंग बन जाते हैं जैसे कि १ औदयिक औपशमिक २ क्षायिक २ औदयिक १ औपशमिक २ क्षयोपशमिक २ । ३ औदयिक १ औपशमिक २ पारिणामिक ३ । ४ औदयिक १ क्षायिक २ क्षयोपशमिक ३ । ५ औदयिक १ क्षायिक २ पारिणामिक ३ । यह भंग केवलियों में होता है । ६ औदयिक १ क्षयो-

पशमिक २ पारिणामिक ३ । यह ४ गतियों में होता है । ७ औपशमिक १ क्षायिक क्षयोपशमिक ३ । ८ औपशमिक १ क्षायिक २ पारिणामिक ३ । ९ औपशमिक १ क्षयोपशमिक २ पारिणामिक ३ । १० क्षायिक १ क्षयोपशमिक २ पारिणामिक ३ । यह तीन संयोगी दश भंग बनते हैं और इनके अर्थ पदार्थ में दिये गये हैं अपितु पांचवां छठा इन दोनों भंगो के अस्तित्व हैं शेष भंग दिग्दर्शन मात्र ही कथन किये गये हैं पांचवां भंग केवली भगवान् में होता है छठा भंग चारों गतियों में होता है शेष भंग शून्य कहे जाते हैं अब चार संयोगी पांच भंगों का वर्णन करते हैं क्योंकि चारों भावों के एकत्व करने से पांच भंग बन जाते हैं सो निम्नलिखितानुसार हैं ।

अथ चतुः संयोगी पांचों भंगों का विषय ।

मूल-तत्थ णं जे ते-पंच चउक्कसंजोगा तेणं इमे अत्थि नामे उदइएउवसमिएखइयखओवसमिएनिप्फन्ने १ अत्थि नामे उदइयउवसामिएखइएपारिणामिएनिप्फन्ने २ अत्थि नामे उदइयउवसमिएखओवसमिएपारिणामिएनिप्फन्ने ३ अत्थि नामे उदइयखइयखओवसमिए पारिणामिए निप्फन्ने ४ अत्थि नामे उवसमिएखइयखओवसमिएपारिणामिएनिप्फन्ने ५ कयरे से नामे उदइयउवसमियखइयखओवसमिएनिप्फन्ने ? उदइएत्ति मणुस्से उवसंता कसाया खइयं सम्मत्तं खओवसमियाइं इन्दियाइं एस णं से नामे उदइयउवसमिय खइयखओवसमिएनिप्फन्ने १ कयरे से नामे उदइयउवसमिए-खइयपारिणामिएनिप्फन्ने उदइत्ति मणुस्से उवसंता कसाया खइयं सम्मत्तंपारिणामिए जीवे एस णं से नामे उदइएउवसमिएखइयपारिणामियानिप्फन्ने २ कयरे से नामे उदइयउवसमिए खओवसमिएपारिणामिएनिप्फन्ने उदइएत्ति मणुस्से उवसन्ता कसाया खओवसमियाइं इंदियाइं पारिणामिए जीवे

एस णं से उदइएउवसामिएखइयपारिणामियनिप्फन्ने ३ कयरे से नामे उदइयखइयखओवसामिएपारिणामियनिप्फन्ने उदइएत्ति मणुस्से खइयं सम्मत्तं खओव समियाइं इंदियाइं पारिणामिए जीवे एस णं से नामे उदइयखइयखओवसमिए पारिणामिएनिप्फन्ने ४ कयरे से नामे उवसमिएखइयंखओव समिएपारिणामिएनिप्फन्ने उवसंता कसाया खइयं सम्मत्तं खओवसमियाइं इंदियाइं पारिणामिए जीवे एस णं से नामे उवसमिएखइयखओवसामिएपारिणामिएनिप्फन्ने ॥ ५ ॥

पदार्थ-(तत्थ णं जे ते पंचचउक्कसंजोगा तेणं इमे) उन पड्विंशति भंगों में जो पांच संयोगी चार भंग हैं वह यह हैं जो आगे कहे जायेंगे-(अत्थि नामे उदइयउवसमिएखइयखओवसमीनिप्फन्ने १) औदयिक औपशमिक क्षायिक क्षयोपशमिक निष्पन्न एक नाम है १ अतः (अत्थि नामे उदइएउवसमि एखइए-पारिणामिएनिप्फन्ने २) औदयिक औपशमिक क्षायिक पारिणामिक निष्पन्न एक नाम है २ (अत्थि नामे उदइएउवसमिए खओवसमिएपारिणामिएनिप्फन्ने ३) औदयिक औपशमिक क्षयोपशमिक और पारिणामिक निष्पन्न एक नाम है ३ सो यह भंग सर्व गतियों में सतत विद्यमान रहता है परन्तु सूत्र ने मनुष्य गति का ही उदाहरण दिया है सो वह इस प्रकार से है जैसे कि औदयिक भाव में मनुष्य गति है औपशमिक भाव में जो आत्मा उपशम श्रेणि में प्रतिपन्न है अथवा जो उपशम सम्यक्त्व करके युक्त है और क्षयोपशम भाव में इन्द्रियां हैं पारिणामिक भाव में जीव है इसलिये यह भंग मनुष्य गति में कहा गया है किंतु यह भंग चारों गतियों में होता है ऐसे जानना चाहिये। अथ चतुर्थ भंग का स्वरूप कहते हैं (अत्थि नामे उदइयखइयखओवसमिएपारिणामिए निप्फन्ने ४) औदयिक क्षायिक क्षयोपशमिक पारिणामिक निष्पन्न भाव एक नाम है ४ सो यह भी भंग चारों गतियों में होता है क्योंकि औदयिक भाव में कोई गति लेलो क्षायिक भाव में क्षायिक सम्यक्त्व होता है अतः नरक

तिर्यग और देवों में क्षायिक सम्यक्त्वपूर्व भाव की अपेक्षा जानना चाहिये और मनुष्य गति में पूर्व प्रतिपन्न भी हो नूतन भी उत्पन्न कर लेवे और क्षयोपशम भाव में इन्द्रियां हैं पारिणामिक भाव में जीव है इसलिये यह भंग चारों गतिओं में होता है सो यह पांचों भंगो से दो भंग अस्तित्व रखते हैं शेष तीन भंग कथन मात्र ही है (अत्थि नामे उवसामियखइयखओवसामियपारिणामिएनिष्फन्ने ५) औपशमिक क्षायिक क्षयोपशमिक पारिणामिक निष्पन्न एक नाम होता है अतः यह तो पांच भंगों केवल नामोत्कीर्तन किया गया है अब इन के अर्थों का विवर्ण करते हैं (कयरे से नामे उदइयउवसामिएखइयखओवसामियानिष्फन्ने) (प्रश्न) औदयिक औपशमिक क्षायिक क्षयोपशमिक निष्पन्न भाव किसे कहते हैं (उत्तर) (उदइएत्ति मणुस्से उवसंता कसाया खइयं सम्मत्तं खओव समियाइं इन्दियाइं औदयिक भाव में मनुष्य गति है उपशांत भाव में कषाय है क्षायिक भाव में सम्यक्त्व है क्षयोपशमिक भाव में इंद्रियां हैं सो (एस णं से नामे उदइयउवसामिएखइयखओवसमिएनिष्फन्ने १) इसी का नाम औदयिक औपशमिक क्षायिक और क्षयोपशमिक निष्पन्न भाव है १ (कयरे से नामे उदइयउवसमियखइयपारिणामिएनिष्फन्ने २) (प्रश्न) औदयिक औपशमिक क्षायिक और पारिणामिक नाम किसे कहते हैं (उत्तर) (उदएत्ति मणुस्से उवसंता कसाया खइयं सम्मत्तं पारिणामिए जीवे) औदयिक भाव में मनुष्य गति है उपशम भाव में कषाय है क्षायिक में क्षायिक सम्यक्त्व पारिणामिक भाव में जीव सो (एस णं से नामे उदइए उवसमिएखइयपारिणामिए निष्फन्ने २) सो इसी का नाम औदयिक औपशमिक क्षायिक पारिणामिक निष्पन्न भाव है २ (कयरे से नामे उदइय उवसमिएखओवसमिए पारिणामिए निष्फन्ने) (प्रश्न) औदयिक औपशमिक क्षयोपशमिक और पारिणामिक निष्पन्न भाव किसे कहते हैं (उत्तर) (उदइएत्ति मणुस्से उवसंता कसाया खओवसमियाइं इंदियाइं पारिणामिए जीवे) उदय भाव में मनुष्य गति है, उपशम भाव में कषाय हैं अपितु क्षयोपशम भाव में इंद्रियां हैं इसलिये (एस णं से नामे उयइएउवसमिएखओवसमिएपारिणामिए निष्फन्ने) यह नाम औदयिक औपशमिक क्षयोपशमिक पारिणामिक निष्पन्न कहा जाता है और चारों गतियों में इस भाव का अस्तित्व है ३ (कयरे से नामे उदइएखइएखओवसमिएपारिणामिएनिष्फन्ने) (प्रश्न) औदयिक क्षा-

यिक और चयोपशमिक पारिणामिक निष्पन्न भाव किसे कहते हैं (उत्तर) (उदइएत्ति मणुस्से खइयं सम्मत्तं खओवसमियाइ इंदियाइं पारिणामिएजीवे) औ दयिक भाव में मनुष्य गति है चायिक में चायिक सम्यक्त्व और चयोपशमिक भावमें इंद्रियां हैं अतः पारिणामिक भावमें जीव है सो (एस णं से नामे उदइए खइयखओवसमिएपारिणामिएनिष्फन्ने ४) इसी का नाम औदयिक क्षायिक चयोपशमिक पारिणामिक निष्पन्न भाव है अतः इस भंग की भी चारों गतियों में अस्तित्व है किंतु सूत्र में मनुष्य गति का उदाहरण दिया गया है अपितु यह भंग चारों गतियों में ही होता है (कयरे से नामे उवसमियखइएखओव समियपारिणामिएनिष्फन्ने) (प्रश्न) औपशमिक चायिक चयोपशमिक पारिणामिक निष्पन्न नाम कौनसा होता है (उत्तर) (उवसंता कसायाखइयं सम्मत्तं खओवसमियांइंइंदियाइं पारिणामिए जीवे (उत्तर) उपशान्त कषाय हैं चायिक सम्यक्त्व है चयोपशमिक इंद्रियां हैं और पारिणामिक भाव में जीव है इसलिये (एस णं से नामे उवसमिएखइयखओवसमिएपारिणामिएनिष्फन्ने ५ यह नाम औपशमिक चायिक चयोपशमिक पारिणामिक निष्पन्न कहा जाता है यह चार संयोगी पांच भंग हैं जिन में तृतीय चतुर्थ भंगों की चारों गतियों में अस्तित्व रहती है शेष तीन भंग दिग्दर्शन मात्र हैं किंतु अस्तित्व इन की नहीं है अब पांच संयोगी भंग का विवेचन करते हैं ।

भावार्थ—चारों भावों के एकत्व करने से चार संयोगी पांच भंग उत्पन्न होते हैं जैसे कि—

१ औदायिक औपशमिक चायिक चयोपशमिक २ औदयिक औपशमिक चायिक, पारिणामिक । ३ औदायिक, औपशमिक, क्षयोपशमिक, पारिणामिक है । इस भंग की अस्तित्व है । ४ औदायिक, चायिक क्षयोपशमिक पारिणामिक—इस भंग की अस्तित्व है । ५ औपशमिक, चायिक, चयोपशमिक, पारिणामिक ५ ॥

यह चतुस्संयोगी पांच भंग हैं अपितु इन के अर्थों का विवर्ण पदार्थ में दिया गया है और इस पांच भंगों में से तीसरे चौथे भंग की अस्तित्व है शेष भंग केवल दिग्दर्शन मात्र हैं अब पांच संयोगी एक भंग का विवर्ण करते हैं ॥

मूल — (तत्थणं जे ते एगोपंच संजोगो से णं इमे—अत्थि नामे उदइयउवसमिएखइयखओवसामिएपारिणामिय निप्फन्ने कयरे से नामे उदइएउवसमिएखइयखओवसमियपारिणामिए निप्फन्ने उदइएत्ति मणुस्से उवसन्ता कसाया खइयं सम्मत्तं खओवसमियाइं इन्दियाइं पारिणामिए जीवे एस णं से नामे उदइएओवसमिएखइयखओवसमिए पारिणामिएनिप्फन्ने से त्तं सन्निवाइए सेत्तं छन्नामे ॥

पदार्थ— (तत्थ णं जे ते एगो पंचसजोगो से णं इमे) उन षट् विंशति भंगों में जो एक भंग पांच संयोगी है वह इस प्रकार से है (अत्थि नामे उदइयउवसामिएखइयखओवसमियपारिणामिएनिप्फन्ने) जैसे कि—औदायिक, औपशमिक क्षायिक, क्षयोपशमिक, पारिणामिक निष्पन्न एक नाम होता है (कयरे से नामे उदइएउवसामिएखइएखओवसामिएपारिणामिए . निप्फन्ने) (प्रश्न) औदयिक औपशमिक, क्षायिक, क्षयोपशमिक पारिणामिक निष्पन्न भाव किसे कहते हैं (उत्तर)(उदइएत्ति मणुस्से उवसंता कसाया खइयं सम्मत्तं खओवसमियाइं इंदियाइं पारिणामिएजीवे) औदयिक भाव में मनुष्य गति है उपशम भाव में उपशांत कषाय हैं और क्षायिक भाव में क्षायिक सम्यक्त्व है क्षयोपशम भाव में इंद्रियें हैं पारिणामिक भाव में जीव है इसलिये (एस णं से नामे उदइयउवसामिए पारिणामिए निप्फन्ने सत्तं सान्निवाइए सेत्तं छन्नामे) इसको औदायिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षयोपशमिक, पारिणामिक निष्पन्न भाव कहते हैं सो इसी का नाम सान्निपातिक भाव है और यही षट् नाम का स्वरूप है अतः इसीको षट् नाम कहते हैं

भावार्थ—पांच भावों के एकत्व करने से पांच संयोगी एक भंग बनता है जैसे कि औदयिक औपशमिक क्षायिक और क्षयोपशमिक पारिणामिक यह भंग केवल उपशम श्रेणि में होता है सो यह पांच संयोगी एक भंग का स्वरूप पूर्ण हो गया है अपितु सर्व षट् विंशति भंग कथन किये गये हैं जैसे—कि दो संयोगी दश भंग हैं तीन संयोगी दश भंग हैं और चार संयोगी पांच भंग हैं किन्तु पांच संयोगी एक भंग है सो यह सर्व २६ षट् विंशति भंग होते हैं फिर दुगसंजोगो सिद्धाणं केवल संसारियाइं

हुंतीती संजोगो चउ संजोगो दुचउसगई उवसम सेढिउ पण संजोगाय २१ अर्थात् दो संयोगी नववां भंग सिद्ध भगवंतों में होता है और तीन संयोगी पांचवां केवली भगवान् में होता है और तीन संयोगी छठा भंग चारों गतियों में है अपितु चार संयोगी तीसरा और चतुर्थ भंग मनुष्य देवता नारकी में होते हैं तथा संज्ञि पांचेंद्रिय तिर्यग् में भी हो जाता है किन्तु पांच स्थावर तीनों विकलेंद्रिय में नहीं होता और पांचवां भंग उपशम श्रेणी गत जीवों में होता है इसलिये पट् विंशति भंगों में से ६ भंग अस्तित्व रूप में हैं शेष २० भंग दिग्दर्शन मात्र कथन किये गये हैं तथा अन्य ग्रंथों में (तत्वार्थादि शास्त्रों में*) पांच भावों का मूल प्रकृतियांच मान कर उतर प्रकृतियें ५३ लिखी हैं जैसे कि मूल प्रकृति औदयिक १ औपशमिक २ क्षायिक ३ क्षयोपशमिक ४ और पारिणामिक ५ यह पांच मूल प्रकृति हैं अपितु उतर प्रकृतियें निम्न लिखतानुसार हैं औदयिक भाव की उत्तर प्रकृतियें २१ चार गति पद् लेश्या ४ कषाय ३ वेद असिद्ध १ अज्ञानी १ अविरति १ मिथ्यात्व १ औपशमिक भाव की २ प्रकृतियें हैं उपशम सम्यक्त्व और उपशम चारित्र २ क्षायिक भाव की ९ प्रकृतियां हैं ५ अंतराय क्षायिक भाव में है अर्थात् पांचों अंतरायों का क्षय करना और केवल ज्ञान १ केवल दर्शन २ क्षायिक चारित्र ३ क्षायिक सम्यक्त्व ४ और क्षयोपशमिक भाव के १८ भेद हैं जैसे कि ४-चार ज्ञान ३ तीन अज्ञान ३ तीनों दर्शन ५ अंतराय क्षयोपशम भाव में क्षयोपशम चारित्र १ क्षयोपशम देशव्रत क्षयोपशम सम्यक्त्व। और पारिणामिक भाव के ३ भेद हैं जैसे कि भव्य पारिणामिक १ अभव्य पारिणामिक २ जीव पारिणामिक ३ यह सर्व ५३ उतर प्रकृतियां

---

*नोट—१ औपशमिक क्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्व मौदयिक

२ पारिणामिकौ च २ द्वि नवाष्टा दर्शक विंशति त्रि वेदायकथाक्रमम् ।

३ सम्यक्त्व चारित्रे ।

४ ज्ञान दर्शन दान लाभ भोगोपभोग वीर्याणि च ।

५ ज्ञाना ज्ञान दर्शन लब्धयस्चतुस्त्रि त्रिपंच भेदाः सम्यक्त्व चारित्र संयमा संयमाश्च ।

६ गति कषाय लिंग मिथ्या दर्शना ज्ञाना संयतासिद्ध लेश्या स्वतु स्वतु स्त्रै कै कै कै कपद् भेदाः ।

७ जीव भव्या भव्यत्वानिच ।

यह सर्व सूत्र तत्वार्थ सूत्र के दूसरे अध्याय के हैं ।

हैं और इनके ऊपर ही एक ६२ अंकों का स्तोक बना हुआ है जिसकी मूल गाथा यह है–गई १ इंदिय २ काय ३ जोए ४ वेद ५ कसाय ६ नाणे ७ संजए ८ दंसण ९ लेस्सा १० भव ११ सम्मे १२ दिट्ठि १३ सन्नि १४ आहारए १५ ॥ १ ॥ इन ६२ अंकोपरि ५ मूल प्रकृतियां ५३ उतर प्रकृतियां की गणना की जाती है और सन्निपातिक भाव के षट् विंशति भंग पूर्व लिखे गये हैं सो यह सर्व षट् भावोंके समास से षट् नामका विवर्ण पूर्ण होगया है यह सर्व जैन सिद्धान्त है जो जैन सिद्धांत का स्वरूप तीनों स्वरों वा सात स्वरों में प्रतिपादन किया गया है इसलिये सात नाम के प्रकरण में सातों स्वरों का स्वरूप लिखा जाता है ॥

॥ अथ सप्त नाम के अंतरगत सप्तस्वरों के विषय ॥

मूल–सेकिंतं सत नामे २ सतसरा पण्णत्ता तंजहा सज्जे १ रिसमे २ गंधारे ३ मज्झिमे ४ पंचमेसरे ५ धेवएचेव ६ निसाए ७ सरासत वियाहिया १ एएसिंणं सतण्हं सराणं सत्त सरट्ठाणा पं० तं० सज्जं च अग्गजीहाए उरेण रिसभं सरं कंठुग्गएण गंधारं मज्झजीहा ए मज्झिमं २ नासाए पंचमं बुया दंतोट्ठेण धेवय भमुहक्खेवेण णेसाए सरट्ठाणा वियाहियाइ ॥

पदार्थ—(सेकिंतं सत नामे २ सतसरा पन्नत्ता तंजहा) अथषट् नाम के पश्चात् सप्त नाम का विवेचन किया जाता है जैसे कि–शिष्य ने प्रश्न किया कि हे भगवन् सप्त नाम कितने प्रकार से वर्णन किया गया है इस प्रकार के शिष्य के प्रश्न को सुनकर गुरु कहने लगे कि —भो—शब्द प्राट् ! सप्त नाम को अंतर्गत सप्तस्वरों का विवेचन किया गया है क्योंकि स्वृ शब्दोपतापनयोः धातु से स्वर शब्द की उत्पति है सो जो ध्वनिरूप हैं वे स्वर होता है सो जिसके सप्तनाम निम्न लिखितानुसार हैं (सज्जे १) षड्जस्वर उसका नाम है जोषट स्थानों से शब्द रूप ध्वनि उत्पन्न हो जैसे कि-नासिका १ कंठ २ उर (छाती) ३ तालु ४ जिह्वा ५ दंत ६ जो इन षट् स्थानों से शब्द उत्पन्न होकर उच्चारण

किया जाए उसको षड्ज् स्वर कहते हैं । और जो ऋषभवत् शब्द हो उसे ऋषभ् स्वर कहते हैं क्योंकि नाभि से वायु उत्पन्न होकर कण्ठ मस्तक में समावर्तन होकर जो शब्द ऋषभवत् उच्चारण किया जाये उसीका नाम (रिसभे २) ऋषभ स्वर है अतः (गंधारे ३) नाभि से वायु उत्पन्न होकर जो मस्तकादि में समावर्तन करके जो नाना प्रकार के गंध से युक्त है उसे गांधार स्वर कहते हैं (मज्झिमे) मध्यम स्वर उसका नाम है जो काया के मध्य भाग नाभि से उत्पन्न होकर हृदय आदि में होकर जो शब्द उच्चारण कियाजावे उसे मध्यम स्वर कहते हैं ४ (पंचमे ५) जो षड्जादि की पंचम संख्याको पूर्ण करता है उसे पंचम स्वर कहते हैं तथा जिसमें पांच स्थानों में वायु समावर्तन हो उसे पंचम कहते है जैसे कि—नाभि १ उदर २ हृदय ३ कंठ ४ मस्तक ५ सो जो इन में समावर्तन होकर शब्द उच्चारण किया जावे उस को पंचम स्वर कहते हैं ५ (धेवय वेप ६) धैवत स्वर उसका नाम है जो अन्य स्वरों को धारण करता हो तथा अन्य स्वरों का साधन करता हो अपितु पाठान्तर में इस स्वर को रेवत स्वर भी कहते हैं (निसाए ७) निषाद स्वर उसे कहते हैं जिससे अन्य स्वरों का परिभव हो जाए तथा जिसका महा स्थूल शब्द हो उसे निषाद स्वर कहते हैं इस प्रकार से (सरासत वियाहिया १) सप्त स्वर अर्हन्तो भगवंतोने प्रतिपादन किये हैं (शंका) असंख्यात जीव रसेंन्द्रिय द्वारा शब्द उच्चारण करते हैं इस अपेक्षा से असंख्यात स्वर होने चाहियें (समाधान) अपितु ऐसे नहीं हैं यावन्मात्र रसनेन्द्रिय के शब्द हैं वे सर्व सात स्वरों के ही अंतर्गत रहते हैं इसलिये स्वर सात ही हैं और इनके अनेक स्थान उत्पति के हैं किन्तु मुख्य स्थान जिह्वा ही है इसलिये स्थूल स्थानों की अपेक्षा से सप्त स्वरों के स्थानों का निर्णय करते हैं (एएसिंणं सत्तण्हं सराणं सत्तसरठाणा पण्णत्ता तंजहा) इन सप्त स्वरों के सप्त स्वर स्थान प्रतिपादन किये गये हैं जैसे कि (सज्जंच अग्गजिब्भाए) षड्ज् स्वर जिह्वा के अग्र भाग से उत्पन्न होता है यद्यपि षडज् स्वर के षट् स्थान वर्णन किए गए हैं किन्तु मुख्य स्थान जिह्वा ही है इसलिये षडज् स्वरका स्थान जिह्वा का अग्र भाग प्रतिपादन किया गया है और (उरेण) उर से (छाती से) रिसभं* ऋषभ (स्वरं) स्वर उत्पन्न होता है और (कंठग्गाएणं) कंठ से

* १—रिः केवलस्य । प्रा० अ० ८ पा० १ सू० । १४० ॥
केवलस्य व्यञ्जने ना संपृक्तस्य ऋतोरिरादेशो भवति

उत्पन्न होता है (गंधार) गांधार स्वर अपितु (मज्जपजीहाए) जिह्वा के मध्य भाग से (मज्जिपमर) मध्यम स्वर उत्पन्न होता है २ और (नासाए) नासिका से (पंचम) पंचम स्वर (बुया) भाषण किया जाता है दंतोट्ठणेय दान्त और ओष्ठों से उच्चारण किया जाता है धेवयं धैवत स्वर अपितु भमुह खेवेण भृकुटों के आक्षेप पूर्वक णेसाए निषाद स्वर उच्चारण किया जाता है सो (सर) स्वर (ठाण) स्थान (वियाहिया ३) अर्हन्तो भगवंतोने इस प्रकार से स्वर स्थान प्रतिपादन किए गये हैं क्योंकि इनके भिन्न २ स्थान होने पर भी मुख्य २ स्थान वर्णन किए गये हैं अब अग्रे जीव निसृत स्वरों के विषय में कहते हैं ॥

भावार्थ—सात नाम के अंतरगत सात स्वरों का विवेचन किया गया है जैसे कि षड्ज स्वर १ ऋषभ स्वर २ गांधार स्वर ३ मध्यम स्वर ४ पंचम स्वर ५ धैवत स्वर ६ और निषाद स्वर ७ और जो नाभि आदि षट स्थानों से उत्पन्न हो उसे षडज स्वर कहते हैं १ जो ऋषभवत् शब्द उच्चारित हो उसका नाम स्वर है २ जो नाना प्रकार की गंध से युक्त भाषण किया जाए उसे गांधार स्वर कहते हैं ३ काया के मध्य भाग से जिसकी उत्पत्ति हो उसे मध्यम स्वर कहते हैं ४ तथा नाभि आदि पांच स्थानों से जो उत्पन्न हो वह पंचम स्वर होता है ५ जो और स्वरों को धारण करे वह धैवत ६ जिस का स्थूल शब्द हो वही निषाद स्वर है अपितु मुख्य स्थान इन के निम्न प्रकार से हैं जैसे कि—षड्ज स्वर जिह्वा के अग्र भाग से उच्चारण किया जाता है उरसे ऋषभ गाया जाता है कंठ से गांधार स्वर जिह्वा के मध्य भाग से मध्यम नासिका से पंचम दांत और ओष्ठोंसे धैवत भृकुटिके आक्षेपसे निषाद स्वर उच्चारण होता है इस प्रकार से अर्हन देवों ने सप्त स्वरों के सप्त स्थान प्रतिपादन किए हैं किन्तु यावन्मात्र रसेंद्रिय युक्त जीव हैं उन सबोंके स्वर सात स्वरों के अंतरगत ही जानने चाहिए ऐसे नहीं है कि तावन्मात्र स्वर संख्या भी हो जैसे कि अनेक वर्ण (रंग) होने पर भी वे सर्ववर्ण पांच वर्णों के अन्तरगत होजाते हैं उसी प्रकार स्वर संख्या भी जाननी चाहिए अब सात स्वर जीवों की निश्राय से वर्णन करते हैं कि जिसके द्वारा जीवों को स्वर ज्ञान का शीघ्र बोध होजाए ॥

॥ अथ सप्त स्वर जीवनिश्राय विषय ॥

सत्त सरा जीव निस्सिया पं. तंजहा ।

पदार्थ-(सत्त) सप्त (सरा) स्वर (जीव निस्सिया पं० तंजहा) जीव निस्सृत प्रतिपादन किए गये हैं जिन के द्वारा स्वर ज्ञान की शीघ्र प्राप्ति हो जाती है। सो वे निम्न लिखितानुसार हैं ॥

भावार्थ-सात स्वर जीव निस्सृत ? प्रतिपादन किए गए हैं जो निम्न लिखितानुसार हैं ॥

॥ अथ जीव निश्राय विषय ॥

सज्जं रवइ मऊरो कुक्कुडो रिसभं सरं हंसो रवइ गंधारं मज्झिमंतु गवेलगा ४ ॥

पदार्थ-(सज्जं रवइ मऊरो) षड्ज स्वरको मोर वोलता है (कुक्कुडोरिसभंसरं) कुकड़ ऋषभ स्वर को, (हंसोरवइगंधारं) हंस गांधारको, (मज्झिमंतुगवेलगा) गाय और वकरी मध्यम स्वर को वोलती हैं ॥

भावार्थ-मयूर षड्ज स्वर उच्चारण करता है, कुक्कुड़ का ऋषभ स्वर होता है, अपितु हंस गांधार स्वर में वोलता है, और गौ एलक आदि पशु मध्यम स्वर में वोलते हैं ॥ ४ ॥

॥ अथ शेष स्वरों के विषय ॥

अह कुसुमसंभवे काले कोइला पंचमं सरं । छट्टंच सारसा कुंचा नेसायंसत्तमं गओ ॥ ५ ॥

पदार्थ-(अह) अव (कुसुमसंभवे) पुष्पों के उत्पन्न होने के (काले) कालमें (कोइला) कोइल (पंचमं) पंचम (सरं) स्वर भाषण करतीहै अतः (छट्ठंच) धैवत स्वर (सरसा कुंचा) सारस और क्रौंच पक्षी वोलते हैं पुनः (नेसायं) निषाध स्वर (सतमं) जो सप्तम है वह (गतो ५) गज का होता है अर्थात

जो निषाद स्वर है वो हस्ती का होता है इसलिये (सतमंगतो ५) यह सूत्र दिया गया है ५ यह सप्त स्वर जीव की निश्राय कथन किए गये हैं अब सात ही स्वर अजीव की निश्राय कहते हैं अर्थात जो वादित्र से उत्पन्न होते हैं ॥

भावार्थ-वसंत ऋतु में कोइल पंचम स्वरमें बोलती है सारस और क्रौंचपक्षि धैवत स्वर में शब्द उच्चारण करते हैं अपितु सप्तम स्वर में हस्ती का शब्द होता है यह सात ही स्वर जीवों की निश्राय वर्णन किए गए हैं अब इस के आगे सातों स्वर अजीव की निश्राय में जो हैं उनका विवर्ण करते हैं ॥

॥ अथ सप्त स्वर अजीवनिश्राय विषय ॥

सत्त सरा अजीवनिस्सिया पं. तं. ।

पदार्थ-(सत) सप्त (सरा) स्वर (अजीव) अजीव वादित्रादि की (निस्सिया) निश्राय (पं. तं.) प्रतिपादन किए गये हैं जैसे कि—

भावार्थ-सप्त स्वरा अजीव की निश्राय में कहे गए हैं जो आगे कहे जातेहैं।

मूल-सज्जं रवइ मुयंगो, गोमुही रिसभं सरं संक्खो रवइगंधारं मज्झिमं पुणज्झल्लरी ६ चउचलणपइट्ठाणा गोहिया पंचमं सरं आडंवरो यरेवइयं महाभेरी य सत्तमं ॥ ७ ॥

पदार्थ-(सज्जंरवइमुयंगो) मृदंग षड्ज स्वर में बजता है और (गोमुही) गोमुखी रामावादित्र (रिसभं) ऋषभ (सरं) स्वर में बोलता है अतः (संक्खो) शंख (रवइ) बोलता है (गंधारं) गांधार स्वर और (मज्झिमं) मध्यमस्वर (पुण) पुनः (ज्झलरी) छैणों का होता है क्योंकि छैणोंका शब्द मध्यभाग से निकलता है इसलिये उनका मध्यम स्वर होता है ६ (चउचलण) चार जिसके चरण (पइठाणा) भूमि पर प्रतिष्ठित हैं और (गोमुही) गोधिका उस वादित्र का नाम है वह (पंचम) पंचम नामक (स्वर) स्वर में बोलता है और (आडंबरोय) पटह (ढोल] नामक वादित्र (रेवइयं) रेवत (धैवत) नामक स्वर में शब्द उच्चारण करता है और (महाभेरीय) महा भेरी नामक वादित्र (सतमं७) सप्तम निषाद नामक स्वर में उच्चारण करता है ७ किंतु यह सर्व एक अंश को लेकर इन के उदाहरण दिए गए हैं ॥

भावार्थ–षड्ज स्वर मृदंग नामक वादित्र से निकलता है क्योंकि यह सर्व देश मात्र उदाहरण हैं अपितु षड्ज स्वर की षट् स्थानों से उत्पत्ति मानी गई है किन्तु यहां पर केवल अग्र भाग के प्रमाण को मानकर मृदंग मानकर मृदंग को षड्ज स्वर माना है इसी प्रकार गोमुखी नामक वादित्र ऋषभ स्वर में शब्द उच्चारण करता है और शंख का गांधार स्वर होता है झलरी (छैणों का) का मध्यम स्वर है पटह (ढोल) का स्वर धैवत स्वर होता है और महा भेरी सप्तम स्वर में शब्द उच्चारण करती है अतः जिस वादित्र के चार चरण हैं गोधिका उसका नाम है और भूमी पर रखकर उसे बजाया जाता है उसके शब्द को पंचम स्वर कहते हैं ७ यह सर्व सप्त स्वर जीव और अजीव की निश्राय वर्णन किये गये हैं किन्तु कतिपय ग्रन्थकारों ने जीव निश्राय स्वरों के विषय में निम्न प्रकार से भी उदाहरण दिये हैं जैसे कि–षड्जरौ तिमयूरस्तु गावौ नदंति चर्षभम । अनाविकौ चगांधारे क्रौञ्चौनदति मध्यमम् ॥ १ ॥ पुष्प साधारणे काले कोकिलोरौति पंचमम् अश्वस्तु धैवतं रौति निषादं रौति कुंजरः ॥२॥ अर्थात् मोर षड्ज शब्द को बोलता है बैल ऋषभ शब्द को बोलता है भेड बकरी गांधार स्वर को बोलते हैं क्रौञ्च पक्षी मध्यम स्वर को बोलता है घोडा धैवत स्वर को बोलता है कोकिल वसंत ऋतु में पंचम सुर बोलता है हस्ति निषाद स्वर को बोलता है सो यह सप्त स्वरों के जीव निश्रित उदाहरण दिखलाये गये है अब जिस जीव को जिस स्वर की स्वाभाविक प्राप्ति होती है उस के लक्षणों के विषय में कहते है क्योंकि लक्षणों द्वारा उस स्वर का पूर्ण प्रकार से निश्चय होता है ।

अथ सप्त स्वरों के लक्षण विषय ।

एएसिं णं सतण्हं सराणं सत्त सरलक्खणा पं० तं० सज्जेण लहईवित्तिं कयं च न विणस्सइ गावो पुत्ता य मित्ता य नारीणं होइ बल्लभो ७ ॥

पदार्थ–(एएसिं णं) इन (सत्तण्हं) सातों (सराणं) स्वरों के (सत सर) सात स्वर (लक्खणा) लक्षण प्रतिपादन किए गए हैं. अर्थात सप्त स्वरों की लक्षणों द्वारा प्रतिती होती है जैसे कि (सज्जेणं) षड्ज स्वर से

(लहइ) प्राप्ति होती है (वित्तं) वृत्ति का अर्थात् षड्ज स्वर के प्रभाव से आजीविका की वृद्धि होती है फिर (कयं च) उसका किया हुआ कार्य (नविराणस्सइ) विनाश को प्राप्त नहीं होता अतः जो वह करदे वह सबको माननीय होता है और (गावो) गौएं (पुत्ताय) और पुत्र तथा (मित्ताय) मित्र भी उसके बहुत से होते हैं पुनः (नारीणं) नारियों को (होइ) होता है (वल्लभो) वल्लभ ॥ १ ॥

भावार्थ–सात स्वरों के सात लक्षण बतलाए गये हैं जिन के द्वारा स्वर ज्ञान बहुत ही शीघ्र उत्पन्न होजाए जैसे कि जिस व्यक्ति का षड्ज स्वर होता है उसकी आजीविका ठीक होती है और उसके द्वारा उसे धन की प्राप्ति भी अतीव होती रहती है फिर उसका किया हुआ कार्य सबको माननीय होता है गौएं पुत्र वा मित्र उसके बहुत से होते हैं अतः नारी जनों को भी वह वल्लभ होता है सो इन के द्वारा प्रथम स्वर की लक्षणा होती है ॥ १ ॥

॥ अथ ऋषभ स्वर लक्षण विषय ॥

रिसभेणउ एसज्जं सेणावच्चं धणाणि य । वत्थगंधमलंकारं इत्थिओ सयणाणि य ॥ ६ ॥

पदार्थ–(रिसभेणउ) ऋषभ स्वर से प्राप्त होता है (सज्जं) ऐश्वर्य भाव और (सेण वच्चं) सेनापतिभाव और (धणाणिय) धन का संग्रह अतीव होना तथा (वत्थ) वस्त्र (गंधं) सुगंधादि पदार्थ (अलंकारं) अलंकारादि पदार्थ उसको मिलते हैं तथा (इत्थिओ) स्त्रियें की भी उसको प्राप्ति होती हैं (सयणाणिय ६) और पर्यंकादि की भी उसको अत्यंत प्राप्ति होती है ॥ ६ ॥

भावार्थ–ऋषभ स्वर के महात्म्य से ऐश्वर्य भाव वा सेनापति और धन का अतीव संग्रह व स्वगंधं अलंकार स्त्रियें पर्य्यंकादि शय्या सर्व प्रकार से पदार्थ उपलब्ध होते हैं और इन लक्षणों से निश्चय होता है कि–इस व्यक्ति का ऋषभ स्वर है ॥ ६ ॥

॥ अथ गांधार स्वर लक्षण विषय ॥

गंधारे गीइजुत्तिन्ना वज्जवितिकलाहिया ॥ हवंति कविणोपन्ना जो अन्ने सत्थपारगा ॥ १० ॥

पदार्थ- (गंधारे) गांधार स्वर वाला पुरुष (गीई) गीतोंका (जुइन्ना) ज्ञाता होता है और जिसकी (वज्ज) प्रधान (विति) आजीविका होती है पुनः (कलाहिया) कला अधिक होती है अर्थात् कलाओं में प्रवीण होता है पुनः इस स्वर वाले (हवंति कविणोपन्ना) कवि होते हैं अपितु (प्रज्ञा) बुद्धिवान् कवि होते हैं (जे) जो (अन्ने) अन्य छंदादि (सत्थ) शास्त्रों के भी (पारगा १०) पारगामी होते हैं ॥ १० ॥

भावार्थ-गांधार स्वर वाला गीतों के ज्ञान का गीतज्ञ होता है और जिस की संसार में (वज्जविति) प्रधान आजीविका होती है पुनः कलाओं में प्रवीण होता है फिर इस स्वर वाले कवि होते हैं अतः बुद्धिमान कवि होते हैं जो अन्य छंदादि शास्त्रों के भी पारगामी होते हैं सो इन लक्षणों द्वारा गांधार स्वर की पूर्ण लक्षणता होजाती है कि इस व्यक्ति का गांधार स्वर है ॥ १० ॥

॥ अथ मध्यम स्वर लक्षण विषय ॥

मज्झिमसर मंत्ताउ हवंति सुह जीविणो । खायइ पियइ देई मज्झिम सरमास्सिउ ॥ ११ ॥

पदार्थ- (मज्झिम) मध्यम (सर) स्वर (मंत्ताउ) वालेजीव (हवंति) होते हैं (सुह जीवणो) सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करनेवाले जैसे कि (खाइय) खाना (पीयइ) पीना (देइ) देना अर्थात खानाहै पीनाहै देनाहै (मज्झिम) मध्यम (सर) स्वर (मस्सिउ ११) आश्रित वाला जीव ॥ ११ ॥

भावार्थ-मध्यम स्वर वाले जीव सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करने वाले होते हैं उनके खान पान करने में वा देने में किसी प्रकार से भी विघ्न उपस्थित नहीं होते किंतु पदार्थों के विशेष संग्रह करने में वे असमर्थ होते हैं इसी करके वे मध्यम स्वर आश्रित कहे जाते हैं ॥ ११ ॥

॥ अथ पंचम स्वर लक्षण विषय ॥

पंचम सरमंताउ हवंति पुहवीपती । सुरा संग्रह कत्तारो अणेग नरणायगा ॥ १२ ॥

पदार्थ- (पंचम) पंचम (सर) स्वर (मंताउ) वाले जीव (हवंति) होते हैं (पुहवी) पृथवी (पति) के पति पुनः (सूरा) शूरवीर होते हुए (संग्गह) पदार्थों के (कत्तारो) संग्रह करने वाले होते हैं, और (अणेक) अनेक (नर नायगा) नर नायक होते हैं अर्थात् नरों के अधिपति होते हैं यह सर्व पंचम स्वर के लक्षण हैं और इन्हीं लक्षणों द्वारा स्वर को प्रतीति होती है ॥ १२ ॥

भावार्थ–पंचम स्वर वाले जीव भूमी के अधिपती होते हैं और समर में शूर वीर भी होते हैं तथा अनेक प्रकार के पदार्थों के भी संग्रह करने वाले होते हैं फिर अनेक नरों के नाथ भी होते हैं यह पंचम स्वर के लक्षण हैं इसके पीछे अब छठे स्वर के लक्षण कहते हैं ॥ १२ ॥

धेवंयं सरमंताउ हवंती दुहजीविणो कुचेला य कुविति उ चोरा चंडाल मुट्टिया ॥ १३ ॥

नोट–१ रेवन सरमंताउ भवंति कलहधिया साउणिया वगुरिया सोयरिया मच्छ बंधाय १

रेवन स्वर वाले जीवों को क्लेश प्रिय होता है वे पक्षियों के मारने वाले वा मृगादि के पकड़ने वाले होते हैं तथा सूकरों के पकड़ने वाले वा मत्स्य के बंधन करने वाले होते हैं ॥ १२ ॥

२ चंडाला मुट्टिया मेया जे अन्ने पावं कम्मुणो जो घात गाजे चोरायो साय सरमस्सिया ॥१३॥

जो चंडालादि कर्म करने वाले और मुष्टिक आदि का प्रहार करने वाले तथा जो अन्य प्रकार के पाप कर्म करने वाले हैं जैसे कि गो घातक गायों की घात करने वाले अथवा जो चोर हैं वे सर्व निषाद स्वर के आश्रित होते हैं अर्थात् गो आदि उपकारी पशुओं की हिंसा करने वाले होते हैं।

॥ श्रीस्थानांग सूत्र अध्याय ७ गाथा १२-१३ ॥

पदार्थ-(धेवयं) धैवत (सर) स्वर (मंताउ) वाले जीव (हवंति) होते हैं (दुहजीविणे) दुःख पूर्वक जीवन व्यतीत करने वाले फिर जिनके (कुचेला) कुवस्त्र पहिरे हुए होते हैं और जिनकी (कुवितिय कुवृत्ति होती है यह स्वर प्रायः (चोरा) चोरों का (चंडाल) चंडालों का (मुट्ठिया) मुष्ठि मल्लादिका होता है और यह स्वर निषिद्ध होता है ॥ १३ ॥

भावार्थ—धैवत स्वर वाले जीव दुःख पूर्वक जीवन व्यतीत करने वाले होते हैं पुनः जिनके कुवस्त्र और दुष्ट आजीविका होती है इस स्वर के धारने वाले जीव चोर्य कर्म करने वाले होते हैं वा चांडालादि के क्रिया करने वाले वाष्टिकादि से प्रहार करने वाले होते हैं इसीलिए यह स्वर निषिद्ध होता है तथा इस स्वर वाला जीव पाप कर्म विशेष करता है ॥ १३ ॥

अथ सप्तमस्वर लक्षण विषय ।

निसाद सरमंताउ हवंतिहिंस गावरा । जंघाचारा लेह-वाहा हिंडगा भारवाहगा ॥ १४ ॥

पदार्थ-(निसाद) निषाद (सर) स्वर (मंताउ) वाले जीव (हवंति) होते हैं (हिंसगा) हिंसक (नरा) नर अर्थात् व हिंसा करने वाले होते हैं पुनः (जंघाचाए) जंघादिकों को समर्दन करने वाले (लेहवाह) लेख वाहक (लेख के लेजाने वाले (हिंडगा) प्रमाण से रहित भ्रमण करने वाले और (भार वाहगा १४) भार वाहक होते हैं क्योंकि निषाद स्वर वाले जीवों की भी क्रियायें अयोग्य होती हैं ॥ १४ ॥

भावार्थ-निषाद वाले जीव हिंसक और अतीव भ्रमण करने वाले होते हैं तथा जंघाओं के मर्दन करने वाले लेख वाहक और भार वाहक भी होते हैं अर्थात् जो शूद्र क्रियायें हैं उनके करता निषाद स्वर वाले ही होते हैं अब इनके सप्त स्वरों के तीन ग्राम और सप्त मूर्च्छना के विषय में कहते हैं ॥ १४ ॥

अथ सप्त स्वरों के ग्राम वा मूर्च्छना विषय ।

एएसिं णं सत्तण्हं सराणं तओगामा पं० तं० सज्जगामे मज्झिम गामे गंधार नामे सज्जगामस्सणं सत्त मुच्छणाओ

पं० तं० मंगी को रविया हरिया रयणी य सारकंता य छट्ठी य सारसी नाम सुद्ध सज्जा य सत्तमा ॥ १५ ॥ मज्झिमगामस्स णं सत्त मुच्छणाओ पं० तं० उत्तर मंदारयणी उत्तरा उत्तर समासस्मो कंताय सो वीरा अभिरुवा होइ सत्तमा ॥१६॥ गंधार गामस्सणं सत्त मुच्छणाओ पं० तं० नंदिया खुड्डिया पूरिमाय चउत्थी सुद्ध गंधारा उतर गंधारा पुणसायं च सिया हवइ मुच्छा ॥१७॥ सुट्ठतर मा यामीसाछट्ठी सव्व उयनायव्वा अह उत्तारायत्ता कोड़िमा य सा सत्तमा हवइमुच्छा ॥ १८ ॥

पदार्थ-(एएसिं णं सत्तण्हं सराणं तउगामा पं० तं०) इन सात स्वरों को तीन ग्राम प्रतिपादन किए गए हैं ग्राम-उसे कहते हैं जिन में मूर्छनाओं का समूह हो सो वह ग्राम समूह तीन प्रकार से कथन किया गया है जैसे कि (सज्ज गामे १) षड्ज ग्राम जिसमें षड्ज ग्राम सम बंधि मूर्छनाओं का समूह हो इसी प्रकार (गांधार नामे ३) गांधार ग्राम (मज्झिम गामे २) मध्यम ग्राम यह सर्व ग्राम मूर्छनाओं के समूह रूप होते हैं किन्तु (सज्ज गामस्सणं सत्त मुच्छणा उ पं० तं०) षड्ज ग्राम की सात मूर्छनायें प्रतिपादन की गई है अपितु मूर्छना उसे कहते हैं जिस के द्वारा श्रोता वा वक्ता मूर्छित हो तथा मूर्छित के समान श्रोता गण वा वक्तागण होवें उसे मूर्छना कहते हैं अथवा राग भेद का नामभी मूर्छना कहते हैं तथा जहां पर सरों के भेदानुभेद होते हैं वे मूर्छनायें हैं वे षड्ज ग्राम की सात मूर्छना प्रतिपादन की हैं जैसे कि (मंगी १) मांगी १ (कोरवीया २) कोरवी २ (हारिया ३) हारिता ३ (रयणीय ४) रत्ना ४ (सार कंता ५) शारकांता ५ (छट्ठीय सारसी नाम) छठी मूर्छना सारसी नाम क है (सुद्ध सज्जाय सत्तमा १५) शुद्ध षड्ज नामक सप्तमी मूर्छना है १५ किन्तु इस स्थान में इनके नाम ही वर्णन किए गए हैं किन्तु इनका पूर्णस्वरूप दृष्टिवाद के अन्तर जो पूर्व हैं उन में सविस्तर वर्णन किया गया है तथा जो सांगीत विद्या के पुस्तक हैं वहां से इनका स्वरूप जानना चाहिये और (मज्झिम गामस्सणं सत्त मुच्छणाउ पण्णता तं० (मध्यम ग्राम की भी सात मूर्छनायें प्रतिपादन कीगई हैं जैसे कि-(उतरमंदा १) उतरामंदा १ (रयणी २)

रत्ना २ (उत्तरा ३) उत्तरा ३ (उतर समा ४) उतर समा ४ (समोक्रंताय ५) समक्रांता ५ (सोविरा ६) सुवीरा ६ (अभिरूआ होई सतमा १६) अभिरूप होती है सातमी मूर्छना १६ फिर (गांधार गामास्सखं सत मुच्छणाउ पं० तं० गांधार ग्राम की सात मूर्छना प्रतिपादन की गई है जैसे कि (नंदिया १) नंदिका १ (खुदिया १) क्षुद्रिका २ (पुरिमाय) और पुरिमाई पुनः (चउत्थीय सुद्ध गंधारा) चतुर्थी शुद्ध गंधार नामक मूर्छना है (उतर गंधारा ५) उतर गंधारा (पुणसा) पुनः वह (पंचमिया) पांचमिका (हवई) होती है (मूर्छा १७) मूर्छा १७ और (सुट्ठुतरमायमा) सुट्ठुतर मायाम) साछट्ठी सव्व उयनायव्वा वह छठी मूर्छना सर्वथा प्रकार से जाननी चाहिये (अह) अथ (उतारायता कोडीमाय) उतरायन को टिमा नामक (सा) वह सतमी इवई (मूर्छा १०) मूर्छा होती है सातवीं ॥ १८ ॥

भावार्थ -इन सप्त स्वरों के तीन ग्राम हैं और एक एक ग्राम में सात २ मूर्च्छनायें हैं मूर्च्छना उसे कहते हैं जिस रागके कथन करने से वक्ता वा श्रोता मूर्छित के समान होजायें तथा यह मूर्छना रागों के भेद रूप हैं इन का पूर्ण विवर्ण दृष्टिवाद अंतरगत पूर्वों में सविस्तरता से किया गया है तथा किंचित् विवर्ण जो राग विद्या के (गायन विद्या के) पुस्तक हैं उन में भी कियागया है अपितु इस सूत्र में जो केवल सूचना मात्र ही विवर्ण है इसलिए इन का नामो लेख किया गया है तथा वृतिकार ने भी इनकी वृति विस्तार पूर्वक नहीं लिखी है अपितु सूचना मात्रही वृति लिखी गई है अब सप्त स्वरों के विशेष वर्णण में सूत्रकार प्रश्नोत्तर के रूप में विवर्ण करते हैं ॥ १८ ॥

॥ अथ सप्त स्वरों के विशेष प्रश्नोत्तर विषय ॥

सतसरा कओ हवई गीयस्स का हवइ जोणी कइसमया ओसासा कइवा गीयस्स आगारा ॥ १६ ॥

पदार्थ–(सतसरा कओ हवइ) (प्रश्नानि) सातों स्वर किस स्थान में उत्पन्न होते हैं १ और (गीयस्स का हवइ जोणी) गीत की कौनसी योनि (उत्पति स्थान) होती है २ (कइ समिया ओसासा) और कितने समयं

प्रमाण स्वर का उच्छास है ३ अपितु (कइ वागीयस्स आगारा १६) गीतों के कितने आकार (स्वरूप) हैं ॥ १६ ॥

भावार्थ -इस गाथा में चार प्रश्न किए गए हैं जैसे कि सात स्वर कहां से उत्पन्न होते हैं गीत की योनि क्या है और स्वर का उच्छ्वास कितना होता है और गीत का आकार कैसा है इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर निम्न प्रकार से दिए जाते हैं ॥ १६ ॥

॥ प्रश्नों के उत्तर विषय ॥

सत सरा नाभीओ हवंति गीयं च रुन्नजोणी पाय समा ओसासा तिन्नि य गीयस्स आगारा ॥ २० ॥

पदार्थ--(सतसरा) सातों स्वर (नाभीओ) (हवंति) उत्पन्न होते हैं और (गीयं चरुन्न जोणी) गीतों की रुदित योनि है (पायसमा उसासा) गीतों के के पद पद में उच्छ्वास है अर्थात् जो पद सम है वह गीतों के पद पद में उच्छ्वास हैं और (तिन्निय) तीन (गीयस्स) गीतके (आगारा २०) आकार होते हैं ॥ २० ॥.

भावार्थ--उक्त प्रश्नों के निम्न प्रकार से उत्तर दिए गए हैं जैसे कि (प्रश्न) सात स्वर कहां से उत्पन्न होते हैं (उत्तर) नाभिसे (प्रश्न) गीतों की योनि क्या है (उत्तर) गाना (प्रश्न) स्वर का उच्छ्वास कितने समय प्रमाण होता है (उत्तर) पदकी पूर्ति के अंत प्रमाण उच्छ्वास होता है.(प्रश्न) गीत के आकार कितने प्रकार से वर्णन किए गए हैं (उत्तर) गीतों के तीन प्रकार से आकार वर्णन किये गये हैं (प्रश्न) वे कौन २ से हैं (उत्तर) निम्न लिखित गाथा देखिये ॥ २० ॥

आइमउआरंभता समुव्वहंता य मज्झयारंमि अवस्याणे भवित्ता तन्निंवि गीयस्स आगारा ॥ २१ ॥

पदार्थ--(आइ) गीत की आदि में (आरंभता) आरंभ करता हुआ (मउ) कोमल स्वर होना चाहिए फिर (समुव्व हंताय) महा ध्वनि (मज्झ

यारंमि) मध्य भाग में होवे (अत्र सारोय) गीत के अंत में (भविता) मंद स्वर में होवे (तिन्निवि) अपि शब्द समुच्चार्थ में है इस लिए यही तीन (गीयस्स आगारा) गीत के आकार हैं ॥ २१ ॥

भावार्थ-गीत के तीन आकार होते हैं जैसे कि जब गीत की ध्वनि उठाई जावे तब मृदु स्वर होना चाहिए जब मध्य भाग में ध्वनि जाए तब महा ध्वनि होनी चाहिए अपितु जब गीत का अवसान समय आवे तब प्राग्वत् मृदु ध्वनि और मंद ध्वनि होनी चाहिए यही गीत के तीन आकार हैं अब गीत के दोष वा गुणों का विवर्ण करते हैं ॥ २१ ॥

॥ अथ स्वरों के भेदानुभेद गुण और दोष विषय ॥

छद्दोसे अट्ठगुणा तिन्नि य वित्ताई दोन्नि भणिइओ।
जो नाहि सो गाहिई सुसिखिओ रंग मज्झंमि ॥ २२ ॥

पदार्थ-(छद्दो से) गीत के षट् दोष हैं और (अट्ठगुणा) अष्ट गुण है फिर (तिन्निय) तीन (वित्ताइं) छंदों के भेद हैं (दोन्निय भणिइओ २) स्वर मंडल में दोनों भाषाएँ कथन की गई हैं (जो नाहि) जो उक्त सर्व भेदों को जानता है (सो गाहिइ) सो गीत शुद्ध गाता है अपितु (सुसिखिओ रंगमज्झमंमि २२) जिसने गायन विद्या को भली प्रकार से सीखा है रंग भूमी में रंग भूमी उसे कहते हैं जो नाटक घर होता है अर्थात् गायन शाला अब सूत्र कार षट् दोषों के विषय में कहते हैं ॥ २२ ॥

भावार्थ-गीत के षट् दोष अष्ट गुण होते हैं और तीन प्रकार के छंदों के भेदहोते हैं अपितु दो भाषाओं में स्वर मंडल गायन किया जाता है सो जो इस को पूर्ण विधि से जानता है वही गीत गाता है किन्तु जिसने भली प्रकार से गीत विद्या को रंग भूमिका में सीखा है २२ अब दोषों का विवर्ण करते हैं ॥

॥ अथ षट् दोष विषय ॥

भीयं १ दुय २ मप्पिच्छं ३ उत्तालं च कम्म सो मुणे यव्वं ४
कागस्सर ५ मणुणासं ६ छद्दोसा होंति गीयस्स ॥ २३ ॥

पदार्थ-(भीयं १) भय के साथ गायन करना अथवा (दुयं २) शीघ्र २ गाना २ (अपित्थं ३) श्लेष्मा सहित गला होने पर गान करना तथा अती व श्वास के होने पर गान करना ३ तथा (उत्तालंच) ताल से विपरीत गाना (कम्मसो मुणेयव्वं ४) इसी प्रकार अनुक्रमता पूर्वक भेद जानने चाहिए (काग-स्सरं ५) अथवा कागवत् यदिस्वर होवे तब भी गीत में दोष होता है ५ (अणु-णासं ६) और नासिका में स्वर उच्चारण करना यह भी दोष है सो (छद्दो सा) यह षट् दोष (होंति) होते हैं (गीयस्स) गीत के ॥ २३ ॥

भावार्थ-गीत के गाने में षट् प्रकार के दोष होते हैं जैसे कि-भय के साथ गाना १ शीघ्र २ गान २ श्वास होने पर गाना ३ ताल से विपरीत गाना ४ कागवत् स्वर के होने पर गाना और नासिका में गाना ६ अब गुणों का विवर्ण करते हैं।

अथ गुणों विषय में सूत्रकार कहते हैं ॥

पुंण्ण रत्तं च अलंकियं च वत्तं हेव विघुट्ठं महुरं समं सुललियं अठ गुणा होंति गीयस्स ॥ २४ ॥

पदार्थ-(पुण्ण) स्वर कला पूर्ण होवे १ (रत्तंच) पुनः राग में रक्त होवे २ फिर (अलंकियंच) राग अलंकार के सहित होवे ३ (वत्तं हेव विघुट्ठं) और प्रगट वचन होवे अर्थात् स्पष्ट वचन होवे ४ इसी प्रकार शुद्ध स्वर होवे ५ फिर (महुरं ६) कोकिलावत् मधुर स्वर होवे (समं ७) तालादि वादित्र सम होवें और (सुललियं) राग वा स्वर सुललित होवे ८ (अठ गुणा) यह अष्टगुण (होंति) होते हैं (गीयस्स) गीत के ॥ २४ ॥

भावार्थ-गीत के गाने के अष्ट प्रकार के गुण निम्न प्रकार से प्रतिपादन किए गए हैं जैसे कि-स्वर कला में प्रवीणता १ राग में रक्तता २ अलंकार सहित ३ प्रगट वचन ४ शुद्ध स्वर ५ कोकिलावत् स्वर मधुर ६ तालादि वादित्र सम हो ७ सुललित स्वर वा राग ८ यही गीत के गाने के आठ गुण हैं इन गुणों के साथ गीत गाने से गीत निर्दोष कहे जाते हैं अब इन के अतिरिक्त गुणों का विवरण करते हैं जो अवश्य ही जानने योग्य हैं ॥

अथ स्वरों के अन्य गुणों विषय में।

उरकंठ सिरपसत्यं च गिज्जंते मउयरिभियपदवंध समताल पउक्खेवं सतसरसी भरणेय ॥ २५ ॥ अक्खर समं पदसमं समंताल समंलय समंगेह समंच निस्ससियओससिय समंसंचार समंसरासत ॥ २६ ॥

पदार्थ--(उरकंठ) यदि स्वर विशाल होता है तब उर (वृक्ष स्थल) विशुद्ध कंठ विशुद्ध (सिर वसत्वंच) और शिर प्रशस्त फिर (गिज्जंते) गीत गाएं जाएं किन्तु (मउय) मृदु स्वर के साथ (रिभिय) स्वर को संचारण करता हुआ चातुर्यता के साथ उस रिभित कहते हैं और (पदवंध शुद्ध पदवद्ध वृत होवे और (समताल) समताल होवे तथा वादित्रादि भी सम्यक् प्रकार से ध्वनि निकालते हों (पुच्चुखेवं) प्रत्युत्क्षेप उस का नाम है जो कांसिकादि वादित्र हैं उन के शब्द वा नृत्य करने वाले के आक्षेप भी ठीक होवें इसी लिए (सत्तसरसी) सात स्वर (भरणेय २५) संयुक्त और अक्षरादि सम गीत कहाजाता है ५५ पुनः (अक्खरसमं) दीर्घ ह्रस्व प्लुत वा अनुनासिकादि अक्षर सम होवें और (पयसमं) पिंगल शास्त्रानुसार पद सम होवे (ताल सम) हस्तादि ताल सम होवें (लयसमं) लतादि वादंतादि के वादित्र बने हों वह भी सम हों फिर (गहसमंच) जो वीणादि राग मे गृहीत हैं वह भी सम हो (निस्सासियउसासियसमं) निःश्वास और उच्छ्वास भी सम हों क्योंकि श्वासोच्छ्वास के ठीक होने परही गाना गाया जाता है (संचारसमं) तंती सतार आदि में अंगुली आदि का संचार भी सम हो (सरासत २६) यह सात स्वरों के सात लक्षण प्रकारांतर से कहे गये हैं ॥ २६ ॥ अब इस के आगे छंद के लक्षण वर्णन करते हैं ॥

भावार्थ—प्रकारान्तर से भी गीत शुद्धि का विवर्ण इस प्रकार से किया गया है जैसे कि उर १ कण्ठ २ शिर ३ विशुद्ध होवें मृदु गीत गाया जावे चातुर्यता के साथ अक्षरों का संचारण किया जाए पद वद्ध रचना होवे फिर हस्तादि की ताल सम होवे प्रत्युत्क्षेप नृत्य करने वाले का ठीक होवे इस प्रकार विशुद्धि के साथ जब गाना गाया जाता है तब उस गीत को सप्त स्वर विशुद्ध कहते

हैं २५ फिर अक्षर सम हों १ पद सम हो, २ ताल सम हो, ३ लता सम हो,४ ग्रह सम हो ५, स्वासोच्छ्वास समहो ६, और (तंती) सतार आदि में संचार भी सम हो ७, यह भी सात गुण स्वरों के प्रकारान्तर से कहे गये हैं क्योंकि जो गीत विद्या के वेत्ता हैं यदि वे शुद्धि पूर्वक उसे ग्रहण करते हैं तब वे विद्या उनकी फली भूत होती हैं जब कि सर्व प्रकार से शुद्धि हो जावे तब जो छंद हैं वह भी शुद्ध होने चाहिए इस लिए अब वृत्तादि विषय में कहते हैं ॥

॥ अथवृत्त शुद्धि विषय ॥

निद्दोसे सारवतं च हेउज्जुतं मलं किर्यं उवणयं सो वयारं च मियं महुरमेव य ॥ २७ ॥ समंअद्ध समं चेव, सव्वत्थ विसमंसजं तिन्निवित्तपयाराइं चउत्थं नो वलब्भई ॥ २८ ॥

पदार्थ-(निद्दोसं) द्वात्रिंशत् दोषों से रहित और (सार वतंच) विशिष्ट अर्थ का सूचक पुनः (हे उज्जुतं) हेतु युक्त और (अलंकियं) उपमादि अलंकारों से अलंकृत पुनः (उवणयं) नैगमा दिनयों से युक्त अयुक्त अथवा (सोवयारं च) कठिन वचनों से रहित लज्जा युक्त अविरुद्ध अर्थ का प्रकाशक (मियं) मिताक्षर वा मर्यादा पूर्वक अक्षरं फिर (महुर) मधुर अक्षर युक्त (एवय) इस प्रकार के शुद्ध गीत को वृत्त कहते हैं अब वृत्त के सम विषय में कहते हैं (समं) जिस छंद के चारों चरणों के समान अक्षर हों उन्हें समछंद कहते हैं और (अद्धसमं चेव) जिस छंद के प्रथम पाद और तृतीय पाद द्वितीय पाद और चतुर्थ पाद के परस्पर सामान वर्ण होवें उन्हें अर्द्धसमच्छंद कहते हैं और (सव्वत्थ विसमं चज्जं) जिस वृत्त की सर्वथा प्रकार से ही विषमता होवे उसे सर्व विषम छंद कहते हैं सो यह (तिन्नि) तीनों (वित्त) वृत्त के (पयाराइं) प्रकार कहे गये हैं इस लिये (चउत्थंनोव लभइ २८) वृत्त का चतुर्थ प्रकार कीसी प्रकार से भी उपलब्ध नहीं होता अर्थात् सम, अर्द्धसम, विषम यही तीनों प्रकार छंद के हैं ॥ २८ ॥

भावार्थ--वृत्त के आठ गुण होते हैं जैसे कि छंद निर्दोष १ विशिष्ट अर्थ का सूच कर हेतु युक्त ३ अलंकृत ४ नयों से युक्त ५ शुद्ध अलंकार पूर्वक विरु-

द्धादि दोषों से रहित ६ मिताक्षरि ७ और मधुर ८ फिर तीनों प्रकार से वृत कहे गये हैं २७ जिनके चारों पादों के परस्पर समान वर्ण होते हैं उन्हें सम छंद कहते हैं जिनके प्रथम पाद और तृतीय पाद द्वितीय पाद और चतुर्थ पाद परस्पर सम हों उन्हें अर्द्ध समच्छंद कहते हैं किन्तु जिस वृत्त के चारों पाद विषम हों उन्हें सर्व विषय छंद कहते हैं यही तीन वृत्तों के प्रकार कहे गये हैं किन्तु चतुर्थ प्रकार कहीं भी उपलब्ध नहीं होता अब भाषा विषय में कहते हैं।

अथ भाषा विषय ।

सक्कया पागया चेव भणिइओ होति दोण्णिवि सर मंडलं मिगिज्जंते पसत्था इसी भासिया ॥ २६ ॥

पदार्थ-(सक्कया) संस्कृत (पागया चेव) और प्राकृत (भणिइउ हो-ति दोन्निवि) दोनों भाषाएं कही गई हैं (सर मंडलंमि) स्वर मंडल में (अर्थात् अर्हत् गणधरों ने दोनों भाषाओं में स्वर मंडल प्रतिपादन किया है) (गिज्जंते) और इन्हीं में (गिज्जंते) स्वर मंडल गायन किया है क्यों कि यह स्वर मंडल और यही दोनों भाषाऐं (पसत्था) प्रशस्त (सुन्दर (इसी) ऋषि श्री भगवन् वर्द्धमान स्वामी से (भासिया) भाषित हैं २६ अर्थात् दोनों भाषाऐं प्रशस्त श्री भगवान् ने प्रतिपादन की हैं ॥ २६ ॥

भावार्थ–तीर्थंकरों ने संस्कृत और प्राकृत यह दोनों भाषाऐं प्रतिपादन की हैं और दोनों भाषाओं में स्वर मंडल गायन किया जाता है और यह दोनों भाषाऐं सुन्दर हैं और ऋषि भाषित है यहां पर ऋषि शब्द का सम्बन्ध भगवान् से है २९ अब कुछ विशेष प्रश्नों के विषय में कहते हैं ॥

अथ विशेष प्रश्न विषय ।

केसी गायइ महुरं केसी गायइ खरं च रुक्खं च केसी गायई चउरं केसी य विलंविय दुपं केसी विस्सरं पुण केरसी ॥३०॥

पदार्थ-(केसी) कौन सी स्त्री (गायइ) गाती है (महुरं) मधुर गीत और (केसी) कौन सी स्त्री (गायइ) गाती है (खरंच) खर और (रुक्खंच) रुक्ष कर्कश गीत और (केसी) कौनसी स्त्री (गायई) गाती है (चउरं) चातुर्यता पूर्वक और (केसी य) कौन सी स्त्री (विलंबियं) विलम्ब से गाती है (दुयं) शीघ्र (केसी) गाने वाली कौनसी स्त्री फिर (विस्सरं पुण केसी ३०) विस्वर गीत कौनसी स्त्री गाती है अर्थात् राग का विध्वंस करनेहारी कौनसी स्त्री होती है ॥ ३० ॥

भावार्थ-उक्त गाथा में यह प्रश्न किए गये हैं कि कौनसी स्त्री मधुर गीत गाती है कौनसी स्त्री कर्कश और रुक्ष गीत गाती है कौनसी स्त्री दक्षता पूर्वक गाना गाती है कौनसी स्त्री विलम्ब से गाती है कौनसी स्त्री शीघ्रता से गाती है कौनसी स्त्री विस्वर गीत गाती है ॥ ३० ॥ इन प्रश्नों के उत्तर निम्न गाथा में दिए गए हैं ॥

अथ उत्तर विषय ।

गोरी गायइ महुरं काली गायइ खरं च रुक्खं च सामा गायइ चउरं काणीयाविलाबियं दुतं अंधा विस्सरं पुणपिंगला ॥३१॥

पदार्थ- (गोरी गायइ) गौर वर्ण वाली स्त्री गाना गाती है (महुरं) मधुर और (कालीगायइ) कृष्णा गाती है (खरं च रुक्खं च) कर्कश रुक्ष अपितु (सामा गायइ चउरं) श्यामा गाती है दक्षता के साथ (काणीयंविलंबियं) एक चक्षुवाली विलम्ब से गाती है और (दुयं अंधा) शीघ्र अंधी स्त्री गाती है पुनः (विस्सरंपुणपिंगला ३१) विस्वर पिंगला गाती है अर्थात् कपिला स्त्री विस्वर गीत गाती है ॥ ३१ ॥

भावार्थ-जो तीसवीं ३० गाथा में प्रश्न किए गए थे उनका अनुक्रमता पूर्वक ३१ वीं गाथा में उत्तर दिए गए हैं जैसे कि (प्रश्न) कौनसी स्त्री मधुर गीत गाती है (उत्तर) गौर वर्ण वाली (प्रश्न) कौनसी स्त्री कर्कश और रुक्ष गाना गाती है (उत्तर) कृष्णा (काले वर्ण वाली) (प्रश्न) कौनसी स्त्री चातुर्यतापूर्वक गाती है (उत्तर) श्याम वर्ण वाली (प्रश्न) कौनसी स्त्री विलंब से गाती है (उत्तर) एक आंख वाली (प्रश्न) कौनसी स्त्री शीघ्र २ गाती है

(उत्तर) आंधी नेत्रहीन (प्रश्न) कौनसी स्त्री विस्वर गाना गाती है (उत्तर) पिंगला (कपिला) स्त्री विस्वर गाती है. उक्त प्रश्नों के उत्तर अनुक्रमता पूर्वक २१ वीं गाथा में दिए गए हैं अब स्वर मंडल का उपसंहार करते हैं ॥

अथ उपसंहार विषय ।

सतसरा तओगामा मुच्छणाएगवीसइ ताणाएगुणपन्नास ससम्मत्तं सरमंडलं सेतंसत्तनामे ॥ ३२ ॥

पदार्थ– (सतसरा) षड्जादि सप्त स्वर हैं और (तओगामा) इन के तीन ग्राम हैं फिर इन की (मुच्छणाएगवीसइ) २१ मूर्छनायें हैं क्योंकि एक २ ग्राम की सात सात मूर्छनायें हैं और (ताणाएगुणपन्नास) ४९ इन की तान हैं जैसे कि एक तंत्री की ७ तानें हैं उन में एक २ स्वर सात सात वार गाया जाता है इसलिये ४९ तान कथन की गई हैं सो इसी विधि पूर्वक (सम्मतं) समाप्त हो गया है (सरमंडलं) स्वर मंडल ३२ (सेतंसत्तनामे) सो वही सप्त नाम है अर्थात् दश प्रकार के नामान्तर के विषय सप्तनाम इस प्रकार से वर्णन किया गया है अब इस के आगे आठ नाम का विवर्ण किया जायगा ॥

भावार्थ–इस स्वर मंडल में सप्त स्वर तीन ग्राम २१ मूर्छना और ४९ तान वर्णन की गई हैं किन्तु नाम उसे कहते हैं जैसे कि एक वीणा में ७ छिद्र हैं उन में एक एक स्वर सात सात वार गाया जाता है सो इस प्रकार से सातों सात ४९ हुए सो यह ४९ तान भी स्वर मंडल के बीच में है इस प्रकार से स्वर मंडल की समाप्ति की गई है अपितु इसे ही सप्त नाम कहते हैं अब इस के पश्चात् आठ प्रकार के नाम का विवेचन किया जाता है किन्तु आठ नाम में आठ प्रकार से विभक्तिएँ दिखलाई गई हैं इसलिए अब विभक्तियों का स्वरूप दिखलाते हैं ॥

अथ अष्टनामान्तर्गत अष्ट विभक्तिएँ विषय ।

सेकिंतं अट्ठनामे२ अट्ठाविहा वयणविभत्ती पं० तं० निद्देसे पढ़माहोइ बिइयाउवएसणं तइया कारणंमि कया चउत्थी संप-

णावणे१ पंचमीअवायाणे छट्ठीस्सामिवायणे सत्तमि सिन्निहा-णत्थेअट्ठमी आमंत्तणीभवे ॥ २॥

पदार्थ-सेकिंतं अट्ठ नामे २ अट्ठविहा वयणाविभत्ति पं० तं०) सो सप्त नाम के अनन्तर आठ प्रकार के नाम का नाम किस प्रकार से विवर्ण किया गया है अर्थात् वह आठ प्रकार का नाम कौनसा है इस प्रकार शिष्य के पूछने पर गुरु कहने लगे कि भो शब्द प्राट् ! आठ प्रकार के नाम में आठ प्रकार की वचन विभक्ति कथन की गई है वचन विभक्ति उसे कहते हैं जो अर्थों के विभा ग को करें और वचनों के अनेक भेद करके दिखलाए किन्तु यह सुबंत वचन हैं अपितु तिङन्त न समझने चाहिए सो यह विभक्तियें आठ प्रकार से प्रतिपादन कीगई हैं जैसे कि (निद्देस पठमा होइ) केवल लिंग बोधनार्थ जो वचन भाषण किए जाते हैं उनमें प्रथमा विभक्ति होती है अर्थात् निर्देश में प्रथमा होती है और (विइया उव एसणं) द्वितीया उपदेश में होती है अर्थात् द्वितीया विभ-क्ति आदेश में होती है (तइया) तृतीय (करणंमि) करण में (कया) वि-धान की गई है अपितु (चउत्थी) चतुर्थी (संपयावणे १) संप्रदान में कही गई है १ और पंचमी पांचवीं (आवादाणे) अपादान में होती है (छट्ठी सस्सा मि वायणे) किन्तु षष्ठी स्वस्वामि वचन में होती है अर्थात् सम्बंध में षष्ठी हो ती है और (सप्तमी) सातवीं (सणिहाणत्थे) सन्निधानार्थ में होती है अर्थात् आधार में सप्तमी विभक्ति होती है और (अठमी) आठमी विभक्ति (आमंतणी भवे २) आमंत्रण अर्थ में होती है अर्थात् अष्टमी विभक्ति सम्बोधन में कथन की गई है किन्तु आधुनिक व्याकरणों में संबोधन को पृथक करके सात विभक्तियें लिं-खी है और वृद्ध व्याकरणों के मत में विभक्तियें आठ ही होती हैं क्योंकि कर्ता के वचन भेद में ही आमंत्रण होता है सो वचन भेद का नाम विभक्ति है यथा विभज्यन्ते विभागी क्रियन्ते संख्या कर्मादयोऽर्था आभिरिति विभक्तयः विभक्तिनां अर्थाः विभक्तार्थाः इसलिए आमंत्रण को भी विभक्तियों की संज्ञा में रखा गया है ॥ २ ॥

भावार्थ-आठ नाम के बीच में आठ प्रकार से विभक्तियें कथन की गई हैं क्योंकि वचन के भेद को ही विभक्ति कहते हैं सो यह नाम विभक्तियें हैं तिङंत नहीं है और इसी को कारक प्रकरण जानना चाहिये अब जिन २ स्थानों में

जो जो कारक होता है वे निम्न लिखितानुसार है निर्देश में प्रथमा होती है उपदेश में द्वितीया होती है इसी प्रकार करण में तृतीया संप्रदान में चतुर्थी अपादान में पंचमी सम्बन्ध में षष्ठी आधार में सप्तमी और आमंत्रण में अष्टमी विभक्ति होती है इस प्रकार के कारकों के स्थान वर्ण करने के पश्चात् अब इन के उदाहरण दिखाए जाते हैं ॥

अथ अष्ट विभक्तियों के प्राकृत उदाहरण विषय ।

तत्थ पढमा विभत्ति निद्देसे सो इमो अहंवत्ति बिइया पुण उवएसे भणकुणसु इमं वयं वत्ति ३ ॥

पदार्थ-(तत्थ पढमा विभत्ति) इन आठों विभक्तियों में जो प्रथमा है वो (निद्देसे सोइमो अहंवत्ति) निर्देश रूप इस प्रकार से है जैसे कि सः अयं-अहं-इत्यादि किन्तु अयं प्रयोग पुलिंग का इसलिये दिखलाया गया है यह भी प्रयोग केवल निर्देश मात्र ही है और (बिइया पुण) द्वितिया फिर (उवएसे) उपदेश में होती है जैसे कि-(भणकुण सुइमं वयं वत्ति) शास्त्र को पढ़ कार्य को कर इस प्रकार के वचनों में द्वितीया होती है किन्तु इन से अन्य स्थानों में भी द्वितीया होती है जैसे कि-कटं करोति, शरं लुनाति, इत्यादि ३ ॥

भावार्थ—आठों विभक्तियों में से प्रथम प्रथमा के ही स्थान वर्णन किए गये हैं जैसे कि- केवल निर्देश में प्रथमा होती है यथा सः अयं, अहं, इत्यादि निर्देश वचन प्रथमा में रहते हैं और उपदेश में द्वितीया होती है जैसे कि-शास्त्रं पठ कार्यं कुरु अर्थात् शास्त्र को पढ़ कार्य कर इत्यादि अर्थों में द्वितीया होती है अथवा इन से अतिरिक्त अर्थों में भी द्वितीया होती है जैसे कि-कटं करोति, शरं लुनाति अर्थात् कट को बनाता है शर को काटता है इस में उपदेश कुछ भी नहीं है अपितु वह स्वयमेव ही वह क्रियाएं करता है यथा कुंभं करोति इत्यादि प्रयोग जानने चाहिए अब तृतीया और चतुर्थी के उदाहरण कहते हैं ॥

अथ तृतीया और चतुर्थी विषय ।

तइया करणंमि कया भणियं च कयं च तेणव मएवा हंदिनमोसाहाए हवइ चउत्थी संपयाणंमि ४ ॥

पदार्थ--(तइया) तृतीया (करणंमि) करण में (कया) विधान की गई जैसे कि- (भणियं च कयं च) पठन किया और कृत किया (तेण वमएवा) उसने अथवा मैंने अर्थात् पठितं मया पठन किया मैंने तेन ताड़िता उसने मारी इत्यादि अर्थों में तृतीया होती है और (हंदि) इत्युपदर्शने यह अव्यय दिखलाने अर्थ में है यथा (नमो साहाए) नमो देवेभ्यो स्वाहा अग्नये अर्हते नमः इत्यादि अर्थों में (हवइ) होती है (चउत्थि) चतुर्थी विभक्ति होती है (संपयाणंमि) सो दान पात्र में संप्रदान कारक होता है यथा उपाध्याय गां ददाति इत्यादि प्रयोग जानने चाहिये ॥ ४ ॥

भावार्थ--तृतीया विभक्ति करण में होती है क्योंकि साधक तमं करणं इस प्रकार से माना गया है यथा शरेण हन्ति असिना छिनन्ति इत्यादि प्रयोग जानने चाहिये और चतुर्थी संप्रदान में है जैसे कि नमो देवेभ्यः अर्हते नमः स्वाहा अग्नये उपाध्याय गां ददाति इत्यादि अर्थों में संप्रदान होता है क्योंकि नमः शब्द का सम्बन्ध सम्प्रदान के साथ ही प्रायः होता है सम्प्रदान उसे कहते हैं जिसको कोई वस्तु दी जाए अर्थात् लेने वाला सम्प्रदान कहाता है इसके अन्तर पंचम और छठे कारक के विषय में विवेचन करते हैं ॥

अथ पंचम और छठे कारक विषय ।

अवणय गिण्ह य एत्तो इउत्तिवा पंचमी अवायाणे ।
छट्ठी तस्स इमस्सवा गयस्स वा सामिसंबंधे ॥ ५ ॥

पदार्थ--(अवनय) दूर कर (गिण्हय) ग्रहण कर (एत्तो) उससे (इउ ति वा पंचमी अवायाणे) अथवा इससे मुक्ति होती है यथा रत्न त्रयान्योत्तः इत्यादि अर्थों में पांचमी विभक्ति अपादान नामक कारक में होती है क्योंकि अपायेऽवधौ ॥ शाख्या. अ. १ पा. ३ सू. १५६ । बुधि कृत जो विभाग है उसके विषय अपादान कारक होता है और (छट्ठी) छठी विभक्ति इन अर्थों में होती है जैसे कि- (तस्स) उसकी वस्तु है (इमस्स) इसकी है (गयस्स वा) अथवा गए हुए की है क्योंकि यह कारक (सामि सम्बन्धे ५) स्वामी सम्बन्ध में होता है यथा " राज्ञः पुरुषः " यह राजा का पुरुष है इत्यादि अर्थों में षष्ठी विभक्ति होती है ॥ ५ ॥

भावार्थ–पांचवीं विभक्ति अपादान में होती है जैसे कि इससे दूर करो इस से लो इत्यादि अर्थों में पांचवीं है और षष्ठी सम्बन्ध में होती है जैसे कि यह उसकी वस्तु है वा इसकी है इत्यादि अर्थों में स्वामी सम्बन्ध होता है इसलिये इन अर्थों में षष्ठी दी गई है अब इस के आगे सप्तमी और आमंत्रण विषय में कहते हैं ॥

अथ सप्तमी विभक्ति और आमंत्रण के विषयमें ।

हवइ पुण सत्तमी तंइमंमि आहारंकालभावेय आमंतणी भवे अट्ठमी जहाहे जुवाणेत्ति सेतं अट्ठनामे ॥

पदार्थ–(हवइ) होती है (पुण) फिर (सत्तमी) सप्तमी विभक्ती (तंइमं मि) वो इस (आहार) आधार (काल भावेय) काल और भाव के विषय में जैसे कि आधार के विषय में तो सप्तमी होती है साथ ही काल और भाव का भी सम्बन्ध करलेना चाहिए जैसे कि-" मधौ रमते " वसंत मास में लोग कीड़ा करते हैं यहां पर काल में सप्तमी हो गई है और " चारित्रेऽवतिष्ठ ते" चारित्र में मुनि ठहरते हैं यहां पर भाव में सप्तमी है क्योंकि आत्मा निज भाव में स्थिति करता है इत्यादि प्रयोगों में सप्तमी होती है और (आमंतणी भवे अट्ठमी) आमंत्रण में अष्टमी होती है यथा (हेजुवाणेति) हे युवान्-इस प्रकार के संबोधन में अष्टमी होती है क्योंकि (" ह्रस्वोऽनित्पाटः ") इस सूत्र से संबोधन में हे शब्द का प्रयोग करना चाहिए ८ (सेत्तं अट्ठ नाम) यही आठ नाम है सो इसी स्थान पर अष्ट प्रकार का नाम पूर्ण हो गया है अब इसके आगे नव नाम विषय में कहते है ॥

भावार्थ--सप्तमी विभक्ति अधार में होती है तथा काल और भाव में भी हो जाती है यथा " मधौ रमते " चारित्रेऽवतिष्ठते " यह काल और भाव के प्रयोग हैं और आमंत्रण में अष्टवीं विभक्ति कथन की गई है जैसे कि हे युवन् भो पुरुष इत्यादि प्रयोग हैं किन्तु वर्त्तमान काल में जो व्याकरण में प्रचलित हैं उनमें आमंत्रण प्रथमान्त माना गया है और सूत्र में आमंत्रण को आठवीं विभक्ति करके माना गया इससे सिद्ध होता है कि प्राचीन व्याकरण आमंत्रण को भी

त्वविभक्ति मानते थे और इन के सर्व प्रत्यय निम्न प्रकार से हैं जैसे कि-- सु औ जस् । अम् औट् शस् । टा भ्याम् भिस् । ङे भ्याम् भ्यस् । ङसि भ्याम् भ्यस् । ङस् ओस् आम् ङि ओस् सुप् । पुनः आमंत्रण में सु औ जस् । सो इस प्रकरण में कारक प्रकरण दिखलाया गया है अपितु इसका सविस्तर स्वरूप व्यकरणों में देखना चाहिये क्योंकि यहां पर तो सूचना मात्र ही वर्णन किया गया है सो इस प्रकरण को अवश्य ही ध्यान से पठन करना चाहिए अब इसके अनन्तर नव नाम के विषय में कहते हैं किन्तु नाम के अंतर्गत नव प्रकार के रस वर्णन किए गए हैं इस लिए नवरसों की व्याख्या की जाती है ।

अथ नवरस विषय ।

नव कव्वरसा पन्नता तंजहा वीरो १ सिंगारो २ अब्भुतोय ३ रोद्दोय ४ होई वोधव्वो वेलणओ ५ वीभच्छो ६ हासो ७ कलुणो ८ पसंतोय ९ ॥

पदार्थ-(नव कव्वरसा पन्नता तंजहा) नव प्रकार से काव्य रस प्रतिपादन किए गए हैं क्योंकि वेर्भावः काव्यं कवि काजो अंतःकरण का भाव है व फिर वो वीरादि रस काव्य में बंधे हुए हैं उन्हीं को काव्य रस कहते हैं यथ वा ह्यार्थी लंबनो वस्तु विकारो मान सो भवेत समावः कथ्यते सद्भिस्तस्योत् कर्षो-रसः स्मृतः १ यह काव्य रस नव प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि (वीरो १) दान तप युद्ध इत्यादि में वीरता करना उसे वीर कहते हैं १ और (सिंगारो २) काम जन्य सर्व रसों में प्रधान स्त्री संग से उत्पन्न होने वाले रस को शृङ्गाररस कहते हैं २ (अब्भुतोय ३) अद्भुत पदार्थों के देखने से जो रस उत्पन्न होता है उसको अद्भुत रस कहते हैं और (रोद्दोय ४) वैरी के दिखलाए हुए भयों को देखकर जो रस उत्पन्न होता है उसे रौद्र रस कहते हैं ४ (होई वोधव्वा) अर्थात् इस रस को रौद्र रस जानना चाहिए (वेलणओ ५) जो लज्जा का उत्पादक होवे और लोकों में स्तुति का पात्र भी हो उसको व्रीडन रस कहते हैं ५ (विभच्छो ६) जिन पदार्थों के सुनने से वा देखने से घृणा उत्पन्न हो उस रस को विभत्स रस कहते हैं ६ (हासो ७) जिसके द्वारा हास्य की प्राप्ति हो उसे हास्य रस कहते हैं जैसे कि वेष परिवर्तन करना

भाषा परिवर्तन भांड चेष्टा वा कुतुहल उत्पादक वचन उच्चारण करने उसी को हास्य रस कहते हैं ७ (कलुणो ८) प्रिय वस्तुओं के वियोग से दुःख उत्पन्न होता है फिर मुखाकृति मलीन हो जाती है चित्त व्याकुल रहता है इत्यादि भावों को करुणा रस कहते हैं ८ फिर (पसंतोय ९) जो क्रोध मान माया राग लोभ और द्वेशादिके बंधनों से विमुक्त हुआ है अत एव आत्मज्ञान में हिनि मग्न है सदैव काल प्रशान्तात्मा है इत्यादि गुण पूर्वक जीव को प्रशान्त रस प्राप्त होता है ॥ ९ ॥

भावार्थ—नव प्रकार के नाम नव रस प्रतिपादन किए गये हैं और इनको नव काव्य रस भी कहते हैं क्योंकि कवि के भावों का नाम काव्य होता है अतः उनमें जो निबंधन किया हुआ है उसी को रस कहते हैं सो यह नव प्रकार के रस काव्य रस होते हैं जैसे कि वीर रस १, शृङ्गार रस २, अद्भुत रस ३, रौद्र रस ४, व्रीडन रस ५, वीभत्स रस ६, हास्य रस ७, करुणा रस ८, और प्रशान्त रस ९ यही नव प्रकार के रस हैं और अलंकार ग्रन्थों में प्रायः इन्हीं रसों का विशेष वर्णन होता है वह भी नव रसों के विधायक होते हैं और स्वरों में नव रसों का परस्पर विशेष सम्बन्ध रहता है सो जो संसार भर में पदार्थ हैं वे नव रसों के ही अंतरगत रहते हैं अब रसों के उदाहरण दिखाये जाते हैं।

अथ वीर रस का उदाहरण विषय।

तत्थ परिच्चागंमि य दाणेतवचरणा सत्तुजण विणासे य अणसंणुसयधितीपरक्कमलिंगो वीरो रसो होई ॥ २ ॥ वीरोरसो जहा सो नाम महावीरो जो रज्जं पयहिऊण पव्वइओ कामको-हमहासत्तु पक्ख निग्घायणं कुणई ॥ ३ ॥

पदार्थ--(तत्थ परिच्चागंमि य दाणे) इन नव रसों में-प्रथम वीर रस का विवर्ण किया गया है सो यह वीर रस त्याग में दान में तपश्चरण में च पुनः (तवचरणसत्तुजणविणासे य) शत्रु जन के विनाश में होता है जैसे कि (अणणं सयधितीं) दान करके गर्व न करना जैसे किममतुल्योदानी ना-स्तीति अर्थात् मेरे समान कोई दानी नहीं है इस लिए दान देकर मान न

करना तप करके शांति रखना और (परक्कम) वैरी के हनन में पराक्रम करता है किन्तु व्याकुलता नहीं करता सो (लिंगो वीरोरसो होई २) इन लक्षणों से वीर रस की पहचान होती है क्योंकि त्याग करना दान देकर पश्चाताप न करना तप में धृति धारण करना यह सब वीरता के लक्षण हैं और संसार पक्ष में यह रस शत्रु के विनाश में भी होता है इसी का नाम वीर रस है अब इस रस का उदाहरण देते हैं किन्तु यह उदाहरण भाव शत्रु के हनन करने का ही है क्योंकि शास्त्र में मोक्षमार्ग का ही प्रारम्भ हुआ है सो उसी के अनुसार उदाहरण हैं (वीरोरसो) वीर रस (जहासोनाम महावीरो) जैसे वह सुप्रसिद्ध नाम से श्री महावीर स्वामी जिन्होंने (जोरज्जं) राज्य को (पयाइऊण) त्याग करके और वर्षीदान देकर (पव्वइओ) दीक्षा ग्रहण की फिर (कामकोह) काम क्रोध रूपी जो (महासत्तु) महा शत्रुओं का (पक्ख) समूह वा गर्व था (निग्घायणंकुणइ) उसका नाश किया अथवा श्री महावीर देव स्वामी भाव शत्रुओं को नाश करने लगे सो इसी का नाम वीर रस है ३ इस रस में भाव वीरता का ही उदाहरण दिया गया है किन्तु भावार्थ यह है कि जिस काव्य के सुनने से वीरता उत्पन्न होवे उसे ही वीर रस कहते हैं ॥

भावार्थ—इन नव रसों में प्रथम वीर रस का विवर्ण किया गया है जैसे कि यह रस त्याग में, दान में, तप में और शत्रु के विनाश में होता है दान देकर अहंकार न करना, तप में धृति धारण करना, शत्रु के विनाश में पराक्रम करना, इन लक्षणों द्वारा वीर रस की प्रतीती हो जाती है इस में उदाहरण श्री भगवान् महावीर स्वामी का ही है जिन्होंने राज त्याग कर दीक्षा लेकर काम क्रोध रूपी भाव शत्रुओं के नाश करने में उद्यत हुए यही वीरता का लक्षण है तथा जिस काव्य के सुनने से वीरता की प्राप्ति हो उसे ही वीर रस कहते हैं ॥

अथ शृंगार रस विषय ।

सिंगारो नाम रसो रइसं जोगाभिलास संजणणो मंडण विलास विव्वोय हासलीला रमण लिंगो ॥ ४ ॥ सिंगारो रसो जहा महुर विलास ललियं हिययउम्मादण कर जुवाणाणं सा मासद्दु दामं दायंति मेह लादामं ॥ ५ ॥

पदार्थ-(सिंगारो नाम रसो) शृङ्गार नामक रस (रई) रति कामदेव संजोगा भिलास) स्त्री आदि के संजोग की अभिलाषा के (संजणणो) उत्पन्न करने हारा है और (मंडण) कंकणादि का मंडण और नेत्रादि (विलास) विलास युक्त होने वा (विब्बोयण) अंग विकार युक्त होजाने फिर (हास) हास्य करना अथवा (लीला) काम जन्य वार्ताओं का उच्चारण करना फिर रमण लिंगो ४) स्त्री पुरुष का परस्पर संजोग होना वा क्रीडा करना इस रस का चिन्ह है ४ अब इस रस का उदाहरण दिखलाते हैं (सिंगारो रसो जहा) शृङ्गार नामक रस इस प्रकार से है जैसे कि (महुर) मधुर वचन (विलासललियं) विलास और ललित पुनः (हियय उम्मादण कर जुवाणाणं) हृदय के उन्माद कारी अर्थात् काम के उत्पादन करने हारे जो वचन हैं अतः किनको ! युवा पुरुषों को (सामासद्दु) श्याम वर्णा स्त्री के घुंघुरुओं के शब्द (दामं दायंति) कींकणी आदि के शब्द (मेहलादामं ५) मेखला के शब्द इत्यादि शब्दों को सुनकर युवा पुरुषों की काम अग्नि संदीप्त होती है सो इसी को शृङ्गार रस कहते हैं ॥ ५ ॥

भावार्थ-शृङ्गार रस का लक्षण इस प्रकार से है काम की आशा शरीर काम उन काम चेष्टा युक्त अंगों का हो जाना, हास्य करना, लीला युक्त वचन बोलने और क्रीडा में लगे रहना इन लक्षणों से शृङ्गार रस की प्रतीति होती हैं ४ जैसे कि युवा पुरुषों के हृदय में विकार उत्पन्न करने वाले मधुर और विलास लीलाकारी श्यामा नाम की स्त्री के आभूषणों के शब्द होते हैं अतः वे शब्द युवा पुरुषों के काम उत्पादक होते हैं सो इसीको शृङ्गार रस कहते हैं ५ किन्तु इस रस का लक्षण हास्य क्रीडा रमणादि क्रियायें करना ही है और इसके अनन्तर अद्भुत रस का विवर्ण करते हैं ॥ ५ ॥

अथ अद्भुत रस विषय ।

विम्हय करो अपुव्वो अणुभुयपुव्वो य जो रसो होइ सोहास विसाउपतिलक्खणो अब्भुओनाम ॥ ६ ॥ अब्भुओ रसो जहा अब्भुतरमिह मित्तो अन्नं किं अत्थि जीवलोगंमि जंजिणवयणे अत्था त्तिकालजुत्ता मुणिज्जंति ॥ ७ ॥

पदार्थ--(विम्हय करो) विस्मय करने हारा जो (अपुव्वो) पूर्व अनुभव नहीं किया उसके (अणुभुयपुव्वोय) अनुभव करने से अपूर्व (जो रसो होई) जो रस उत्पन्न होता है पुनः जिसकी (सोहा सविसाउपति) हास्य और विषाद से उत्पति है (लक्खणो अब्भुए नाम ७) सो इन लक्षणों से अद्भुत रस जाना जाता है अर्थात् जो आश्चर्यकारी वस्तु को देख कर हर्ष या विषाद उत्पन्न होता है इन लक्षणोंसे अद्भुत रस की प्रतीती होती है ॥ ६ ॥ अथ इसका उदाहरण दिखलाते हैं (अब्भुय रसो जहा) अद्भुत रस इस प्रकार से होता है जैसे कि (अब्भुतंर इहमिता) अद्भुत वस्तु इस लोकमें श्री जिनेन्द्र देव के वचन ही हैं क्योंकि जो यथार्थ पदार्थों के उपदेष्टा हैं इसलिये (अन्नं किं अत्थि) और कोई अद्भुत वस्तु है (जीव लोगंमि) समस्त संसार में अपितु नहीं है क्योंकि (जंजिण वयणे अत्था) जो जिन वचनों में जीवादि पदार्थों का अर्थ है वे (तिकाल जुत्ता) त्रिकाल युक्त मुणिज्जंति जाना जाता है ७ अर्थात् वे पदार्थों का अर्थ त्रिकाल में सद्रूप है इत्यादि भावों में जो हर्ष उत्पन्न होता है उसे अद्भुत रस कहते हैं ॥ ७ ॥

भावार्थ--आत्मा को विस्मय करने वाला जिसका पूर्व अनुभव नहीं किया जिसके अनुभव करने से हर्ष और विषाद उत्पन्न होता है वह अद्भुत रस है ६ इसका उदाहरण इस प्रकार से है जैसे कि-इस प्रकार से विचार करना कि इस संसार में जो अर्हन् देवों ने पदार्थों का स्वरूप प्रतिपादन किया है उसके समान कोई भी इतरजन पदार्थों का स्वरूप वर्णन नहीं कर सके जो अर्हन् देव के पदार्थ कथन किए हुए हैं वे त्रिकाल युक्त जाने जाते हैं अर्थात् जो लक्षण वर्णन किए गये हैं वे यथार्थ हैं और तीनों कालों में इस प्रकारसे रहते हैं इसलिये विस्मय करने वाले इस संसार भर में श्री जिनेन्द्र देव के वचन हैं अन्य कुछ नहीं इस प्रकार के भावों का अद्भुत रस कहते हैं ॥

अथ रौद्र रस विषय।

भयंजणणरूवसद्दंधयारचिंतकहाससुप्पन्नो संमोह संभम विसायमरणलिंगो रसो रुद्दो ॥ ८ ॥ रुद्दो रसो जहा भि-

ऊडीविडंबियमुहो संद्‌दुट्ठोठ्ठइय रुहिरमाकिन्नो हणासि पसुं असुरनिभो भमिरसिय अइरुद्दो रुद्दोऽसि ॥ ६ ॥

पदार्थ–(भय जणण) भय के उत्पन्न करने वाला (रूव) पिशाचादि का रूप और (सद्दंधयार) शब्द तथा अंधकार तथा भय जन्य वार्ताओं की चिंता करनी वा (कहा) कथा करनी (समुप्पन्नो) इन कारणों से रौद्र रस उत्पन्न होता है और (संमोह संभम) संमोह उत्पन्न होना क्या किया जाए वा चित्त की व्याकुलता अथवा (विसाय) चित्त का विषाद जैसे कि–यहां पर मैं क्यों आ गया हूं इत्यादि विचार करने और (मरण लिंगो रसो रुद्दो ८) सोमल ब्राह्मण वत् मृत्यु चिन्ह है जिसका सोरौद्र रस है ८ अब इस रौद्र रस का उदाहरण लिखते हैं (रुद्दो रसो जहा) रौद्र रस जैसे कि–(भिऊडी विडंवियमुहो) ललाट में जिस के भौंहें चढ़ी हुई हैं और मुख जिस का विकृत होरहा है इसी के संबोधन में कहा गया कि–हे भ्रकुटि विडंवित मुख (संदुट्ठोट्ठइयरुहिर माकिन्नो) और जो होठों को चबारहा है रुधिर से अंगोपांग आकीर्ण हैं फिर इसी के आमंत्रण में कहा गया कि हे संदष्टौष्ट वा हे रुधिराक्लिन्न (हणासियसुं) तूं मारता है पशू को किस प्रकार से मारता है जैसे कि (असुरोनिभो) असुर के समान अतएव जैसे असुर (भीमरासिय) भीम शब्द करता है उस के संबोधन में कहा गया कि हे असुर इव भीम रसितं (अइरुरोरुद्दोसि ६) तूं अतीव रौद्र वा रौद्र परिणाम युक्त हैं ६ शंका भय जिसका कारण है कार्य उसका रौद्र किस प्रकार से हो सक्ता है (समाधान) शत्रु के देखने से रौद्र ध्यान की उत्पत्ति हो जाती है इसलिए इस में कोई दोष नहीं है ॥

भावार्थ–भय के उत्पन्न करने वाले रूप शब्द अंधकार चिंता कथा व्यामोह व्याकुलता विषाद मृत्यु इस रौद्र रसके चिन्ह हैं ८ और हे भ्रकुटि विडंवित मुख हे संदष्टौष्ट हे रुधिर क्लिन्न तूं पशु को मारता है असुर इव भीम रासित तूं रौद्र परिणामि है किन्तु शत्रु आदि के दर्शन से रौद्र ध्यान की उत्पत्ति हो जाती है इसलिए इस को रौद्र रस कहा गया अब ब्रीडन रस का विवर्ण करते हैं ॥

अथ लज्जा रस विषय ।

विणओवयारगुज्झगुरुदारमेरावइक्कमुप्पन्नो वेलणओ नाम रसो लज्जासंकाजणणलिंगो ॥१०॥ वेलणउरसो जहा किं लोइयकरणीयाओ लज्जणतरंग तिलिज्जिया। मेति वारिज्जंमि गुरुजणो परिवंदेइजं वहुप्पोति ॥ ११ ॥

पदार्थ—(विणयओव यार गुज्झ गुरुदार) विनय उपचार के उल्लंघन करने से अथवा गुप्त तथा अश्लील वार्ताओं के करने से शिष्ट पुरुषों को लज्जा रस उत्पन्न होता है तथा अयोग्य कृत्य करने से भी लज्जा रस उत्पन्न होजाता है जैसे कि उपाध्यायादि की स्त्री से मैथुन क्रीड़ादिका आसेवन करना तथा (गुरुदार) जो पितृव्य आदि हैं उनकी स्त्रियों से काम क्रीड़ा करना फिर (मेरावइक्क मुप्फन्नो) सुंदर मर्यादा के व्यतिक्रम से उत्पन्न हो जाता है (वेलणओ नाम रसो) व्रीड़न नामक रस (लज्जासंका जणण लिंगो १०) शिर और नेत्र नीचे करने गात्रादि का संकोच हो जाना इसे ही लज्जा रस कहते हैं और सदैव काल मन में शंका का रहना कि मुझे अमुक व्यक्ति क्या कहेगा तथा यदि मैं अमुक स्थान पर गया तो लोग मुझे क्या कहेंगे इत्यादि वार्ताओं में शंका रखना सो लज्जा और शंका के उत्पन्न करने वाला चिन्ह है जिसका १० अब इस में उदाहरण देते हैं। (वेलणओ रसो जहा) व्रीड़ा नामक रस में यह उदाहरण दिया गया है जैसे कि किसी देशवा किसी कुल में प्रथा है जब नव वधू स्वभर्ता से संग करती है तब अक्षतयोनि के कारण से उसके वस्त्रादि रुधिर से भर जाते हैं तब उस के श्वसुरादि उन वस्त्रों को बहुत से नर नारियों को दिखलाते हैं कि हमारी नव वधू पतिव्रता धर्म में दृढ़ि भूत है इसने कभी भी पर पुरुषों का संग नहीं किया इसमें रुधिर चर्चित वस्त्र ही प्रमाण. भूत हैं अब यावन्मात्र वे नव वधू के शील की प्रशंसा करते हैं तावन्मात्र ही वह नव वधू लज्जा को प्राप्त होती है क्योंकि मैथुन के नाम से ही लज्जा की प्राप्ति होती है जब उसके सेवन का ही उदाहरण दिया जाए तब तो क्यों न लज्जा प्राप्त होवे इसलिए वह नव वधू अपनी प्रिय सखी से कहती है कि (किं लोइय करणीयाओ लज्जणतरगंतिलज्जामोति) हे मेरी प्यारी सखी ! इस लौकिक

क्रिया से और क्या लज्जा स्थान होगा अपितु कोई भी नहीं है इसीलिए इन क्रियाओं से मैं पुनः २ लज्जित होती हूं और फिर यह (वारिज्जंमि) विवाह के समय में गुरुजणो) श्वसुरादिजन (परिवंदेइ ३) वांचते हैं अथवा (परिवदइ) विवाहादि कार्यों में कहते हैं कि यह (जंवहुपोत्ति ११) रुधिर चर्चित हमारी अभिनव वधू का वस्त्र है सो इस कारण से वधू परम लज्जा को प्राप्त होती है यही लज्जा रस का उदाहरण है ॥ ११ ॥

भावार्थ—विनय उपचार अश्लील वार्ता उपाध्यायादि की स्त्रियों से मैथुन क्रीडा मर्यादाओं का अतिक्रम करना इत्यादि कारणों से लज्जा नामक रस उत्पन्न होजाता है और शंका वा लज्जा इस रस के चिन्ह हैं। १०। जैसे कि नव वधू अपनी प्यारी सखी से कहती है कि हे मेरी प्यारी सखी ! जो मेरे भर्तादि के संयोग से रुधिर चर्चित वस्त्र हुए हैं उन वस्त्रों को मेरे श्वसुरादि अनेक नर नारियों को दिखलाते हैं यद्यपि यह मेरे पतिव्रता धर्म ही की प्रशंसा करते हैं किन्तु इन कारणों से मैं तो परम लज्जित होती हूं क्योंकि जब मैथुन क्रियाके नाम से ही लज्जा उत्पन्न होती है अपितु यह तो मेरे उदाहरण ही दे रहे हैं इसलिये इस संसार में इससे बढ कर लज्जा का स्थान क्या होगा अपितु कोई भी नहीं है अतः विवाहादि में भी मेरे वस्त्र दिखलाये जाते हैं इसलिए मैं परम लज्जित होती जाती हूं। ११ । सो इसी का नाम लज्जा रस हैं अब वीभत्स रस का विवर्ण करते हैं ॥

अथ वीभत्स रस विषय ।

असुइकुणवदुदंसणसंजोगाऽभासगंधनिप्फन्नो निव्वेयविहिंसालक्खणो रसो होई वीभच्छो ॥ १२ ॥ वीभच्छोरसो जहा असुइमलभरिय निज्झरसभावदुगंधिसव्व । कालंपि धन्नाओ सरीरकलिं वहुमलकलूसं विमुंचति ॥१३॥

पदार्थ-(असुई) अपवित्रता मूत्र पुरीषादि की वा (कुणव) मृतक कलेवर (मांसपिंड) (दुदंसण) दुर्दर्शन लालादि वा दान्तादि (संजोगम्भास) के वारम्वार देखने से और (गंधनिप्फन्नो) उसकी दुर्गंध से उत्पन्न हो गया है (निव्वेयविहिंसा) वैराग्य अहिंसा सो यही (लक्खणो) लक्षण हैं जिसके

(रसो होई वीभच्छो १२) सो वही वीभत्स रस होता है अर्थात् वीभत्स लक्षण वैराग्य और अहिंस ही कथन किए गये हैं किन्तु यह वार्ता महा भागवशाली मोक्ष गमन करने वाले आत्माओं की अपेक्षा ही ज्ञात करनी चाहिये अन्यत्र नहीं अव इस का उदाहरण कहते हैं जैसे कि किसी सुज्ञ पुरुष ने कहा कि वीभच्छो रसो जहा) वीभत्स्य रस वह है जैसे कि (असुईमलभरिय निज्झर) अशुची मूत्र विष्टादि और मल से भरे हुए हैं यह सर्व श्रोत्रादि विवर (स्थान) फिर यह (समावदुगंधि सव्वकालंपि) स्वभाव से दुर्गंधि युक्त है अपितु सर्व काल में इसलिए (धन्नाओ) वे धन्य हैं जो (सरीर काले) इस शरीर को जो अनिष्ट रूप है फिर (वहुमलं कलुसं) वहुत मल से कलुपित है अर्थात् मल का पिंड है इसको (विमुंचति १३) छोडते हैं अर्थात् जो इस दुर्गंध मय शरीर को छोडकर मोक्ष गमन होते हैं वे धन्यहैं ॥ १३ ॥

भावार्थ—वीभत्स रस उसे कहते हैं जो अशुची मांस पिंड दुर्दर्शन इत्यादि के वारम्वार देखने से और दुर्गन्धि के निमित्त से वैराग और दया भाव उत्पन्न होता है वही वीभत्स रस है अपितु यह वार्ता मोक्षगमन आत्मा की अपेक्षा से कही गई है ॥ १२ ॥ और वे धन्य हैं जिन्होंने अशुचि और मल से भरे हुए श्रोत्रादि विवर जो स्वभाव से दुर्गंध यह शरीर है इसको छोड़ दिया है क्योंकि यह शरीर मल से कलुपित हो रहा है सदैव काल इसके सर्व द्वार मल को प्रस्नवण कर रहे हैं इस लिये वे धन्यवाद के योग्य हैं जो इस असार मय शरीरं को छोड़ कर मोक्षगमन हो गए हैं । अब इसके अनंतर हास्य रस का विवर्ण करते हैं ॥ १३ ॥

अथ हास्य रस विपय ।

रूववयवेसभासाविवरियविलंवण समुप्पन्नो हास मणप्प हासोप्पगासलिंगो रसो होई ॥ १४ ॥ हासो रसो जहा पासुत्तमसीमंडियंपडिवुद्धं देवरंपलोयंति हाज हणथणभर कंप्पणप्पणमियमज्झा हसई सामा ॥ १५ ॥

पदार्थ—(रूववयवेसभासा) रूप, वय, और भाषा (विवरिय) से विपरीति जैसे कि—हास्य रस के उत्पादन करने के लिए पुरुष स्त्री के रूप को

धारण करता है तथा स्त्री पुरुष के रूप को धारण करती है और तरुण पुरुष हास्य रस के वश में होता हुआ वृद्ध के रूप को धारण करता है और राजा के वेप से वणिग् का वेप धारण करता है अथवा भांडादि की नकलें इत्यादि (विवरिय विलंवण समुप्पन्नो) विपरीत भावों से वा विडंवनासे उत्पन्न होता है (हासो मणप्पहासो) हास्य रस जो मन को मकंप करने वाला है अर्थात् अतीव मनको मफुल्लित करने वाला है इसलिए (प्पगासालिंगोरसो होई १४) नेत्र मुखादिका विकाश रूप वा उदर कर मकंपण अट्ट हास्य आदि इस रस के चिन्ह होते हैं १४ अव इसमें उदाहरण कहते हैं (हासो रसो जहा) हास्य रस जैसे (पासुत्तमसिमंडियं) मसुप्त देवर को देखकर कर मषी के द्वारा मुख को मंडित करती है फिर (पडिवुद्धं देवरं यलोयति) जागृत हुए देवर को विशेष करके देखती है और कहती है कि (हां) हा इति खेद क्या हुआ मेरे देवर के मुख को जो मषी से अलंकृत हो रहा है अथवा (ही) शब्द कामका उत्पादक है इसलिए देवर के मुख को देखकर जो मषी (स्याही) से अलंकृत हो रहा है इस निमित्त को रखकर काम जन्य वार्ताओं को भाषण करती है फिर जिसके (जहथणभरकंप्पणं) कलश के सामान स्तनों के भार से कांपती है और (पणमियमज्भा) जिसका मध्य भाग स्तन भार से झुक रहा है इस मकार से कोई किसी व्यक्ति को आमंत्रण देकर कहता है कि देखो (हसइसामा) अपने देवर के मुख को देख कर यह श्यामा किस मकार से हंसती है सो इसी का नाम हास्य रस है अब इसके आगे करुणा रसके विषय में कहते हैं क्योंकि करुणा रस भी दीन वचनों से युक्त है इसलिए हास्य रस का मतिपक्ष है सो प्रतिपक्ष का विवर्ण करते हैं ॥ १५ ॥

भावार्थ—रूप का परिवर्तन करना अथवा वृद्धादिका रूप धारण करना भाषा विपरीत भाषण करनी जिसके द्वारा हास्य की उत्पत्ति हो और मन प्रफुल्लित हो जाए सो यही उक्त चिन्ह हास्य रस के हैं अर्थात् इन लक्षणों ही से हास्य रस की मतीती होती है ॥ १४ ॥ इस के उदाहरण में केवल इतना ही विवर्ण है कि जैसे कि श्यामा स्त्री निज देवर का उपहास करती है और उस के मुखादि को मषी से अलंकृत करती है केवल उपहास्य के लिए उसी को हास्य रस कहते हैं ॥ १५ ॥

अथ करुणा रस विषय ।

पियविप्पओयवधंवहवाहिविणिवायसंभसुप्पन्नो सोईयविल-वियपण्हयरुन्नलिंगो रसो करुणो ॥ १६ ॥ करुणो रसो जहा पम्भायकिलामिअयं वाहा गयपप्फ। अच्छियं वहुसो तस्स विओगे पुत्तया दुव्वलयंते मुहं जायं ॥ १७ ॥

पदार्थ–(पियवप्पओय) प्रिय का वियोग (वंध वह) वंध और वध (वाहिविणीवायसंभसुप्पन्नो) व्याधि पुत्रादि की मृत्यु अथवा स्वचक्र पर चक्रों के भय से उत्पन्न होता है करुणा रस अपितु (सोइय) शोक करना (विलविय) विलाप करना (पण्हय) खेद का होना (मूर्च्छागत) सो (रुन्नलिंगो, रसो करुणो १६) रोना लिंग होता है करुणा रस का अर्थात् नेत्रों से आंसु विमोचन करने इन्हीं लक्षणों से करुणा रस की प्रतीती होती हैं ॥ १६ ॥ अब इस का उदाहरण दिखलाते हैं (करुणो रसो जहा) करुणा रस इस प्रकार से होता है जैसे कि कोई वृद्धा स्त्री युवती स्त्री से कहती है कि हे पुत्रिके (पभ्भायाकिलामि अयं) परम प्रिय (पति के) के वियोग से तूं परम दुःखित (क्लामना) हो रही है फिर (वाहा गयपफअच्छियं वहुसो) पुनः २ तेरे नेत्रों में पानी के आने से नेत्र जल से भरे रहते हैं (तस्स विओगे) उस प्रिय के वियोग से (पुत्तया) हे पुत्रिके ! (दुव्वलयं ते मुहं जायं १७) तेरा मुख परम दुर्वल हो गया है इसी का नाम करुणा रस है ॥ १७ ॥ अब प्रशान्त रस के विषय में कहते हैं ॥

भावार्थ–करुणा रस उसे कहते हैं जो प्रिय के वियोग से अथवा वंध और वध व्याधि से अथवा पुत्रादि की मृत्यु से चित्त को अशान्ति उत्पन्न होती है उसी के कारणों से चिंता करना, विलाप करना, मूर्छा वश होना इत्यादि लिंग यह सर्व करुणा रस के होते हैं इस में उदाहरण यह है कि जैसे किसी युवती कन्या के पति के वियोग होने पर वह कन्या परम दुःखित अश्रु पूर्ण नेत्र जिसके मुख की आकृति मलीन है इत्यादि लक्षणों से निश्चय कराती है कि यह करुणा रस से व्याप्त हो रही है सो इसी को करुणा रस कहते हैं अब प्रशान्त रस के विषय में वित्रर्ण किया जाता है ॥ १७ ॥

अथ प्रशान्त रस विषय।

निद्दोसमणसमाहाणसंभवो जो पसंतभावेणं अविकार लक्खणोसो रसो पसंतोत्तिनायव्वो ॥ १८ ॥ पसंतो रसो जहा सब्भावनिव्विकारं उवसंतपसंतसोमदिट्ठीयं ही जण मुणिणो सोहइ मुहकमलं पीवरासिरीयं ॥ १९ ॥ एए नवकव्वरसा वत्तीसादोसविहिससुप्पन्नो गाहा हिं मुणेयव्वा हवंति सुद्धा मीसावा ॥ २० ॥ सेतं नव नामे ॥

पदार्थ—(निद्दोसमणं समाहाणं) हिंसादि दोषों से रहित मनका समाधान (धारण) करना सो उसी से (संभवो जो पसंतभावेणं) उत्पति है जिसकी अर्थात् प्रशान्त भावों से ही प्रशान्त रस की उत्पति है और जिसका (अवि-कार) निर्विकार (लक्खणो) लक्षण है (सोरसो) वह रस (पसंतोत्ति नाय-व्वा १८) इस प्रकार से प्रशान्त जानना चाहिये ॥१८॥ अब इसका उदाहरण कहते हैं (पसंतोरसो जहा) कोई पुरुष किसी व्यक्ति को आमत्रंण देकर कहता है कि प्रशान्त रस वह होता है जैसे कि- (सब्भावनिव्विकारं) यह साधु स्व-भाव से वा सद्भाव से निर्विकार है फिर (उव्वसंत) इस का उपशान्त और (पसंत) प्रशान्त चित्त है पुनः सोमदिट्ठीयं) सौम्य दृष्टि है अपितु (ही) ही शब्द विशेष प्रशान्त रस का द्योतक है इसलिए (ही) शब्द ग्रहण किया गया है सो (जइ) हे प्रिय तूं देख जैसे (मुणिणो सोहइ मुह) मुनिका शोभता है मुख रूपी (कमल) कमल (पीवर सिरियं १९) जो उपशम रूपी रस से पुष्ट हो रहा है अर्थात् जिस के मुख पर उपशम रूपी लक्ष्मी (श्री) निवास कर रही है ॥ १९ ॥ (एए नव*) यह नव (कव्व रस) काव्य रस (वतीस दो स-

---

*. नोट १ इतिहास शुचः क्रोधोत्साहौ भयजुगुप्सचे॥ विस्मयः शाम इत्युक्तः स्पयायि भावा नवक्र मात १ सम्भो गगो चरो वाच्छा विशेषो रति। विकार दर्शनादि अन्यो मनोरथो हासः। स्वस्येष्ट जय पियोगा दिना स्वास्मिन दुःखोत्कर्षः शोकः। रिपु कृताय कारिणश्चेत सिप्रज्वलनं क्रोधः कार्येषु लोकोत्कृष्टेषु स्थिरतर प्रयत्न उत्साह। रौद्र विलोकनादिना अवर्चो शंकनं भ्यम् अर्थानां दोष विलोक नादिर्भी गर्हा। जुगुप्सा अपूर्व वस्तु दर्शनादिना चित्तवस्तारो विस्मयः। विरागत्वा-

विहि) सूत्र के द्वात्रिंशत् दोषों की शुद्धि के प्रयोग से (समुप्पन्नो) समुत्पन्न हैं जैसे कि सूत्र वह होता है जिसमें अलीक दोष न हो सो इसी के द्वारा अद्भुत रस की उत्पति है इसी प्रकार आगे संभावना कर लेनी चाहिए अपितु ३२ दोषों का स्वरूप आगे लिखा जायगा पुनः (गाहाहिं मुणेयव्वा) यह सर्व रस गाथाओं करके जानने चाहिए अर्थात गाथा वा छंदादि के विषय यह सर्व रस होते हैं तथा (हवंति सुद्धा) किसी २ काव्य में एक २ ही रस होता है अथवा (मीसावा२०) किसी २ काव्य में एक वा २-३ इत्यादि रसों का सम्बन्ध होता है अर्थात् एक काव्य में कई रसों के उदाहरण होते हैं (सेतं नव नामे) अव इसी का नाम नव नाम है अर्थात् नव नाम के अन्तर्गत नव प्रकार के रसों का संक्षेप से विवर्ण किया गया है ॥ २० ॥

भावार्थ–मन के निर्दोष होने पर और भावों की विशेष शान्ति होने पर प्रशान्त रस की उत्पत्ति होती है और निर्विकार रूप का होना यही प्रशान्त रस का मुख्य लक्षण है ॥१८॥ इस रस में उदाहरण इस प्रकारसे दिया गया है कि जैसे कषायों के उपशम होने से और सौम्य दृष्टि होने से अतः परम शान्ति युक्त होने पर मुनि का मुख रूपी कमल उपशम रूप श्री से अलंकृत होता है उसीका नाम प्रशान्त रस है ॥१९॥ यह नव काव्य रस सूत्र के ३२ दोषों की विधि की रचना से उत्पन्न होते हैं जैसे कि अलीक दोष से रहित अद्भुत रस की उत्पत्ति होती है ऐसे ही और संभावना कर लेनी चाहिये सो यह रस गाथा काव्य छंदादि में जानने चाहिये किन्तु काव्यादि में शुद्ध रस भी होते हैं मिश्रित रस भी होते हैं जैसे कि एक काव्य में एक रस हो उसे शुद्ध रस कहते हैं यदि एक काव्य में २-३ तीन रसों का समावेश हो उसे मिश्रित रस कहते हैं किन्तु ३२ दोषों के प्रयोग से भी इन की उत्पत्ति है अन्य प्रकार से भी उत्पत्ति हो जाती है अलंकार, चंपू और छंदादि ग्रंथों में इनका सविस्तर स्वरूप जानना चाहिए सो इसी स्थानोपरि नव नाम का स्वरूप पूर्ण होगया है अब दश प्रकार के नाम का विवर्ण करते हैं ॥ २० ॥

ह्निना निर्विकार मनस्तंयाम; । इति अलंकार चिंतामणि युक्तम् अलंकार चिंतामणि नामक ग्रन्थ में उक्त रसों का महान् सविस्तर स्वरूप वर्णन किया गया है और इनके पृथक २ उदाहरण और उद्दीपनादि के कारण भी बतलाए गये हैं किन्तु मूल सूत्र में तो केवल नव रसों का स्वरू सूचना मात्र ही दिखलाया गया है ।

अथ दश नाम विषय ।

सेकिंतं दसनामे २ दसविहे पण्णत्ते तंजहा गोणे १ नोगुणे २ आयाणपदेणं ३ पडिवक्खपएणं ४ पाहाण पण्णं ५ अणाइयसिद्धंतेणं ६ नामेणं ७ अवयवेणं ८ संजोगेणं ९ पमाणेणं १० सेकिंतं गोणे २ खमतीति खमणो तवतीति तवणो जलतीति जलणो पवतीति पवणो सेतं गोणे सेकिंतं नो गोणे २ अकुंतो सकुंतो अमुग्गो समुग्गो अमुद्दो समुद्दो ३ अलालं पलालं ४ अकुलिया सकुलिया ५ नो पलं असइ पलासं अमाइवाहए माइवाहए अबीयवावए बीयवावए नो इदंगोवए इंदगोवए ९ सेतं नो गोणे ॥

पदार्थ-(सेकितं दसनामे २ दसविहे पं. तं.) वह प्रतिपादित दश नाम कौनसा है (उत्तर) दशनाम दश प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि (गोणे १) जो गुण निष्पन्न हो उसे गुण नाम कहते हैं १ (नो गुणे २) जो गुण से रहित उत्पन्न हो उसे नो गुण निष्पन्न नाम कहते हैं सो प्रथम यथार्थ नाम है द्वितीय अयथार्थ है २ (अयाण पदेणं ३) जो आदि पद से उत्पन्न हो उसे आदान पद नाम कहते हैं ३ और (पडिवक्खपएणं ४) जो प्रति पक्ष से उत्पन्न हो उसे प्रतिपक्ष नाम कहते हैं ४ (पाहाण पएणं ५) प्रधान वस्तु के संयोग से जो उत्पन्न हो उसका नाम प्रधान पद है (अणाइयसिद्धि तेणं ६) जो अनादिकाल से सिद्ध है उसी का नाम अनादि सिद्ध नाम है ६ (नामेणं ७) नाम से जो निष्पन्न होता है उसे नाम पद कहते हैं ७ (अवयवेणं ८) अवयवों के संयोग से जो नाम उत्पन्न होता है उसे अवयव नाम कहते हैं ८ और (संजोगेणं ९) द्रव्य के संयोग से जो नाम उत्पन्न होता है उसे संयोग नाम कहते हैं ९ (पमाणेणं १०) जो प्रमाणों के कारण से नाम उत्पन्न हो उसे प्रमाणपद कहते हैं १० अब इन के पृथक् २ उदाहरण दिखलाए जाते हैं (सेकित गोणे २) (प्रश्न) गुण निष्पन्न नाम किसे कहते हैं (उत्तर) गुण निष्पन्न नाम निम्न प्रकार से है-जैसे कि-(खम इति खमणो १) जो क्षमा करे उसे क्षमण कहते हैं यह नाम क्षमा के गुण से निष्पन्न है इस लिए यथार्थ नाम है इसी प्रकार (जल इति जलणो) जो जलती है वह ज्वलन है सो यह ज्वलन गुण से निष्पन्न नाम है २ (तव इति तवणो ३) जो तपता

है उसे तपन कहते हैं (पव इति पवणो ४) जो पवित्र करता है उसे पवन कहते हैं (सेतं गोणं) इत्यादि और नामों की भी संभावना करलेनी चाहिए सो यही गुण निष्पन्न नाम है अब नोगुण निष्पन्न नाम के उदाहरण देते हैं (सेकिंतं नो गुणे २) (प्रश्न) नो गुण निष्पन्न नाम कौनसा है (उत्तर) नो गुण निष्पन्न नाम इस प्रकार से है जैसे कि— (अकुंतो सकुंतो १) जिस के कुंत नाम शस्त्र विशेष नहीं है उसे अकुंत कहते हैं यह अयथार्थ नाम है क्योंकि कुंत नाम शस्त्र (बर्छी) का है और सकुंत नाम प्राकृत में पक्षी का है सो शस्त्रादि के न होने पर भी उसे शकुंत कहा जाता है सो इसी को नो गुण निष्पन्न नाम कहते हैं इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिए १ (अमुग्गोसमुग्गो २) नहीं है मुद्‌ग जिस के उसी का नाम अमुद्ग अर्थात् मुद्ग के न रखने पर भी समुद्ग कहा जाता है) मुद्ग वस्तु आधार भाजन (करंड) विशेष होता है और (अमुद्दो समुद्दो ३) नहीं है मुद्रा जिसके उसी को समुद्र को कहते हैं अतः मुद्रा न होने पर भी सागर का नाम समुद्र कहा जाता है ३ (अलालं पलालं ४) मुखादि के लालों के न होने पर भी तृण विशेष को पलाल कहते हैं ४) (अकुलिया सकुलिया ५) कुलिका से रहित होने पर सकुलिका कहते हैं यह सर्व प्राकृत की शैली से नामों का विवर्ण है परंतु संस्कृत में तो शकुनिक पक्षी का ही नाम होता है ५ (नोपलं असइ पलासं ६) जो पल (मांस) का आस्वादन नहीं करता उस को पलाश कहते हैं यह भी एक वनस्पति के पत्रों के नाम है ६ (अमाइवाहएमाइवाहए ७) जो मातृ वाहक नहीं होता उसे मातृ वाहक कहते हैं द्विइंद्रिय जीव विशेष होता है ७ (अवीय वावए वीयवावए ८) जो बीज के बोने वाला नहीं उसे बीज वापक कहते हैं विकलेंद्रिय जीव विशेष का नाम है ८ (नोइंदगोवए इंदगोवए ९) जो इंद्र गोपक नहीं होता उसे इंद्र गोपक कहते हैं यह भी विकलेंद्रिय जीव विशेष है९ (सेतं नो गुणे) अब यही नो गुण निष्पन्न नाम होता है अर्थात् यह नाम यथार्थ नहीं है किन्तु प्रसिद्धि में इसी प्रकार से उच्चारण किये जाते हैं इसी वास्ते इन को नोगुण निष्पन्न नाम कहते हैं ॥

भावार्थ—दश नाम दश प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि गुण निष्पन्न नाम १, अगुणनिष्पन्न नाम २, आदानपद नाम ३, प्रतिपक्षपद नाम ४, प्रधानपद नाम ५, अनादिसिद्ध नाम ६, नाम पद ७, अवयव नाम ८, सं-

योग नाम ६, प्रमाण नाम १०, अपितु गुण निष्पन्न उसे कहते हैं जैसे कि क्षमा के गुण से क्षमण १ ज्वलन होने से ज्वलन २ ताप होने से तपन ३ पवित्र करने से पवन ४ यह सर्व गुण निष्पन्न नाम हैं ॥ किन्तु नो गुण निष्पन्न नाम निम्न प्रकार से हैं कुन्त के न होने पर शकुन्त १, अमुद्रन होने पर भी समुद्र २, मुद्रा के न होने पर समुद्र ३, लाल के न होने पर पलाल ४, कुलिका के न होने पर शकुलिका ५, मांस के न खाने पर पलाश ६, अमातृ वाहक को मातृ वाहक ७, अबीज वापक को बीज वापक ८, इन्द्र के न गोपने पर इन्द्र गोप ६, इत्यादि यह सर्व प्रयोग गुण निष्पन्न नहीं हैं किन्तु गुण से विरुद्ध नाम प्रसिद्ध हैं ॥ अब आदान पद और प्रतिपक्ष पद के विषय में लिखा जाता है ॥

अथ आदान पद और प्रति पक्ष पद विषय ।

(सेकिंतं आयाणपएणं २ आवन्ती १ चउरंगिज्जं २ असंखयं ३ जनइज्जं ४ पुरिसविज्जं ५ एलइज्जं ६ विरियं ७ धम्मो ८ मग्गो ९ समोसरणं १० अहात्तहीयं ११ गन्धो १२ जमइज्जं १३ अद्दइज्जम् १४ सेत्तआयाणपएणं ॥ सेकिन्तं पडिवक्खपएणं २ नवेसुगामागर २ नगर ३ खड ४ कवड ५ मडव ६ दोणमुह ७ पट्टण ८ आसम ६ सेवाह १० सन्निविसेसुय ११ णिविस्समाणेसु असिवा सिवा १ अग्गी सीयलो २ विसं महुरं ३ कल्लालघेरसु अंविलं साउयं ४ जे लत्तए से अलत्तए ५ जे लाउए से अलाउए ६ जे सुम्भए से कुसुम्भए ७ आलम्बते विवलीएभासए ८ से तं पडिवक्खपएणं ॥

पदार्थ-(सेकिंत्तं अयाणपएणं २) (प्रश्न) जो आदान पद करके पद बनते हैं वे किस प्रकार से हैं (उत्तर) जिस अध्याय वा उद्देश के आदि पद के उच्चारण करने से उसी अध्याय वा उद्देश का बोध हो जाय उसे आदान पद से निष्पन्न नाम कहते हैं इनके उदाहरण निम्न प्रकार से हैं (आवंती) श्री आचाराङ्ग सूत्र के प्रथम श्रुत स्कन्ध के पंचम अध्याय के आदि में आवन्ती

के यावन्ती इत्यादि पद हैं सो वह अध्याय आदि पद के नाम से प्रसिद्ध है जैसे कि आवन्ती अध्याय इसी प्रकार आगे भी जान लेना चाहिये (चउरं-गिज्जं २) चतुरंगी अध्याय (श्री उत्तराध्ययन सूत्र के३ तीसरे अध्याय का आदि पद है (चत्तारि पर मंगाणि इत्यादि) (असंखयं ३ असंख्यय अध्याय उत्तराध्ययन सूत्र का ४ अध्याय (जन्नइज्जम् ५) यज्ञ का अध्याय (उत्तरा (ध्ययन सूत्रका २५ अध्याय) (पुरिस विज्जं) पुरुष विद्याध्याय (उत्तर-सूत्राध्याय ६ (एल इज्जम् ६) एलक अध्याय (उत्तर सूत्र अध्याय ७) (वीरियं ८) वीर्याध्याय (सूयगडांग सूत्र अ० ८) (धम्मो ८) मोक्षधर्म अध्याय (सू० सू० अ० ११) (मग्गो ६) मार्ग अध्याय (सू० सू० अ० ६) (समोसरणम्र १०) समोसरण अध्याय (सू० सू० अ० १२) (आहात्तहीयम् ११) यथा तथ्याध्याय (सू० सू० अ० १३) (गन्थो १२) ग्रन्थ अध्याय (सू० सू० अ० १४) (जमइज्जम् १३) यमईय अध्याय (सू० सू० अ० १३) (अदइज्जम् १४) आर्द्रकुमाराध्याय (सू० सू० अ० २२) (सेतं अयाणपएणाम्) सो इसी का नाम आदान पद है अर्थात् जिन अध्यायों का आदि पद से निष्पन्न नाम है उन्हीं अध्यायों को आदान पद कहते हैं इसी प्रकार और अध्यायों का भी सम्बन्ध जानना चाहिये ॥ अब प्रतिपक्ष विषय में कहते हैं) सेकिंतं पडिवक्खपएणाम्) (प्रश्न) प्रतिपक्ष धर्म से जो पद उत्पन्न होते हैं वेह किस प्रकार से हैं (उत्तर) प्रतिपक्ष धर्म निष्पन्न पद निम्न प्रकार से होते हैं जैसे कि (नवे सुगा-माम २) नूतन ग्रामों और आकरों में इसी प्रकार (नगर) जो शुल्क रहित होता है उसे नगर कहते हैं ३ (खेडं ४) धूलिमय कोट वाला खेडा होता है ४ (कव्वडं ५) कुनगर को कर्वट कहते हैं ५ (मंडव ६) जिसके दूरवर्ती नगर हों उसे मंडप कहते हैं (दोणमुह ७) जिस स्थान पर जल और स्थल दोनों मार्ग हों उसे द्रोण मुख कहते हैं (पट्टण ८) नाना प्रकार के पदार्थ नाना प्रकार के देशों से विक्रीयमाण होते हों उसे पत्तन कहते हैं (आसम ९) तापसादि के स्थान को आश्रम कहते हैं (संवाह १०) जहां पर बहुत से लोकों का समूह हो उसे संवाह कहते हैं अथवा (सन्निवेसे सु अ०) घोसादिक में (णिविस्स-मारोसु) वसते हुओं में यदि (अशिवा सिवा) शृगालादि प्रवेश करते हैं वा शब्द करते हैं वेह शब्द अशिव (अशुभ) होने पर भी उन्हें शिवा (कल्याण रूप) कहा जाता है क्योंकि शृगाली का नाम कोस में शिवा भी लिखा है

तथा कोई व्यक्ति (अग्गी सीयलो २) अग्नि को शीतल कहता है और (विस-महुरं ३) विषको मधुर कहता है अथवा (कलालघरेसु अंबिलसाउयं ४) कलाल के गृह में मदिरा स्वरस चलित होगई है अर्थात् अम्ल को स्वादु कहता है फिर (जे लत्तए से अलत्तए ५) जो लाक्षादि से रक्त है उसको प्राकृत में अलत्त कहते हैं और (जे लाउए से अलाउए ६) जो जलादि से वस्तु को ग्रहण करता है उसी को अलाबुतुंबा कहते हैं और जो (जे सुंभए से कुसुंभए ७) शुभ (प्रिय) है उसे देश भाषा में कुशुभा कहते हैं कु अव्यय कुत्सित अर्थ में है सो (आलंबते विवलीयभासए ८) जो उक्त प्रकार से भाषा भाषण करते हैं वह विपरीत भाषा है क्योंकि पक्षधर्म से प्रतिपक्षधर्म है इसीलिए इस को विपरीत भाषा कहते हैं अथवा भाषा के न होने से इसे अभाषा भी कहते हैं सो यह समासान्त पद है (सेतं पडिवक्खपएणं) सो वही प्रतिपक्ष पद है अर्थात् पक्षधर्म से प्रतिकूल होने से प्रतिपक्ष कहा जाता है शंका क्या यह प्रति-पक्ष पद नोगुण पद में अन्तर्भूत नहीं हो सकता है (समाधान) नहीं हो सक्ता है क्योंकि नो गुण पद कुन्तादि की प्रवृत्ति के निमित्तसे पैदा हुआ है और यह पद प्रतिपक्ष धर्म वाचक है इसलिये सापेक्षत्वादितिशेषः ॥ ४ ॥

भावार्थ–आदान पद उसका नाम है जिस अध्याय का आदि सूत्र से नाम प्रसिद्ध होजाय और उसी नाम अध्याय से उच्चारण किया जाय सो इस पद में चतुर्दश उदाहरण दिखलाए गये हैं जैसे कि आवन्ती अध्याय १ चतुरंगि अध्याय २ असंख्याध्याय ३ यज्ञ नियमाध्याय ४ पुरुष विद्याध्याय ५ एलका-ध्याय ६ वीर्याध्याय ७ धर्माध्याय ८ मोक्ष मार्गाध्याय ९ समोशरणाध्याय १० याथा तथ्याध्याय ११ ग्रन्थाध्याय १२ यमइयध्याय १३ आर्द्रकुमाराध्याय १४ यह सर्व अध्याय श्रीआचारांग सूत्र श्रीसूयगडांग सूत्र श्रीउतराध्ययन सूत्र के अन्तर्गत हैं सो इन्हीं का नाम आदान पद नाम कहते हैं और प्रतिपक्ष पद उस का नाम है जो धर्म से विरुद्ध पद हैं जैसे कि नूतन ग्राम नगरों में जब शृगा-लादि शब्द कहते हैं तब वे शब्द अशुभ होते हैं किन्तु उनको लोक शिवा कहते हैं क्योंकि (शिवा गौरी फेरवयोः) इत्यमरः शिव शब्द पार्वती गीदड़ी शमी का वृक्ष हर्रे तथा आंवला इन अर्थों में भी व्यवहृत किया जाता है इसलिये अशिवा शब्द को शिवा कथन करना प्रतिपक्षधर्म वाचक पद है इसलिये आगे भी जानना चाहिये जैसे कि अग्नि शीतल १, विष मधुर २, कलाल के घर में मदिरा

स्वादु ३, रक्त को अलक्त ४, लावु को अलावु ५, शुभ को कुशुभ ६ इस प्रकार प्रतिपक्ष वचन उच्चारण करने उसी को प्रतिपक्ष धर्म कहते हैं और यह नोगुण मे उदाहरण नहीं गिने जाते क्योंकि यह कथन प्रतिपक्षधर्म वाचक पद है अब प्रधान पद और अनादि सिद्ध नाम का विवेचन करते हैं ॥

अथ प्रधान पद और अनादि सिद्ध पद विषय।

सेकिंतं पहाणपएणं २ असोगवणे १ सात्तिवणे २ चंपगवणे ३ चूयवणे ४ नागवणे ५ पुन्नागवणे ६ उच्छुवणे ७ दक्खवणे ८ सालवणे ९ सेत्तं पहाणपएणम सेकिंतं अनादियसिसिद्धंतेणं २ धम्मात्थिकाय १ अधम्मत्थिकाय २ आगासत्थिकाए ३ जीवत्थिकाए ४ पुग्गलत्थिकाए ५ अद्धासमए ६ सेत्तं अनाइयसिद्धंतेणं ॥ ६ ॥

पदार्थ-(सेकिंतं पहाणपएणं २) से शब्द अन्द का वाची है और किं प्रश्न अर्थ में होता है तं शब्द पूर्व सम्बन्ध के लिये होता है सो तात्पर्य यह हुआ कि प्रधान पद कौनसा हुआ गुरु कहने लगे कि भो शिष्य ! प्रधान पद उसे कहते हैं जिस वन में आम्रादि वृक्ष अनेक जाति के होते हुए उन में जो प्रधान और बहुत हो उन्हीं के नाम से वन प्रसिद्ध होजाता है जैसे कि (असोगवणे १) अशोक वृक्ष अतीव होने से अशोक वन कहा जाता है उसी प्रकार (सत्तिवण्णवणे ३) सप्तवर्ण वन (चंपगवणे ४) चंपकवन (चूयवणे ५) आम्रवन (नागवणे ६) नागवन (उच्छूवणे ७) इक्षुवन (दक्खवणे ८) द्राक्षावन और (सालवणे ६) शालवन यह सर्व प्रधानता की अपेक्षा से कथन किये गये हैं (सेत्तंपहाण पएणं ५) सो यही प्रधान पद है ५ (सेकिंतं अनाइय सिद्धं तेणं २) (प्रश्न) अनादि सिद्धांत नाम किसे कहते हैं (उत्तर) जो अनादि काल से सिद्ध और निर्णीत हो उसी का नाम अनादि सिद्धान्त नाम है क्योंकि जो अनादि सिद्धांत पद है वह कभी भी परिवर्तित नहीं होता

प्रवासीप्रा ॥ प्रा० व्या० अ०८ पा०१ सू० ६५ अनयोरादे दित उत्वम् भवति पाथसु और-इक्षु-उच्छु ॥

जैसे कि (धम्मत्थिकाय १) धर्मास्तिकाय १ (अधम्मत्थिकाय-२) अधर्मी स्तिकाय २ (आगासत्थिकाय ३) आकाशास्तिकाय ३ (जीवत्थिकाय ४) जीवस्ति काय (पुग्गलत्थिकाय ५ पुद्गलास्तिकाय ५) (अद्धासमय ६) समय (से तं अनाइय सिद्धंतेणं ६) ये ही अनादि सिद्धांत नाम हैं क्योंकि यह पद नाम द्रव्य के किसी समय में भी परिवर्तन शील नहीं है अतः स्वतः सिद्ध हैं इसीलिये इन्हें अनादि सिद्धांत नाम कहते हैं ॥ ६ ॥

भावार्थ-प्रधान पद उसका नाम है जो वृक्ष अनेक जाति के हों उनमें जो अतीव प्रधान वृक्ष हों उन्ही के नाम से वन शब्द व्यवहृत किया जाता है जैसे कि अशोक वन १ सप्तपर्ण वन २ चम्पक वन ३ आम्र वन ४ नाग वन ५ पुन्नाग वन ६ इक्षु वन ७ द्राक्षा वन ८ शाल वन ९ सो इसी का नाम प्रधान पद है ५ किन्तु अनादि सिद्धान्त नाम उसे कहते हैं जो अनादि काल से सिद्ध रूप और निर्णीत हो वही अनादि सिद्धान्त नाम है जैसे कि धर्म १ अधर्म २ आकाश ३ जीव ४ पुद्गल ५ समय ६ यह अनादि निष्पन्न नाम हैं इसीलिये इन्हें अनादि सिद्धान्त नाम कहते हैं क्योंकि नाम और नाम कर्म भिन्न हैं अतएव नाम कर्म स्थिति वाला होता है नाम अनादि निष्पन्न है इसीलिये इन्हें अनादि सिद्धांत नाम कहते हैं ॥ ६ ॥ अथ नाम पद और अवयव नाम पद विषय में विवर्ण किया जाता है ॥

अथ नाम पद और अवयव नाम पद विषय ।

(सेकिंतं नामेणं २) पिउपियामहस्स नामेणं उन्नामिज्जइ सेतं नामेणं ७ से किंतं अवयवेणं सिंगी १ सिखी २ विसाणी ३ दाडी ४ पक्खी ५ खुरी ६ णही ७ वाली ८ दुप्पय ९ चउप्पय १० वहुप्पया ११ णंगुली १२ केसरी १३ कउही १४ परियरबंधेणं भउंजाणेज्जा १५ मिहिलियं निवसणेणं १६ सित्थेणदोणयागं १७ कविं च एगाए गाहाए १८ सेतं अवयवेणी १९)

पदार्थ-(सेकिंतं नामेणं २) (प्रश्न) नाम से नामपद किस प्रकार बनता है (उत्तर) नाम से नामपद निम्न प्रकार से है जैसे कि (पिउपिया महस्सना मेणं उन्नामिज्जइ) पिता अथवा पितामह पितृ पितामह इत्यादि के नामो परि नाम प्रसिद्ध किया जाय जैसे पिता के नाम पर तेतलीपुत्र अथवा माता के नाम से मृगापुत्र थावचा पुत्र पितृ पिता के नाम पर वरुण नाग नतुआ इत्यादि यह नाम पूर्व पुरुषों के नाम पर प्रसिद्ध हैं सो इसी का नाम (सेतं नामेणं) नाम से उत्पन्न नाम है. इस नाम के द्वारा पूर्व पुरुषों के नाम भी प्रगट हो जाते हैं अब अवयव विषय में कहते हैं (सेकिंतं अवयवेणं) (प्रश्न) अवयव नाम कौनसा है गुरु कहते हैं भोशिष्य ! अवयवों के प्रधान होने से जिस का नाम अवयवों के अनुसार किया जाय उसी को अवयव नाम कहते हैं जैसे कि (सिंगी १) शृंगों के होने से शृंगी कहा जाता है (पशुविशेष) इसी प्रकार (सिखी २) शिखा होने से शिखी (मोर) (विसाणी) विषाणों के होने से विषाणी ३ (दाढी ४) दाढों के होने से दाढी (सूअर) (पंक्खी) पांख होने से पक्षी ६ फिर अवयव प्रधान होने से पादादि प्रधान भी होते हैं इसलिये उस विषय में कहते हैं (खुरी ६) खुर होने से खुरी ६ (नही ७) नख होने से नखी ७ (वाली ८) (केश) वाल अधिक होने से वाली ८ (दुप्पए ६) द्विपद होने से मनुष्य कहा जाता है इसी प्रकार (चतुप्पय १०) चारपाद वाले गवादि १० (बहुप्पया ११) बहुपाद वाले कान खजूरा आदि (णंगुली १२) पूंछ होने से नंगुली वानरादि (केसरी १३) केसर होने से केसरी १३ (कउही १४) ककुभ होने से ककुभी (स्कन्ध वाले वृषभादि) (परियरवद्धेणं भडंजाणिज्जा १५) विशिष्ट वस्त्रादि की रचना देखकर शूर पुरुष जाना जाता है अर्थात् जिसके विशिष्ट वस्त्र राज चिन्हों से अंकित हैं वही शूर पुरुष होता है (महीलियं निवसणेणं १६) इसी प्रकार वस्त्रादि की रचना देखकर और वेष को देखकर स्त्री जानी जाती है क्या यह पतिव्रता है अथवा पुंश्चली है (सित्थेणं दोणवायं १७) द्रोण पाक वर्तन से एक भिणका मात्र अन्न ग्रहण करने से परिपक्क अथवा अपरिपक्क जाना जाता है (कविंच एगाए गाहाए १८) और कवि एक गाथा के उच्चारण करने से जाना जाता है कि यह सुकवि है वा कुकवि है विद्वान् है वा मूर्ख है साक्षर है वा निरक्षर भट्टाचार्य है (सेतंअवयवेणं) सो यही उक्त अवयव प्रधान नाम पद होता है

क्योंकि जिसका जो अवयव प्रधान हो उसके अनुसार उसका नाम ग्रहण किया जाय उसी को अवयवी नाम कहते हैं ॥ ८ ॥

भावार्थ—नाम से नाम निष्पन्न उसे कहते हैं जो पिता और पितामह पितृ पितामह के नाम से नाम निष्पन्न होता है उसी से प्रसिद्धि को भी प्राप्त हो जाता है जैसे तेतली पुत्र वरुण नागनतुआ अथवा मृगापुत्र थावचा (स्तापत्य) पुत्र इत्यादि यह सर्व नाम से निष्पन्न नाम पद हैं, और अवयवों की प्रधानता से जो नाम उत्पन्न हो उसे अवयवी नाम कहते हैं जैसे कि इस कथन में १८ उदाहरण दिये गये हैं जो निम्न लिखितानुसार हैं। शृंगी १ शिखी २ विषाणी ३ दाढी ४ पक्षी ५ खुरी ६ नखी ७ वाली ८ द्विपद ९ चतुष्पद १० बहुपद ११ नांगुली १२ केसरी १३ ककुभी १४ सैनिक वेष से शूरवीर जाना जाता है १५ वेष से ही सती वा असती स्त्री जानी जाती है १६ गले हुए अन्न के एक कण से टोकणे वा कडाहे का पाक जाना जाता है १७ कवि एक गाथा से १८ यह सर्व अवयव प्रधान पद हैं क्योंकि जिस जीव का जो अवयव प्रधान होता है उसी के प्रयोग से उसका वही नाम उच्चारण किया जाता है इसी करके इसे अवयव प्रधान नाम पद कहते हैं और गौण निष्पन्न नाम के यह अनतर्भूत है अब संयोग नाम विषय में विवेचना करते हैं ॥

॥ अथ संयोग नाम विषय ॥

सेकिंतं संजोएणं २ चउव्विहे पण्णत्ते त० दव्वसंजोए १ खेत्तसंजोए २ कालसंजोए ३ भावसंजोए ४ सेकिंतं दव्वसंजोए ५ तिविहे पं० तं० सचित्ते १ अचित्ते २ मीसए ३ सेकिंतं सचित्ते २ गोहिंगोमिए १ महिसिंहिं महिसिए उट्टीहिं उंट्टीए पसूहिं पसूइए ३ ऊरणीएहिं ऊरणीए ४ सेतं सचित्ते सेकिंत्तं अचित्ते २ छत्तेणं छत्ती १ दंडेणं दंडी २ पडेणं पडी घडेणं घड़ी ३ कड़ेण कडी ४ सेत्तं अचित्ते सेकिंत्तं मिहस्सए २ नावए नाविए १ सगडेणं सागडिए २ रहेणं रहिए ३ हलेणं हालिए सेत्तं मिस्सए सेतं दव्वसंजोए सेकिंत्तं खत्तं संजोए २ भरहे एरवए

हेमवए एरणवए हरिवासए रम्मगवासए देवकुरुए उत्तर कुरुए पुव्वविदेहए अवरविदेहए अहवा मागह मालवए सोरट्ठए मरहट्ठए कुंकणए कोसलए सेत्तं खेत्तं संजोए सेकिंतं कालसंजोए २ सुसुमसुसुमाए सुसमाए सुसमदुसमाए दुसमसुसुमाए अहवा पावसए १ वासारत्तए २ सरदए ३ हेमंतए ४ वसंतए ५ गिम्हए ६ सेतंकाल संजोगे सेकिंतं भाव संजोगे २ दुविहे पण्णत्ते तंजहा पसत्थे अपसत्थेए सेकिंतं पसत्थे २ नाणेणं नाणी दंसणेणं दंसणी चरित्तेणं चरित्ती सेत्तं पसत्थे सेकिंतं अपसत्थे २ कोहेणं कोही माणेणं माणी मायाए मायी लोभेणं लोभी (सेत्तं अपसत्थे) सेत्तं भाव संजोगे सेत्तं संयोगे ॥ ८ ॥

पदार्थ–(सेकिंतं संजोएणं २ चउव्विहे पण्णत्ते तंजहा) (प्रश्न) संयोग जन्य नाम कितने प्रकार से प्रतिपादन किया गया है (उत्तर) संयोग जन्य नाम चार प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि (दव्व संजोग १ खेत्त संजोगे २ काल संजोगे ३ भाव संजोगे ४) द्रव्य संयोग जन्य नाम १ क्षेत्र संयोग जन्य नाम २ काल संयोग जन्य नाम ३ भाव संयोग जन्य नाम ४ (सेकिंतं दव्व संजोगे २ तिविहे पण्णत्ते तंजहा सचित्ते १ अचित्ते २ मीसए ३) (प्रश्न) द्रव्य संयोग जन्य नाम कितने प्रकार से प्रतिपादन किया गया है (उत्तर) द्रव्य संयोग जन्य नाम तीन प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे-कि–सचित्त १ अचित्त २ मिश्र ३ (प्रश्न) (सेकिंतं सचित्ते) द्रव्य संयोगज सचित्त के उदाहरण किस प्रकार से हैं (उत्तर) (गोहिंगोमए १ उट्टिहिं उट्टीए २ पसुहिं पसूइए ३ ऊरणीहिं ऊरणीए ४ सेत्तं सचित्ते) जैसे जिसके पास गौएं हैं उसे गोमान् कहते हैं १ इसी प्रकार जिसके पास ऊंट हैं उसे औष्ट्रिक कहते हैं तथा जिसके पास पशु हैं उसे पशुओं वाला कहते हैं ३ जिसके पास अजादि हैं उसे अजादि वाला कहते हैं (सेत्तं सचित्ते) यही सचित्त द्रव्य संयोगज नाम है इसी प्रकार अन्य भी उदाहरण जानने चाहिए १ (सेकिंतं

अचित्ते) (प्रश्न) अचित्त द्रव्य सम्बन्ध कौनसा है और उसके उदाहरण जानने चाहिए ? (सेकिंतं अचित्ते) (प्रश्न) अचित्त द्रव्य, सम्बन्ध कौनसा है और उसके उदाहरण किस प्रकार से हैं (उत्तर) अचित्त द्रव्य सम्बन्ध वह होता है जिस अचित्त के प्रयोग से संबोधन किया जाय और उसके उदाहरण निम्न लिखित प्रकार से हैं (छत्तेण छत्ती १ दंडेण दंडी २ पडेण पडी ३ कडेण कड़ो ४) छात्र के सम्बन्ध होने से (छत्री) १ दंड के सम्बन्ध होने से दंडी पटके सम्बन्ध होने से पटी ३ कटके सम्बन्ध होने से कटी ४ (कट) चटाई (सेत्तं अचित्ते) सो यही अचित्त द्रव्य सम्बन्ध है अब मिश्र द्रव्य सम्बन्ध विषय में कहते हैं (सेकिंतं मिसए २) (प्रश्न) मिश्र द्रव्य सम्बन्ध किसे कहते हैं (उत्तर) मिश्र द्रव्य वह होता है जैसे कि (नावा एनाविए १ सगडेणं सगडिए २ रहेणं रहिए ३ हलेणं हलिए ४ सेत्तं मिसए) (सेतं दव्व संजोगे १) नाव के संयोग होने पर नाविक होता है १ शकर के संयोग से शाकटिकं २ रथ के संयोग से रथिक ३ हलके संयोग से हालिक ४ क्योंकि इन पदार्थों में सचित्त अचित्त दोनों प्रकार के पदार्थों का संयोग है जैसे कि वृषभ (बैल) सचित्त है हल अचित्त है सो दोनों के संयोग होने से हालिक कहा जाता है सो यही मिश्र संयोग है और इसे ही द्रव्य संयोगज कहते हैं। अब क्षेत्र संयोग विषय में विवेचन किया जाता है (सेकिंतं क्खेत्तसंजोए २) (प्रश्न) क्षेत्र संयोगज नाम किस प्रकार से वर्णन किया गया है (उत्तर) क्षेत्र संयोगज नाम इस प्रकार से वर्णन किया गया है (भारहेए रवए हेमवए एरणवए हरिवासए रम्मगवासए) जैसे जिसका जन्म भारत में हुआ है अथवा भरत क्षेत्र में निवास करता है उसे ही भारत कहते हैं इसी प्रकार ऐरवतेक है मवरऐ रणयवए हरिवर्षीय रम्यकवर्षीय (देवकुरुए उत्तरकुरुए पुव्वाविदेहए अवराविदेहए) देवकुरुक उत्तर कुरुक पूर्वविदेहक अपरविदेहक यह सर्व क्षेत्र संयोगज नाम हैं (अहवा) अथवा अन्य प्रकार से भी क्षेत्र संयोगज नाम का वर्णन करते हैं जैसे कि (मागहे १ मालवए २ सोरठए ३ मरहट्ठए ४ कोंकणए ५ कोसलए ६ सेतं क्खेत्त संजोए.) जिसका जन्म मगध देश में हुआ है अथवा मगध देश में वसता है उसे मागध कहते हैं इसी प्रकार मालवीय २ सौराष्ट्रिक महाराष्ट्रिक ४ कौंकण ५ कौशालिक ६ येही क्षेत्र संयोगज नाम होते हैं इसी प्रकार अन्य देशों के सम्बन्ध होने पर

भी संभावना करलेनी चाहिये जैसे अंचनदीय (पंजाबी) गुर्जरी (गुजराती) इत्यादि (सेत्तं काल संजोगे २) (प्रश्न) काल संयोग जन्य नाम किसे कहते उत्तर जिसका जन्म सुपम सुपम काल में हुआ है उसको सुपम सुपमज कहते हैं इसी प्रकार (सुसमाए) सुपमज (सुसमदुसमाय ३) सुपमदुपमज दुसमसुसमाए) दुपम सुपमज (दुसमाए) दुपमज (दुसम दुसमाए) दुपम दुपमज यह सर्व सप्त म्यन्तपद पंचम्यन्त जानने चाहिए सो जिस काल में जिसका सम्बन्ध हुआ है वह कालिक संयोग से उसी प्रकार कहा जाता है अथवा काल का संयोग अन्य प्रकार से भी कहते हैं (अहवा पावसए १ वा सारत्तय २ सरदए ३ हेमंतए ४ वसंतए ५ गिम्हए ६ (सेत्तंकाल संजोगे) यदि पावस ऋतु में जन्म हुआ है तब उसको पावसिक कहते हैं इसी प्रकार वर्षा ऋतु २, शरद् ऋतु ३, हेमन्त ऋतु ४, वसंत ऋतु ५, ग्रीष्म ऋतु ६, सो जिस ऋतु में जन्म हुआ हो उसी ऋतु के नाम से कहा जाता है यह भी काल संयोगज नाम है॥ अब भाव संयोगज नाम विषय में कहते हैं (सेकिंत्तं भाव संजोगे २) (प्रश्न) भाव संयोगज नाम किसे कहते हैं (उत्तर) भाव संयोगज नाम (दुविहेपएणत्ते तंजहा) दो प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि (पसत्थेय अपसत्थेय २) प्रशस्त भाव जन्य नाम और अप्रशस्त भाव जन्य नाम (सेकिंत्तं पसत्थे२) (प्रश्न) प्रशस्त भाव जन्य नाम किसे कहते हैं अर्थात् जो सुन्दर भावों से निष्पन्न नाम कौनसा है (नाणेणं नाणी १) (उत्तर) जैसे ज्ञान से युक्त होने पर ज्ञानी कहा जाता है १ (दंसणेणंदंसणी २) इसी प्रकार दर्शन से दर्शनी २ (चरित्तेणं चरित्ती चरित्र से चारित्री (सेतं पसत्थे) सो यही प्रशस्त नाम होता है। (सेकिंतं अपसत्थे) (प्रश्न) अप्रस्त निष्पन्न नाम कौनसा होता है (कोहेणं कोही १) (उत्तर) जैसे क्रोध से क्रोधी (माणेणं माणी २) मान से मानी (मायाए मायी ३) माया से मायी (लोभेणं लोभी ४) लोभ से लोभी ४ क्योंकि जो अप्रशस्त पदार्थ हैं उनके संयोग से अप्रशस्त नाम निष्पन्न होजाता है (सेतं अपसत्थे सेतं भाव संजोए सेत्तं संजोएणं) सो यही अप्रशस्त नाम है और यही भाव संयोग है और इसी स्थान पर संयोग निष्पन्न नाम का समाप्त पूर्ण होगया है॥

भावार्थ–सांयोगिक नाम चार प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि द्रव्य संयोगज १, क्षेत्र संयोगज २, काल संयोगज ३, भाव संयोगज ४, अपितु

द्रव्य संयोगज नाम तीन प्रकार से वर्णित है सचित्त १ अचित्त २ मिश्रित ३ सो सचित्त के उदाहरण इस प्रकार से हैं जैसे गौओं के होने से गोमान् १, उष्ट्रों के होने से औष्ट्रिक २, पशुओं के होने से पशुओं वाला ३, ऊरणीयों के होने से ऊरणीक ४, यही सचित्त जन्य नाम हैं और अचित्तज नाम ऐसे हैं जैसे कि छत्र के संयोग होने से छत्री कहा जाता है १, और दंड के संयोग होने से दंडी २, पट के संयोग होने से पटी ३, कट के संयोग होने से कटी ४, सो येही अचित्त संयोगज नाम हैं और मिश्रज नाम निम्न प्रकार से हैं जैसे कि नाव के संयोग से नाविक १, शटक के संयोग से शाकटिक २, रथ के संयोग से राथिक ३, हल के संयोग से हालिक येही मिश्रज नाम हैं क्योंकि हल अचित्त वृषभ सचित्त दोनों के संयोग से मिश्रज नाम उत्पन्न होजाता है इसे द्रव्य संयोगज नाम कहते हैं १ और क्षेत्र के संयोग से जो नाम निष्पन्न हों उसे क्षेत्रज नाम कहते हैं जैसे कि भरत क्षेत्र के संयोग से भारत यावत् अपर विदेहादि अथवा मागध १ मालवी २ कोशली इत्यादि यह क्षेत्रज निष्पन्न नाम हैं २ और काल के सम्बन्ध से जो नाम निष्पन्न होते हैं उन्हें कालज नाम कहते हैं जैसे एक काल के चक्र के षट् २ भाग होते हैं उन के संयोग से अथवा षट् ऋतुओं के संयोग से जो नाम उत्पन्न हो उन्हें काल जन्य नाम कहते हैं ३ और भाव संयोग से जिस की उत्पत्ति है उसे भावज नाम कहते हैं अतः प्रशस्त भाव वा अप्रशस्त भाव यह दो प्रकार के भाव हैं इन दोनों से निष्पन्न नाम निम्न प्रकार से हैं जैसे कि प्रशस्त भाव सम्बन्धी ज्ञान से ज्ञानी १ दर्शन से दर्शनी २ चारित्र के संयोग से चारित्री ३ और अप्रशस्त भाव सम्बन्धी क्रोध के संयोग से क्रोधी १ मान के संयोग से मानी २ माया के संयोग से मायी ३ लोभ के संयोग से लोभी ४ सो यही भाव संयोगज नाम हैं और इन्हें ही संयोगज नाम कहते हैं क्योंकि यह सर्व नाम संयोग से ही उत्पन्न हुए हैं ॥ अब प्रमाण नाम के विषय में विवेचन करते हैं ॥

अथ प्रमाण विषय ।

सेकिंतं पमाणेणं २ चउविहे पं० तं० नामप्पमाणे १ ठवणप्पमाणे २ दव्वप्पमाणे ३ भावप्पमाणे ४ सेकिंतं नाम-

प्पमोणे जस्स णं जीवस्स वा अजीवस्स वा जीवाणं अजीवाणं तदुभयस्स वा तदुभयाणं वाप्पमाणंत्ति नामं कज्जइ सेत्तं नामप्पमाणे १ सेकिंतं ठ्वणाप्पमाणे २ सत्तविहेय पराणत्ते तंजहा नक्खत्ते १ दवय २ कुले ३ पासंड ४ गणेय ५ जीवियाहेउं ६ आभिप्पाइयनामं ७ ठ्वणानोमंतु सत्तविहं ॥ १ ॥ सेकिंतं नक्खत्तनामे २ कित्ति याहिं जाए कित्तिए १ कित्तियादत्ते २ कित्तियाधम्मे ३ कित्तियासम्मे ४ कित्तियादेवे ५ कित्तियादासे ६ कित्तियासेणे ७ कित्तियारक्खिए ८ रोहिणीहिं जाए रोहिणिए रोहिणिदिन्ने रोहिणिधम्मे रोहिणिसम्मे रोहिणिदेवे रोहिणिदासे रोहिणिसेणे रोहिणिरक्खेय एवंसव्वनक्खत्तेसु नामा भाणियव्वा एत्थं संगाहणि गाहाओ कित्तियरोहिणिमिगासिरअद्दा पुणव्वसू य पुस्से य तत्तो य अस्सिलेसा महा उ दा फग्गुणीओय १ हत्थो चित्ता साती विसाहा तह य होइ अणुराहा जेट्ठा मूला पुव्वासाढ़ा तह उत्तरा चेव ॥२॥ अभिई सवण धणिट्ठा सत्तभिसदा दा अ होंति भद्दवया रेवई अस्सिाणि भरणी एसा नक्खत्तपरिवाडी ॥३॥ सेत्तं नक्खत्तनामे । सेकिंतं देवयानामे २ अग्गिदेवयाहिं जाए अग्गिए अग्गिदिन्ने अग्गिसम्मे अग्गिधम्मे अग्गिदेवे अग्गिदासे अग्गिसेणे अग्गिरक्खिए एवं सव्वनक्खत्तदेवतानाम भाणियव्वा एत्थंपि अट्ठनामे जावजमो इत्थंपिय संग्गाणिगाहाओअग्गि १ पयावई २ सोमे ३ रुद्दो ४ आदिती ५ विहस्सई ६ सप्पे ७ पिति ८ भग ९ अज्जम १० साविया ११ तट्ठा १२ वाउय १३ इंदग्गी १४ मित्तो १५ इन्दो १६ निरई १७ आऊ १८ विस्सो य १९ बंभ २० विएहुआ २१ वसु २२

वरुण २३ अय २४ विवाद्धि २५ पुस्सो य २६ अग्गि २७ जमे चेव २८ सेत्तं देवयानामे २ सेकिंतं कुलनामे २ उग्गा १ भोगा २ राइन्नो ३ खत्तिए ४ इक्खगा ५ णाया ६ कोरव्वा ७ सेत्तं कुलनामे ३ सेकिंतं पासंडनामे २ समणे १ पंडुरंगे २ भिक्खू ३ कावालिए ४ ताव से ५ परिव्वायए ६ सेत्तंपासंडनामे ४ सेकिंत्तं गणनामे २ मल्ले १ मल्लदिन्ने २ मल्लधम्मे ३ मल्लसम्मे ४ मल्लदेवे ५ मल्लदासे ६ मल्लसेणे ७ मल्लरक्खिए ८ सेत्तं गणनामे ५ सेकिंत्तं जीवियानामे २ अवकरए १ ऊक्कुरुडिए २ सुप्पए ३ उज्झियए ४ कज्जवए ५ सेत्तं जीवियानामे ६ सेकिंत्तं आभिप्पाइयनामे २ अंबए १ निंबए २ बबूलए ३ पलासए ४ सिणए ५ पीलूए ६ करीरए ७ सेत्तं आभिप्पाइयनामे ७ सेत्तं ठ्वणाप्पमाणे ॥

पदार्थ-(सेकिंतंप्पमाणे २ चउव्विहे पं० तं०) शिष्यने प्रश्न किया कि हे भगवन् ! प्रमाण कितने प्रकार से प्रतिपादन किया गया है क्योंकि प्रमाण उसे कहते हैं जिस के द्वारा वस्तुओंका निश्चय किया जाय सो गुरुने उत्तर दिया कि वह प्रमाण चार प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि (नामप्पमाणे १ ठ्वणाप्पमाणे २ दव्वप्पमाणे ३ भावप्पमाणे ४) नाम प्रमाण १ स्थापना प्रमाण २ द्रव्य प्रमाण ३ भाव प्रमाण ४ (सेकिंतं नामप्पमाणे २) (प्रश्न) नाम प्रमाण किसे कहते है (उत्तर) नाम प्रमाण के निम्न लिखितानुसार उदाहरण हैं जैसे कि (जस्सणंजीवस्सवा) जिस जीव का अथवा (अजीवस्सवा (अजीवका अथवा) जीवाणंवा (बहुत से जीवों का अथवा) अजीवाणंवा) बहुत से अजीवों का (तदुभयस्सवा) अथवा एक जीव और एक अजीव का अथवा (तदुभयाणंवाप्पमाणेति नामंकिज्जइसेत्तं नामप्पमाणे १) बहुत से जीव बहुत से अजीवों का " प्रमाण " इस प्रकार से नाम रक्खा जाता है इसे ही नाम प्रमाण कहते हैं क्योंकि नाम प्रमाण से यह तात्पर्य्य है कि नाम प्रमाण के द्वारा पदार्थों का निर्णय किया जाता है सो यही नाम प्रमा

ण है १ (सेकिंतं ठवणाप्पमाणे २ सत्तविहे पं० तं०) (प्रश्न) स्थापना प्रमाण कितने प्रकार से प्रतिपादित हैं (उत्तर) स्थापना प्रमाण सात प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि (नक्खत्त १) नक्षत्र के नाम पर जो नाम स्थापन किया जाये उसी को नक्षत्र स्थापना कहते हैं इसी प्रकार (देव-य २) देवों के नाम पर स्थापना (कुलेयं ३) कुल के नाम पर स्थापना ३ (पासंड ४) पासंड के नाम पर स्थापना ४ (गणेय) ५ गण के नाम पर ५ (जीवियाहेतु ६) जिस नाम के द्वारा पुत्र जीवित रहे ऐसे नाम की स्थापना करना ६ (अभिप्पाइय नाम ७) और निज अभिप्रायिक नाम अर्थात् जैसे मन का अभिप्राय होता है उसके अनुसार नाम स्थापन किया जाता है इसलिये (ठवणा नामंतु सत्तविहं १) स्थापन नाम सात प्रकार से कथन किया गया है (सेकिंतं नक्खत्तनामे) (प्रश्न) नक्षत्र नाम के ऊपर स्थापना नाम किस प्रकार से प्रतिपादन किया गया है (उत्तर) नक्षत्र नाम निम्न प्रकार से है जैसे कि (कित्तियाहिं जाए कत्तिए १) जिसका कृत्तिका नक्षत्र में जन्म हुआ हो उसे उस नक्षत्र की अपेक्षा से कार्तिक कहते हैं १ (कित्तिया दत्ते २) जो कृत्तिका ने दिया हो वही कृत्तिकादत्त २ इसी प्रकार (कित्तियाधम्मे ३) कृत्तिका धर्म्म (कित्तिया सम्मे ४) कृत्तिका शर्म्म ४ (कित्तियादेवे ५) कृत्तिकादेव ५ (कित्तियादासे ६) कृत्तिकादास ६ (कित्तियासेणे ७) कृत्तिकासेन ७ (कित्तियारक्खिए ८) कृत्तिका रक्षित और इसीप्रकार (रोहिणिहिं जाए रोहिणिए) जिसका रोहिणि नामक नक्षत्र में जन्म हुआ है उसे रोहिणेय कहते हैं (रोहिणिदत्ते १) फिर रोहिणिदत्त २ (रोहिणिधम्मे) रोहिणि धर्म (रोहिणि सम्मे) रोहिणि शर्म्म (रोहिणिदेवे) रोहिणि देव (रोहिणिदासे) रोहिणिदास (रोहिणिसेणे) रोहिणिसेन (रोहिणि रक्खिए) रोहिणि रक्षित (एव्वं सव्वं नक्खत्तेसुनामाभए यिव्वा) सो इसी प्रकार सर्व नक्षत्रों के नाम कथन करने चाहिये परन्तु (इत्थं संगहणीगाहाऊ) इस स्थान पर संग्रहणी गाथाएँ कही जाती हैं जिनके द्वारा सर्व नक्षत्रों का बोध होजाय जैसे कि (कित्तिए रोहिणि मिगसिर) कृत्तिका १ रोहिणि २ मृगशीर्ष ३ (अदाय पुणवसुयं) आर्द्रा ४ पुनर्वसु ५ (पुस्सोयतत्तोय असिलेसा) फिर पुष्प ६ तत्पश्चात् आश्लेषा ७ (मघाउ दोफग्गुणीउय) फिर मघा ८ और पूर्वा फाल्गुणी ९ उत्तरा फाल्गुणी १० (हत्थोचित्ता स्वाई) हस्त ११ चित्रा १२ स्वाति १३ (विसाहातहय अ-

गुएहा) विशाखा १४ तथा अनुराधा १५ (जेट्ठा मूला पुव्वासाढा) जेष्ठा १६ मूल १७ पूर्वाषाढा १८ (तहउत्तरोचत्र) तथा उत्तराषाढा १९ (अभिईसवणं धणिट्ठा) अभिजित् २० श्रवण २१ धनिष्ठा २२ (सत्तभिसयादो अट्ठोतिमद्दवया) शतभिषा २३ पूर्वा भाद्रपद २४ उत्तराभाद्रपद २५ (रेवई अस्सिणि भरणी) रेवती २६ अश्विनी २७ भरणी (एसा नक्खत परिवाडी) येही नक्षत्रों की परिपाटी वर्णन की गई है (सेत्तं नक्खतनामे) यही नक्षत्र नाम हैं अर्थात् नक्षत्रों के नाम पर स्थापना नाम वर्णन किया गया है ॥ १ ॥ (सेकिं देवयानामे २) (प्रश्न) देवताओं के नाम पर नाम किस प्रकार से होता है (उत्तर) देवताओं के नाम पर नाम इस प्रकार से है जैसे कि (अग्गि देवयाहिं जाए अग्गिए) जिसका अग्निदेव के समय जन्म हुआ है वह आग्नेय १ इसी प्रकार (अग्गिदिन्ने) अग्निदत्त २ (अग्गिसम्मे) अग्निशर्म्म ३ (अग्गि धम्मे) अग्निधर्म ४ (अग्गिदेव) अग्निदेव ५ (अग्गिदासे) अग्निदास ६ (अग्गिसेणे) अग्निसेन ७ (अग्गिरक्खिए) अग्नि रक्षित ८ (एवं सव्वनक्खत नामाभाणियव्वा) इसी प्रकार सर्व नक्षत्र देवों के नाम पर नाम कहने चाहिएँ इसलिये (इत्थंपियसंगाहणिगाहाउ) इस स्थान पर भी संग्रहणी गाथाएँ कही जाती हैं क्योंकि अष्टाविंशति नक्षत्रों के अधिष्ठाता अष्टाविंशति देव हैं जिनके नाम निम्न गाथाओं में दिखलाए जाते हैं तथा उक्त आठ २ नाम देवों के नाम पर लोग नाम संस्कार करते हैं (अग्गि पयवइ सोमेरुद्दे) अग्नि १ प्रजापति २ सोम ३ रुद्र ४ (आदिति विहस्सई) आदिति ५ बृहस्पति ६ (सप्पेपिउभग अज्जम) सर्प ७ पितृ ८ भग ९ अर्य्यमा १० (सवियातट्ठावाउय) सविता ११ त्वष्टा १२ वायु १३ (इन्दग्गी मिताइन्दोनिरत्ती) इन्द्राग्नि १४ मित्र १५ इन्द्र १६ निर्ऋति १७ (आउविस्सोय बंभविएहय) अम्भः १८ विश्व १९ ब्रह्मा २० विष्णु २१ (वसुवरुणअयविवद्धि) वसु २२ वरुण २३ अज २४ विवर्द्धि २५ (पुस्सो अग्गि जये चेव) पूषा २६ अग्नि २७ यम २८ (सेतं देवयानामे) सोयही देव नाम हैं अर्थात् अष्टाविंशति नक्षत्रों के अधिष्ठाता अष्टाविंशति देव हैं यदि उन देवों के नामों पर नाम स्थापन किया जाये तब उनको देव नाम कहते हैं ॥ २ ॥ अब कुल नाम का विवर्ण करते हैं (सेकिंतं कुल नामे) (प्रश्न) कुल नाम किसे कहते हैं (उत्तर) उग्गा १ भोगा २ राइन्ना ३ खत्तिय ४ इक्खागा ५ णाया ६ कोरव्वा ७ सेत्तं कुल नामे ३ जिसका उग्र कुल में जन्म हुआ है उसको उग्र कुल कहते हैं १ इसी प्रकार भोग कुल २ राज्य कुल ३

क्षत्रिय कुल ४ इक्ष्वाकु कुल ५ ज्ञात कुल ६ कौरव्य कुल ७ सो जिस कुल में जिसका जन्म होता है उसी कुल के नाम से फिर उसकी प्रसिद्धि होजाती है येही कुल नाम हैं ॥ ३ ॥ (सेकिंतं पासंडनामे) (प्रश्न) पार्षंड नाम किसे कहते हैं (उत्तर) (समणे पंडुरंगे भिक्खू) श्रमण परमतावलम्बी पांडु रंगादि वस्त्रों के धारण करने वाले बौद्ध भिक्षु (कावालिएतावसेय) कपिल मतानुयायी और तापस (परिवायए) परिव्राजक (सेतं पासंड नामे) यह सर्व अन्य दर्शनीय पार्षंड नामाश्रित हैं। (सेकिंतं गण नामे २) (प्रश्न) गण नाम किसे कहते हैं (उत्तर) मल्ले १ मल्ल दिन्ने २ मल्ल धम्मे ३ मल्ल सम्मे ४ मल्ल देवे ५ मल्ल दासे ६ मल्ल सेणे ७ मल्ल रक्खिए ८) मल्लादि गण नामों पर जो नाम स्थापन किया जाता है वही गण नाम हैं जैसे कि मल्ल १ मल्लदत्त २ मल्ल धर्म्म ३ मल्ल शर्म्म ४ मल्ल देव ५ मल्ल दास ६ मल्लसेन ७ मल्ल रक्षित ८ (सेतं गणनामे) सो येही गण नाम है ॥ (सेकितं जीवियानामे) (प्रश्न) जीवक नाम किसे कहते हैं अर्थात् जिसका पुत्र जीवित न रहता हो वह पुत्र के जीवित रहने के वास्ते इस प्रकार से नाम स्थापन करता है (उत्तर) अवकरए १ उक्कुरुडिए २ सुप्पए ३ उज्झिए ४ कुज्जवए ५ सेत्तं-जीवियानामे) जैसे के पुत्र के जीवित रहने की इच्छा से जन्म हुए के पश्चात् पुत्र को कचरादि में गेर कर फिर उसका नाम स्थापन करना जैसे कि अवकरक १ उत्कुरुटक २ सूर्पक ३ उज्झित ४ कार्यापत ५ यह सर्व जीवित रहने की इच्छा से नाम स्थापन किये जाते हैं इसी को जीवित नाम कहते हैं ६ (सेकिं-तं अभिप्पाइय नामे २) (प्रश्न) अभिप्रायिक नाम किसे कहते हैं (उत्तर) जो अपनी इच्छानुसार नाम स्थापन किये जावें जैसे कि (अंबए निंबए २ बबूल ३ पलासए ४ सिणय ५ पीलूए ६ करीर (सेत्तंठवणाप्पमाणे) वृक्षादि के नामों पर स्थापन करना यथा अंबक १ निंबक २ बंबूल ३ पलासक ४ सिनक ५ पीलु ६ करीर ७ यही सप्त प्रकार से स्थापना प्रमाण वर्णन किया गया है इसलिये स्थापना प्रमाण की समाप्ति हुई है।

अथ द्रव्य प्रमाण विषय।

सेकिंतं दव्वप्पमाणे २ छव्विहे पं० तं० धम्मत्थिकाए जाव अद्धासमय ६ सेत्तं दव्वप्पमाणे २।

पदार्थ—(सेकिंतं दव्वप्पमाणे २) (प्रश्न) द्रव्य प्रमाण किसे कहते हैं (उत्तर) द्रव्य प्रमाण षट् प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि धम्म स्थिकाय जाव अद्धासमय ६ सेत्तंदव्वप्पमाणे) धर्मास्तिकाय १ अधर्मास्तिकाय २ आकाशास्तिकाय ३ जीवास्तिकाय ४ पुद्गलास्तिकाय ५ समय ६ यही द्रव्य प्रमाण हैं क्योंकि जो अनादि सिद्धांत में नाम वर्णन किए हैं वह केवल अनादि सिद्ध की अपेक्षा से वर्णन किये हैं और जहां पर द्रव्य अनंत धर्मात्मक होने से कथन किए गये हैं किन्तु पुनरुक्ति दोष न जानना चाहिए तथा धर्म शब्द अन्यत्र कहीं नहीं जा सक्ता केवल द्रव्याश्रित धर्म रहता है इस लिये पुनिरुक्ति न जाननी चाहिये सो यही द्रव्य प्रमाण है।

भावार्थ—प्रमाण नाम चार प्रकार से वित्रर्ण किया गया है जैसे कि नाम प्रमाण १ स्थापना प्रमाण २ द्रव्य प्रमाण ३ भाव प्रमाण ४ सो नाम प्रमाण उसे कहते हैं जो एक जीव और एक अजीव अथवा बहुत से जीव वा बहुत से अजीव वा बहुत से अजीव अथवा जीव अजीव दोनों का " प्रमाण नाम " इस प्रकार से जो स्थापन किया जाता है उसे ही नाम प्रमाण कहते हैं अपितु स्थापना प्रमाण सात प्रकार से कथन किया है जैसे कि नक्षत्र १ देव २ कुल ३ पापंड ४ गण ५ जीविका हेतु ६ और अभिप्रायिक नाम ७ सो इन्हों के कारण से जो नाम स्थापन किया जाता है उसे ही स्थापना नाम कहते हैं जैसे कि जिसका कृत्तिका नक्षत्र में जन्म हुआ है उसका नाम कार्तिक १ कृत्तिका दत्त २ कृत्तिका धर्म ३ कृत्तिका शर्म ४ कृत्तिका देव ५ कृत्तिका दास ६ कृत्तिका सेन ७ कृत्तिका रक्षित ८ इसी प्रकार २८ नक्षत्रों की कल्पना कर लेनी चाहिए ॥ १ ॥ और २८ नक्षत्रों के अधिष्ठाता २८ देव हैं यदि उनके नामों पर नाम स्थापन किया जाय उन्हीं को देव नाम कहते हैं जैसे कि कृत्तिका नक्षत्र का अधिष्ठाता अग्नि नामक देव है उसी के नाम पर आग्नेयंक १ अग्नि देव २ अग्नि दत्त ३ अग्नि शर्म ४ अग्नि धर्म ५ अग्नि सेन ६ अग्नि दास ७ अग्नि रक्षित ८ इसी प्रकार २८ देवों पर नाम स्थापन कर लेने चाहिये और उग्र १ भोग २ क्षत्रिय ३ राज्य ४ इक्ष्वाकु ५ ज्ञात ६ कौरव्य ७ इत्यादि कुलों के नामों पर नाम स्थापन किया जाय उसी को कुल नाम कहते हैं ३ जो श्रमण पांडुरंग भिक्षुका पालिक तापस परिव्राजक आदि के नामों पर नाम स्थापन हो उसे ही पापंडनाम नाम कहते हैं ॥ ४ ॥ जो गक्षा-

दि गुण के नामों पर नाम हो उसे गण नाम कहते हैं ५ तथा पुत्र के जीवित रहने की आशा पर पुत्र को गेर देना फिर उसके अवकर उत्कुरुट आदि नाम रखने यही जीवित नाम है ६ अथवा गुण निष्पन्न वा नो गुण निष्पन्न आदि को न विचारते हुए अपने अभिप्राय के अनुसार नाम रक्खे उसे अभिप्रायिक नाम कहते हैं जैसे कि अंबक १ निंबक २ बबूल ३ पलाशक ४ सिनक पीलुक ६ करीरक ७ यही अभिप्रायिक नाम हैं और इसे ही स्थापना प्रमाण कहते हैं इसका पूर्ण विवर्ण पदार्थ में लिखा गया है और द्रव्य प्रमाण में षट् द्रव्य वर्णन किए गए हैं क्योंकि द्रव्य संज्ञा इन्हीं की ही हैं इसीलिये यह द्रव्य संज्ञक हैं अब इसके आगे भाव प्रमाण का विवर्ण किया जाता है।

अथ भाव प्रमाण विषय।

सेकिंतंभावप्पमाणे २ चउव्विहे पन्नत्ता तंजहा सामासिए तद्धितए धाउय निरुत्तिय सेकिंतं सामासिए २ सत्तसमासा भवन्ति तंजहा दंदे अ १ बहुव्वीही २ कम्मधारए ३ दिगूए ४ तप्पुरिसे अव्वइभावे ६ एगसेसे य सत्तमे सेकिंतं दंदे २ दंताश्च ओष्टौ च दंतोष्टम् १ स्तनौ च उदरं च स्तनोदरम् २ वस्त्रंच पात्रंच वस्त्रपात्रम् ३ अश्वाश्च महिषाश्च अश्वमहिषं ४ अहिश्च नकुलंच अहिनकुलम् ५ सेत्तं दंदे ॥ १ ॥

पदार्थ-(सेकिंतं भावप्पमाणे चउव्विहे पन्नत्ता तंजहा) (प्रश्न) शिष्य कहता है कि हे पूज्य भाव प्रमाण कितने प्रकार से वर्णन किया गया है (उत्तर) गुरु ने उत्तर में कहा कि भाव प्रमाण चार प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि सामासिक १ तद्धितज २ धातुज ३ और नैरुक्तिक ४ भाव प्रमाण इन्हें इसलिये कहा गया है कि अर्थ के युक्त होने पर गुण उत्पन्न होता है सो गुण भाव में होता है प्रमाण शब्द का अर्थ यह है "प्रमीयतेच्छिद्यते निश्चयी क्रियते अनेनतत्प्रमाणम्" जिसके द्वारा पदार्थों का प्रमाण किया जाय अथवा निर्णय किया जाय वही प्रमाण है सो इसीलिये शब्द बोध होने के लिये उक्त चारों का भाव प्रमाण में रक्खा है, अतएव यह युक्ति संगत कथन है कि

शब्द बोध होने से अर्थ बोध शीघ्र हो जाता है पुनः अर्थ बोध से गुण की प्राप्ति है गुण है सो भाव है इसीलिये यह भाव प्रमाण है (सेकिंतं समासिए २ सत्त समासा भवन्ति तंजहा) (प्रश्न) सामासिक प्रमाण कितने प्रकार से वर्णन किया गया है (उत्तर) सामासिक प्रमाण में सात समास होते हैं जैसे कि (दंदे १ बहुव्वीही २ कर्म धारए ३ दिगूए ४ तप्पुरिसे ५ अव्वई भाव ६ एग सेसेय सत्तमे ७) द्वन्द १ बहुव्रीहि २ कर्म धारय ३ द्विगु ४ तत्पुरुष ५ अव्ययी भाव ६ एक शेष ७ येही सात प्रकार के समास हैं क्योंकि समास शब्द का यह अर्थ है कि बहुत से पदों का एक पद किया जाय उसे ही समासान्त पद कहते हैं जैसे कि "समसनं संक्षेपणं परस्परा पेक्षयोः पूर्वोत्तर पदयो रेकत्वेनन्यसनं समासः" सो जो सम्मिलित हो कर पद उत्पन्न होता है वही सामासिक पद है अपितु वर्तमान समय के शब्दानुशासनों में समास पद प्रकार से वर्णन किये गये हैं जैसे कि बहुव्रीहि १ अव्ययी भाव २ तत्पुरुष ३ कर्म धारय ४ द्विगु ५ द्वन्द्व ६ तथा "परस्परा पेक्षाणाम् पूर्वोत्तरपदानां सुवंतानां कथं चिदैकपद्यम् समासः" परस्पर की अपेक्षा से पूर्वोत्तर सुवंत पदों का एक पद किया जाय वही समासान्त पद है क्योंकि जहां पर अनेक सुवंत पद हों उनको एक पद में वर्णन किया जाय वही समासान्त पद है सो अब अनुक्रमता पूर्वक इनके उदाहरण दिखलाए जाते हैं जैसे कि (सेकिंतं दंदे अ २) (प्रश्न) द्वन्द्व समास किसे कहते हैं (दंतोश्च ओष्ठौच दंतोष्टम्) (उत्तर) द्वन्द्व समास दो प्रकार से होता है एक अवयव प्रधान द्वितीय समाहार प्रधान सो यहां पर समाहार प्रधान के उदाहरण दिखलाए गये हैं जैसे कि दान्त और ओष्टों का समाहार करने से "दंतोष्टम्" ऐसे प्रयोग बन जाता है क्योंकि "प्राणि तूर्य्याङ्गम्" शा० व्या० अ० २ पा० १ सू १०१ प्राण्यङ्गानां तूर्य्याङ्गानां द्वन्द्वः एकार्थोनित्यं भवति पाणिपादम् शङ्ख पटहम् इत्यादि इस सूत्र से दंतोष्ट रूप होकर फिर "अतोऽम्" शा० व्या० अ० १ पा० २ सू० ४ अकारान्तस्य नपुंसकस्य सम्बन्धिनोः स्वमोरमित्या देशो भवति फिर "मोणोऽमः" "पदस्य" "षष्ट्याः स्थानेऽन्तेल्तः" इन सूत्रों से "दंतोष्टम्" शब्द सिद्ध हो जाता है किन्तु यह दन्तोष्टं शब्द नपुंसक लिङ्ग का एक वचनान्त है और द्वन्द्व समासान्त पद है और (स्तनौच उदरंच स्तनोदरं) जब स्तन और उदर का समाहार किया तब स्तनोदरम् प्रयोग सिद्ध हुआ सो "प्राणि तूर्य्याङ्गम्" अतोऽम् इत्यादि सूत्रों की प्राप्ति है यह द्वन्द्व समासान्त पद है. (वस्त्रंच पात्रंच अनयोः समाहारः वस्त्र पात्रम्) जब

वस्त्र और पात्र का समाहार किया गया तब द्वंद्वो वा शा० व्या० अ० २ पा० १ सू० ६३ इस सूत्र से वस्त्र पात्र प्रयोग सिद्ध हुआ फिर " अतोऽम् " सूत्र से विभक्त्यन्त पद वस्त्र पात्रम् हो गया तथा (अश्वश्च महिषश्च अश्व महिषम्) अश्व और महिष का जब समाहार किया गया "नित्य वैरावेरे" शा० २-१-१०३ और मोऽणोऽमः इन सूत्रों से अश्व महिषम् प्रयोग सिद्ध हुआ क्योंकि यह सर्वाद्धि पद्मान्त और द्वंद्व समासान्त पद हैं फिर " अहिश्च नकुलश्च अहिनकुलं " सर्प और नकुल का जब समाहार किया गया " नित्य वैरावैरे " २-१-१०३ इस सूत्र के द्वारा अहि नकुल प्रयोग सिद्ध हो गया फिर " अहृतोऽम् " सूत्र से अहि नकुलम् शब्द बना सो यह सर्व द्वन्द्व समासान्त पद हैं क्योंकि जिस समास में चकार बहुत बार आता हो उसे ही द्वंद्व समास कहते हैं अपितु "प्रत्यय स्यच सुपः श्लुक्" शा० अ० २ पा० २ सू० १ समासस्य प्रत्ययस्यश्च निमित्त स्य सुपः श्लूक् भवंति इस सूत्र से समाहार करते समय सुप् प्रत्यय का लोप हो जाता है (सेतं द्वन्द्वे १) सो यही द्वन्द्व समास है अर्थात् चकार बहुलो द्वन्द्वः जिसमें चकारों की संख्या अधिक हो वही द्वन्द्व समास होता है।

भावार्थ–द्वंद्वसमास उसे कहते हैं जिस में चकारों का प्रयोग अधिक हो और मुख्यतया उसके दो भेद होते हैं जैसे कि अवयव प्रधान और समाहार प्रधान जिसके निम्न लिखित उदाहरण हैं जैसे कि "दन्ताश्च ओष्ठौच दंतोष्ठम्" " स्तनौच उदरंच स्तनोदरम् " "वस्त्रंच पात्रंच वस्त्रपात्रम्" " अश्वश्च महिषश्च अश्वमहिषम् " अहिश्च नकुलंच " अहिनकुलम् "इसे ही द्वंद्वसमास कहते हैं अब बहुव्रीहि और कर्म धारय समासों के विषय में कहते हैं ।

मूल– सेकिंतं बहुव्वीहीसमासे २ फुल्ला इमंमि गिरिंमि कुडय कडयंबा सो इमोगिरी फुल्लिय कुडिय कयंबो सेत्तं बहुव्वीही समासे २ सेकिंतं कम्मधारय २ धवलोवसहो धवलवसहो १ किण्हो मिग्गो किण्हामिग्गो २ सेत्तो पडो सेतपडो२ रत्तोपडो रत्तपडो सेतं कम्मधारय ॥ ३ ॥

पदार्थ–(सेकित्तं बहुव्वीहीसमासे २) (प्रश्न) बहुव्रीहि समास किसे कहते हैं (उत्तर) बहुव्रीहि समास तीन प्रकार से कहा गया है जैसे कि उत्तर

पदार्थ प्रधान, उभय पदार्थ प्रधान, अन्य पदार्थ प्रधान, किन्तु सूत्र में केवल सूचना मात्रही उदाहरण दिया गया है जैसे कि (फुल्ला इमंमि गिरिंमि कुडय कडयंवा सो इमो गिरी फुल्लिय कुडयंवो सेत्तं बहुव्वीही समासे) विकसित हुए हैं जिस गिरिमें कुटज वृक्ष और कदंव वृक्ष सो यही गिरि विकसित कुटज कदंवज है सो यही अन्य पदार्थ प्रधान का उदाहरण दिखलाया गया है और यह पद सप्तम्यन्त है और यही बहुव्रीहि समास होता है तथा यस्य येषां बहुव्रीहिः ॥२॥ (सेकिंतं कम्म धारय २) (प्रश्न) कर्म धारय समास किसे कहते हैं (उत्तर) कर्म धारय समास द्वि प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि उत्तर पदार्थ प्रधान प्रधान १ और पूर्व पदार्थ प्रधान २ अब इस समास के उदाहरण दिखलाते हैं जैसे कि (धवलो वसहो धवलवसहो १ किण्हामगो किण्हामिगो २ सेतोपडो सेतपडो ३ रत्तोपडो रत्तपडो ४ सेत्तं कम्म धारय समासे ३) धवलश्चासौ वृषभश्च धवल वृषभः इत्यादि संभावना करलेनी चाहिये अर्थात धवल है जो वृषभ उसे "धवलवृषभ" कहते हैं इसी प्रकार कृष्ण है जो मृग सो वही कृष्णमृग है २ जो श्वेत पट है उसेही श्वेतपट कहते हैं ३ रक्त (लाल) है जो वस्त्र वही रक्त वस्त्र होता है सो इसी का नाम कर्मधारय समास कहते हैं किन्तु इन सर्व पदों में " विशेषणं व्यभिचार्येकार्थं कर्म धारयश्च " शा० व्या० अ० २ पा १ सू ५८ व्यभिचारि विशेषणं समानाधि करणं सुवन्तं विशेष्येण सुपा समस्यते सच समासः तत्पुरुषसंज्ञः कर्म धारय संज्ञश्च और " जात महद् वृद्धा दुक्षणः कर्म धारयात् " शा० व्या० अ० २ पा० १ सू १५८ इन सूत्रों की प्राप्ति जाननी चाहिये सो इसे ही कर्म धारय समास कहते हैं ।

भावार्थ- बहुव्रीहि समास तीन प्रकार से होता है जैसे कि उत्तर पदार्थ प्रधान १ उभय पदार्थ प्रधान २ अन्य पदार्थ प्रधान ३ उत्तर पदार्थ प्रधान तो जैसे द्विदशानि वस्त्राणि यह शब्द है उभय पदार्थ प्रधान जैसे " द्वित्राः पुरुषाः " शब्द हैं अन्य पदार्थ प्रधान जैसे कि " उपविंशाः " शब्द है किन्तु सूत्र में केवल विकासित है यह गिरि कुटज और कदंवज वृक्षों से सो यह गिरि विकासित कुटज कदम्बज है अर्थात् वृक्षों से यह गिरि विकसित हो रहा है और गिरि के विषय वृक्ष विकासित हैं यह सप्तम्यन्त वचन है इसी को बहुव्रीहि समास कहते हैं १ और कर्म धारय समास भी दो प्रकारसे प्रतिपादन किया गया है जैसे कि उत्तर पदार्थ प्रधान १ और पूर्व पदार्थ प्रधान २ उत्तर पदार्थ

प्रधान जैसे कि " नीलोत्पलम् शब्द है और पूर्व पदार्थ प्रधान जैसे कि " क्षत्रियभीरुः " इत्यादि शब्द जानने चाहिये किन्तु सूत्र में धवलजो है वृषभ सो कहिये धवल वृषभ १ इसी प्रकार कृष्ण मृग २ श्वेतपट ३ रक्तपट ४ इत्यादि कर्म धारय समास के उदाहरण जानने चाहिये अब द्विगु और तत्पुरुष समास के विषय में विवेचन किया जाता है।

अथ द्विगु और तत्पुरुष समास विषय।

सेकिंतं दिगुसमासे तिण्णि कटुगानि तिकटुयं १ तिण्णि महुराणिति महुरं २ तिगुणाणि तिगुणं ३ तिण्णि पुराणिति पुरं ४ तिण्णि सराणि तिसरं ५ तिण्णि पुक्खराणि तिपुक्खरं ६ तिण्णि विंदुयाणि तिविंदुयं ७ तिण्णि पहाणि तिपहं ८ पंच नदीओ पंचनदी ९ सत्त गया सत्तगयं १० नवतुरंगा नवतुरंगं ११ दस गामा दसगामं १२ दस पुराणि दसपुरं १३ सेतं दिगुसमासे १४ सेकिंतं तप्पुरिसे समासे २ तित्थे कागोत्थिकागो वणे हत्थीवण हत्थी २ वणे वराहो वणवराहो ३ वणे महिसो वणमहिसो ४ वणेमयूरो वणमयूरो ५ सेतं तप्पुरिसे समासे।

पदार्थ-(सेकिंतं द्विगुसमासे २) (प्रश्न) द्विगुसमास किसे कहते हैं (उत्तर) जो संख्यावाची शब्दों से समाहार किया जाय वही द्विगु समास होता है जैसे कि (तिण्णिकडुगानि तिकडुगं १) संख्या पूर्वोद्विगुः[1] त्रीणि कटुकानिसमाहृतानि त्रिकटुकं अर्थात् जब तीन कटुक वस्तुओं का समाहार किया तब त्रिकटुकं शब्द सिद्ध हुआ जैसे कि सुंठ, पीपल, मरिच ३. और इसी प्रकार (तिण्णिमहुराणिति महुरं) "त्रिणि मधुराणि समाहृतानि त्रिमधुरम्" जब तीन मधुर वस्तुओं का समाहार किया गया तब त्रिमधुर प्रयोग सिद्ध हुआ इसी प्रकार आगे भी संभावना कर लेनी चाहिये जैसे कि ति रिण गुणाणि तिगुणं ३ तीन गुणोंके समाहार से त्रिगुण शब्द सिद्ध हुआ (तिरिण पुराणि तिपुरं) तीन पुरों के एकत्व करने

---

१ गुणाणाः द्वितिया प्रा० व्या० अ० ८ पा० १ सू० ३४ ॥

से तीन पुर (तिरिण सराणि तिसरं) तीन सरों के एकत्व करने से त्रिसर (तिरिण पुक्खराणिति पुक्खरं ६) तीन कमलों के एकत्व होने से त्रिपुष्कर (तिरिण विंदुयाणिति विंदुअं) तीनों विंदुओं के एकत्व होने से त्रिविंदुक (तिरिण पहाणिति पहं) तीन पंथों के एकत्व होने से त्रिपंथ और (पंचनदीओ पंचनदं) पंच नदियों के एकत्व होने से पंचनद (सत्तगया सत्तगयं १०) सात हस्तियों के एकत्व होने से सप्त गज अथवा सप्त गदाओं से सप्त गदा (नवतुरंगा नवतुरंगं) नव अश्वोंके एकत्व होनेसे नव अश्व (दसगामा दसगामं) दशग्रामों के मिलने से दशग्राम (दसपुराणि दसपुरं १३) दशपुरों (नगरों) के एकत्व होने से दशपुर इत्यादि सर्व शब्द सिद्ध होते हैं क्योंकि "संख्या समाहारेच द्विगुश्चाना-म्न्ययम् ॥ शा० व्या० अ० २ पा० १ सू० ६१ संख्यावाचि सुबन्त मेकार्थ सुबन्तेन समस्यते संज्ञायां ताद्धित प्रत्यये उत्तर पदेपरे समाहारेच गम्यमाने सच तत्पुरुषः कर्म धारयो द्विगुसंज्ञश्चद्विगुर्ननाम्नि ॥ इस सूत्र की सर्वत्र प्राप्ति है और इस सूत्र से ही सर्वत्र प्रयोग सिद्ध होते हैं (सेत्तं दिगु समासे ४) सो पूर्व कथित ही द्विगु समास है ४ अब तत्पुरुष के विषय में कहते हैं (सेकिंतं तप्पुरिसे समासे २) (प्रश्न) तत्पुरुष समास किसे कहते हैं (उत्तर) तत्पुरुष समास दो प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि पूर्व पदार्थ प्रधान १ और उत्तर पदार्थ प्रधान २ और इस संज्ञा को ही तत्पुरुष समास कहते हैं "अनश्व" यह शब्द पूर्व पदार्थ प्रधान है और "दुर्जनः" यह उत्तर पदार्थ प्रधान है और उत्तर भेद इसके आठ होते हैं जैसे कि सात विभक्तियों से आठवां नञ् तत्पुरुष समास होता है किंतु सूत्र में सर्व उदाहरण सप्तम्यन्त तत्पुरुष के ही दिखलाये गये हैं जैसे कि (तित्थे कागोतित्थकागो) तीर्थ में जो काक रहता है वह तीर्थ काक होता है (वणेहत्थी) वन में जो हस्ती है उसे वन हस्ती कहते हैं २ (वणेवराहो वणवराहो ३) वन में जो सूअर है उसे वन वराह कहते हैं ३ (वणेमहिसो वण महिसो) वन में जो महिष है सो वन महिष कहा जाता है (वणेमयूरो वण मयूरो) वन में जो मयूर है उसे वन मयूर कहते हैं यह सर्व सप्तम्यन्त तत्पुरुष समासान्त पद है " सप्तमी शौंडादिभि " शा० व्या० अ० २ पा० १ सू० ५२ सप्तम्यन्तं शौंडादिभिः सुबन्तैस्समस्यते" इस सूत्र की सर्व प्रयोगों में प्राप्ति है (सेत्तं तप्पुरिसे समासे ५) सो यही पूर्वोक्त तत्पुरुष समास है किन्तु यहां पर केवल एक सप्तम्यन्त के ही प्रयोग दिखलाए गए हैं ।

भावार्थ—द्विगु समास में संख्या पूर्वक समाहार करने से पद होता है जैसे कि " संख्या पूर्वोद्विगुः " त्रीणिकटुकानि समाहृतानि त्रिकटुकं १ पत्रंत्रीणि मधुराणि समाहृतानि त्रमधुरम् २ त्रयाणां गुणानां समाहारः त्रिगुणम् ३ त्रीणिपुराणि समाहृतानि त्रिपुरम् ४ त्रीणिसरांसि समाहृतानि त्रिसरसं ५ त्रीणि पुष्कराणि समाहृतानि त्रिपुष्करम् त्रयो विन्दवः समाहृताः त्रिविन्दुकम् ७ त्रयाणां पथां समाहारः त्रिपथम् ८ इत्यादि सर्व प्रयोग द्विगु समास के जानने चाहियें ४ और तत्पुरुष के उत्तर भेद आठ हैं किन्तु यहां पर केवल सप्तम्यन्त वचन हैं जैसे कि तीर्थ में जो काक है वह तीर्थकाक कहा जाता है १ वन में जो हस्ती है वह वनहस्ती २ वन में जो वराह है वह वनवराह ३ वन में जो महिष है वह वन महिष ४ वन में जो मयूर है वह वन मयूर ५ ये सर्व तत्पुरुष समास के उदाहरण हैं क्योंकि सूत्र में केवल सूचना मात्र ही कथित है किन्तु सात विभक्तियों के निम्न लिखित उदाहरण हैं प्रथमा पूर्वकायस्येति पूर्वकायः १ द्वितीया धर्मश्रितः धर्मश्रितः २ तृतीया मदेन विव्हलः मद विव्हलः ३ चतुर्थी रथाय दारु रथदारु ४ पंचमी सिंहात् भयः सिंह भयम् ५ षष्ठीराज्ञः पुरुषो राजः पुरुषः ६ सप्तमी अक्षेषु शौंडः अक्षशौंडः ७ कर्मणि कुशलः कर्म कुशलः इत्यपि नञ् तत्पुरुष धर्मविरोद्धोऽधर्मः पापाभावः अपापम् न अश्वः अनश्व इत्यादि प्रयोगों की संभावना कर लेनी चाहिये । अब इसके पश्चात् अव्ययीभाव और एक शेष समास का विवर्ण किया जायगा क्योंकि जो पदार्थ हैं उनके बोध के लिये समासों का बोध आवश्यकीय है क्योंकि फिर पदार्थ बोध शीघ्र हो जाता है ।

अथ अव्ययी भाव और शेष समास का विषय ।

सेकिंतं अव्वईभावे समासे २ अणुगामा अणुणइयं १ अणुगामं २ अणुफरिहं ३ अणुचरियं ४ सेतं अव्वई भावे समासे ६ सेकिंतं एगसेसे समासे २ जहा एगो पुरिसो तहावहवे पुरिसा जहा वहवे पुरिसा तहा एगो पुरिसो २ एवं करिसावणो ३ जहा एगो साली तहा वहवे साली सेतं एगसेसे समासे ७ सेत्तं सामासिए ॥

पदार्थ-(सेकिंतं अव्वइ भावे समासे) (प्रश्न) अव्ययी भाव समास किसे कहते हैं (उत्तर) अव्ययी भाव समास के निम्न लिखित उदाहरण जानने चाहिए ग्राम के समीप जो ग्राम हो उसे अनुग्राम कहते हैं (अणुणईयं) जो नदी के समीप वा मध्य में हो उसे अनुनदी कहते हैं क्योंकि अनु अव्यय पश्चात् तुल्य अनुभव आदि अर्थों में होता है इसी प्रकार (अणुगामं २) ग्राम के समीप वा ग्राम के मध्य में जो हो उसे अनुग्राम कहते हैं २ (अणुफरिहं) खाई के पास वा मध्य में जो हो वह अनुफरिहा होती है ३ (अणुचरियं ४) जो मार्ग के समीप हो वह अनुमार्ग होता है क्योंकि (शब्द प्रथा सम्यत्समृद्धिव्यर्थाभावात्पयाः सम्प्रति सुप्यश्चाद्युग पद्यथा सदृक् साकल्यान्तेऽव्ययम्) शा० व्या० अ०३ पा०१ सू० १८ और (समीपे) शा० व्या० अ० २-१-१४ समीपे वर्तमानम् अन्वेतत्सुवन्तं समीपवाचिना सुवंतेन सह समस्यते । सर्व उक्त प्रयोगों में उक्त सूत्रों की प्राप्ति है और इन सूत्रों से प्रयोग भली भांति सिद्ध हो जावे हैं (सेतं अव्वई भावे समासे ६) यही अव्ययी भाव समास है अब एक शेष समास विषय में कहते हैं (सेकिंतं एग सेसे २) (प्रश्न) एक शेष समास किसे कहते हैं (उत्तर) जो सामान्य जाति के वाचक शब्द हैं उनका लोप कर जब एक पद शेष रह जाए उसे एक शेष समास कहते हैं किन्तु वह एक शेष पद पूर्व पदों का भी वाचक रहेगा जैसे कि पुरुषश्च पुरुषश्चेति पुरुषौ पुरुष २ लिखकर द्विवचन पुरुषौ बना लिया इसी प्रकार बहुवचन की भी संभावना कर लेनी चाहिए तथा जाति वाचक शब्द होने से एक ही वचन होता हैं अथवा बहुवचन भी हो जाता हैं क्योंकि यह समास द्वन्द्व समास के ही अंतर्गत होता है इस लिये (समानामेकः) शा० अ० २ पा० १ सू०८१ समानां तुल्यार्थानां शब्दानां मर्थस्यसह वचने तेषामेक एव प्रयोक्तव्यः॥ वक्रश्च कुटिश्च वक्रौ कुटिलौवा बहुवचनमतंत्रम् " सुप्पसंख्येयः शा० अ २ पा १ सू ८२ इन सूत्रों से एक शेष समास होता हैं अब इस समास के उदाहरण कहते हैं (जहा एगो पुरिसे तहा बहवे पुरिसा १) जैसे एक पुरुष हैं वैसे अन्य बहुत पुरुष हैं यहां पर एक शेष जाति वाचक होने पर किया गया है इसी प्रकार (जहा बहवे पुरिसा तहा एगो पुरिसो २) जैसे बहुत पुरुष होते हैं वैसे ही एक पुरुष होता है यह भी एक शेष समास है (जहा एगो साली तहा बहवे साली) जैसे एकशाली है वैसे बहुत से शाली हैं (एवंकरिसावणो) इसी प्रकार सुवर्ण की मुद्राओं की भी संभावना कर लेनी चाहिये (सेत्तं एगु सेसे समासे सेत्तं समासिए) अथ

शब्द पूर्ववत् है तं शब्द पूर्व सम्बन्धार्थ में है सो यही एक शेष समास है और इसी स्थान पर समास की व्याख्या पूर्ण हो गई है इसी लिये यह सामासिक पद कहाते हैं।

भावार्थ—अव्ययी भाव समास तीन प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि अन्य पदार्थ प्रधान १ पूर्व पदार्थ प्रधान २ उत्तर पदार्थ प्रधान ३ अन्य पदार्थ प्रधान दंडा दंडि मुष्टा मुष्टि इत्यादि पूर्व पदार्थ प्रधान पारगङ्गे मध्ये समुद्रं इत्यादि उत्तर पदार्थ प्रधान सूपप्रति दधिप्रति इत्यादि और इनके उदाहरण अनुनदी १ अनुग्राम २ अनुफरियं ३ अनुचरियं यही दिये गए हैं सो यही अव्ययी भाव समास होता है ६ और एक शेष समास उसे कहते हैं जिसके अनेक पदों का लोप करके शेष एक पद रह जाए वही एक शेष समास होता है जैसे कि "समानामेक" इस सूत्र से वक्री वा कुटिलों इत्यादि पद बन जाते हैं तथा जातिवाचक होने से इन का एक पद भी किया जाता है सो यही एक शेष समास है अपितु समासों का पूर्ण विवर्ण वैयाकरण जानते हैं तथा यह पूर्ण समास शकटायनादि व्याकरणों से जानने चाहिये सूत्र में तो केवल सूचना मात्र ही कथन है और हेमचंद्र कृत प्राकृत व्याकरण "दीर्घ हृस्वौ मिथोवृत्तौ" अ० ८ पा० १ सू० ४ और "समासेवा" अ० ८ पा० २ सू० ६ केवल दो सूत्र ही उपलब्ध होते हैं क्योंकि प्राकृत व्यारण में समास प्रकरण संस्कृतवत् माना गया है इसलिये समास बोध व्याकरण से अवश्य ही करना चाहिये ॥ प्रसंग वशात् एक अलुक् समास भी जानना चाहिये जैसे कि "ओजोऽञ्जस्सहोऽम्भस्तपसष्टः" शा. अ. २ पा. २ सू. ४ इस सूत्र से ओज साकृतमिति ओज साकृतम् इसी प्रकार अंज साकृतं सहसाकृतं अम्भ साकृतं तपसाकृतं इत्यादि विवर्ण अलुक् समासान्तर्गत जानना चाहिये सो सो जैन व्याकरणों से समास प्रकरण अध्ययन करके फिर तद्धित प्रकरण पठन करना चाहिये इसीलिए अब सूत्रकार तद्धित के विषय में विवेचन करते हैं॥

अथ तद्धित विषय।

सेकिंतं तद्धित २ अट्ठविहे पण्णत्ते तंजहा कम्मे १ सिप्पे २ सिलोए ३ संयोग ४ समीवहोय ५ संजूहो ६

इस्सरिया ७ वच्चेणय ८ ततद्धितनामं तु अट्ठविहं १ सेकिं तं कम्मनामे २ तणहारए कठहारए पत्तहारए दोसिए पत्तिय सोतिए कप्पासिए कोलालिए भंडवे यालिए सेत्तं कम्मनामे सेकिंतं सिप्पनामे २ वत्थिए तंतीए २ तुन्नाए ३ तंतुवाए ४ पट्टवाए ५ उपट्टे ६ वरुडे ७ मुंजकारए ८ कठ कारए ९ छत्तकारए १० वम्भकारए ११ पोत्थकारए १२ चित्तकारए दन्तकारए १३ सेव्वकारए १४ लेपकारए १५ कोट्टिमकारए १६ सेत्तं सिप्पनामे सेकिंतं सिलोगनामे २ समणे माहणे सव्वातिही सेत्तं सिलोगनामे २ सेकिंतं संयोगनामे २ रन्नो ससुरए १ रन्नो जामाउए २ रन्नो सालए रन्नोदुए ४ रन्नोभगणीपई ५ सेत्तं संजोग नामे ॥

पदार्थ—(सेकिंतं तद्धितए २ अट्ठविहे पं० तं०) (प्रश्न) तद्धितज किसे कहते हैं (उत्तर) जो तद्धित प्रत्ययों के लगने से नाम उत्पन्न होता है उसे तद्धितज कहते हैं किन्तु वह तद्धितज नाम आठ प्रकार से वर्णन किया गया है जैसे कि जो कर्म से नाम उत्पन्न होता है उसे कर्म नाम कहते हैं इसी प्रकार शिल्प नाम २, श्लोक नाम ३, संयोग नाम ४, समीप नाम ५, संयूथ नाम ६, ऐश्वर्य नाम ७, अपत्य नाम ८ जिसका सूत्र यह है कि (कम्मे १ सिप्पे २ सिलोय ३ संजोग ४ समीवत्रोय ५ संजुहो ६ ईसरीया ७ वच्चेणय ८) सो (तद्धियनामंतु अट्ठविहे १) तद्धित नाम पुनः आठ प्रकार से कहे गये हैं अब प्रत्येक २ विषय में कहते हैं (प्रश्न) (सेकिंतं कम्म नामे २) (प्रश्न) कर्म नाम किसे कहते हैं (उत्तर) कर्म नाम के उदाहरण निम्न प्रकार से हैं जैसे कि तणहारए कठहारए) तृणहारक काठहारक यद्यपि प्रत्यक्ष भाव में तद्धित प्रत्यय यहां नहीं दीखते हैं किन्तु उत्पत्ति कारण की अपेक्षा तद्धित प्रत्यय की प्राप्ति है इसी प्रकार (पत्तहारक) पत्रों के लाने वाला (दोसिए) दौषिक यहां पर ठण् प्रत्यय की प्राप्ति है अर्थात् वस्त्र वेचने वाला क्योंकि दूष्य नाम वस्त्र का है (सौत्तिए) सौत्रिक ठण् प्रत्ययान्त सूत्र के वेचने वाला (कप्पासिए)

कार्पासिक (ठण् प्रत्यय) कपास का विक्रय करने वाला (कोलालिए) (ठण् प्रत्ययान्त) कौलालिक भाजन विक्रय करने वाला (भंड वेयालिए) भांड वैचारिक (ठण् प्रत्यय) कांस्यादिक के विक्रय करने वाला (सेत्तं कम्म नामे) यही कर्म नाम हैं इन में प्रत्यक्ष तद्धित प्रत्यय उपलब्ध नहीं होते किन्तु ऋषि प्रणीत होने से यह कथन सर्वथा माननीय है (सेकिंतं सिप्प नाम २) (प्रश्न) शिल्प नाम किसे कहते हैं (उत्तर) शिल्प नाम भी निम्न प्रकार से हैं (वत्थिए) वास्त्रिक वस्त्र के शिल्प का ज्ञाता इसी प्रकार (तंतीए) तंत्रीवादनं शीलमस्येति तांत्रिकः अर्थात् जिसका वीणा बजाने का शील है वह तांत्रिक कहाता है (तुन्नाए) इसी प्रकार तुनार (तंतुवाए) तंतुओंके समाहार करने वाला (पट्ट वाए) पट्टवायक (उपट्टे) उपट्ट (वरुडे) वरुट यह देश रूढि नाम जानने चाहिये (मुंजकारए) मूंज के कम कर्म करने वाले मुंजकार इसी प्रकार (कट्ठ कारी) काष्ठकार (छत्तकारी) छत्रकार (वम्भकार) वध्यकार (पोत्थकारए) पुस्तक लिखने वाला (चित्तकारी) चित्रकार (दन्तकारए) दान्तकार (सेलकारए) पाषाण का कृत्य करने वाला (लेपकारए) लेपकार (कोट्टिमकारए) भूमि आदि को सम्मार्जन करके चित्रित करने वाला इत्यादि सर्व कर्म शिल्प विज्ञान के अन्तभूर्त हैं (सेत्तं सिप्प नामे) और यही शिल्प नाम है तद्धित प्रत्यय की प्राप्ति होने पर ही इन्हें ताद्धित प्रत्ययान्त मानागया है (सेकिंत सिलोगनामे २) (प्रश्न) श्लाघनीय तद्धित नाम किसे कहते हैं (उत्तर) श्लाघा पूर्वक तद्धित नाम निम्न प्रकार से है जैसे कि (समणे माहणे सव्वातिही सेत्तं सिलोगनामे) श्रमण ब्राह्मण सर्व अतिथि इत्यादि श्लाघनीय नाम साधु पद में देखे जाते हैं किन्तु श्लाघनीय अर्थ की उत्पत्ति हेतुभूत अर्थ मात्र में ताद्धित प्रत्यय होता है इसीलिये श्रमण भवं श्रामण्यं इत्यादि शब्दों में तद्धित के "राय" आदि प्रत्यय संयोजन करने चाहियें सो यही श्लोक नाम है सो अब संयोग नाम के विषय में कहते हैं (सेकिंतं संजोग नामे) (प्रश्न) संयोग नाम किसे कहते हैं (उत्तर) संयोग नाम उसे कहते हैं जिसे संयोग पूर्वक उच्चारण किया जाय जैसे कि (रन्नोससुरए १) राजा का सुसुर (रन्नोजामाउए) राजा का जामातृ (रन्नो साला) राजा का साला (रन्नोदूए) राजा का दूत (रन्नो भगणी पति) राजा की भगिनी का पति है (सेत्तं संजोग नामे २) सो यही संजोग नाम है क्योंकि सम्बन्ध में षष्ठी होती है इसीलिये

षष्ठी के प्रयोग हैं अथवा इन शब्दों में तद्धित प्रत्यय अप्रत्यक्ष हैं तथापि इनके हेतुभूत अर्थों में विद्यमान होने से सर्वथा माननीय हैं तथा पूर्वगत शब्द प्राभृत आदिन अप्रत्यक्ष है इसीलिये स्वरूप के सम्यक् प्रकार के अवगमन होने पर भी यह कथन सर्वथा अशंकनीय है ॥

भावार्थ–ताद्धित प्रकरण आठ प्रकार से प्रतिपादन किया गया है जैसे कि कर्म १ शिल्प २ श्लोक ३ संयोग ४ समीप ५ संयूथ ६ ऐश्वर्य्य ७ और अपत्य ८ इन अर्थों में ताद्धित प्रत्यय होते हैं सो क्रम से उदाहरण तृणहारक काष्टहारक पत्रहारक दौपिक पत्रिक सौत्रिक कार्य्यासिक कौलालिक भांड वैचारिक तथा शिल्प के उदाहरण वास्त्रिक तांत्रिक तंतुवाय पट्टवाय उपट्ट वरुड मुंजकारक काष्ठकारक छत्रकारक वध्यकारक पुस्तककारक चित्रकारक दंतकारक पापाण कारक लेपकारक कोट्टिमकारक श्लोक के उदाहरण श्रमण ब्राह्मण आतिथि संयोग के उदाहरण राजा का सशुर राजा का जामातृ राजा का साला राजा का दूत राजा की भगिनी का पति यह सर्व संयोग नाम हैं उक्त अर्थों में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष ताद्धित प्रत्यय सूत्र विहित हैं क्योंकि कतिपय शब्दों के हेतु भूत अर्थों में ताद्धित प्रत्यय होता है ॥

अथ शेष तद्धित नाम विषय

(सेकिंतं समीव नामे २ गिरिसमीवे नगरं गिरि नगरं १ विदिसाए समीवे नगरं विदिसा नगरं २ वेनाय समीवे नगरं वेनाए नगरं ३ नगर समीवे नगरस् नगरायउं सेतं समीव नामे ५ सेकिंतं संजूहनामे २ तरंगवकारए १ मलवईकारए २ अत्ताणुसाढिकारए ३ विन्दुकारए ४ सेतं संजूहनामे ६ सेकिंतं ईसारिय नामे २ ईसरे १ तलवर २ माडंविए ३ कोडंविए ४ इब्भसेट्ठी ५ सेणावंई ६ सत्थवाह ७ सेत्तं ईसरिय नामे ८ सेकिंतं अवच्चनामे आरिहंतमाया १ चक्कवट्टीमाया २ वल-

देवमाया ३ वासुदेवमाया ४ रायमाया ५ मुणिमाया ६ वायगमाया ७ सेत्तं अवच्चनामे सेत्तं ताद्धितए)

पदार्थ-(सेकिंतं समीवनामे २) (प्रश्न) समीप नाम किसे कहते हैं (उत्तर) समीप नाम इस प्रकार से है जैसे कि (गिरिसमीवे नगरं गिरिनगरम् १) जो गिरि के समीप नगर हैं वह गिरि नगर होता है और (विदिसासमीवे नगरं विदिसानगरम्) जो विदिसा के समीप नगर है वह वैदिशा नगर है यहां पर अण् प्रत्यय है और (वेनाय समीवेनगरं वेनाय नगरं) जो वेनानदी के समीप नगर है वोह वेनाय नगर है (नगरसमीवेनगरं नगरायनगरम्) जो नगर के समीप नगर होता है उसे नगराय नगरं कहते हैं (सेत्तं समीवनामे) यही समीप नाम है ५ (सेकिंतं संजूह नामे) (प्रश्न) संयूथ नाम किसे कहते हैं (उत्तर) संयूथ नाम के उदाहरण निम्न प्रकार से हैं जैसे कि (तरंगवइकारए) तरंगपतिकारक (मलयवइकारए २) मलयपतिकारक २ (अत्ताणुसण्ठिकारए) आत्मानुपाष्टिकारक ३ (विंदुकारए) विन्दुकारक (सेत्तं संयूहनामे) यही संयूथ नाम हैं (सेकिंतं ईसारियनामे) (प्रश्न) ऐश्वर्य्य नाम किसे कहते हैं (उत्तर) (ईसरे १ तलवर २ मांडविए) युवराज्य तलवर मांडविक (कोडंविएइब्भेसेट्टि) कौटुम्बिक प्रधान सेठ (सेणावई सत्थवाह) सेनापति सार्थवाह (सेतं ईसारियनामे ७) येही ऐश्वर्य्य नाम है इनकी उत्पत्ति में ताद्धित प्रत्यय है ७ (सेकिंतं अवच्चनामे २) (प्रश्न) अपत्य नाम किसे कहते हैं (उत्तर) अपत्य नाम उसे कहते हैं जो पुत्र के नाम से माता का नाम प्रसिद्ध हो जैसे कि (अरिहंतमाया १) यह अरिहंत की माता है अर्थात तीर्थंकरो अपत्यंयस्याः सा तीर्थंकर माता एवमन्यत्रापि सुप्रसिद्धे नामसिद्धं विशिष्यते अतस्तीर्थं करादि मातरो विशेपितास्ताद्धित नाम अतः प्रासिद्ध नाम के द्वारा जो अप्रसिद्ध नाम भी प्रकाशित हो जाए उसी का नाम अपत्य नाम है जैसे कि तीर्थंकर देव के सुप्रसिद्ध होने से माता भी प्रसिद्ध हो जाती है इसी प्रकार (चक्कवट्टीमाया २) चक्रवर्ती की माता (वलदेव माया) वलदेव की माता (वासुदेव माया) वासुदेव की माता (रायामाया) राजा की माता (मुणिमाया) मुनि की माता (वायगमाया) वाचक की माता (सेत्तं अवच्चनामे सेत्तं ताद्धितए) येही अपत्य नाम है और येही ताद्धित नाम

नाम कहाते हैं किन्तु इन में आर्ष वाक्य होने से और सर्व प्रत्यय हेतुभूत अर्थों में विद्यमान होने से सवर्था माननीय हैं अब इसके आगे धातु का विवर्ण किया जाता है ॥

भावार्थ-समीप नाम उसे कहते हैं जो किसी प्रधान वस्तु के समीप हो जैसे कि जो गिरि के समीप नगर वसता होवे उसे गिरि नगर कहते हैं १ जो विदिशा के समीप नगर हो वह विदिश नगर होता है २ अथवा जो नदी के समीप नगर वसता हो वह नदी नगर होता है ३ जो नगर के समीप नगर हो वह नगराय नगर है ४ इसे ही समीप नाम कहते हैं ५ अपितु संयूथनाम के निम्न उदाहरण हैं जैसे कि तरंगपतिकारक १ मलयपातिकारक २ आत्मा की पुष्टि कारक ३ विन्दुकारक ४ यह सर्व संयूथ नाम है क्योंकि समूह में संयूथ नाम की प्राप्ति है ६ और एश्वर्य्य नाम राजादि में होते है ईश्वर तलवर मांडविक इभ्य सेठ सेनापति सार्थवाह इत्यादि ऐश्वर्य्यवाची नाम हैं ७ और अपत्य नाम उसका नाम है जो पुत्र के नाम से माता की प्रसिद्धि हो जैसे कि यह अरि हंत की माता है इसी प्रकार चक्रवर्ती की माता १ वासुदेव की माता बलदेव की माता राजा की माता, मुनि की माता वाचकाचार्य्य की माता यह अपत्य नाम हैं इसे ही ताद्धित नाम कहते हैं किन्तु इस प्रकरण में उत्पत्ति रूप भाव में तद्धित प्रकरण माना गया है विशेष विवर्ण तो पूर्वों में था-अतः लेश मात्र ही यहां पर दिखलाया गया है इसलिये यह कथन अशंकनीय है तथा वर्णों के अनंत पर्य्याय हैं इसलिये यह कथन आदरणीय है अब इसके आगे धातु प्रकरण का विवेचन करते है ।

अथ धातु विषय ।

सेकिंतं धाउए २ भू सत्तायाम् परस्मैभाषा एध वृद्धौ स्पर्द्धसंघर्षे गाधृ प्रतिष्ठा लिप्साग्रंथेषु बाधृ रोट (लोडने) सेत्तं धातुए ॥

नोट—जैन कवि कल्पद्रुम में लिखा है कि एधितु वृद्धोस्पर्द्धितु संघर्षे गाधृङ् भवेत् प्रतिष्टा लिप्सी ग्रंथेषु रोटनेबाधृङ् और इन के अनुबंध के पृथक २ फल लिखे हैं.

पदार्थ–(सेकिंतंधाउए २) (प्रश्न) धातु कौन २ से हैं ? गुरु ने उत्तर दिया कि (भूसत्तायां) भू धातु विद्यमान अर्थ में होता है फिर उसके (परस्मैभाषाए) परस्मै भाषा में भवति भवतः भवन्ति भवसि भवथः भवथ भवामि भवावः भवामः तीनों पुरुषों के उक्त प्रयोग बन जाते हैं किन्तु इनकी साधना निम्न प्रकार से की जाती है भू धातु को रखकर "क्रियार्थोधातुः । शा० व्या० अ० १ पा० १ सू० २२" इस सूत्र से धातु संज्ञा बांध कर "सति २ शा० व्या० अ० १ पा० ३ सू० २१७" इस सूत्र से वर्तमान काल में लट् प्रत्यय होगया फिर "कृष्णोऽतुन्त्वाम्" शा० अ० ४ पा० ३ सू० ४५ । लट् प्रत्यय को कर्ता में रख कर "लोऽन्य युष्मदस्मासुतिसझिसिप्थस्थमिव्वस्मस्" शा० अं० १ पा० ४ सू० १ । इस सूत्र से अन्य पुरुष मध्यम पुरुष और उत्तम पुरुष में अनुक्रमता पूर्वक तीन २ प्रत्यय कर लेने चाहिये किन्तु लट्लकार में अकार और टकार की इत्संज्ञा होती है शेष ल् के स्थान में अनुक्रमता पूर्वक तिप् तस् झि सिप् थस् थ मिप् वस् मस् देह प्रत्यय कर लेने चाहिए फिर "कर्तरिशप् शा० अ० ४ पा० ३ सूत्र २० । इस सूत्र से कर्ता में शप् का विकरण हो जाता है और श् और प् की इत्संज्ञा करके केवल अकार मात्र ही शेष रह जाता है तब भू-अ-ति ऐसे रूप हुआ फिर "अक्ङिद्लघुग्धेतौ" शा० अ० ४ पा० २ सू० १७ । इस सूत्र से ए ङ् और श् करके फिर "एचोऽच्ययवायावः" इस सूत्र से ओ का अ व् होता है फिर "झोऽन्तः" १-४-८८ । इस सूत्र से झ मात्र को अंत आदेश कर लेना चाहिए फिर "आद्यप्यतः" शा० ४.२।३४ इस सूत्र से मकार वकार के परवर्ती होने से अकार को आकार होजाता है तब इस प्रकार से उक्त रूप सिद्ध होते हैं और (एधवृद्धौ) (एधिवृद्धौ) एध धातु वृद्धि अर्थ में होता है और (स्पर्द्ध संघर्षे) स्पर्द्ध धातु संघर्ष अर्थ में होता है (गाधृ प्रतिष्ठालिप्साग्रन्थेषु) गाधृ धातु प्रतिष्ठा लिप्सा (इच्छा) और संचय इन अर्थों में होता है (वाधृ विलोडने) वाधृ धातु विलोडन अर्थ में होता है और फिर इनके दश लकारों में गण वा प्रक्रियाओं में भिन्न २ प्रकार से रूप बनाये जाते हैं परस्मैपदी और आत्मनेपदी सेट् अनिट् सकर्मक अकर्मक भाव कर्म इत्यादि अनेक प्रकार से तिङन्त प्रकरण में धातुओं के भेद वर्णन किये गये हैं और उपसर्ग वशात् धातुओं के अर्थों में भी परिवर्तन होजाता है जैसे कि हृञ् हरणे धातु के उपसर्ग पूर्वक रूप आहार विहार संहार प्रहार परिहार इत्यादि-प्रयोग

बन जाते हैं किन्तु इनका पूर्ण स्वरूप व्याकरण से देखना चाहिये सूत्र में तो केवल सूचना मात्र ही कथित है (सेत्तं धातुए) इसे ही धातु कहते हैं।

भावार्थ–धातु से जो नाम उत्पन्न हुआ हो उसे धातुज नाम कहते हैं जैसे कि भूसत्तायां धातु के परस्मै भाषा में रुप बनाए जाते हैं इसी प्रकार एधि वृद्धोस्पर्द्धि संघर्षे गाधृ प्रतिष्ठा लिप्सा ग्रन्थेषु बाधृ लोडने इत्यादि धातु हैं इन का पूर्ण बोध व्याकरण के तिङन्त प्रकरण से हो सक्ता है दश लकार गण प्रक्रिया सकर्मक धातु अकर्मक धातु आत्मनेपदी उभयपदी इत्यादि विषयों का स्वरूप व्याकरणों से देखने चाहिये यहां पर तो केवल सूचना मात्र ही कथन है और प्राकृत भाषा में ए भुवेर्तो हव हवाः ॥ प्रा. व्या. अ. ८ सू. ६० भुवो धातोर्हो हुव हव आदे शावा भवन्ति इस सूत्र से हो हुम हव येह तीनों विकल्प से आदेश हो जाते हैं जैसे कि होइ होंति हुवइ हुवन्ति हवई हवन्ति पद में भवइ इत्यादि कथन भी उक्त व्याकरण से देखें अब नैरुक्त विषय में व्याख्या करते हैं.

अथ निरुक्त विषय।

(सेकिंतं निरुत्तिए मह्यां शेतेमहिषः भ्रमति चरोतीति भ्रमरः मुहुर्मुहर्ल सतीतिमुसलं कपिरिव लम्बते कपित्थं चिच्च करोति खलंच भवति चिक्खलं उर्द्धकर्णः उलूकः मेघस्य माला मेघला सेत्तं निरुत्तिए सेत्तंभावप्पमाणे सेत्तं पमाणे सेत्तं दस नामे सेत्तंनामे नामेति पदं सम्मत्तं ॥ २ ॥

पदार्थ-(सेकिंतं निरुत्तिए २) (प्रश्न) निरुक्ति किसे कहते हैं (उत्तर) जो वर्णो के अनुसार अर्थ किया जावे उसे निरुक्ति कहते हैं सो जो निरुक्ति में पद हो उसे नैरुक्तिक पद कहते हैं जैसे कि (मह्यांशेतेमहिषं) जो पृथिवी में शयन करे वही महिष है और (भ्रमति रौतिइतिभ्रमरः) जो भ्रमण करता हुवा शब्द करे वह भ्रमर है (मुहुर्मुहुर्ल सतीति मुसलं) जो पुनः २ ऊंचे नीचे होवे (पड़े) उसे मुसल कहते हैं किन्तु मुश खंड ने धातु से (" वृषादिभ्यश्चित्") उणादि प्रकरण पा. १ सू. १८८ इस सूत्र से कल प्रत्यय होगया तब मुसल शब्द सिद्ध होगया किन्तु ॥ शषोः सः ॥ इस प्राकृत के सूत्र से तालव्य शकार के स्थान पर दन्त्यसकार होगया तब मुसलं शब्द सिद्ध हुआ और कपिरिव लम्बते करोति पतति च कपित्थं जो कपि की न्याई वृक्ष शाखा में लं-

वायमान होवे और चेष्टा करे वायू के प्रयोग से कंपायमान होकर गिरपड़े उसे कापित्थ कहते हैं और (चिच्च करोति खल्लं च भवति चिक्खल्लं ; पादों को श्लेष करने वाला और पदों का स्पर्श होकर कठिन करने वाला वही चिक्खल होता है (ऊर्द्धकर्णः उलूकः) जिस के ऊर्ध्व कर्ण हो वही उल्लू होता है (मेषस्य माला मेखला) मेष (सुख) की जो माला हो वोही मेखला है (सेत्तंनिरुत्तिए सेत्तं भावप्पमाणे) यही निरुक्ति है इसे ही भाव प्रमाण कहते हैं (सेत्तंदसनामे सेत्तं नामे यही दश नाम का स्वरूप है और यही नाम पद है। और इसी स्थान पर (नामेतिपयंसम्मत्तं) उपक्रमान्तर्गत द्वितिय नाम द्वार का स्वरूप सम्पूर्ण हुआ है अब इस के अंतगर्त तृतीय प्रमाण द्वारके विषय में व्याख्याकी जाती है॥

भावार्थ–निरुक्ति*उसे कहते हैं जो वर्णों के अनुसार अर्थ किया जाय जैसे कि मह्यांशेते महिषम् जो पृथ्वी में शयन करे वही महिष है जो भ्रमण करता हुआ शब्द करे सो भ्रमर पुनः २ ऊंचे नीचे गिरे सो मुसल कपि की न्याई चेष्टा करे सो कपित्थ पादों का स्पर्श करे उसे चिक्खल कहते हैं ऊर्ध्वकर्ण होने से उल्लू और मेषस्य माला मेखला येह सब नैरुक्तिक पद हैं क्योंकि सुउपसर्ग शोभन अर्थ में आता है और नृ शब्द का प्रथमैकवचनांत "ना" होता है तब सुना प्रयोग सिद्ध होगया फिर सीर (लांगलहल) का नाम है इस लिये जिस के हाथ में सुष्ठुलांगल है उसे+सुनासीर कहते हैं तथा सुनासीर मांसयह भी शब्द नैरुक्तक है तथा अस्मद् शब्द के द्वितीया के एक वचन में "मां" शब्द रूप बनता है और अन्य पुरुष के एक वचन में सः रूप होता है दोनों के एकत्व होने से (मांस) प्रयोग सिद्ध होगया इस का तात्पर्य यह हुआ कि जिसको मैं खाता हूं वह मुझे खायगा सो इसी का नाम निरुक्ति है और येही भाव प्रमाण है और इसी स्थान पर दशनाम का स्वरूप सम्पूर्णहो गया है अतःउपक्रमान्तर्गत द्वितीय नाम द्वार की समाप्ति है इस के आगे प्रमाणद्वार के विषय में कहते हैं.

* वर्णागमोवर्ण विपर्ययश्च । द्वौचापरौ वर्णविकार नाशौ । धातोस्तदर्थातिशयेन । योगस्तदुच्यते पंच विधं निरुक्तं. ॥

वर्णागमो गवेन्द्रादौ सिंहे । वर्णविपर्यय । षोडशादौ विकारास्स्याद्वर्णनाशः पृषोदरे. २

वर्ण नाश विकाराभ्यां धातोरतिशयेनयः योगस्तदुच्यते भ्राँमयूर भ्रमरादिषु ॥ ३ ॥

अविहित लोपागमादेश विकाराः शिष्टैप्रयुज्यमानाः अश्व रूपेणाग्निरत्रतिष्ठतीति अश्वत्थः इति लिंगा भट्यानुक्रम् ।

हिंसु हिंसायामिति धातोरुत्पन्नस्वात्हिनस्तीति सिंह इति हकार विपर्ययः विकारः परिणामः यथा षोडशेत्यत्र दकारस्य डकारः ।

रुह्यां रौतीति मयूरः । अत्र मह्या शब्देकारस्य नाशः हकारस्य विकारोयकारः रूधातोः ऊर इत्यादशः । भ्रमन् भ्रमरः । नलोपोरु शब्दस्यरादेशश्च ॥

+ शोभनंना सीरमग्रयानमस्य शुनासीरःशुःपूजायाम् श्वशुरवत् । दन्त्यादिरपि॥इन्द्रस्यनामः इतिहैमः ।

टीका निरन्तर व्याख्या इति हैमः टीकयति गमयत्यर्थान् टीका सुषमाणां विषमाणां च निरंतर व्याख्या यस्यां सातथा ॥

॥ अथाऽस्मदीया गुर्वावलिः ॥

श्री वर्धमानस्यमहेशितुर्वै ह्याचार्य्य मुख्यस्य परात्मनश्च ॥
शिष्य प्रशिष्यादि परम्परायां त्वस्त्येव चेयं गुरुनाममाला ॥१॥

सुधर्मगच्छस्य प्रधानरूपा आचार्य्यवर्य्या यति धर्म्मनिष्ठाः ॥
श्रीपूज्यपादामरसिंहवाच्या वन्द्याः सदैवापि ममात्र सन्तः ॥ २ ॥

तच्छिष्यभूतास्तु तदीयगच्छे आचार्य्यपदवीमनुलब्धवन्तः ॥
श्रीपूज्यपादाभिधमोतिरामाः वन्द्याः सदैवापि मया महान्तः ॥ ३ ॥

तच्छिष्या यतिवर्य्याः स्थाविर पदविभूषिता महात्मानः ॥
श्रीयुत गणपतिरायाः सुगणावच्छेदकावन्द्याः ॥ ४ ॥

तच्छिष्या मुनिवर्य्याः सुगणावच्छेदकास्तुजयरामाः ॥
सन्तितुममगुरू गुरवः सदैव वन्द्यामहात्मानः ॥ ५ ॥

तच्छिष्या यतिवर्य्याः प्रवर्तकपदेनभूषितालोके ॥
ज्योतिषि कुशलाः श्रीमच्छालिग्रामाभिधागुरवः ॥ ६ ॥

तच्छिष्योऽस्मितुस्वल्पः पूर्वेषांपदसरोजमधुपोऽहम् ॥
आत्मारामोनाम्नोपाध्याय पदंगतः सोऽहम् ॥ ७ ॥

स्वप्रियशिष्यस्यैव ज्ञानेन्द्रोः प्रार्थनां स्वहृदि धृत्वा ॥
व्याख्याकृता मयेयं त्वनुयोगद्वारसूत्रस्य ॥ ८ ॥

ज्ञान प्रबोधिनी नाम्ना टीकेयंनृगिराकृता ॥
ज्ञानचन्द्रस्यनामापि प्रकाशयतुसर्वदा ॥ ९ ॥

टीकेयं ज्ञानचन्द्रस्य स्मृतये रचितामया ॥
कल्याणकारिणी भूयाद्भव्यानां पठितानृणाम् ॥ १० ॥

करमुनिग्रहचन्द्र समेऽब्द के कुजदिनेखलु फाल्गुणशुक्लके ॥
प्रथितजाङ्गलदेश इयाथवै त्ववसितिं नगरे वरुणालये ॥ ११ ॥

शुद्धाशुद्धि पत्रम् ।

पृष्ठाङ्क	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	१	अह्न्	अर्हन्
२-३		(जहां) अणुगण (हैं)	(वहां) अणुगया (चाहिये)
५	८	अज्झयणाई	अज्झयणाइं
२३	१८	भाणे	माणे
२५	२३	जीव	जाव
२६	५	चुयच । विय	चुयचाविंय
३०	१४	सेत्तंनो अ.गमओ	सेत्तं लोइयं नो आगमओ
३२	६	पएणवन्ने	पएणत्त्रण
३२	२२	अणुत्तरावेवाइय	अणुत्तरोववाइय
४०	२२	आर्थाधिकार	अर्थाधिकार
४१	४	अणुआगदाराणि	अणुओगदाराणि
४५	५	मच्छडीणं	मच्छंडीणं
४५	१४	अस्साई सेत्त	अस्साइ सेत्तं
५०	१३	इंमितानुसार	इंगितानुसार
५१	२	ओवक्कमे	उवक्कमे
५१	३	नाम २ पमाण ३ वत्तवया	नामं २ पमाणं ३ वत्तव्वया
५१	५	दव्वणुपुव्वी	दव्वाणुपुव्वी
५१	१२	संगाहस्सय	संगहस्सय
५२	२६	समो पारे	समोयारे
५२	२६	सत्रकार	सूत्रकार
५३	४	संस्थानुपूर्वी	संस्थानानुपूर्वी
५३	२१	दुपए सियई	दुपएसियाइं
५३	२२	एयाएणेगम	एयाएणं णेगम
५४	२८	समुकीर्तन	समुत्कीर्तन
५५	२	द्रव्या	द्रव्य
५५	२०.	अवत्त याइंच	अवत्तव्वयाइंच

पृष्ठाङ्क	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५६	११	आणुपुव्वी उप	आणुपुव्वी ओय
५६	२०	पट् पिंशति	पट् विंशति
५६	२१	भगं	भंग
५७	५	आनानुपूर्वी	अनानुपूर्वी
५७	९	अव्वत्तए	अवत्तव्वए
५८	८	भगा	भंगा
५८		समुकीर्तना	समुत्कीर्तना
५९	२२	अवत्त एअ	अवत्तव्वएय
६१	२५	द्रव्य	द्रव्य
६३	६	आणुपुव्वी दव्वे	आणुपुव्वी दव्वहिं
६३	२२	अवक्तव्वय	अवत्तव्वय
६३	२४	अत्तव्वय	अव्वत्तव्वय
६४	५	सेकिंत	से किं तं
६४	१७	दव्वयमाणं	दव्वपमाणं
६५	२०-२१	संज्जइ भाग	संखज्जइ भागे
६६	३	लोक	लोक के
६६	७	भावे	भागे
६६	१८	आनानुपूर्वी	अनानुपूर्वी
६९	१३	पडुच्च सव्वद्धा	पडुच्च नियमा सव्वद्धा
७०	५-१०	केवंच्चिरं	केवच्चिरं
७१	२७	भागं	भागे
७३	१	भाग द्वार	भाव द्वार
७३	३	उदइए होज्जा	उदइए भावे होज्जा
७४	४	अवतव्व	अवत्तव्व
७५	८	णगय	णगमं
७६	८	अणेव णिहिया	अणोवणिहिया
७६	२२	अवव्त्तवग	अवत्तव्वए
७६	२४	समुकित्तणया	भंगसमुक्कित्तणया
७७	५	अवत्तव्य	अवक्तव्य
७८	५—६	अनानुनुपूर्वी	अनानुपूर्वी
८०	४	नो अवत्त—	नो

पृष्ठाङ्क	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८०	२७	दव्वय माणं	दव्वपमाणं
८२	१७	असंज्जेसु	असंखेज्जेसु
८२	१८	संख्यत	संख्यात
८२	२२	अवक्तव्य	अवक्तव्य द्रव्य
८३	६	भोगसु	भागेसु
८३	१८	सग्ग हस्स	संग्गहस्स
८४	१	णाणुपुव्वी	आणुपुव्वी
८४	१७	भाग गें	भाग में
८४	२८	संग्रनय	संग्रहनय
८५	१८-१९	एगइयाए	एगाइयाए
८६	१	आस्तिकाय	अस्तिकाय
८६	७	अन्नमव्वस्मासों	अन्नमन्नब्भासो
८६	१६	गर्णन	गणन
८६	२२	४+५+६	४×५×६
८७	६	पुव्वाणुपुव्वी	पुव्वाणुपुव्वी
८९	१	संगाहस्स	संग्गहस्स
८९	२५	परुवखणा	परुवणया
९१	८-१४	अणाणुपुव्वी	अत्थि अणाणुपुव्वी
९२	६	संखेस्जइ	संखेज्जइ
९४	२६	जघन्य	जघन्य
९६	२	अनानुपूर्वा	अनानुपूर्वी
९६	१६	अवत्तव्वगदव्वग दव्वाइं	अवत्तव्वगदव्वाइं
९६	२०-२१	संग्गाहस्स	संग्गहस्स
९६	२३	णेगमववहाणं	णेगमववहाराणं
९८	२०	उवणिहिया	उवणिहिया
९८	२२	पुव्वाणपुव्वी	पुव्वाणुपुव्वी
१००	१	पुच्छाणुपुव्वी	पच्छाणुपुव्वी
१००	८	तमप्पभा तमप्पभा	तमप्पभा
१०१	८	कुरा	कुरु
१०१	९	२० चंद २० चंद	२० चंद
१०२	७	पात्रमात्र	गात्रमात्र

पृष्ठांक	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१०२	११	द्र्दों	द्रहों
१०३	६	महस्सारे	सहस्सारे
१०३	६	आणएय्	आणए
१०३	१०	अचुए	अच्चुए
१०३	११	इसाप्पभारा	ईसिप्पब्भारा
१०४	१६	पुव्वाणु	पुव्वाणुपुव्वी
१०४	१८	पच्छाणु	पच्छाणुपुव्वी
१०५	६	पच्छापुव्वी	पच्छाणुपुव्वी
१०६		जहां (द्वि) है	वहां (द्वि) चाहिये
१०७	२२	द्विसम	द्विसमय
१०६	४	स्वस्थानों में	स्व स्व स्थानों में
१०६	२०	अवक्तद्रव्य	अवक्तव्य द्रव्य
१११	१०	नेपजं	नेयव्वं
११२	२१	(मन्न)	(मश्न)
११३	१	सगय	समय
११३	३	अ अ	अथ
११४	११	द्रव्यों	द्रव्योंकी
११४	२६	परस्पर	पर
११६	२	आणा	आण
११६	५	तुडिय	तुडिए
११६	५–६	अड्डांगे	अडडंगे
११६	११	सागरोवमपे	सागरोवमे
११७	१२-१३	एक साश्वोछ्वास	एक श्वासोच्छ्वास
११७	१३	सोत	सात
११८	१४	पउमंगे	पउ अंगे
११६	२६	अन्नपब्भासो	अन्नमन्नभासो
१२१	४	आजिय	आजिये
१२१	५	सीमले	सीतले
१२२	२४	पुव्वी	पुव्वाणुपुव्वी
१२३	२६	हरस्पर	परस्पर
१२४	५	सामचउरंसे	समचउरंसे

पृष्ठांक	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१२५	१७	समयारी	सामायारी
१२६	१५	भावों को	भावोंकी
१३१	२७	निणय	निर्णय
१३२	१६	अजीनाम	अजीवनाम
१३२	१८	अणेगवविहे	अणेगविहे
१३५	२०	अवंसेसिएगं	अविसेसिएय
१३५	३	निरख	तिरिक्ख
१३५	७	नरइ३	नेरइ३
१३५	१०	एगिंधिए	एगिंदिए
१३५	१६	वराणस्सइ	वणस्सइ
१३७	पाठ में	पंचेंद्रिय	पंचिंदिय
१३८	२३	समुच्छिय	संमुच्छिम
१३६	५	थलय	थलयर
१४४	१	गर्जभ	गर्भज
१४४	१०	अणग्गि	अग्गि
१४४	१४	मृय	भूय
१४५		मंझिभ	मज्झिम
१४५		विद्युत्कुमार ८ वायुकुमार ६	विद्युत्कुमार ४ अग्निकुमार ५ द्वीपकुमार ६ उदधिकुमार ७ दिग्कुमार ८ वायुकुमार ६
१४७	२७	लोक देव	देवलोक
१४६	८	लेहियवन्न	लोहियवन्न
१४६	१०	सुभिगन्ध	सुरभिगंध
१४६	१४	फासनाम	फासनामे
१४६	२०	दुगणकालए	दुगुणकालए
१५२	१३	एकगुग	एकगुण
१५४	२०	विराहृ	विग्गहृ
१५५	३	तिरांहं	तिएहं
१५५	१७	विराहृ	विग्गहृ
१५६	१८	उकारांत	ऊकारांत
१५७	१५	त्रिभन्दर्शन	त्रिभंगदर्शन

पृष्ठाङ्क	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१६१	२७	स्वरस्योद्धृते	स्वरस्योद्धृते
१६२	४	कृयादौ	कृपादौ
१६२	२८	उकार	हकार
१६४	७	विभक्तियांत	विभक्त्यंत
१६४	६	गोड़े का	घोड़े का
१६६	२	मिस्तज	मिश्रज
१६६	८	युयम्	यूयम्
१६६	१३	मिस्र	मिश्र
१६६	२२	दशविहंपि	दसविहंपि
१६८	८	लिंगाक्रिकं	लिंगत्रिकं
१६८	२०	मत्यों	मत्ययों
१६८	२३	आ,	औ,
१६८	२४	कुतोऽपश्याः	कुतोऽपप्रथाः
१६६	६	व्यापृत	व्याहृत
१७३	४–५	कण्डे	कप्पराडे
१७४	१	उवमें आगमें	उवमे अगमे
१७४	१३	सादृत्रय	सादृश्य
१७५	६	पलम्भानुमानचं द्वितायं	पलम्भानुमानंच द्वितीय
१७५	२१	अन्यवय	अन्वय
१७७	१२	कुटम्ब	कुटुम्ब
१७८	२४	स्वः अव्यम्	स्वः अव्ययम्
१८०		अनुवततें, अकर्तीर	अनुवर्तते, अकर्तरि
१८६	११	देवदन्तेन	देवदत्तेन
१८६	१२	दगद्य	६ गद्य
२०२	१५	सेंकितं उव्वसमे	सेकिंतं उवसमे
२०४	७	खाणवयणे	खीणावयणे
२०४	१६	लाभ अतराय	लाभांतराय
२०५	२	अहुएहं	अठ्ठण्हं
२०५	२१	नाणावरीणज्जे	नाणावरणिज्जे
२०७	१२	शरीर गोव गवं	सरीरंगोवंग वंधण
२०८	६	परिवी वुडे	परिनिवुडे

पृष्ठांक	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२०८	६	भागवत	भाग्वत्
२०८	२३	सभ्यक्त्व	सम्यक्त्व
२०६	६	खओत्रसीमए	खओवसमिए
२०६	१३	खओवसीमया	खओवसमिया
२०६	२३	ओव भोग	उवभोग
२१०	२	घणिंद्रिय	घाणिंद्रिय
२१०	३	जिंभिंद्रिय	जिंभिंद्रिय
२१०	५	पाणत्तिधरे	पण्णत्तिधरे
२१०	६	ओवासगदसा अंतग ओदसा २६ अणुनरो	उवासगदसा अंतगड दसा ३६ अणुत्तरो
२१०	७	पाराहा वागरे	पण्हावागरे
२१०	८	नवपुवधेर	नवपुव्वधरे
२१०	६	जो	जाव
२११	१७	नाणावरिणज्जस	नाणावरणिज्जस्स
२१२	१६	लद्धीई	लद्धी ६
२१२	१	समायिक चरित्र	सामायिक चारित्र
२१२	५	सम्पराग चरित्र	सम्पराय चारित्र
२१२	२६	रसनेंद्रिय	रसनेंद्रिय
२१२	२६	फां सिंद्रिय	फासिंद्रिय
२१३	२	समयांग	समवायांग
२१३	४	नामा	नाया
२१३	६	अणुत्तरोवा वाइ	अणुत्तरोव वा-
२१३	७	पराइ वागरे	पण्हवागरे
२१३	१५	पात्रमात्र	यावन्मात्र
२१४	१३	पारिणामिण्य	पारिणामिय
२१४	१४	जुन्नासुरा	जुन्नसुरा
२१४	१८	इंद्र घणुं	इंद्रधणू
२१४	१६	पापालो	पायालो
२१४	२२	आरणपपाणप आरणाप अच्चुरा	आरणय पाणय आरणाय अच्चुए
२१४	२२	इसाप्पभाए	इसीप्पभारा

पृष्ठाङ्क	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२१५	१२	अनादि अयादि	अनादि
२१५	१२	नयापेक्षपा	नयापेक्षपा
२१५	२३	पर्याप	पर्याय
२१६	२२	नायापेक्षा	नयापेक्षा
२१६	२३	चून है मंतादि	चूलहैमवंतादि
२२०	५	बउसान्त	उवसंता
२२२	८	समम्यक्त्व	सम्यक्त्व
२२२	२७	उशपम	उपशम
२२३	१९	संयोग	दो संयोग
२२३	२०	आमितु	अपितु
२२३		भंगवन्तो	भगवन्तों
२२४	११	उवस–	उवसमिय
२२५	६	उपसन्ता	उवसंता
२२९	१८	इंन्दियाइं	इंदियाइं
२२९	१८	उवससमिय	उवसमिय
२२८	२४	पीरणीमउ	पारिणामिए
२३१	४	अतितत्व	अस्तित्व
२३४	१	सेठिउ	सेढिउ
२३४	८	मकृतियांच	मकृति पांच
२३५	१०	अतरगत	अंतर्गत
२३५	१२	रिसमे	रिसभे
२३७	१–२	मज्जपजीहाए	मज्झजीहाए
२३७	२	(मज्जिपमर)	मज्झिमं २
२४१	२–३	नविराणस्सइ	नविरणस्सइ
४४२	१८	मंत्ताउ	मंताउ
२४४	१६	जंघाचाए	जघाचरा
२४४	२६	गंधार नामे	गंधार गामे
२४५	३	मुच्छरणाओ	मुच्छणाओ
२४५	४	सतमा	सत्तमा
२४५	६	उतर गंधारा पुण सायं च मिया	उत्तर गंधारा पुण सा पंचमिया

पृष्ठाङ्क	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२४५	७	मायामी	मायामा
२४५	८	उत्तारायत्ता	उत्तरायत्ता
२४६	१०–११	इवई मूर्छा	इवइ मुच्छा
२४७	१०	(नामीओ)	(नाभीओ) नाभीसे
२४७	१२	उच्छ्वास है	उच्छ्वास होता है
२४७	१२	गीतों के पद पद में उच्छ्वास	गीतों के उछ्वास
२४७	२२	समुच्च	समुच्य
२४७	२२	अवल्याणे	अवसाणे
२४७	२३	तन्निवि	तिन्निवि
२४८	२४	मुणे पत्रं	मुणेयव्वं
२५०	२	सिरपसत्थं समंतार समंलय समंगेह समंच	सिरपसत्थं तालसमं लयसमं गेहसमं च
२५०	१०	कद्ध	बद्धं
२५०	१४	५५	२५
२५१	८	निद्दोसे सारवंत	निद्दोसं सारमंतं
२५२	२३	दुपं	दुयं
२५२	२३	केरसी	केरिसी
२५४	६	ससम्मत्तं	सम्मत्तं
२५५	१	छट्टीरसामित्रायेण सत्तमि सिन्निहा–	छट्टी सरसामित्रायणे सत्तमी सन्निहा–
२५६	७	अहं वत्ति	अहंवत्ति
२५७	१८	सवंध	संबंध
२५८	७	आमतणी	आमंतणी
२५८	१७	ह्रस्वोऽनित्पाद:	ह्रस्वोऽनित्पाद:
२५९	१४	भाव है	भाव है वही काव्य है
२५९	१८	वीर	वीर रस
२६०	४	भापा	माया
२६०	५	हिनि	ही नि-
२६०	१८	दाणतत्रचरणा	दाणतवचरण
२६०	१९	अणस्णुं	अणणु
२६१	७	शास्त	शास्त्र

पृष्ठांक	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२६३	२५	नित	चिंता
२६६	२०	संजोगा	संजोग
२६६	२३	घन्नाओ	धन्नाउ
२६७	२२	निलंबण	विलंबण
२६७	२५	प्पणनि	प्पणमि
२६६	२	वधं	बंध
२६६	३	पएइय	पम्हाण
२७०	२	सभवो	संभवो
२७०	४	जण	जइ
२७२	५	सेकिंतं गोणे २	सेकिंतं गोणे २ खमइति खमणो तवइति तवणो जलइति जलणो पवइति पवणो से तं गोणे। सेकिंतं नोगुणे अकुंतो सकुंतो अमुग्गो समुग्गे।
२७३	१३	अथार्थः	अयथार्थ
२७४	१५	खड	खेड
२७४	१६	मंडव	मडंव
२७४	१६	सेवाह	संवाह
२७४	१८	विंसे	विसं
२७४	१६	सुम्मए	सुम्भए
२७७	६	सत्तिवणे	सत्तवएण वणे
२७७	६	सिसिद्धं	सिद्धं
२७८	२३	भंडे	भद्दं
२७८	२३	मिहिलियं	महिलियं
२७८	२५	अवयवेणी	अवयवेणं
२८०	१६	अनतभूत	अन्तभूंत
२८०	२४	मिइस्सए	मीसए
२८१	४	सुसुमसुसुमाए	सुसमसुसमाए
२८१	५	दुसमसुसुसमाए	दुसमसुसमाए दुसमाए दुसमदुसमाए
२८१	१०	असत्थे	अपसत्थे

पृष्ठाङ्क	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२८१	१५	काडा	काल
२८३	२१	अप्रस्त	अप्रशस्त
२८४	१	संयोगन	संयोगज
२८४	४	जन्म	जन्य
२८५	४	दवय	दूवय
२८५	१५	दा अ	दो अ
२९४	६	प्रधान प्रधान १	प्रधान १
२९५	८	तिगुणाणि	तिन्नि गुणाणि
२९७	३	त्रमधुरम्	त्रिमधुरम्
२९७	२५	पुरिस	पुरिसा
२९९	१७	व्यारण	व्याकरण
२९९	२२	संजाहा	तंजहा
३००	१	ततद्धितनामं	तद्धितनाम
३००	६	वम्भकारए	वञ्भकारए
३०२	२०	तरंगवकारए	तरंगवइकारए

